मतपरीक्षा

अर्थात

दो महापण्डितों के सत्सङ्ग ॥

प्रथम खण्ड

भारतीयशास्त्रनिरूपण

और

द्वितीय खण्ड

ख्रिष्टीयशास्त्रनिरूपण ॥

लुदेहाने के मिश्न प्रेस में अमेरिकन टराकट सुसैयटी के लिये
पादरी हुडालक साहिब के यत्न से छापी गई।

यिशू सम्वत १८६८ ॥

[लागत पुस्तक पीछे १२ आने]

प्रथम खण्ड

सूचीपत्र।

सत्सङ्ग	विषय	पृष्ठ

द्वितीय खण्ड

सूचीपत्र ।

मतपरीक्षा

अर्थात

दो महापण्डितों के सत्सङ्ग ।

पहिला सत्सङ्ग ।

मतपरीक्षा की उचित रीति की चर्चा ।

ग्रन्थकर्त्ता का बचन ।

हिन्दुस्थान के समस्त नगरों में काशीनगर अति प्रसिद्ध है कि जहां बड़े २ राजगृह मन्दिर आदि जिनकी चोटियां आकाश को छू रही हैं अत्यन्त सुन्दर और शोभायमान बनी हैं। उस में बड़े २ श्रीमन्त लखपति करोड़पति बास करते हैं और उसके महापण्डितों का यश सारे संसार में फैल रहा है॥

एक समय उस नगर के बड़े पण्डितों में एक मनुष्य था जिस का नाम वेदविद्वान था वुह ऐसा ज्ञानी था कि सम्पूर्ण शास्त्रों को भली भांति जानता था और जैसा ज्ञानी को योग्य है वुह अति सभ्य दयालु शुद्धस्वभाव और निर्पक्ष भी था निदान सत्य असत्य का बिचारी था। अब एक दिन बसन्त ऋतु में ऐसा हुआ कि वुह मनुष्य भोर उठ विधि के अनुसार स्नान आदि सर्व कर्म से निश्चिन्त हो गङ्गा के तीर पर एक

पीपल की छाया में बैठा हुआ मन्द २ ठंडी २ पवन से मगन हो रहा था। इतने में एक सज्जन काशीनिवासी जिसका नाम सत्यार्थी था उसके समीप आया। यह मनुष्य पश्चिम देश का एक महापण्डित था और बड़ा धर्मी सूक्ष्म बातों का विवेकी देश २ के भिन्न मतों का जाननेवाला भी था। सो यह भी गङ्गा के तीर पर हो वेदविद्वान का सुयश जान उसके समीप आ बड़े आदर और शिष्टाचार के साथ उसको प्रणाम कर उसके सङ्ग सम्वाद करने लगा॥

उस समय इनका सत्सङ्ग नाना प्रकार के विषयों पर हो चला परन्तु अन्त में दोनों मनुष्य परमपुरुषार्थ के खोजी हो उस भारी प्रकरण की चर्चा में प्रवृत्त हुए। सो मैं भी उस काल उनके पास बैठ परमपुरुषार्थ के विषय में उनके परस्पर प्रश्नोत्तर और तर्क प्रमाण सुन अति आनन्दित था। इस कारण अब विस्तार के साथ उसका वृतान्त प्रगट करता हूं॥

सत्यार्थी का वचन॥ बहुत दिनों से मैं ने आप का यश सुना है कि आप बड़े गुणवान हैं इस कारण आप के दर्शन होने से मैं अति आनन्दित हूं। सुनने में आया है कि आप अपने देश के समस्त शास्त्रों में निपुण हैं इस लिये मेरी इच्छा है कि आप अपने शास्त्रों का कुछ वर्णन कीजिये॥

वेदविद्वान का वचन॥ अपनी बाल्यावस्था से मैं उन शास्त्रों का अभ्यास करता रहा हूं कि जिनका विशेष करके इस देश में सन्मान है। पुराणों और इतिहासों को भी मैं ने पढ़ लिया है जिस्तें देवताओं का चरित्र भली भांति जानूं। परन्तु शारीरिक विशेष वस्तुओं की अनर्थकता का ध्यान करते २ अब मेरा मन वेदान्त से अधिक प्रसन्न और सन्तुष्ट है क्योंकि उस शास्त्र में ब्रह्म के परमज्ञान की चर्चा है और उसके द्वारा मुक्तिरूप परमार्थ प्राप्त होता है॥

सत्यार्थी का वचन॥ आप जो इस संसार के समस्त विषयों को अनर्थ ठहराते हैं तो इस में मेरी भी सम्मति निश्चय जानिये कि मेरी समझ में परमेश्वरीय ज्ञान सब और वस्तुओं से उत्तम और मुक्ति सारे पुरुषार्थों से श्रेष्ठ है। इस कारण मेरी इच्छा है कि इस भारी प्रकरण में आप के सम्पूर्ण मत और उनके प्रमाणों को भी विस्तार के साथ समझें। और पहिले शास्त्रों का यथार्थ वर्णन करना आप को उचित होगा क्योंकि शास्त्र के बिना ईश्वरीय ज्ञान प्राप्त करना बहुत कठिन है। इस लिये जो प्रधान शास्त्र भारतखण्ड में प्रचलित हैं किस रीति से प्रमाणिक ठहरते हैं आप इसका वर्णन कीजिये॥

वेदविद्वान का वचन॥ वेदादि सब शास्त्र ब्रह्मा के मुख से निकले। यह सिद्धान्त पुराणों में जो ज्ञान के भण्डार हैं स्पष्ट रीति से लिखा है॥

जैसा भागवत के तीसरे स्कन्ध के बारहवें अध्याय में लिखा है॥

कदाचिद्ध्यायतः स्रष्टुर्वेदा आसंश्चतुर्मुखात्
कथं स्रक्ष्याम्यहं लोकान् समवेतान् यथा पुरा॥ ३४॥

अर्थात एक समय सृष्टिकर्त्ता के चारों मुख से वेद उत्पन्न हुए जब वह ध्यान करता था कि लोकों के समूह को आगे के समान मैं किस प्रकार से रचूं॥

फिर ३० और ३८ श्लोक में यों लिखा है॥

ऋग्यजुस्सामाथर्वाख्यान् वेदान् पूर्वादिभिर्मुखैः।
शास्त्रमिज्यां स्तुतिस्तोमं प्रायश्चित्तं व्याधात् क्रमात्॥ ३०॥
इतिहासपुराणानि पञ्चमम्वेदमीश्वरः
सर्वेभ्य एव वक्त्रेभ्यः ससृजे सर्वदर्शनम्॥ ३८॥

अर्थात ईश्वर ने अपने पूर्वादि मुखों से ऋग यजु साम अथर्वण वेदों को और शास्त्र यज्ञ स्तुति प्रायश्चित्त को क्रम से रचा और इतिहास और पुराणरूपी पांचवें वेद को और सर्वदर्शन को भी समस्त मुखों से सिरजा॥

हे मित्र जिन शास्त्रों को ईश्वर ने आप रचा है उनके प्रमाणिक होने में किस प्रकार से तनिक भी सन्देह हो सक्ता है ॥

सत्यार्थी का वचन॥ जब दो जनों के बीच किसी प्रकार का विवाद है तो बिचारी पुरुष पराई साक्षी के बिना निरकेवल वादी अथवा प्रतिवादी की साक्षी अपने प्रकरण में बिश्वास योग्य नहीं मानते हैं। इस रीति से पण्डित जी शास्त्रों का प्रमाणिक होना उन्हीं शास्त्रों के वचनमात्र से सिद्ध नहीं हो सकता परन्तु जब पहिले शास्त्र ही का प्रामाण्य सिद्ध हो चुका तब शास्त्र का वचन प्रमाण के लिये काम आता है। इसी कारण मैं आप से पूछता हूं कि वेदादि शास्त्रों के प्रमाणिक होने पर जो शङ्का बौद्धमतावलम्बी इत्यादि करते हैं इन शङ्काओं को वेदान्ती किन प्रमाणों से दूर करते हैं ॥

वेदविद्वान का वचन॥ बौद्ध आदि लोगों के जिन सन्देहों का आप वर्णन करते हैं उनके मिटाने के लिये प्रमाण तो हैं। परन्तु जिन शास्त्रों को सारे संसार ने सनातन से ईश्वरवाणी मान लिया है उन पर सन्देह करना अथवा सन्देह और दूषण का वचन सुनना हे मित्र इस में क्या लाभ हो सकता है ॥

सत्यार्थी का वचन॥ आप जब यह कहते हैं कि हिन्दू शास्त्रों को सारे संसार ने सनातन से ईश्वरवाणी मान लिया है तो इस में आप का वचन यथार्थ दशा से ठीक नहीं मिलता है। क्योंकि हिन्दूओं को छोड़ उन शास्त्रों को ईश्वरवाणी कोई नहीं मानता है और हिन्दूओं से अधिक इस संसार में अनेक जाति के मनुष्य हैं। यहां लों कि एक २ हिन्दू के पीछे अन्य जातियों के दश २ बारह २ मनुष्य उपस्थित हैं और इन में से एक भी उन शास्त्रों को नहीं मानता है। इस दशा में क्या आप को दूसरे प्रकार से कहना न चाहिये अर्थात कि हिन्दुओं को छोड़ सारा संसार उन शास्त्रों को त्याग करता है ॥

वेदविद्वान का बचन॥ परमेश्वर ने हिन्दू शास्त्रों को अन्य जाति के मनुष्यों के लिये नहीं दिया निरकेवल हिन्दुओं के लिये दिया इस कारण उन का मानना अन्यजातियों को प्रयोजन नहीं है। प्रत्येक जाति को उचित है कि जो २ शास्त्र परमेश्वर ने उनके पितरों को दिया है और जो २ शास्त्र एक २ ने अपने पितरों में पाया है उस पर स्थिर रहना सो ऐसे शास्त्र के प्रमाण पर सन्देह करना मेरी समझ में बड़ा पाखण्ड है॥

सत्यार्थी का बचन॥ आप इस बात को ध्यान कीजिये कि सत्य असत्य के बिचार करने में जब लों किसी विषय का तत्वज्ञान प्राप्त नहीं हुआ तब लों उसका सन्देह बुद्धि में रहता है और उस सन्देह को दूर करने के लिये कोई प्रमाण अवश्य चाहिये। सो न्याय शास्त्र में प्रमाण चार प्रकार का लिखा है अर्थात प्रत्यक्ष अनुमान उपमान और शब्द। इसलिये मैं आप से पूछता हूं कि जो आपने अभी कहा है सो इन चार प्रकारों में किस प्रकार का प्रमाण है॥

वेदविद्वान का बचन॥ आपने तो ठीक कहा है कि चार प्रकार के प्रमाण हैं और वुह जो मैं ने कहा अर्थात कि अपने पितरों के शास्त्र पर स्थिर रहना चाहिये सो शब्द प्रमाण है। क्योंकि न्यायशास्त्र में लिखा है कि आप्तवाक्यं शब्दः अर्थात शब्द प्रमाण किसी बिश्वास योग्य का वाक्य है। फिर यह भी लिखा है॥

वाक्यं द्विविधं वैदिकं लौकिकञ्च। वैदिकमीश्वरोक्तं
त्वात्सर्वमेव प्रमाणं। लौकिकं तु आप्तोक्तंप्रमाणम्॥

अर्थात वाक्य दो प्रकार का है वैदिक और लौकिक। वैदिक ईश्वर का बचन होके आप ही सर्वथा प्रमाण है परन्तु लौकिक जब किसी बिश्वासयोग्य का बचन है तभी प्रमाण है। इस रीति से अपने पितरों के शास्त्र को वैदिक वाक्य मानना शब्द प्रमाण से उचित देख पड़ता है क्योंकि

यद्यपि पितरों का बचन लौकिक वाक्य तो है तथापि आप्तोक्तप्रमाण अर्थात बिश्वासयोग्य का वचन होने से प्रमाणिक ठहरता है ॥

सत्यार्थी का वचन ॥ क्या आप ऐसा मानते हैं कि प्रत्येक मनुष्य को अपने पितरों के सारे बचन समस्त बिषयों में सर्वथा बिश्वासयोग्य और भूलरहित समझना चाहिये। क्योंकि इस रीति से पिता का बचन वैदिक-वाक्य के समान ठहरता और पिता आप एक प्रकार का ईश्वर बन जाता और इस दशा में वेद शास्त्र का क्या प्रयोजन होता ॥

वेदविद्वान का बचन ॥ नहीं। पिता का बचन लौकिक वाक्य तो है क्योंकि पिता भी अपने पुत्र के समान मनुष्य होके भूल कर सकता है। इस कारण यद्यपि पिता का आदर करना चाहिये तथापि समस्त और बिषयों में उसके वचन का बिचार करना कि ठीक है कि नहीं कुछ आदर के बिरुद्ध नहीं है। परन्तु शास्त्र और धर्म के बिषय में जो पिता का बचन बिश्वासयोग्य न हो तो किसका बचन बिश्वासयोग्य हो सकता है ॥

सत्यार्थी का बचन ॥ आप इस बात को बतलाइये कि जब और बिषयों में बिना बिचार किये पिता का बचन विश्वासयोग्य और भूलरहित ठहर नहीं सकता है तो शास्त्र और धर्म के बिषय में क्योंकर प्रमाण ठहरेगा। यदि यह दशा है तो सत्य और असत्य दोनों का प्रमाण होगा क्योंकि प्रसिद्ध बात है कि कितनों के पिता नास्तिक हैं और यदि पिता का वचन प्रमाण ठहरता तो नास्तिक मत भी सत्य ठहरता और नास्तिक के पुत्र को उस मत पर चलना उचित होगा। परन्तु कौन सत्य बिचारी यह मान सकता है ॥

वेदविद्वान का बचन ॥ आप का वचन तो ठीक है कि उनके लिये जिनके पिता नास्तिक हैं बड़ा कठिन है। परन्तु यदि सब कोई अपने

पितरों के धर्म्म का प्रमाण पूछने लगे तो क्या यह दशा बड़े अधर्म का कारण न ठहरेगी ॥

सत्यार्थी का बचन ॥ यदि धर्म्म सत्य और शास्त्र प्रमाणिक है तो इस बात को जांचके प्रगट करना अधर्म्म का कारण क्योंकर ठहर सकता। इसके विरुद्ध मेरी समझ में वुह धर्म्म और वह शास्त्र जिस में प्रमाण पूछना और परख लेना बर्ज्जित है सो ही धर्म्म इस लक्षण से अपने को निषप्रमाण और असत्य प्रगट करता है। क्योंकि शास्त्र और धर्म्म का अभिप्राय मनुष्य की प्रकृति को सुधारना और परलोक के लिये सिद्ध करना है। इस कारण जो शास्त्र और धर्म्म परमेश्वर ने किसी के लिये ठहराया हो सो उसके प्रकृति सिद्ध गुण के बिरुद्ध नहीं हो सकता है। बरन ऐसा होगा जिसमें बुद्धि के साधन से और मन के अभ्यास से उसकी आत्मा का सुधराव होवे। क्योंकि मनुष्य की बुद्धि भी परमेश्वर की कृत है और नहीं हो सकता है कि परमेश्वर किसी ऐसे धर्म्म अथवा शास्त्र को देवे जो उसके कृत के बिरुद्ध है। परमेश्वर किसी प्रकार की बिरुद्धता नहीं करता। इस कारण मतपरीक्षा के लिये उचित रीति पर बुद्धि का साधन करना और बुद्धि का प्रमाण जांच लेना अधर्म्म तो नहीं है बरन मूल धर्म्म है। क्योंकि परमेश्वर सत्य होके निरकेवल सत्य से प्रसन्न होता है और सत्य असत्य के बिचार करने के लिये बुद्धि का साधन करना मनुष्यजाति को अवश्य है ॥

वेदविद्वान का बचन ॥ यदि आप का बचन कदाचित साधारण मनुष्यों के लिये ठीक और ग्रहण के योग्य न ठहरे तथापि आप के सङ्ग इस पर चलने में मुझको कुछ डर अथवा सन्देह नहीं है। क्योंकि न्यायसूत्रों का टीकाकर्त्ता बिश्वनाथ पण्डित का यह बचन है वादाधिकारिणस्तु तत्वबुभुत्सवः॥ अर्थात वाद करने के योग्य वे हैं जो निरकेवल तत्व जानने की इच्छा रखते हैं। परन्तु जैसा आपने कहा है ऐसे भारी

प्रकरण में निपट अवश्य है कि अपनी बुद्धि का साधन उचित रीति से करें। नहीं तो सत्यता का रत्न पाने के सन्ती हम मिथ्यता के अन्धकार-रूपी बन में भटकते फिरेंगे॥

सत्यार्थी का बचन॥ हे महाशय इस विषय में आप का बचन बहुत ही ठीक और योग्य है और सत्य जानने के लिये उसको मानना अति अवश्य है। क्योंकि सर्वत्र संसार में अनेक प्रकार के मत देख पड़ते हैं और विद्यावान लोग इस भेद के अनेक कारण भी जानते हैं जैसे

१ मनुष्य की बुद्धि को यद्यपि ज्ञान शक्ति तो है तथापि यह शक्ति अपनी प्रकृति ही से परिमित है और इस कारण गूढ़ बिषयों को सम्पूर्ण-रूप से समझ नहीं सकती है इस दशा में ऐसे विषयों की भिन्न २ समझ मनुष्यों में अवश्य देख पड़ेगी॥

२ जिन लोगों को सामान्य से अधिक प्रमाण विचारने की शक्ति है तो बहुधा किसी बुरी इच्छा के कारण उनकी बुद्धि की खराई बिगड़ जाती है। और कभी २ पण्डित और ज्ञानी भी काम क्रोध द्वेष आदि के वश में होके किसी अभिप्राय के हेतु से एक ऐसे पक्ष को पकड़ लेते हैं जो ध्यान करने से दोषी और असत्य ठहरता। अपना अर्थ खोलने के लिये मैं दो एक दृष्टान्त कहूंगा जैसा

वुह तरुण जो वेश्याओं की सङ्गत आदि दुष्टताओं में प्रवृत्त रहता है सो अपने आनन्द भोग करने में जो अटकाव पड़ता है उस से अत्यन्त द्वेष करता है। अब ईश्वरोक्त शास्त्र में दुष्टता वर्जित है और उसका फल नरक का भयानक दण्ड भोग करना निश्चित है इस कारण दुष्ट तरुण जब शास्त्र का निषेध सुनता तब अपने काम से मोहित हो उस शास्त्र से जिस से उसका आनन्द रुक जाता है अति द्वेष करता है। फिर जब कभी २ आनेवाले दुःख का चेत भी उसके मन में आके उसकी अभिलाषा के समस्त बिषयों को फीका कर डालता है तब वुह इस बात

को ध्यान करके कि जो मैं नास्तिक मत को ग्रहण करूं तो मेरे आनन्द को कुछ अटकाव न होगा ईश्वरोक्तशास्त्र को घिनौना जानके त्याग करने चाहता है। इस दशा में जब वुह उस शास्त्र का प्रमाण जांचने लगता है तो अपने पक्ष के मारे उसका सत्य बिचार किस प्रकार से कर सकता है। इस रीति से कितने मनुष्य रागादि के जो खरी बुद्धि को बिगाड़ डालते हैं आधीन हो प्रमाणिक ईश्वरोक्तशास्त्र को त्याग करते हैं॥

फिर एक दूसरे शास्त्र का दृष्टान्त कहता हूं जिस में और मिथ्या शिक्षा के सङ्ग यह भी लिखा हो अर्थात कि कामुकता आदि दुष्टता जो हैं सो दान पुण्य करने से नष्ट होती है। इस दशा में कामातुर जन कहेगा कि इस मत के अनुसार पाप मोक्षण सहज है अपनी दुष्टता को छोड़ना किस लिये प्रयोजन है। इस कारण वुह उस शास्त्र से जो उसको मनोभिलाष को अनुमति देता है आनन्दित है और उसको त्याग करना नहीं चाहता है॥

फिर जो मनुष्य अपने देश के शास्त्र को छोड़के किसी दूसरे को ग्रहण करता है तो बहुधा उसके स्वदेशीय उसकी बड़ी अपनिन्दा करते हैं। इस कारण मनुष्य अन्य शास्त्र के ग्रहण करने से जो क्लेश और निन्दा होती है देखके बहुधा अन्य शास्त्रों से द्वेष करते हैं और उनके प्रमाणों का भी इस चिन्ता से कि क्या जाने सच्चे होवें कभी बिचार नहीं करते हैं। अथवा यदि थोड़ा देखें भी तथापि द्वेष के मारे निरकेवल दूषण करने के लिये देखते हैं और उनका सत्य बिचार नहीं करते हैं। यद्यपि वुह अन्यदेश का शास्त्र दृढ़ प्रमाणों से भी स्थापित होवे तथापि पक्ष के कारण उन प्रमाणों का बल अङ्गीकार नहीं करते॥

फिर जो कोई अपनी बाल्यावस्था से किसी धर्म में प्रवृत्त रहा है सो उसको बहुत प्यार करके शीघ्र नहीं छोड़ देता है। जैसे कोई माता अपने खण्डित बालक को सुन्दर जानती है तैसे वे अपने धर्म में यद्यपि

बुरा भी हो कोई दोष नहीं देख सकते हैं और यद्यपि सर्वथा निष-प्रमाण भी हो तथापि उसका पक्ष करके वे उसका निषप्रमाण होना नहीं मानते हैं॥

इन कारणों से हे पण्डितजी हमको उचित है कि इस सम्वाद में बड़ी अभिलाषा के सङ्ग निर्मल सत्य का खोज करें॥

वेदविद्वान का बचन॥ समस्त बातों में बुद्धिमान जन बड़ी सावधानी के सङ्ग चलेगा क्योंकि सत्य बात के प्राप्त करने में अनेक अटकाव पड़ते हैं। जो कुछ आपने अभी कहा है सो बहुत ही यथार्थ है और आप-को निश्चय करना चाहिये कि मैं इसको ग्रहण करता हूं। निर्मल सत्य को प्राप्त करना मैं भी अति अवश्य जानता हूं इसके बिना हमको इस लोक में और परलोक में भी असीम हानि होगी। इस लिये हमको उचित है कि बुद्धिरूपी उस नेत्र से जिसे परमेश्वर ने हमको और सारे मनुष्यों को दिया है सत्यता के चोखे मोती का बड़े उद्योग के साथ खोज करें। परन्तु अब दिन बहुत चढ़ा है और घाम से कष्ट होता है इस कारण मैं आप से बिज्ञप्ति करता हूं कि जो आप की इच्छा हो तो सांझ काल जब सूर्य्य अस्त होने पर हो हम इसी स्थान पर इस भारी बिषय की चर्चा करेंगे॥

ग्रन्थकर्त्ता का बचन॥ इस पर ये दोनों पण्डित अपने २ स्थान को प्रस्थित हुए और मैं भी अपने घर को सिधारा॥

मतपरीक्षा का प्रथम सत्सङ्ग समाप्त हुआ॥

इति॥

दूसरा सत्सङ्ग ।

वेदों की चर्चा ॥

ग्रन्थकर्त्ता का वचन ॥ उसी दिन सांझ काल को जब सूर्य्य अस्त होने पर था मैं फिर उसी स्थान को जिस में भोर के समय वेदविद्वान और सत्यार्थी सम्वाद करते थे चला गया । वहां पहुंचके मैं ने देखा कि वे दो बड़े पण्डित उस पीपल की छाया में बैठे हुए सत्सङ्ग करते हैं। तब मैं उन को प्रणाम कर उन से आज्ञा पाय उनके पास बैठ आगे की रीति उनका सम्वाद सुनने लगा ॥

सत्यार्थी का वचन॥ हे पण्डितजी आगे के सम्वाद से प्रगट हुआ कि हम दोनों सत्य का खोजना अति अवश्य जानते हैं और यह भी मान लेते हैं कि बुद्धि की निर्बलता के कारण और मन के पक्ष के हेतु यह काम बहुधा कठिन है। इस लिये मेरी समझ में हमको चाहिये कि आरम्भ में परमेश्वर की प्रार्थना करें जिस्तें वह हमारे मन को सत्य के खोज में तत्पर करके सत्य की ओर हमारी अगुवाई करे ॥

प्रार्थना॥ हे परमात्मा तू जो अकेला अनादि और अनन्त ईश्वर और सम्पूर्ण ज्ञान का मूल है दयारूपी नेत्र से हम अज्ञान सत्य खोजकों पर दृष्टि कर। हे स्वामी। सत्य के खोजने में हमारी सहायता कर क्योंकि तेरी अगुवाई के बिना हम सत्य को पा नहीं सकते हैं॥

अब आप हम को बतलाइये कि वेद के प्रमाणिक होने पर जिन शङ्काओं को बौद्धमतावलम्बी आदि करते हैं आप किन प्रमाणों से इन शङ्काओं को दूर करते हैं। अर्थात वेद किस रीति से प्रमाणिक और ईश्वरोक्तशास्त्र ठहरते हैं ॥

वेदविद्वान का वचन॥ वेद सनातन से अनादि गिने गये हैं और

आज लों प्रचलित हैं। इनके कर्त्ता किसी मनुष्य का स्मरण संसार में नहीं रहा है। इस कारण लौकिक उत्पत्ति न होने से अनुमान करके पण्डित लोग उनको अनादि और ब्रह्मा के उच्चारा हुआ मानने में सम्मति रखते हैं। और वेदों के किसी २ अंश में लौकिक वृत्तान्त होने से तो उसके अनादि होने में दोष नहीं लगता है अथवा काठक आदि में मनुष्यों के नाम होने से भी सन्देह नहीं होता है। क्योंकि वेद का जो २ अंश पूर्व काल में किसी प्रसिद्ध मुनि से अभ्यास किया गया सो ही अंश इसके उपरान्त उसी मुनि के नाम से कहलाता था। इसके अनुसार पूर्वमीमांसा का सूत्रकर्त्ता जैमिनि वेद का अनादि होना इन्हीं प्रमाणों से स्थापन करता है जैसा

वेदांश्चैके सन्निकर्षं पुरुषाख्याः। अनित्यदर्शनाच्च।
उक्तन्तु शब्दपूर्वत्वम्। आख्या प्रवचनात्॥
परन्तु श्रुति सामान्यम्॥

अर्थात कोई २ यह शङ्का करते हैं कि वेद नवीन हैं क्योंकि उनके अंश काठक गौथुम इत्यादि मनुष्यों के नाम से कहलाते हैं फिर इसलिये कि उन में जनमेजयादि अनित्य मनुष्यों की कथा हैं। परन्तु शब्द का अनादि होना तो पहिले ही स्थापन कर चुके हैं और वेद के अंश जो काठक आदि नाम से कहाते हैं उसका कारण यह है कि काठक आदि ने उन भागों को पहिले पढ़ा है। और जनमेजयादि पद जो वेद में दिखाई देते हैं सो सचमुच मनुष्यों के नाम नहीं परन्तु और पदार्थ के तात्पर्य्य से कहे गये हैं॥

इसी प्रकार से समस्त और शास्त्रों को भी जब मुनि लोगों ने ब्रह्मा के मुख से पाया था तो क्रम २ से अपने शिष्यों को दिया। यों शास्त्रों का सम्पूर्ण संग्रह परम्परा से प्राप्त हुआ और सदा से इस बात का स्वीकार करते हैं कि शास्त्र ब्रह्मा के मुख से निकले और दैवीय हैं। इस दशा में

सम्पूर्ण शास्त्रों का ईश्वरोक्त और प्रमाणिक होना शब्दप्रमाण से सिद्ध होता है ॥

सत्यार्थी का बचन॥ आप इस बात को स्मरण कीजिये कि आप्तवाक्यं शब्दः अर्थात शब्दप्रमाण बिश्वासयोग्य का बचन है। और जब लों यह बात सम्पूर्णरूप से सिद्ध न हो कि बोलनेवाला बिश्वासयोग्य है तब लों बुद्धिमान उसकी साची पर आसरा नहीं करते हैं ॥

बर्त्तमान काल में तो शास्त्रों का कोई कर्त्ता जीता नहीं है क्योंकि वे सब के सब बहुत काल से परलोक में चले गये हैं। इस दशा में परम्परा की बात के बिना उनका वृत्तान्त कोई नहीं जान सकता है परन्तु जब लों उस की परीक्षा न करे और जांच न लेवे परम्परा की बात पर आसरा करना बुद्धिमान को उचित नहीं है। क्योंकि प्रसिद्ध है कि बहुतसी निष्प्रमाण कथा और कल्पित बातें जो परम्परा से होती आई हैं और संसार में प्रचलित हैं बिश्वास के योग्य नहीं। कितने अविवेकी जन तो उन पर बिश्वास लाते हैं परन्तु विवेकी ध्यान करने से उनकी मिथ्यता प्रगट करते हैं। बरन वे कथा भी जिनकी उत्पत्ति किसी सत्य मूल से देख पड़ती है बहुधा क्रम २ से बदल जाती हैं। जैसी जल की धारा जो निर्मल सोत से निकलती है पहिले अति निर्मल और स्पष्ट बह जाती है परन्तु बल से बहके थोड़े बिलम्ब के पीछे मट्टी कीचड़ आदि वस्तुओं के मिलने से गदली हो जाती है इसी प्रकार से वृत्तान्त की धारा भी यद्यपि वक्ता के स्वच्छ झरनेरूप मुख से निर्मल निकलती है तौ भी मिथ्या कल्पित बातों के मिलने से और सत्य बात के बढ़ाव से मलिन और अस्पष्ट हो जाती है। इस कारण हे पण्डितजी बिचार की बात है कि यह कहावत जो इस देश में फैल रही है अर्थात कि वेद प्रमाणिक और दैव्य और ईश्वरवाणी है सो क्या सत्य है कि असत्य ॥

वेदविद्वान का बचन ॥ इस बिषय में मैं उस परम्परा की बात पर

जो सनातन से आज लों भारतखण्ड में कही गई है विश्वास लाता हूं। जो आप का भिन्न बिचार हो तो बतलाईये परन्तु परम्परा की बात को छोड़ अन्य प्रमाणों का जो वर्णन मैं ने किया आप इनका क्या बिचार करते हैं॥

सत्यार्थी का बचन॥ परम्परा की बात को छोड़ आप ने दो और बिषयों का वर्णन किया परन्तु मेरी समझ में ये भी उसके समान ध्यान करने से यथार्थ प्रमाणिक नहीं ठहर सकते हैं। जैसे जैमिनि का सूत्र शब्द अनादि है यद्यपि यह बात ग्रहण भी हो तथापि वेद का अनादि होना इस से सिद्ध नहीं हो सकता है। क्योंकि जिस प्रकार से वेद का शब्द है उसी प्रकार से समस्त और पुस्तकों का भी शब्द है बरन वे पुस्तकें भी जिन में वेद खण्डन होता है इस प्रमाण से अनादि ठहरतीं। परन्तु शब्द का अनादि होना क्योंकर सिद्ध हो सकता है इस बात का कोई प्रमाण देख नहीं पड़ता है बरन शब्द का उत्पन्न होना प्रत्यक्ष है और जो उत्पन्न हुआ क्योंकर अनादि हो सकता है॥

वेदविद्वान का बचन॥ आपका यह प्रमाण तो अन्नम्भट्ट नैयायिक के बचन के समान है कि उसने यों कहा है॥

मूल॥

साध्याभावव्याप्योहेतुर्विरुद्धः यथा शब्दोनित्यः
कृतकत्वादिकि कृतकत्वं हि नित्यत्वाभावेना-
नित्यत्वेन व्याप्तम्॥

अनुवाद॥ बिरुद्ध हेतु उसको कहते हैं कि जिस में साध्य के अभाव की व्याप्ति रहती है। जैसा शब्द नित्य है क्योंकि कार्य्य है इस न्याय में कृतकत्व अर्थात कार्य्यत्व के अभाव की व्याप्ति रखता है इसलिये बिरुद्ध है॥

और मैं मान लेता हूं कि इस प्रमाण का कोई उत्तर नहीं हो सक-

ता है परन्तु जब वेदों के किसी लौकिक कर्त्ता का स्मरण नहीं रहा है तो ब्रह्मा को छोड़ उसका कर्त्ता कौन हो सकता है॥

सत्यार्थी का बचन॥ कर्त्ता का स्मरण न रहने से ग्रन्थ की प्राचीनता तो सम्भव हो सकती है परन्तु उसका अनादित्व सिद्ध नहीं हो सकता है जैसे यदि किसी घर का जो कर्त्ता था कदाचित उसे कोई नहीं जानता कि कौन था तथापि कोई इस्से अनुमान नहीं करेगा कि वह घर अनादि है अथवा कि उसका कर्त्ता ब्रह्मा था। आप तो जानते हैं कि काशी से चारेक कोस की दूरी पर एक स्थान सारनाथ है वहां अनेक गृह खम्भ मन्दिर मूर्त्तें आदि देख पड़ते हैं और कोई नहीं जानता कि उनके कर्त्ता कौन थे। उनके स्वरूप से तो निश्चय है कि उनके कर्त्ता बौद्धमतावलम्बी होंगे और एक काल में ये लोग इस देश में प्रबल थे परन्तु कौन २ पुरुष उन मन्दिरों के बनानेवाले थे और उनके क्या २ नाम थे कोई नहीं जानता तथापि आप ऐसा नहीं मानेंगे कि सारनाथ नगर अनादि अथवा उसका कर्त्ता ब्रह्मा था और ग्रन्थ के बिषय में इसी प्रकार का बिचार करना उचित है॥

वेदविद्वान का बचन॥ जो आप कहते हैं कि सारनाथ के गृहादिक के स्वरूप से निश्चय है कि उनके बनानेवाले बौद्धमतावलम्बी थे अर्थात आप किसी २ लक्षण से उनके कर्त्ता का अनुमान करते हैं तो क्या वेदों के बिषय में भी इसी प्रकार से अनुमान करना उचित नहीं है॥

सत्यार्थी का बचन॥ निस्सन्देह इसी प्रकार से अनुमान करना बहुत ही उचित और यथार्थ है परन्तु ऐसे अनुमान से वेदों का कर्त्ता ईश्वर न ठहरेगा और वेद अनादि न ठहरेंगे क्योंकि जो २ लक्षण उन में पाये जाते हैं उनसे अनुमान सिद्ध है कि वेदों के कर्त्ता मनुष्य थे। जो मनुष्य वेदानुक्रमणी नामक प्राचीन ग्रन्थ में मन्त्रों के ऋषि कहलाते हैं सो ही वेद के प्रथम कर्त्ता थे क्योंकि यदि वे मन्त्रों के कर्त्ता न थे तो किस लिये

भिन्न २ मन्त्र उनके नाम से कहलाते हैं। यदि आप कहें कि ये ऋषि मन्त्रों के दर्शी अर्थात देखनेवाले थे पर वे आप मन्त्रों के बनानेवाले न थे तो इसका उत्तर यह है कि वशिष्ट और बिश्वामित्रादिक जो मन्त्रों के ऋषि कहलाते हैं सो मन्त्रों के कई एक स्थलों में अपना ही वृत्तान्त कहते हैं। जब वे अपनी वार्त्ता का मन्त्रों में वर्णन करते हैं तो बहुत स्पष्ट है कि मन्त्र उन्हीं के बनाये हुए हैं॥

फिर बहुत से राजाओं और जातिगणों जैसे दस्यु त्सु इत्यादि और बहुत वृत्तान्तों जैसे युद्धविजय इत्यादि और अनेक स्थानों देशों और नदियों की जो अनादि नहीं हैं चर्चा वेद में है तो वेद जिस में उन पुरुषों और स्थानों और वृत्तान्तों की चर्चा है किस प्रकार से अनादि हो सकेगा। इस बात पर जो मीमांसक लोग उत्तर देते हैं कि वेद में जो अनेक देशों और पुरुषादिकों के नाम देख पड़ते हैं सो सचमुच उनके नाम नहीं हैं परन्तु और २ वस्तुओं से उनका तात्पर्य्य है सो बात ऐसी निष्प्रमाण और निरयुक्तिक है कि कोई विवेकी उसका स्वीकार न करेगा और स्पष्ट जान पड़ता है कि पण्डित लोगों ने अपनी बात का प्रतिपालन करने के लिये ऐसी कल्पना किई है॥

वेदविद्वान का बचन॥ आपके प्रमाणों से यदि सिद्ध भी ठहरे तथापि निरकेवल यह परिणाम निकलता है कि वेद अनादि नहीं हैं और वेदान्ती और नैयायिक दोनों यह बात मानते हैं। वे कहते हैं कि हर एक सृष्टि के समय ईश्वर वेद को बनाता है और इस बात का यह प्रमाण बतलाते हैं कि ईश्वर की सामर्थ्य और अनन्त बुद्धि के बिना ऐसा बड़ा कार्य्य नहीं हो सकता है। इस सिद्धान्त का तात्पर्य्य नहीं है कि वेदों के प्रथम कर्त्ता मनुष्य न थे परन्तु यह कि जो ऋषि इत्यादि उनके पहिले बक्ता थे सो निरी अपनी स्वाभाविक बुद्धि और ज्ञानमात्र से नहीं परन्तु ईश्वरावेश और देवज्ञान की सामर्थ्य से कहते थे और जब मैं वेदों

के ज्ञान पर ध्यान करता हूं तो उनका मनुष्य की बुद्धि से बन जाना निस्सन्देह मुझ को निपट असम्भव देख पड़ता है॥

सत्यार्थी का बचन॥ इस बिषय में आपका कहना बहुत ही ध्यान-योग्य है और इनके सत्य बिचार के लिये अवश्य हैं कि अपने मन को सीधा और निरपक्ष रक्खें। विद्यावान ऐसा मानते हैं कि जब लों किसी वृत्तान्त के समझने के लिये सृष्टि से बाहर किसी और कर्त्ता का अनुमान अवश्य न हो तब लों ऐसे कर्त्ता का अनुमान करना उचित नहीं है। अब देखा चाहिये कि वेदों में कोई ऐसा वृत्तान्त मिलता है जिसकी रचना मनुष्य की स्वाभाविक सामर्थ्य से बाहर थी। आपकी इच्छा हो तो वेदों और २ शास्त्रों का वृत्तान्त जिस को आप भली भांति जानते हैं आरम्भ से कहके इसके दो एक बिषयों का स्मरण आपको दिलावेंगे जिस्से इस भारी प्रकरण में मेरा सम्पूर्ण मत आपको विदित होवे॥

वेदविद्वान का बचन॥ वेदों और अन्य शास्त्रों को ईश्वरवाणी जानके मैं उनके वृत्तान्त के सुनने से सदा आनन्दित हूं और आप जो ऐसी सूक्ष्म बातों के विवेकी और सत्यबिचारी हैं सन्देह नहीं है कि आप की बुद्धि और ज्ञान से उन शास्त्रों का यथार्थ अभिप्राय और स्पष्ट रूप से भी मुझ पर प्रगट हो जायगा॥

सत्यार्थी का बचन॥ इस वृत्तान्त को भली भांति समझने के लिये पहिले जानना चाहिये कि ब्राह्मण आदि वर्ण जो इस भारतखण्ड में रहते हैं सो पूर्वकाल में आर्य्य नाम से कहलाते थे और वेद के अनेक स्थलों में उनका यही नाम आता है। अब आर्य्य नाम उस कुल का नाम है जिस्से आदि में ब्राह्मण आदि वर्ण उत्पन्न हुए। इसी मूल से कितने एक और वंश भी निकले और जिस रीति भारतखण्ड में उसी रीति और २ देशों में भी उनके नाम बदल गये उन वंशों में प्राचीन

फारसी और यवन थे। इन तीन वंशों का एक ही मूल से उत्पन्न होना अनेक प्रमाणों से सिद्ध होता है एक तो यह है कि उन की पुरानी भाषाओं के शब्द धातु और विभक्ति तुल्य हैं। पण्डितजी इन दिनों में बहुतेरे विद्यावान जो भिन्न २ भाषाओं में निपुण हैं इस प्रकरण का मन लगाके अति खोज करते हैं यदि आप इस का सम्पूर्ण वृत्तान्त जानने चाहते हैं तो किसी एक पुस्तक को देखिये जिस में इसकी चर्चा है। परन्तु उस खोज से यह परिणाम सिद्ध है कि विशेष करके प्राचीन यवनी भाषा की क्रिया और सञ्ज्ञा और इन दोनों की विभक्ति और अनेक प्रत्यय इत्यादि सो संस्कृत भाषा के इन्हीं शब्दों से ठीक मिलते हैं। फिर धर्म की कितनी एक रीतों की भी समानता है जैसे भारतखण्ड में अग्नि की पूजा इत्यादि पूर्वकाल से प्रचलित हो रही है तैसे प्राचीन फारस आदि देशों में उनकी चाल पहिले थी। इस आर्य्यकुल का मूलस्थान फारस देश की कहीं उत्तर ओर को और भारतखण्ड के पश्चिम उत्तर कोने में था। इस के पीछे उनके कितने एक झुंड स्वदेशत्यागी हो भारतखण्ड में आ बसे उस वृत्तान्त के काल का ठीक समाचार नहीं मिलता है परन्तु अनुमान है कि उसे आज लों पांच सहस्र बरसों से कुछ न्यून बीत गये होंगे॥

वेदविद्वान का बचन॥ इस विषय में आपका कहना मुझको अति असम्भव देख पड़ता है क्योंकि इतने बरस तो कलियुग ही के बीत गये हैं और इसे पहिले तीन युग अर्थात चालीस लाख बरस हो रहे थे तो आप किस प्रकार से कह सकते हैं कि पांच सहस्र बरस भी न रहे॥

सत्यार्थी का बचन॥ युगों की जो गिनती शास्त्रों में मिलती है सो किसी प्रकार से सिद्ध नहीं हो सकती है क्योंकि विद्या के द्वारा एक बात सिद्ध है जिसको सुनने से कदाचित आप अचम्भित होंगे फिर भी यह बात परीक्षायुक्त विद्या से निश्चय है। सो यह है कि इस काल से छः

सात सहस्र बरस पहिले इस भूमण्डल की ऐसी गति थी जिस में मनुष्य-जाति का जीता रहना अनहोना था और सचमुच छः सहस्र बरस से पहिले मनुष्यजाति की उत्पत्ति नहीं हुई। उस विद्या से जाना जाता है कि जो बनस्पति जीव जन्तु उस काल से पहिले भूमण्डल में थे और जिनकी हड्डियां आदि चिन्ह भूमि के पृष्ठ में मिलते हैं ऐसे थे जो अब सम्पूर्ण संसार में कहीं नहीं मिलते हैं और जो अब मिलते हैं सो उस काल के अवशिष्टों में उनका चिन्ह कहीं नहीं देख पड़ता है। वरन प्रत्यक्ष लक्षणों से यह भी सिद्ध है कि उस काल का जल और बतास उस प्रकार को थी जिस में मनुष्यजाति आदि जीव जन्तु जो अब हैं किसी रीति से जीते नहीं रह सकते। इस समाचार का सन्देह आपके मन में होवे तो होवे परन्तु पश्चिम देशवालों की विद्या अति प्रमाणिक और पक्की है और निश्चय है कि यह समाचार यथार्थ और सच्चा है॥

वेदविद्वान का वचन॥ आपका वृत्तान्त तो निस्सन्देह अति आश्चर्य है परन्तु बिन जाने मैं इसको किस प्रकार से त्याग कर सकता हूं कदाचित सच्चा होवे। आप तो बड़े सत्यविचारी हैं और जान बूझके एक निष्प्रमाण बात को निश्चय सत्य नहीं कहेंगे। परंतु इस बात को छोड़ आर्य्यकुल का जो वृत्तान्त आप करते थे सो आगे बढ़के कहिये॥

सत्यार्थी का वचन॥ ये आर्य्य लोग प्रथम भारतखण्ड के निवासी न थे उन से पहिले एक दूसरा वंश इस देश में रहता था। वेदों के कितने स्थलों में इस दूसरे वंश का नाम दस्यु लिखा है और उस काल में आर्य्य और दस्यु कुलों के बीच संग्राम हो रहा था। जैसे ऋगवेद के ५१ सूक्त के ८ वें पद में लिखा है॥

विजानीह्यार्य्यान्ये च दस्यवो वर्हिष्मते रन्धया शासदव्रतान्। शाकी
भव यजमानस्य चोदिता विश्वेत्ता ते सधमादेषु चाकन॥ ८॥

अर्थात आर्य्य और दस्युओं को भी जान रख और उन्हें जो यज्ञ कर-

नेहारों के कर्म के बिरोधी हैं रोकके उन के वश में कर और हे सामर्थी तू यज्ञ करनेहारों को उभाड़ ऐसे यज्ञों में जिनसे तू आनन्दित होता है मैं तेरे सब चरित्रों की प्रशंसा करने चाहता हूं॥

वेदविद्दान का वचन॥ अब मेरे चित में आता है कि उसी वेद के एक दूसरे सूक्त में उसी प्रकार का वृत्तान्त लिखा है। जैसे १०२ सूक्त की २ ऋचा॥

स जातूभर्मा श्रद्दधान ओजः पुरोविभिन्दन्नचरद्विदासीः॥
विद्दान वज्रिन्दस्यवे हेतिमस्यार्य्यंसहोवर्धया द्युम्नमिन्द्र॥ २॥

अर्थात वह बज्रधारण करनेहारा और उन कार्य्यों को जो पराक्रम से किये जाते हैं बड़े आदर से चाहनेहारा दस्युओं के नगरों को नाश करता हुआ चला गया। हे बज्रधारण करनेहारे और स्तुतियों के जाननेहारे इन्द्र तू इस स्तुति करनेहारे के नाशक पर शस्त्र चला और आर्य्यों के बल और यश को बढ़ा॥

आर्य्य और दस्यु कुलों का जो वर्णन आप करते हैं सो इन सूक्तों के तात्पर्य्य से ठीक मिलता है। पहिले तो इनका अर्थ मैं भली भांति नहीं जानता था परंतु अब वह बहुत स्पष्ट देख पड़ता है आप इस विषय का और वर्णन करिये॥

सत्यार्थी का बचन॥ ये दस्युकुल क्रम २ से बुद्धिमान आर्य्य लोगों के हाथ हार मान अपने २ देश को छोड़ पर्वतों आदि स्थानों में शरण लेने को गये। उनके अवशिष्ट भील गोंड़ इत्यादि नाम से आज लों विन्ध्य आदि पर्वतों में मिलते हैं और कितने दस्यु पूर्व काल में आर्य्य के आधीन हो उनके बीच बास कर साधारण बर्णों के सङ्ग मिल गये। जिस समय आर्य्यकुल पहिले भारतखण्ड में आया उस समय एक देश में जो पंजाब के निकट है बास करता था। यह बात भी वेद के कितने सूक्तों से जानी जाती है क्योंकि उन सूक्तों में उस देश की पांच नदियों

और सिन्धु और यमुना नदियों के नाम बारम्बार आते हैं परन्तु एक पण्डित ने ऋक साम यजुर वेदों को अभ्यास करके यह बात निर्णय की है कि उन तीनों वेदों में गङ्गा नदी का नाम केवल एक ही बार आता है ॥

जैसे ऋक वेद के १० मण्डल ६ अनुवाक के ७ सूक्त में यह ऋचा है ॥

इमं मे गङ्गे यमुने सरस्वती इत्यादि ॥

अर्थात् हे गङ्गा यमुना और सरस्वती इत्यादि ॥

इस बात से यह परिणाम निकलता है कि उस काल में आर्य्य लोग गङ्गा के तीर पर नहीं परन्तु उसके दूर पश्चिम दिशा को बास करते थे। इसके उपरान्त जब मनु की स्मृति बन गई तब आर्य्यकुल का देश बढ़ गया था ॥

जैसे मनुसंहिता के दूसरे अध्याय में ॥

सरस्वतीदृषद्वत्योर्देवनद्योर्यदन्तरम् ।
तं देवनिर्मितं देशं ब्रह्मावर्त्तं प्रचक्षते ॥ १७ ॥
तस्मिन् देशे य आचारः पारम्पर्य्यक्रमागतः ।
वर्णानां सान्तरालानां स सदाचार उच्यते ॥ १८ ॥
कुरुक्षेत्रं च मत्स्याश्च पञ्चालाः शूरसेनकाः ।
एष ब्रह्मर्षिदेशोवै ब्रह्मावर्त्तादनन्तरः ॥ १९ ॥
हिमवद्विन्ध्ययोर्मध्यं यत्प्राग्विनशनादपि ।
प्रत्यगेव प्रयागाच्च मध्यदेशः प्रकीर्त्तितः ॥ २१ ॥
आसमुद्रात्तु वै पूर्वादासमुद्रात्तु पश्चिमात् ।
तयोरेवान्तरं गिर्य्योरार्य्यावर्त्तं विदुर्बुधाः ॥ २२ ॥

अर्थात सरस्वती और दृषद्वती जो देवताओं की नदियां हैं उनके मध्य में जो देश हैं सो देवों का बनाया है उसको ब्रह्मावर्त्त कहते हैं ॥ १७ ॥

उस देश में परम्परा से वर्णों का जो आचार चला आया है वह सदाचार कहावता है॥ १८॥ कुरुक्षेत्र मत्स्य पाञ्चल और शूरसेन यह ब्रह्मर्षियों का देश है जो ब्रह्मावर्त्त से लगा है॥ १९॥ हिमवान और विनध्याचल के मध्य में बिनशन के पूर्व और प्रयाग के पश्चिम जो देश है सो मध्यदेश कहावता है॥ २१॥ और उन्हीं पर्वतों के मध्य में पूर्वसमुद्र से लेके पश्चिमसमुद्र लों जितना देश है उसको पण्डित लोग आर्य्यवर्त्त कहते हैं॥ २२॥

वेदविद्वान का बचन॥ मनु के इन बचनों से ज्ञान होता है कि उस काल में विशेष वर्ण का नियम प्रबल था। क्या इससे आपका वर्णन कि सब के सब एक ही मूल से उत्पन्न हुए खण्डन नहीं होता है॥

सत्यार्थी का बचन॥ मनु के काल में तो ब्राह्मण आदि वर्ण का भेद था परंतु ऐसा जान पड़ता है कि जब आर्य्यकुल पहिले भारतखण्ड में आया उस काल विशेष वर्ण नहीं था। कितने विदेशी पण्डित जिन्हों ने वेदों का अभ्यास किया है कहते हैं कि वेद के प्राचीन सूक्तों में विशेष वर्ण का वृत्तान्त नहीं है परंतु कितने और जानते हैं कि अधिक खोज किये बिना इस विषय की सत्यता निर्णय नहीं हो सकती है॥

वेदविद्वान का बचन॥ क्या आपको इस बात का ज्ञान नहीं है कि पुरुषसूक्त में चार वर्ण के स्थापन होने का वृत्तान्त सम्पूर्णरूप से लिखा है इस दशा में कोई नहीं कह सकता है कि वेदों में विशेष वर्णों का समाचार नहीं है॥

सत्यार्थी का बचन॥ सच पुरुषसूक्त में ऐसा वृत्तान्त लिखा है परंतु कितने एक लक्षणों से पण्डित लोग जानते हैं कि वह सूक्त प्राचीन नहीं है नवीन है क्योंकि उसका अभिप्राय समस्त और मन्त्रों और सूक्तों से भिन्न है इन में भिन्न २ इष्ट देवताओं का यश और स्तुति है परंतु पुरुष-सूक्त में निरकेवल परमात्मा की स्तुति है इस कारण विवेकी लोग

विचार करते हैं कि यह उनसे नवीन है। फिर पुरुषसूक्त की रचना भी दूसरे सूक्तों से भिन्न है और यह भेद उस प्रकार का है जिस्से उसकी नवीनता सिद्ध होती है जैसा पुराणों का संस्कृत वेदों के संस्कृत से नवीन देख पड़ता है। इस कारण उस सूक्त से सिद्ध नहीं हो सकता कि आदि काल में चार वर्ण का भेद था और बुद्धादि प्रत्यक्ष प्रमाणों से सिद्ध है कि प्रकृति सिद्ध मूल स्वभाव के विषय में चार वर्णों का कुछ भेद नहीं है। फिर शास्त्रों में भी इस बात का चिन्ह देख पड़ता है कि कितने मनुष्य जो जन्म के ब्राह्मण नहीं थे फिर भी ब्राह्मण हो गये। परंतु आप जो शास्त्रों को ऐसी भली भांति जानते हैं बतलाइये कि गार्ग्य आदि क्षत्रियों का शास्त्रों में कैसा वृत्तान्त लिखा है॥

वेदविद्वान का वचन॥

विष्णुपुराण के ४ अंश १९ अध्याय में लिखा है। गद्य।

गर्गाच्छिनिस्ततोगार्ग्याः शैन्याः क्षत्रोपेताः द्विजातयो

बभूवुः ९ अर्थात गर्ग से शिनि उससे शैन्य नाम गार्ग्य हुए जो क्षत्रियधर्मयुक्त ब्राह्मण हुए॥ फिर यह भी लिखा है॥

महावीर्यादुरुक्षयो नाम पुत्रोऽभूत तस्य त्र्यारुणपुष्करिणौ कपिश्च पुत्रत्रयमभूत तच्च त्रितयमपि पश्चाद्विप्रतामुपजगाम इति॥

अर्थात महावीर्य से उरुक्षयनाम पुत्र हुआ उसके त्र्यारुण पुष्करी कपि ये तीनों पुत्र हुए वे तीनों पीछे से ब्राह्मण हुए॥

सत्यार्थी का वचन॥ अब आप ध्यान कीजिये कि जब ये लोग क्षत्री होके ब्राह्मण हो गये तो विशेष वर्ण किस प्रकार से स्वाभाविक हो सकता है। फिर एक बात यह है कि पुराणों के कितने स्थलों में लिखी है कि प्राचीन राजाओं ने चार वर्णों को स्थापन किया। जैसे विष्णुपुराण के ४ अंश के ८ अध्याय में लिखा है॥

गृत्समदस्य शौनकश्चातुर्वर्ण्यप्रवर्त्तयिताऽभूत्॥

अर्थात गृत्समद का बेटा शौनक चारों वर्णों का प्रचारनेहारा हुआ। फिर उसी अध्याय में यह लिखा है॥

भार्गस्य भार्गभूमिरतस्मात्चातुर्वर्ण्यप्रवृत्तिः॥

अर्थात भार्ग से भार्गभूमि उससे चारों वर्णों का प्रचार हुआ॥

वेदविद्वान का वचन॥

इसके समान मत्स्यपुराण में भी लिखा है॥

चतुरो नियतान् वर्णाम् त्वं स्थापयेति वरोब्रह्मणा बलये दत्तः॥

अर्थात ब्रह्मा ने बलि को बर दिया कि तू चारों वर्णों को व्यवस्था से स्थापन कर॥

फिर वायुपुराण में भी है॥

पुत्रोगृत्समदस्य च शुनकोयस्य शौनकः।
ब्राह्मणाः क्षत्रियाश्चैव वैश्याः शूद्रास्तथैव च।
एतद्वंशे समुद्भूता विचित्रैः कर्मभिर्द्विजाः इति॥

अर्थात गृत्समद का बेटा शुनक हुआ जिसके शौनक नाम पुत्र के वंश में अनेक प्रकार भिन्न २ कर्मों से ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्य और शूद्र उत्पन्न हुए॥

सत्यार्थी का बचन॥ अब आप की कृपा से चार वर्ण की अनेक भिन्न २ उत्पत्ति शास्त्र की शिक्षा के अनुसार हो चुकी है। इस समय इन बिरुद्ध वृत्तान्तों की चर्चा कि कौन यथार्थ है और कौन अयथार्थ है अथवा इन शास्त्रों के प्रमाणों की चर्चा हम नहीं करते हैं। परंतु एक बात सिद्ध है कि जब राजाओं ने अपनी आज्ञा से चार वर्ण स्थापन किये तो मनुष्यजाति में विशेष वर्ण का कोई स्वाभाविक गुण नहीं हो सकता। अब इसके सम्बन्ध में एक और बात का बिचार कीजिये कि पूर्व काल में ब्राह्मणों और क्षत्रियों के बीच अपनी २ प्रधानता के लिये बड़ा विवाद और झगड़ा हो रहा था। विश्वामित्रादि प्रसिद्ध क्षत्री चाहते थे कि

हम भी वेद पढ़ाने का अधिकार रक्खें और बिश्वामित्र और वशिष्ट के बीच जो द्वेष पुरोहिताई के विषय में हो रहा था इसके प्रत्यक्ष लक्षण ऋकवेद में मिलते हैं। इन ऋषियों के सूक्तों से जाना जाता है कि वे दोनों सुदास नामी एक राजा के पुरोहित थे। इन सूक्तों में आप देख लीजिये कि एक एक ऋषि देवताओं को प्रसन्न करने में अपनी २ सामर्थ्य का बखान करता है इस प्रकार से वशिष्ट कहता है॥

ऋकवेद के ७ मण्डल २ अनुवाक १६ सूक्त में।

दूरादिन्द्रमनयन्ना सुतेन तिरोवैशन्तमतिपान्तमुग्रम्॥

पाशद्युम्नस्य वायतस्य सोमात सुताद इन्द्रो वृणीता वशिष्ठान इत्यादिना॥

अर्थात वे सोम के अर्पण से इन्द्र को जो सामर्थी और चमस अर्थात सोमपात्र को लिये पी रहा था दूर से ले आये इन्द्र ने वायत के पुत्र पाशद्युम्न के सिद्ध किये हुए सोमरस से वशिष्ट के पुत्रों को उत्तम जाना॥ फिर उसी सूक्त में लिखा है॥

वशिष्टस्य स्तुवत इन्द्रो अश्रुद् उरु तृत्सुभ्यो अकृणोद् उलोकं॥

अर्थात जब वशिष्ट स्तुति कर रहा था तो इन्द्र ने सुना और तृत्सुओं को एक बिस्तृत स्थल दिया॥

इन सूक्तों में वशिष्ट सुदास को जानाता है कि मेरी ही सामर्थ और भजन से इन्द्र का आशीर्वाद प्राप्त होता है। अब दूसरे सूक्तों में बिश्वामित्र क्षत्री इसी प्रकार से अपना बखान करता है क्या आप को बिश्वामित्र का कोई सूक्त स्मरण आता है॥

वेदविद्वान का बचन॥ हां ३ मण्डल के ४ अनुवाक के १५ सूक्त में बिश्वामित्र यों कहता है॥

महां ऋषिर्देवजा देवजूतोऽस्तभ्नात सिन्धुमर्णवं नृचक्षाः॥

बिश्वामित्रोयदवहत् सुदासमप्रियायत कुशिकेभिरिन्द्रः॥

अर्थात बड़े सामर्थी और तेजों के निधि और तेजों से दृढ़ी हात और मनुष्यों के अध्यक्ष ऋषि ने जल से पूर्ण नदी को रोका और बिश्वामित्र ने सुदास राजा से जब याग करवाया तब इन्द्र कुशिक के पुत्रों के द्वारा से प्रसन्न किया गया॥ फिर उसी सूक्त में भी लिखा है॥

य इमे रोदसी उभे अहमिन्द्र मतुष्टवं बिश्वामित्रस्य रक्षति ब्रह्मेदं भारतं जनमिति॥

अर्थात मुझ बिश्वामित्र के मन्त्र से जिसने स्वर्ग और पृथ्वी दोनों में रहनेहारे इन्द्र की स्तुति किई भरत कुल के लोगों की रक्षा होती है॥

सत्यार्थी का बचन॥ आपने ठीक कहा है और उसी सूक्त के अन्त की ऋचा देखिये जिसमें मन्त्रकर्त्ता बिश्वामित्र वशिष्ट की बहुतसी बुरी बातें कहता है। वेदानुक्रमणिका के कर्त्ता ने इस प्रकार की इस ऋचा की टीका किई है॥

अन्त्या अभिशापार्थास्ता वशिष्टद्वेषिण्योन वशिष्ठाः शृण्वन्तीति॥

अर्थात ये अन्त की ऋचाएं श्राप के लिये हैं और वशिष्ट के बिरुद्ध हैं इस लिये वशिष्ट के सन्तान उन्हें नहीं सुनते हैं॥

फिर वृहतदेवता नाम ग्रन्थ में इन्हीं ऋचाओं के बिषय में शौनक ने यों कहा है॥

शतधा भिद्यते मूर्द्धा कीर्त्तनेन श्रुतेन वा
तेषां बालः प्रमीयंते तस्मात् तास्ता न कीर्त्तयेदिति॥

अर्थात इनके कहने अथवा सुनने से मस्तक के सैकड़ों टुकड़ा होते हैं और ऐसों के लड़के मर जाते इस लिये कोई उनको न पढ़े॥

इन बचनों से सिद्ध होता है कि धर्म के प्रकरण में भी ब्राह्मणों को क्षत्रियों से विवाद करना पड़ा और इसे अनुमान होता है कि आदि काल में वे इस प्रधानता के अधिकारी न थे परन्तु क्रम २ से इसको

प्राप्त करते गये। और शास्त्रों से जाना जाता है कि पूर्व काल में वेन आदि राजा उनकी प्रधानता को निपट असह्य जानते थे। आप सत्य-विचारी हैं एक उदाहरण जो ऐतरेय ब्राह्मण के ७ अध्याय में लिखा है सुनिये॥

विश्वान्तरोह सौषद्मनः श्यापर्णान् परिचक्षाणोविश्यापर्णं यज्ञमाजह्रे। तद्धानुबुध्य श्यापर्णास्तं यज्ञमाजग्मुस्तेह तदन्तर्वेद्यासाञ्चक्रिरे। तान् ह दृष्ट्वोवाच पापस्य वा इमे कर्मणः कर्त्तार आसते पूताया वाचोवदितारोयच्छ्यापर्णा इमानुत्थापतेमे मेऽन्तर्वेदिमासिषतेति तथेति तानुत्थापयाञ्चकुस्ते होत्थाप्यमाना रुरुविरे ये तेभ्योभूतवरेभ्यो ऽसितमृगाः कश्यपानां सोमपीथमभिजिग्युः पारिक्षितस्य जनमेजयस्य विकश्यपे यज्ञे तैस्ते। तत्र वीरवन्त आसुः कस्वित सोऽस्माकास्ति वीरोय इमं सोमपीथमभिजेष्यतीति। अयमहमस्मिवेवीर इति होवाच रामोभार्गवेयो रामोहास भार्गवेयो ऽनुचान श्यापर्णीयस्तेषां होत्तिष्ठतासुवाचापि नु राजन्नित्थं विदं वेदेरुत्थापयन्तीति इत्यादिना॥

अर्थात सुषद्मा के पुत्र विश्वान्तर ने श्यापर्णों का अङ्गीकार न करके बिना उनके यज्ञ किया। इस बात को जानकर श्यापर्ण उस यज्ञ में आये और वेदी के भीतर बैठे। यह देखके वह बोला कि ये श्यापर्ण बुरे कर्म के करनेहारे और अपवित्र बचन के बोलनेहारे मेरी वेदी के भीतर बैठे हैं इनको उठा दो। इस बात के अनुसार उनको उठा दिया। वे जब उठाये जाते थे चिल्लाके बोले कि एक समय जब परीक्षित का पुत्र जनमेजय कश्यप के पुत्रों को छोड़के यज्ञ करता था तब भूतवीरों के साथ असित भृगों ने कश्यप के पुत्रों को बलात्कार से सोमरस दिलाया सो ये उनके लिये वीर थे। क्या हमारे लिये भी कोई वीर है जो बलात्कार से सोमरस दिलावे। तब भृगु के सन्तान

राम ने कहा कि मैं तुम्हारे लिये वीर हूं। भृगु का सन्तान राम श्यापर्णो के कुल में विद्यावान था सो जब उनको उठाने लगे उसने कहा कि हे राजा क्या ऐसे विद्यावान को वेदी से उठा देते हैं॥

वेदविद्वान का वचन॥ आपके वृत्तान्त तो सब ठीक हैं ग्रोर उन सूक्तों को छोड़ शास्त्र में इस बात के अनेक ग्रोर प्रमाण भी मिल सक्ते हैं बरन यह भी सिद्ध हो सक्ता है कि प्राचीन ब्राह्मण वेद के अधिकार से सन्तुष्ट न हो राजा होने की इच्छा भी करते थे। परशुराम के चरित्र से जिसने क्षत्रियों का नाश कर ब्राह्मणों को पृथ्वी दान दिया यह बात प्रत्यक्ष है क्योंकि महाभारत में पृथ्वी कश्यप से यों कहती है॥

एतेषां पितरश्चैव तथैव च पितामहाः।

मदर्थं निहता युद्धे रामेणाक्लिष्टकर्मणा इति॥

अर्थात राम ने जो बिना परिश्रम कार्य्य कर सकता है मेरे लिये इनके बाप दादे लड़ाई में मार डाले॥

परन्तु इस प्रकार के प्रमाणों से आपका क्या अभिप्राय है क्योंकि इन्हीं शास्त्रों में सहस्र बेर लिखा है कि भारतखण्ड में मनुष्यों के विशेष वर्ण एक स्वाभाविक वस्तु ग्रोर प्रकृतसिद्ध गुण है इस दशा में ऐसे वृत्तान्त से जो आप कहते हैं क्या परिणाम हो सकता है॥

सत्यार्थी का वचन॥ इस विषय में आपने मेरे ही लिये ठीक वचन कहा है क्योंकि मैं इसी बात के कहने पर था। उस वृत्तान्त पर जो मैं ने शास्त्रों से निकाला ध्यान करने से शास्त्र के उस सिद्धान्त पर जो आप ने कहा अर्थात कि विशेष वर्ण स्वाभाविक वस्तु है बड़ा सन्देह मन में आता है। अपना अर्थ अधिक स्पष्ट करने के लिये मैं एक दृष्टान्त कहूंगा आप सुनिये। वह साक्षी जो वादी के आधीन ग्रोर उस के पक्ष पर है सो वादी के वचन के विरुद्ध जान बूझके अपनी प्रसन्नता से कोई बात नहीं कहता है इस लिये जो कुछ ऐसा साक्षी परीक्षा के

समय वादी के विरुद्ध ग्रहण करता है सो अवश्य बिश्वासयोग्य होगा। अब प्रत्यच है कि जो धर्म्म नियम श्रोर बातें भारतखण्ड में प्रचलित हैं पुराण के कर्त्ता उन नियमें के पच पर थे इस कारण जो कुछ उन नियमें के विरुद्ध पुराणें में मिलता है सो निस्सन्देह बिश्वासयोग्य होगा परन्तु जो कुछ उनके पच पर हो सो परीचा के योग्य होगा। इस दशा में मेरे पहिले सिद्धान्त प्रमाणिक ठहरते हैं॥

अर्थात १ विशेष वर्ण का भेद एक स्वाभाविक वस्तु नहीं है॥

२ आर्य्यकुल के आरम्भ में विशेष वर्ण का कुछ भेद नहीं था॥

३ यह भेद पुरोहितें के उद्योग से क्रम २ से स्थापन हुआ॥

अब आप जानते हैं कि मनुष्य के समस्त कुलें में यह व्यवहार है कि जो लोग देवभजन श्रोर बिद्या के प्रधान ठहरते हैं सो बड़ी सामर्थ श्रोर प्रतिष्ठा के अधिकारी हो जाते हैं इस कारण साधारण लोग ब्राह्मणें को जो पुरोहित थे श्रोर वर्णें से श्रेष्ट जानने लगे। अन्त में ब्राह्मणें ने अपने को शास्त्र के रचक श्रोर अधिकारी ठहराके उनके द्वारा अपनी इच्छा के समान अपनी महिमा श्रोर पराक्रम बढ़ा दिया। अब आप ध्यान कीजिये कि इस दशा में वेद श्रोर अन्य शास्त्रें की लैाकिक उत्पत्ति क्या कुछ असम्भव देख पड़ती है॥

वेदविद्वान का वचन॥ आपने तो एक नये प्रकार का प्रमाण रोपा श्रोर एकाएकी इसका उत्तर देना सुगम नहीं है क्योंकि जो कुछ आपने कहा सो परिणाम की रीति शास्त्र ही के वचन से मिलता है। फिर भी मैं इस बात को भली भांति समझ नहीं सकता हूं कि सम्पूर्ण हिन्दू शास्त्रें की एक लैाकिक उत्पत्ति क्योंकर हो। क्या किसी मनुष्य की इतनी सामर्थ श्रोर बुद्धि श्रोर ज्ञान है कि परमेश्वर की सहायता बिना ऐसे शास्त्रें को कहे॥

सत्यार्थी का वचन॥ वे शास्त्र जो वर्त्तमान काल भारतखण्ड में प्र-

चलित हैं से एकाएकी नहीं परन्तु क्रम २ से उत्पन्न ज्ञए। वेदों को संहिता जिन में भिन्न २ देवताओं की स्तुति हैं निस्सन्देह समस्त और शास्त्रों से प्राचीन हैं यह बात अनेक प्रमाणों से विशेष करके भाषा के स्वरूप से जानी जाती है। जो कोई वेदों की भाषा की और नवीन संस्कृत की तुल्यता करे सो अवश्य उन दोनों का एक बड़ा भेद देखेगा विभक्ति इत्यादि का यह भेद जो देख पड़ता है सो भाषा के क्रम २ से अन्तर होने के कारण उत्पन्न ज्ञआ। जिस काल ये प्राचीन सूक्त रचे गये उस काल आर्य्य लोगों की भाषा कुछ गवांरी थी अर्थात अच्छी रीति से सुधारी नहीं गई थी निरन्तर के साधन होने से मंजते २ निदान पाणिनीय आदि वैयाकरणों ने उसको शुद्ध संस्कृत बनाया। इसके उपरान्त क्रम २ से एक साधारण देशभाषा अर्थात प्राकृति की बोलचाल हो गई और तब साधारण लोगों ने संस्कृत बोलना छोड़ दिया। इस प्रकार से संस्कृत निरे पण्डितों की भाषा ठहरी और ग्रन्थों में उसकी चर्चा और रचा ज्ञई और इस कारण आगे को पलट नहीं गई उस काल से आज लों जैसी की तैसी रही॥

वेदविद्वान का वचन॥ मैं जानता था कि वेदों और पुराणों के संस्कृत में बड़ा भेद है यहां लों वेदों के कितने शब्दों के अर्थ लुप्त हो गये परन्तु इसका कारण मैं भली भांति नहीं समझता था। जो वर्णन आप करते हैं सो क्या और भाषाओं के विषय में भी ठीक आता है॥

सत्यार्थी का वचन॥ हां अन्यदेशीय भाषाओं का भी यही व्यवहार है प्राचीन यवनों के सब से पुरातन ग्रन्थों में एक ऐसी भाषा मिलती है जो उनके नवीन ग्रन्थों की भाषा से उसी प्रकार भिन्न है जिस प्रकार वेदों के संस्कृत में पुराणों के संस्कृत से अन्तर है और समस्त देशों में भी यह व्यवहार है कि जो २ भाषा बोल चाल में हैं सो क्रम २ से इसी प्रकार पर बदल जाती हैं॥

परन्तु अब आप एक और बात का ध्यान कीजिये कि यह अन्तर निरी भाषा का नहीं है परन्तु मत का भी देख पड़ता है। वेद के सूक्तों में अग्नि इन्द्र इत्यादि देवताओं के नाम लिये जाते हैं और याजक लोग सोमपान करने के लिये उनकी प्रार्थना और स्तुति करते हैं। फिर सूक्तों के कर्त्ता उन देवताओं से इस प्रकार के विषयों के लिये बिनती करते हैं अर्थात गौ आदि धन मुझको दान कर संग्राम में मुझको जयवन्त कर इत्यादि। जो जो देवते विशेष करके आज कल भारतखण्ड में पूजे जाते हैं सो वेद के सूक्तों में उनका भजन नहीं होता है जैसे राम कृष्ण महादेव दुर्गा काली भवानी उमा इत्यादि ऋकवेद के सूक्तों में उनका नाम भी नहीं आता है। ब्रह्मा और विष्णु का यश कधी २ वर्णन होता है और रुद्र नाम किसी देवता की स्तुति किसी २ स्थल में मिलती है परन्तु उन मन्त्रों में विष्णु शब्द का अर्थ सूर्य्य है वह विष्णु नहीं है जिसका वृत्तान्त पुराणों में मिलता है उसके अवतारों का कोई चिन्ह सूक्तों में कहीं नहीं देख पड़ता है पीछे से पण्डित लोगों ने इन समस्त कथाओं की कल्पना किई ॥

वेदविद्वान का बचन ॥ आपका यह वृत्तान्त ऋकवेद के प्रथम अष्टक के इन बचनों से क्योंकर मिल सकता है। अर्थात ॥

इदं विचक्रमे विष्णुरित्यादि ॥

जैसे २२ सूक्त की १६ ऋचा में लिखा है ॥

अतो देवा अवन्तु नो यतो विष्णुर्विचक्रमे ॥
पृथिव्याः सप्त धामभिः ॥ १६ ॥ इदं विष्णु
र्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदं ॥ समूढमस्य पांसुरे
॥ १७ ॥ त्रीणि पदा विचक्रमे विष्णुर्गोपा
अदाभ्यः ॥ अतोधर्म्माणि धारयन् ॥ १८ ॥
विष्णोः कर्माणि पश्यत यतोव्रतानि पस्पशे ॥

इन्द्रस्य युज्यः सखा ॥ १९ ॥ तद्विष्णोः परमं
पदं सदा पश्यन्ति सूरयः ॥ दिवीव चक्षुराततं
॥ २० ॥ तद्विप्रासोविपण्यवोजागृवांसः समिंधते
॥ विष्णोर्यत्परमं पदम् । २१ ॥ इति ।

अर्थात देवगण पृथ्वी के उस भाग से जहां से विष्णु ने सात छन्दों के बल से गमन किया हमारी रक्षा करें ॥ १६ ॥ विष्णु ने जब इस जगत में गमन किया तो उसने तीन बेर अपने पांव रक्खे और सारा जगत उसके पांवों की धूर में छिप गया ॥ १७ ॥ विष्णु जो रक्षक और हानिरहित है उसने धर्म्म के कामों को सम्भालते हुए तीन पांव रक्खे ॥ १८ ॥ विष्णु जो इन्द्र का अनुकूल सखा है उसके कामों को देखो जिनके द्वारा धर्मी लोगों ने अपने व्रतों को पूर्ण किया ॥ १९ ॥ ज्ञानी लोग विष्णु के उस परम स्थान को सदा देखते हैं जैसे खुला हुआ नेत्र स्वर्ग में स्पष्ट देखता है ॥ २० ॥ ज्ञानी लोग स्तुति में सावधान होकर विष्णु के उस परम स्थान के तेज को प्रगट करते हैं ॥ २१ ॥

क्या इन ऋचाओं में वामनावतार की चर्चा नहीं है कि जिस में होके विष्णु ने तीन डगों से तीन लोकों को व्याप्त कर दिया इसी प्रकार से सायन आचार्य्य ने वेदार्थप्रकाश नाम अपनी प्रसिद्ध टीका में इन ऋचाओं का अर्थ खोला है ॥

सत्यार्थी का बचन ॥ विवेकी लोग जो इसका मर्म जानते हैं कहते हैं कि इन ऋचाओं में सूर्य्य के उदय और अस्त और मध्यान्ह की चर्चा हुई। इस रीति से निरुक्त नाम ग्रन्थ के टीकाकर्त्ता दुर्गा आचार्य्य ने इनका अर्थ वर्णन किया है ॥

विष्णुरादित्यः कथमिति यत आह त्रेधा निदधे पदम निधत्ते पदम निधानम पदैः क्व तत्र तावत पृथिव्यामन्तरिक्षे दिवीति शाकपूणिः ॥ पार्थिवो ऽग्निर्भूत्वा पृथिव्याम यत्किञ्चिदस्ति तद्विक्रमते तदधितिष्ठति

अन्तरिक्षे वैद्युतात्मना दिविसूर्य्यात्मना॥ यदुक्तम तमूऋहएवन त्रेधा भुवेकमिति ॥ समारोहणे उदयगिरावुद्यन पदमेकन्निधते ॥ विष्णुपदे मध्यन्दिने ऽन्तरिक्षे गयशिरस्यस्तंगिराविव्यौर्णनाभ आचार्य्यो मन्यते॥ एवं समूढमस्य पांसुरे॥ अस्मिनप्यायने एतस्मिन्नन्तरिक्षे सर्वभूतवृद्धिहेतै। यन्मध्यमं पदं विद्युदात्मकं तत्समूढं अन्तर्हितं न नित्यं दृश्यते इति॥

अर्थात विष्णु किस प्रकार से सूर्य्य है इस कारण कि ऐसा कहा है कि उसने तीन बेर अपने पांव रक्खे अर्थात पांव रखता है कहां रक्खे शाकपूणि के मत के अनुसार पृथ्वी आकाश और स्वर्ग में अर्थात जो कुछ पृथ्वी पर है पृथ्वी में अग्नि के रूप में होकर वास करता है और आकाश में बिजली होके और स्वर्ग में सूर्य्यरूप होके जैसे कहा है॥ तमुऋहएवन त्रेधा भुवेकमिति॥ और्णनाभ आचार्य्य का यह मत है कि समारोहण अर्थात उदयाचल पर उदय होते एक पांव रखता है और दूसरा मध्यान्ह समय विष्णुपद अर्थात आकाश में और तीसरा गय के मस्तक अर्थात अस्ताचल पर। इस प्रकार से जो कहा है कि समूढमस्य पांसुरे॥ उसका अर्थ यह है कि इस अप्यायन अर्थात आकाश में जो सब भूतों की वृद्धि का कारण है उसका जो बिजलीरूप मध्यम पद है सो छप गया है अर्थात सदा देख नहीं पड़ता॥

उस बुद्धिमान पण्डित के इस विवरण में वामनावतार की कुछ भी चर्चा सूझ नहीं पड़ती है। इन ऋचाओं में विष्णु का जो परम स्थान वर्णन होता है उसका अर्थ सूर्य्य का आकाश में सब से ऊंचा स्थान अर्थात मध्यान्ह है। इसके अनुसार आकाश का एक नाम विष्णुपद है और बोलचाल के इस व्यवहार से दुर्गा आचार्य्य का विवरण प्रमाणिक ठहरता है। इसके समान रुद्र शब्द का अर्थ भी वेदों में अग्नि है और उसका जो वर्णन है सो पुराणों के रुद्र से सर्वत्र भिन्न है॥

पण्डितजी इन वृत्तान्तों पर जिनकी चर्चा हम दोनों ने इस समय

किई है ध्यान करने से मेरी समझ में यह बात प्रमाणिक और सिद्ध ठहरती है अर्थात कि वेद के सूक्तकर्त्ता वे मनुष्य थे जिनके नाम वेदानुक्रमणिका नाम ग्रन्थ में लिखे हैं उनकी दैवी उत्पत्ति का कोई लक्षण देख नहीं पड़ता और बुद्धिरूपी प्रमाण से सिद्ध नहीं हो सकता है। मन्त्रकर्त्ता अपने बाप दादों के देवों को जिनकी सेवा वे करते थे यज्ञ कर प्रसन्न करते थे और अपने कल्पे हुए स्तोत्रों से उनका यश गाते थे ऐसे स्तोत्रों का पण्डित लोगों ने मन्त्र और सूक्त नाम ठहराया। आगे मैं सिद्ध कर चुका कि पुरुषसूक्त जिस में परमात्मा की स्तुति है समस्त और सूक्तों से बहुत नवीन है। परन्तु सम्वाद करते २ अब आधी रात होने लगी है आपके कृपासंयुक्त और विचारपूर्वक सत्सङ्ग से मुझको अति आनन्द प्राप्त हुआ इस समय आपको और कष्ट देना नहीं चाहिये आपकी इच्छा हो तो भोर हम इसी स्थान पर फिर सत्सङ्ग करेंगे और इस भारी प्रकरण की कुछ और चर्चा करेंगे॥

वेदविद्वान का वचन॥ वेदों का जो बर्णन आपने इस समय किया है सो कई २ बातों में मेरी पहिली समझ के विरुद्ध है और इसका तात्पर्य्य मैं तुरन्त ग्रहण नहीं कर सकता हूं। फिर भी मैं मान लेता हूं कि आप एक बड़े सत्यविचारी हैं और आपका वृत्तान्त निस्सन्देह बहुत ध्यान करने के योग्य है इस कारण मैं उस पर ध्यान करूंगा और जो कुछ मेरी बुद्धि में आवे बड़े आनन्द के साथ प्रातः काल को सत्सङ्ग करके आप पर प्रगट करूंगा॥

ग्रन्थकर्त्ता का बचन॥ इतनी बात कहते ही ये दोनों पण्डित परस्पर प्रणाम कर बिदा हो अपने २ घर को चले गये परन्तु मैं थोड़े बिलम्ब लों वहीं बैठे गङ्गा की सुन्दर धारा को देख रहा। वह शुक्ल पक्ष का काल था और चांद का गोलाकार तेजोमय स्वरूप आकाश में बिराज-मान हो चारों ओर अपनी कोमल किरण फैला गङ्गा में अपना प्रति-

बिम्ब देख रहा था। यह दशा देख बहुत ध्यान कर मैं ने अपने मन में सोचा कि यह सुन्दर चांद एक बुद्धिमान और सत्यविचारी और धर्म्मी मनुष्य का दृष्टान्त हो सकता है। क्योंकि जिस रीति चांद सूर्य से जो उजाले का मूल है अपनी ज्योति पाय शून्य चुपचाप हो अपनी कोमल किरण चारों ओर फैला सामर्थ्य भर समस्त और वस्तुओं को प्रकाश करता है उसी रीति सत्य धर्म्मी पुरुष परमात्मा से जो सत्यता का मूल है उजाला प्राप्त कर बड़ी नम्रता के सङ्ग अपने को औरों का सेवक जान अपना कोमल उजाला चारों ओर चमकावेगा और जब किसी शुद्धस्वभाव निर्पक्ष सत्यबिचारी पुरुष के सङ्ग सम्वाद करता तो उसके मन में उस रीति से अपना प्रतिबिम्ब देखेगा जिस रीति से कि चांद गङ्गा में अपना स्वरूप देखता है। यों बिचार कर मैं अपने घर को सिधारा॥

मतपरीक्षा का द्वितीय सत्सङ्ग समाप्त हुआ॥

इति॥

तीसरा सत्सङ्ग।

उपनिषद् और षटदर्शनों की चर्चा।

ग्रन्थकर्त्ता का बचन।

दूसरे दिन के प्रातः काल को जाग उठ मैं शीघ्रता करके उसी स्थान को चला गया जहां पहिले दिन वेदविद्वान और सत्यार्थी सम्वाद करते थे। वहां पहुंचतेही मैं ने देखा कि वेदविद्वान अकेला बैठा है उसके सत्यगुणी मुख में गम्भीरता और चिन्ता के लक्षण प्रसिद्ध थे और मैं तुरन्त जान गया कि यह बड़े सोचध्यान में डूब रहा है इस कारण मैं ने

उस से अकस्मात भेंट नहीं किई परन्तु थोड़े बिलम्ब के पीछे मैं ने देखा कि सत्यार्थी चला आता है उसके आते ही दोनों मनुष्य प्रणाम कर कुशल पूछ आगे की रीति सम्वाद करने लगे॥

वेदविद्वान का वचन॥ उस वृत्तान्त पर जो कल के सत्सङ्ग में आप ने किया बड़े ध्यान के साथ मैं ने सोचा है आपके प्रमाणों का उत्तर तो मैं नहीं दे सकता हूं परन्तु उन प्रमाणों के तात्पर्य्य को अर्थात कि वेद आदि शास्त्र की एक निरी लौकिक उत्पत्ति हुई एकाएकी मैं ग्रहण नहीं कर सकता हूं क्योंकि बाल्यावस्था से मैं ने उन को ईश्वरवाणी मान लिया है। यह तो सच है कि उनके प्रमाणिक होने की परीक्षा जैसी चाहिये मैं ने नहीं किई है क्योंकि मैं समझता था कि ऐसा करना शास्त्रों के ज्ञानपर्वक शिक्षा का अनादर करना होगा परन्तु अब मैं मान लेता हूं कि सत्य बात के जांचने में उसका किसी प्रकार का अनादर अथवा हिंसा नहीं हो सकती है इस कारण मैं आप से पूछता हूं कि यदि शास्त्रों की ज्ञानपूर्वक शिक्षा ईश्वर की ओर से नहीं आई तो उसका मूल मनुष्य की स्वाभाविक बुद्धिमात्र से क्योंकर हो सके॥

सत्यार्थी का वचन॥ आरम्भ में जब मनुष्यों का प्रथम पिता उत्पन्न हुआ तब वह अपनी बुद्धिशक्ति के समान ईश्वर का सत्य ज्ञान रखके उस की सेवा भली भांति करता था परन्तु जब ईश्वर की आज्ञा भङ्ग करने से उस की निर्दोषता और सिद्धता जाती रही तब से ईश्वर का सत्य ज्ञान भी घटता गया। इस बिरियां इसके अभिप्राय के लिये इतना ही कहता हूं आगे मनुष्य की उत्पत्ति का वृत्तान्त बिस्तार के साथ कहा जायगा। परन्तु जब इस देश में वेद के सूक्त रचे जाते थे तब ईश्वर का सत्य ज्ञान बहुत मिट गया था उस काल के मनुष्य सम्पूर्ण सृष्टि के कर्त्ता को जो अकेला नित्य अनन्त ईश्वर है बिसराके नाना प्रकार के देवों

को मानने लगे। इस प्रकार का मिथ्या मत किस रीति से उत्पन्न हुआ पण्डितजी मैं अपना विचार प्रगट करूंगा आप सुनिये॥

परमेश्वर ने अग्नि आदि अनेक अचेतन पदार्थों में एक बड़ी प्रतापी और तेजोमय शक्ति धरी है। अग्नि की असह्य ज्वाला से बड़े २ बन भस्म हो जाते हैं भयानक आंधियों से बड़े २ पेड़ उखड़ जाते हैं जल की धारा के बलात्कार से गांव २ अपने निवासियों समेत नष्ट हो जाते हैं सूर्य्य के घोर तेज से भूमि तृण फल आदि जल जाते हैं। असीम गगन में सूर्य्य एक बड़े महाराजा के नाई अपनी जगमगाती ज्योति से आकाश और पृथ्वी को दैदीप्यमान करता हुआ गमन करता है। फिर ऋतु के अनुसार मेघ भी वर्षा से भूतल को सींचते हैं और सींची गोड़ी हुई भूमि नाना प्रकार का अन्न उपजाती है॥

अग्नि वायु आदि पदार्थों में ऐसी शक्ति देख मनुष्य उनको चैतन्य ठहराके देवों के समान उनकी पूजा करने लगे। इस प्रकार से साधारण लोग अज्ञानता के कारण अग्नि सूर्य्य मरुत वरुण आदिकों को देवता कर मानने लगे। और वेदों में इन देवताओं का छोटा बड़ा और तरुण वृद्ध होना भी वर्णन होता है जैसा ऋकवेद के २७ सूक्त की १३ ऋचा में लिखा है॥

नमोमहद्भ्यो नमोअर्भकेभ्यो नमोयुवभ्यो नमआशिनेभ्यः
यजाम देवान् यदि शक्नुवाम माज्यायसः शंसमावृत्ति देवाः॥ १३ ॥

अर्थात देवों में जो बड़े हैं उनको नमस्कार और जो छोटे हैं उनको नमस्कार और जो तरुण हैं उनको नमस्कार और जो वृद्ध हैं उनको नमस्कार हम अपने सूक्तों के अनुसार सब देवों की पूजा करेंगे हे देवो मैं ज्यष्ठनाम देवों के स्तोत्रों को भङ्ग न करूं॥

आप विचार कीजिये कि इस प्रकार का वृत्तान्त ईश्वर के सत्य ज्ञान के अनुसार है कि उसके विरुद्ध॥

वेदविद्वान का बचन॥ मैं तो नहीं कह सकता हूं कि अग्नि वायु ईश्वर ही हैं परन्तु उनसे ईश्वर की शक्ति प्रकाश होती है और उनकी पूजा करने का यही अभिप्राय है अर्थात उनके द्वारा ईश्वर की सेवा किई जाती है॥

सत्यार्थी का बचन॥ आप तो ऐसा कहते हैं परन्तु सूक्तों की रचना के डौल से ऐसा अर्थ कधी नहीं निकल सकता है। इसके बिरुद्ध यह प्रत्यक्ष और स्पष्ट देख पड़ता है अर्थात कि सूक्तकर्त्ता उन पदार्थों को चैतन्य जानते थे नहीं तो उन से बिनती और स्तुति किस लिये करते थे। और जब कि यह सब देवता केवल कल्पित हैं सचमुच कुछ चैतन्य अथवा जीवती बस्तु नहीं हैं तो सिद्ध है कि उनकी स्तुति के मन्त्र भी मनुष्य के कल्पे हुए हैं। और जैसे वेदानुक्रमणिका के कर्त्ता ने उनके कल्पनेहारे ऋषियों के नाम लिखे हैं तैसे ऋकवेद के पहिले सूक्त में उन ऋषियों के दो भाग किये गये हैं अर्थात प्राचीन और नवीन॥ जैसे॥

अग्निः पूर्वेभिरृषिभिरीड्यो
नूतनैरुत सदेवान् एह वक्षति॥ इति॥

अर्थात वह अग्नि जिसकी स्तुति पुराने और नये ऋषि भी करते हैं देवों को यहां ले आवे॥

निदान जिस प्रकार से कोई २ मन्त्रकर्त्ता प्राचीन और नवीन थे इसी प्रकार से पण्डितजी कोई २ मन्त्र भी आप प्राचीन और नवीन थे इसके अनुसार २० सूक्त की ४ ऋचा में शुनःशेप सूक्तकर्त्ता अपने मन्त्र की नवीनता को आप प्रचारता है॥ जैसे॥

इममु षु त्वमस्माकं सनिं गायत्रं नव्यांसं अग्ने देवेषु प्रवोचः इति॥
अर्थात हे अग्नि तू हमारे इस अर्पण और नये स्तोत्र को भी देवों के आगे कह॥

और इस दशा का कारण भी बतलाना कुछ कठिन नहीं है क्योंकि जब कोई राजा अथवा गृहस्थ औसर पाके यज्ञ करने चाहता था तब अपने उपयोग का एक सूक्त किसी कवि से बनवाता था। सूक्तों के अर्थ का विचार करने से जाना जाता है कि इसी रीति से प्रयोजन के काल के समान बहुतेरे मन्त्र रचे गये क्योंकि राजाओं के नाम और अपने शत्रुओं से उनका संग्राम और विजय बार २ सूक्तों में बखान होते हैं। इन सूक्तों का वही स्वरूप आज लों देख पड़ता है जैसे आरम्भ में प्राचीन पुरोहितों ने उनको बनाया था उनकी रचना में पुरोहितों का अभिप्राय केवल देवताओं की स्तुति करना था किसी विशेष मत का पक्ष उन में दृष्टि नहीं आता है। और सूक्तकर्त्ता अपने मन्त्र के कल्पने के समय ऐसी भावना कभी नहीं करता था कि देवताओं की स्तुति में जो स्तोत्र मैं कल्पता हूं सो ब्रह्मा से उत्पन्न हुए इस कारण से उन्हों ने अपने ही काल का वृत्तान्त और संग्राम और विजय इत्यादि राजाओं के नाम के साथ अपने सूक्तों में बखान किया है॥

वेदविद्वान का बचन॥ यदि यह दशा है तो आप बतलाइये कि उनका ऐसा आदर और सन्मान पीछे से क्योंकर हो गया॥

सत्यार्थी का बचन॥ जब बहुत काल बीतने के कारण ये सूक्त पुराने हो गये थे तब प्राचीनता के हेतु पण्डित लोग उनका आदर करने लगे तिस पर औरों ने भूल करके उनको ब्रह्मा का उच्चारा हुआ ठहराया। सूक्तों के अर्थ से इस भावना के मेल करने में यद्यपि युक्ति करते तो थे परन्तु नहीं कर सके और पण्डितजी ऐसे सूक्तों को जिनका अर्थ और वृत्तान्त यह है अनादि अथवा ब्रह्मा का उच्चारा हुआ मानना बुद्धिमान सत्यार्थी पण्डित के योग्य नहीं है॥

आरम्भ में वैदिक सूक्तों की संहिता नहीं हुई परन्तु सूक्त पुरखे लोगों के मुख से जैसे कहे जाते थे तैसे भारतखण्ड में प्रचलित थे। सम्भव है कि

वशिष्ट विश्वामित्रादि ऋषियों के सूक्तों की प्रथम उन ऋषियों के सन्तान ने यत्न से रक्षा किई और जब यों परम्परा से होके पुराने हो गये थे तब साधारण लोग उन का बड़ा आदर करने लगे। इस जगत में जब कोई वस्तु बहुत पुरानी हो जाती है तब बहुतेरे मनुष्य उसको बड़े आश्चर्य से देखते और उसका आदर करते हैं। इस कारण विवेकी को कुछ अचम्भे की बात नहीं होगी कि साधारण लोग वैदिक सूक्तों को देववाणी मानने लगे। इसी प्रकार से उन प्राचीन पुरोहितों को भी जो सूक्तों के कर्त्ता थे दैव्य कहते थे। उसी काल में व्यासपैल आदिकों ने सम्पूर्ण सूक्तों को जैसे मनुष्यों के स्मरण में रहे थे और जहां कहीं फैल गये थे संग्रह करके उनकी संहिता किई सूक्तों के संग्रह करने से उसका नाम व्यास ठहरा जिसका अर्थ है संग्रहकर्त्ता। व्यासों का सब से पिछला संग्रहकर्त्ता कृष्णद्वैपायन बतलाया जाता है उस से पहिले कितने और भी थे। पुराणों में यही कथा है परन्तु क्या सत्य है कि नहीं कोई नहीं जानता क्योंकि पुराणों का वृत्तान्त वेद की महिमा बढ़ाने के लिये कल्पा गया और यथार्थ समाचार नहीं मिलता है॥

जब अपने शिष्यों की सहायता से व्यासजी ने ऋक आदि वेदों की संहिता किई तब आर्य्य लोगों की भाषा आगे के समान गंवारी न थी पण्डितों के साधन और युक्ति से संजते २ उस भाषा का एक नया स्वरूप हो गया था। जिस काल व्यासादिकों के हाथ से सूक्तों की संहिता हो गई उसी काल भी वे सूक्त बहुधा अति प्राचीन हो गये थे। परन्तु सभों की उत्पत्ति समकालिक जाननी नहीं चाहिये क्योंकि काल आदि वृत्तान्त के अन्तर के साथ क्रम २ से रचे गये और संग्रहकरनेहारे पण्डितों ने कई एक नये भी सूक्त प्राचीनों के साथ मिलाये॥

वेदविद्वान का वचन॥ आपने तो आगे कहा था कि पुरुषसूक्त की भाषा इस प्रकार से और सूक्तों से नवीन देख पड़ती है॥

सत्यार्थी का वचन ॥ सच वह सूक्त उसी काल में जब प्राचीन सूक्तों की संहिता हो गई अथवा उसके समीप बन गया ऐसा कि उस काल में पुरुषसूक्त नवीन था और चारों वेदों का यथार्थ वृत्तान्त पण्डितजी यही है जो मैं अभी कहता हूं अर्थात ॥

१ ऋकवेद में जिन २ सूक्तों की संहिता है उस वेद में उनका प्रथम ही स्वरूप देख पड़ता है अर्थात वही स्वरूप जिस में पुरोहितों ने आरम्भ में उन को बनाया ॥

२ सामवेद में जो सूक्त सामन कहलाते हैं सो बहुधा ऋकवेद के भाग हैं। ऋकवेद की ऋचा में अनेक भांति से छिन्न भिन्न हो सामवेद में उद्गाता के गाने के लिये सामन ठहरते हैं ॥

३ यजुर्वेद में भी जो २ सूक्त संग्रह किये गये हैं सो बहुधा ऋकवेद के भाग हैं पर यजुर के लिये उनका स्वरूप कुछ बदल गया है ॥

४ अथर्वणवेद के सूक्त बहुधा और तीन वेदों से भिन्न हैं कितनों का अर्थ शत्रुओं को शाप देना है कितने कर्त्ता की रक्षा के लिये कहे हैं और कितनों में दर्भ आदि वनस्पति के सम्बोधन हैं। अथर्वण के वृत्तान्त पर विचार करने से विवेकी लोग कहते हैं कि उसके बहुतेरे सूक्त ऋकवेद के सूक्तों से नवीन हैं ॥

वेदविद्वान का वचन ॥ सूक्तों का जो वृत्तान्त आपने किया कि अग्नि आदि देवताओं के स्तोत्र और परमेश्वर के सत्य ज्ञान के बिरुद्ध हैं सो उपनिषद के विषय में ठीक नहीं आता है क्योंकि उपनिषदों में इन देवताओं का इतना भजन नहीं है बिशेष करके परमात्मा का भजन किया जाता है ॥

सत्यार्थी का वचन ॥ आपका कहना यथार्थ है और इसका कारण यह है कि जब वेदों की संहिता बन चुकी और प्रचलित हो गई थी तब पण्डितों ने बड़े यत्न से उन का अभ्यास किया और सब से प्रसिद्ध

और बड़े २ पण्डित अपनी २ निपुणता के समान उनका अर्थ खोलने लगे। इसी प्रकार से व्याकरणादि वेद के सब अङ्ग जो वेद की व्यख्या के उपयोगी हैं क्रम २ से रचे गये। उस काल के पीछे इस देश के निवासी ऐसी २ विद्याओं में कुछ प्रवीणता प्राप्त कर अनेक भांति के गूढ़ २ बादों में प्रवृत्त होने लगे। यह जगत कैसे उत्पन्न हुआ क्या वह अनादि है अथवा उसका आदि था क्या उसका कोई कर्त्ता है और उसने किस वस्तु से संसार को बनाया क्या उसके कर्त्ता का कोई आकार है अथवा वह निराकार है क्या वह सगुण है किम्वा निर्गुण। ऐसे २ विषयों के ज्ञान पाने के अभिलाषी हो पण्डित लोग विवेचना करने लगे और इन बातों के प्रकरण में ज्ञानियों की स्वाभाविक बुद्धिमान्‌ की सामर्थ्य से उपनिषद रचे गये। उस काल से उन देवताओं की महिमा जिनका आदर बिशेष करके सूक्तों में है क्रम २ से घटने लगी और यद्यपि उपनिषदों में अग्नि इन्द्रादि की कुछ प्रशंसा तो है तथापि ब्रह्म के जो परमात्मा और पुरुष नामों से कहलाता है महत्व की प्रशंसा अधिक देख पड़ती है। इससे यह बात प्रगट है कि उपनिषद के बनानेवाले ब्रह्म को इन्द्र अग्नि आदि से श्रेष्ठ मानते थे तिसके पीछे जब ऐसे बिषयों में पण्डितों की विवेचना भिन्न २ हो गई तब मुनियों ने अनेक २ मत अपनी २ भावना के समान इस देश में चलाये। इस प्रकार से षट्‌दर्शन उत्पन्न हुए जो पण्डितों और मुनियों की बुद्धिमान्‌ के अनुसार स्थापन किये गये॥

वेदविद्वान का बचन॥ आप तो कहते हैं कि इन बड़े मुनियों के शास्त्र केवल उनकी स्वाभाविक बुद्धिमान्‌ से रचे गये कुछ ईश्वरवाणी नहीं हैं परन्तु मैं आप से पूछता हूं कि आप के पास इस बात का कुछ प्रमाण है॥

सत्यार्थी का वचन ॥ पण्डितजी विना प्रमाण से किसी बात को सत्य मानना नहीं चाहिये इस कारण मैं कहता हूं कि इन शास्त्रों को ईश्वर-वाणी मानना नहीं चाहिये क्योंकि इस बात का कोई प्रमाण नहीं है इस लिये उनको मनुष्य का बनाया हुआ मानना चाहिये क्योंकि इस बात का प्रमाण प्रत्यक्ष है कि वेदान्त न्याय साङ्ख्य आदि शास्त्रों में अनेक भांति की परस्पर बिरुद्धता देख पड़ती है और इस दशा में उन को ईश्वरवाणी मानना बुद्धि के बिरुद्ध है। व्यास का मत यह है कि जगत का निमित्तकारण ब्रह्म है और उसका उपादान कारण भी वही है और केवल ब्रह्ममात्र नित्य है। कपिल मुनि कहता है कि मूलप्रकृति नित्य है और अपने से अपने को पसारके जगत को उत्पन्न करती है उसकी भावना यह है कि ईश्वर कोई है नहीं। परन्तु पतञ्जलि कहता है कि एक ईश्वर है जो संसार का सिरजनेहारा है। फिर गैतम का मत यह है कि ईश्वर अति सूक्ष्म परमाणुओं को जो नित्य हैं लेके उन से संसार को बनाता है। ये सब शिक्षक भारतखण्ड में मुनि के नाम से प्रसिद्ध हैं और एक २ कहता है कि मेरे ही मार्ग से मुक्ति प्राप्त होती है क्योंकि सत्य है। सो मैं आप से पूछता हूं कि क्या सत्य असत्य में कुछ भेद है कि दोनों एकी हैं आप जो सत्यबिचारी हैं अवश्य कधी नहीं कहेंगे कि दोनों एकी हैं। भला तो जब भेद है तो ये सब के सब सत्य नहीं हो सके फिर कैान बतलावेगा कि ऐसे भिन्न और बिरुद्ध मतों में सत्य क्या है और असत्य क्या है और कैान सत्यबिचारी मानेगा कि ये सब के सब ईश्वरवाणी हैं॥

वेदविद्वान का वचन ॥ कितने कहते हैं कि जैमिनि और व्यास को छोड़ कोई दर्शनकर्त्ता सर्वथा प्रमाणिक नहीं है जैसा लिखा है॥

अक्षपादप्रणीते च काणादे साङ्ख्ययोगयोः
त्याज्यः श्रुतिबिरुद्धांशः श्रुतैकशरणैर्नृभिः ॥

जैमिनीये च वैयासे विरुद्धांशोन कश्चन इति॥

अर्थात जिन पुरुषों को केवल वेद का भरोसा है उन को चाहिये कि अक्षपाद अर्थात गौतम के बनाये शास्त्र में और काणादि के और साङ्ख्य और योगशास्त्र में जितना वेद से बिरुद्ध भाग है उतना छोड़ देना परन्तु जैमिनि और व्यास के शास्त्र में कोई अंशवेद के बिरुद्ध नहीं है॥

सत्यार्थी का बचन॥ ऐसा तो कहते हैं परन्तु पण्डितजी इस में एक यह शङ्का होती है कि यदि एक मुनि भूले तो औरों का भ्रम करना क्या असम्भव है कपिलादि मुनियों से व्यासजी की क्या बड़ाई है यदि वे भूलें तो उसका प्रमाण क्या। मीमांसक लोग तो ऐसा कहते हैं कि जैमिनि और व्यास का मत वेद के अनुसार और औरों का मत वेद के बिरुद्ध है परन्तु इसका क्या प्रमाण है। और यद्यपि यह बचन यथार्थ भी हो तथापि मैं आप से पूछता हूं कि जिन ऋषियों ने वेद को भी बनाया सो कपिलादिकों से उनका क्या बिशेष है यदि कपिलादिकों का प्रमाण सिद्ध नहीं हो सक्ता तो वेद के ऋषियों का प्रमाण क्योंकर सिद्ध होवे और इस दशा में वेद के अनुसार होना जैमिनि और व्यास के लिये क्या प्रमाण ठहरेगा॥

वेदविद्वान का बचन॥ अनेक शास्त्रों में कपिल की भी महिमा बखानी है और लिखा है कि उस ने सगर के पुत्रों को जलाके भस्म कर दिया जैसा रामायण बाल काण्ड के ४१ सर्ग में कहा है॥

श्रुत्वा तद्वचनं तेषां कपिलोरघुनन्दन
रोषेण महता ऽविष्टोहुंकारमकरोत् तदा॥
ततस्तेनाप्रमेयेण कपिलेन महात्मना
भस्मराशीकृताः सर्वे काकुत्स्थ सगरात्मजाः इति॥

हे रघुकुल के आनन्द देनेहारे उनका यह बचन सुन कपिल मुनि

बड़े क्रोध से भर गया और हुङ्कार किया तब उस अति वीर्य महात्मा कपिल ने सगर के सब पुत्रों को भस्म की ढेरी कर दिया॥

सत्यार्थी का बचन॥ आपका कहना ठीक है और इस्से अधिक भागवत में जिस को कितने कहते हैं कि व्यास का बनाया है उसकी और भी स्तुति किई जाती है। जो वृत्तान्त आपने अभी कहा है उसके बिषय में लिखा है कि कपिल के समान ऐसे महामुनि पर क्रोध का आरोप किया नहीं चाहिये॥

न साधुवादोमुनिकोपभर्जिता नृपेन्द्रपुत्रा इति सत्वधामनिकथं तमोरोषमयं विभाव्यते जगत्पवित्रात्मनि खे रजोभुवः॥ यस्येरिता साङ्ख्यमयी दृढेहनौर्यतोमुमुक्षुस्तरते दुरत्ययं भवार्णवंमृत्युपथंविपश्चितः परात्मभूतस्य कथंपृथङ्मतिरिति॥

अर्थात उस सत्यगुण के निवास में यह कहना ठीक नहीं है कि राजा के बेटे मुनि के क्रोध से भस्म किये गये क्योंकि उस में जो जगत का पवित्र आत्मा है क्रोधरूपी तम की कैसी शङ्का हो जैसे भूमि की धूलि की आकाश में जिसने साङ्ख्य शास्त्ररूपी दृढ़ नौका बनाई जिसे मोक्ष के खोजी पाकर दुस्तर संसाररूपी समुद्र से जो मृत्यु का मार्ग है तर जाते हैं ऐसा महाज्ञानी परमात्मारूपी मुनि कैसे अल्पबुद्धि हो॥

अब आप बिचार कीजिये कि यदि व्यासजी ने जैसा बहुतेरे कहते हैं भागवत को बनाया तो उसने आप कपिल का कैसा बखान किया उसने यह कहा है कि उस परमात्मा कपिल ने साङ्ख्यरूपी जो नाव बनाई उस से मनुष्य तर जाते हैं फिर जो कपिल मुनि सचमुच परमात्मा है तो उसका शास्त्र निषप्रमाण होना किस प्रकार से सिद्ध हो सक्ता है और जो साङ्ख्यदर्शन से जिसे उसने स्थापन किया मोक्ष प्राप्त होता है तो उसके प्रमाणिक होने पर किस प्रकार से सन्देह हो सक्ता है। इस कारण जो २ पण्डित भागवत का प्रमाण मानते हैं उनको कपिल का

प्रमाण भी सम्पूर्णरूप से मानना चाहिये। फिर भागवत में यह भी लिखा है कि भगवान ने अपने पांचवें अवतार में कपिल का रूप धारण कर साङ्ख्यशास्त्र को दिया जैसे प्रथम स्कन्ध के ३ अध्याय के १० श्लोक॥

पञ्चमः कपिलोनाम सिद्धेशः कालविप्लुतम्
प्रोवाचाऽऽसुरये साङ्ख्यं तत्वग्रामविनिर्णयम् इति॥

अर्थात पांचवां कपिल नाम अवतार जो सब सिद्धों में श्रेष्ठ है उसने साङ्ख्यशास्त्र को जिस में तत्वों का निर्णय किया है आसुरि से कहा॥

इस प्रकार से शास्त्रों के अनुसार कपिल और व्यास मुनियों के और वेदान्त और साङ्ख्य शास्त्रों के प्रमाण दोनों समान हैं॥

वेदविद्वान का बचन॥ परन्तु इन दोनों में ठीक विरुद्धता देख पड़ती है सो दोनों के दोनों सत्य क्योंकर होवें॥

सत्यार्थी का बचन॥ हां। यही तो बात है पण्डितजी क्योंकि व्यास कहता है कि ईश्वर है कपिल कहता है कि ईश्वर नहीं है फिर इन दोनों मुनियों और दर्शनों का प्रमाणिक होना शास्त्रों में लिखा है मेरी बुद्धि में भी नहीं आता है कि ये दोनों के दोनों सत्य क्योंकर होवें यदि वेदान्त सत्य है तो साङ्ख्य असत्य होगा और यदि साङ्ख्य सत्य है तो वेदान्त असत्य होगा परन्तु जिस शास्त्र में इन दोनों विरुद्ध बातों का सत्य और प्रमाणिक होना लिखा है मैं आप से पूछता हूं कि उस शास्त्र को ईश्वरवाणी अथवा मनुष्य की दोषी बुद्धि की कल्पना मानना चाहिये॥

वेदविद्वान का वचन॥ आपने तो उनके लिये जो शास्त्रों को मानते हैं एक जाल फैलाया जिस से निकल जाना कठिन है मैं आगे जानता था कि शास्त्रों की कितनी २ बातें पहिले दृष्टि से विरुद्ध देख पड़ती हैं परन्तु मैं ने यह समझा कि कदाचित मेरी बुद्धि की निर्बलता के का-

रण विरुद्ध देख पड़ती हैं सचमुच विरुद्ध नहीं हैं। आपने जो ऐसा स्पष्ट और यथार्थ वर्णन किया है मैं इसका उत्तर देना नहीं जानता हूं और आपके जाल से निकल नहीं सक्ता हूं ॥

सत्यार्थी का बचन ॥ हे मित्र एक जाल तो है परन्तु ऐसा न कहिये कि आप ने उस को लगाया क्योंकि शास्त्र आप ही ऐसा एक जाल है जिस से निकल जाना अनहोना है। जब कि हम इन शास्त्रों को केवल मनुष्यरचित पुस्तक जानते हैं तो इस प्रकार की विरुद्धता कुछ आश्चर्य की बात नहीं है ऐसे गूढ़ २ विषयों में मनुष्य की विवेचना अवश्य ऐसी ही होगी क्योंकि उसकी बुद्धि की इतनी सामर्थ नहीं है कि सम्पूर्णरूप से उनको समझ सके। परन्तु जब इन शास्त्रों को ईश्वरवाणी मानते हैं तब ऐसी अयोग्य बातों का विवरण करना अत्यन्त कठिन है क्योंकि उस दशा में इन तीनों को छोड़ और कोई परिणाम सिद्ध नहीं हो सक्ता है अथवा यह कि सत्य और मिथ्या का कुछ भेद नहीं है दोनों एकी हैं। किम्वा परमेश्वर सत्य और मिथ्या का भेद नहीं जानता। अथवा परमेश्वर उनका भेद जानके मनुष्य जात को जान बूझके धोखा देता और जाल में फंसाता है। और ये तीनों बातें परमेश्वर के लिये ऐसी अयोग्य और निन्दापूर्वक हैं कि कोई भला धर्मी पुरुष उनको ग्रहण कधी न करेगा ॥

वेदविद्वान का बचन ॥ क्या एक बात और यह भी नहीं है कि इन में से एक मत को जो विचार करने से सत्य देख पड़ता है ग्रहण करके ईश्वरवाणी मान लेना ॥

सत्यार्थी का बचन ॥ कितने तो ऐसा ही करते हैं परन्तु मैं आप से पूछता हूं कि किसी के निरे मानने से क्या कोई मत ईश्वरवाणी ठहरेगा हम तो प्रमाण की चर्चा करते हैं भावना की नहीं। क्योंकि एक की भावना दूसरे के समान होगी और इस रीति से जितनी

अज्ञानता और विरुद्धता है सब की सब प्रमाणिक हो सकी है। साङ्ख्य न्यायादि दर्शनों को तो तीक्ष्णबुद्धि पण्डितों ने अपनी बुद्धिमात्र से निर्माण किया और और पण्डितों ने जिनकी बुद्धि की इतनी सामर्थ्य न थी परन्तु काव्य की कुछ शक्ति रखते थे साधारण लोगों के लिये इतिहासों और पुराणों को बनाया। जिस प्रकार से षटदर्शनों की परस्पर विरुद्धता है उस प्रकार से पुराण और उपपुराणों में भी अनेक भांति के भिन्न २ मत देख पड़ते हैं कितने तो शैव हैं कितने वैष्णव इत्यादि। इस से जाना जाता है कि ये भी एक ही दैव्य मूल से उत्पन्न नहीं हुए वरन भिन्न २ पुरुषों ने क्रम २ से उनको बनाया क्योंकि बुद्धि में नहीं आता है कि वह शास्त्र जो सर्वज्ञानी परमेश्वर ने दिया हो सो किसी प्रकार की विरुद्धता अथवा विपरीतता प्रगट करे। परन्तु आपकी इच्छा हो तो इस समय पुराणों की चर्चा छोड़ देंगे और सांझ काल को इसका विचार करेंगे॥

ग्रन्थकर्त्ता का वचन॥ तिस पर हम तीनों मनुष्य विदा हो अपने २ स्थान को प्रस्थित हुए॥

मतपरीक्षा का तृतीय सत्सङ्ग समाप्त हुआ॥

इति॥

चौथा सत्सङ्ग।

इतिहासों और पुराणों की चर्चा।

ग्रन्थकर्त्ता का वचन।

उसी दिन सांझ काल को जब वेदविद्वान और सत्यार्थी की भेंट हुई तो आगे की रीति मैं भी उपस्थित हुआ क्योंकि इन दो पण्डि-

तों के सम्वाद से जो हो चुके थे मैं बड़ा प्रसन्न था और उनकी ज्ञानपूर्वक चर्चा से कितनी एक नई २ बातें भी मैं ने सीखी थीं और पुराणों का यथार्थ वृत्तान्त सुनने को निपट अभिलाषी था। क्योंकि मैं जानता था कि विशेष करके पुराणों ही की शिक्षा पर भारतखण्ड के साधारण निवासी चलते हैं और उनकी अद्भुत कथाएं अनपढ़े लोगों में भी बड़े बल के साथ परन्तु अशुद्ध रीति से प्रचलित हैं इस कारण मैं इन कथाओं का सत्य मूल और यथार्थ वृत्तान्त सुनने चाहता था तब पुराणों के विषय में ये दो पण्डित सम्वाद करने लगे॥

सत्यार्थी का बचन॥ आपकी कृपा से हम दोनों ने वेद और उपनिषद और षटदर्शनों के शास्त्रों की चर्चा भली भांति किई है और इस चर्चा से यह अनुभव सिद्ध ठहरा कि पूर्व काल में बड़े २ ऋषियों और मुनियों ने अपने २ ज्ञान के अनुसार और अपनी २ बुद्धिमान की शक्ति से उन शास्त्रों को बनाया। और यद्यपि उन शास्त्रों में कितनी ऐसी बातें मिलती हैं जो अविवेकी और अनपढ़े लोगों की दृष्टि में दैव्य देख पड़ती हैं तथापि विचार करने से उनकी दैव्य उत्पत्ति का कोई प्रसिद्ध लक्षण अथवा प्रत्यक्ष प्रमाण कहीं नहीं देख पड़ता है इसके बिरुद्ध मनुष्य के कार्य्य के चिन्ह जितने चाहियें दृष्टि आते हैं। अब पुराणों की चर्चा रह गई है सो आप कृपा करके बतलाइये कि कोई बिशेष लक्षण है कि नहीं जिस्से पुराण पहिचाना जाय॥

वेदविद्वान का बचन॥ हां ऐसा लक्षण तो है कि सृष्टि और वंशावली और वंशों के चरित्र आदि पांच विषय हैं जो पुराणों के लक्षण ठहरते हैं जैसा लिखा है॥

सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशो मन्वन्तराणि च
वंशानु चरितं चैव पुराणं पञ्चलक्षणम् इति॥

अर्थात भूतसृष्टि और भौतिकसृष्टि वंश और मन्वन्तर और वंशों का चरित्र ये पांच पुराणों के लक्षण हैं॥

सत्यार्थी का बचन॥ अब आप कहिये कि ये पांच लक्षण सारे अठारह पुराणों में मिलते हैं कि नहीं॥

वेदविद्वान का बचन॥ नहीं मैं नहीं कह सक्ता हूं कि ये सारे लक्षण किसी एक पुराण में मिलते हैं इस बिषय में और पुराणों की अपेक्षा विष्णुपुराण श्रेष्ठ है परन्तु उस में भी पांचों लक्षण सम्पूर्ण रूप से नहीं मिलते हैं॥

सत्यार्थी का बचन॥ आप तो सच कहते हैं कि जो इन दिनों में पुराण कहलाते हैं उन में से एक भी ऐसा नहीं है जो पांच लक्षणों के अनुसार पुराण ठहरेगा और इस दशा में सत्यार्थी को निस्सन्देह बड़े विचार की बात होगी कि क्या सचमुच कोई सत्य पुराण इन दिनों में उपस्थित है कि नहीं। यदि पांच लक्षणों की कसौटी ठीक नहीं है तो किस लिये इसका वर्णन हुआ और यदि ठीक है तो पुराण सच्चा कहां रहा परन्तु इस बात को छोड़ क्या कहीं कोई सूचीपत्र है जिस्से विद्यार्थी निश्चय जाने कि अठारह पुराण कौन हैं॥

वेदविद्वान का बचन॥ हां सारे पुराणों में सभों का सूचीपत्र मिलता है जिस्से सब कोई जान सक्ता है कि अठारह पुराण ये हैं॥

सत्यार्थी का बचन॥ क्या ये सूचीपत्र सब समान हैं वा उन में कुछ भेद है॥

वेदविद्वान का बचन॥ कुछ भेद तो है क्योंकि किसी में एक नाम के स्थल पर दूसरा नाम आता है और पण्डितों में कुछ विवाद भी है कि अठारह पुराण कौन हैं॥

सत्यार्थी का बचन॥ इस दशा में सूचीपत्र से ऐसा बड़ा लाभ जैसा चाहिये नहीं निकलता है और यह भी आश्चर्य्य की बात है कि अठा-

रह पुराणों का सूचीपत्र अठारह ही पुराणों में क्योंकर होवे यदि सब के सब एक ही क्षण में लिखे जाते तो आश्चर्य्य की रीति से यह हो सक्ता परन्तु सूचीपत्रों का भेद उस भावना से नहीं मिलता और और वृत्तान्त से भी प्रत्यक्ष है कि सब के सब एक ही काल में नहीं लिखे गये तो जो पहिला लिखा गया उस में औरों के नाम जो उस समय उपस्थित भी न थे क्योंकर लिखे गये परन्तु कदाचित कोई और प्रकार है जिस्से निश्चय हो सक्ता कि जो इन दिनों में पुराण कहलाते हैं सो सचमुच पुराण ही हैं॥

वेदविद्वान का बचन॥ हां मत्स्यपुराण में एक २ पुराण का संक्षेप वर्णन लिखा है और एक २ में कितने २ श्लोक हैं यह भी उस पुराण में लिखा है॥

सत्यार्थी का बचन॥ ऐसा तो लिखा है परन्तु आपको इस बात का ज्ञान भी होगा कि जो २ पुराण इन दिनों इस देश में प्रचलित हैं उन का वृत्तान्त मत्स्यपुराण के संक्षेप वर्णन से नहीं मिलता और उनके श्लोकों की सङ्ख्या भी मत्स्यपुराण के अनुसार नहीं है। उदाहरण की रीति में दो पुराणों का अर्थात भविष्य और ब्रह्मवैवर्त्त का संक्षेप वर्णन जो मत्स्य में मिलता है कहूंगा जैसा॥

यत्राधिकृत्य महात्म्यमादित्यस्य चतुर्मुखः
अघोरकल्पवृत्तान्तप्रसङ्गेन जगत्स्थितम्॥
मनवे कथयामास भूतग्रामस्य लक्षणम्
चतुर्दशसहस्राणि तथा पञ्चशतानि च
भविष्यं चरितप्रायं भविष्यं तदिहोच्यते इति॥

अर्थात जहां ब्रह्मा ने सूर्य्य की महिमा के वर्णन का आरम्भ कर भूतों का लक्षण जो जगत में वर्त्तमान है अघोर नाम कल्प के वृत्तान्त के

प्रसङ्ग से मन से कहा उस में चौदह सहस्र पांच सौ श्लोक हैं और जिस में प्राय होनेहार बातें हैं उस भविष्य को यहां कहते हैं फिर ॥

रथन्तरस्य कल्पस्य वृत्तान्तमधिकृत्य यत
सावर्णिना नारदाय कृष्णमाहात्म्यसंयुतं
यत्र ब्रह्मवराहस्य चरितं वर्ण्यते मुहुः
तदष्टादशसाहस्रं ब्रह्मवैवर्त्तमुच्यते इति ॥

अर्थात जहां सावर्णि मनु ने रथन्तर नाम कल्प के वृत्तान्त का आरम्भ करके ब्रह्म बाराह का चरित्र जिस में कृष्ण की महिमा है बार २ नारद जी से वर्णन किया और जिसकी सङ्ख्या अठारह सहस्र है वह ब्रह्मवैवर्त्त कहलाता है ॥

अब आप जानते हैं जो इन दिनों में भविष्यपुराण कहलाता है उस में भविष्यत का बहुत ही थोड़ा वर्णन देख पड़ता है और जो ब्रह्मवैवर्त्त अब उपस्थित है उसका कहनेवाला सावर्णि नहीं या नारायण मुनि था और उस में रथन्तर कल्प का कुछ भी वृत्तान्त नहीं मिलता है उन पुराणों के बिचार करने से मेरे ये बचन सत्य ठहरेंगे ॥

वेदविद्वान का बचन ॥ आपका कहना तो सच है मैं जानता हूं परन्तु कितने पण्डित इसका कारण यों बतलाते हैं कि प्राचीन पुराणों का जो पहिला वृत्तान्त था सो बहुत लुप्त हो गया और उन में नया २ वृत्तान्त मिल गया है ॥

सत्यार्थी का बचन ॥ भला इस दशा में आप बिचार कीजिये कि पुराणों का जो वृत्तान्त अब उपस्थित है किस रीति से बिश्वासयोग्य ठहरेगा। यदि पहिला वृत्तान्त यथार्थ था तो अब का वृत्तान्त यथार्थ क्योंकर हो सक्ता है और जो अब का वृत्तान्त यथार्थ है तो पहिला वृत्तान्त यथार्थ क्योंकर हुआ। परन्तु अनेक और प्रमाणों से सिद्ध है कि पुराणों का वृत्तान्त बिश्वासयोग्य नहीं है। पण्डित जी आर्य्यकुल

का यथार्थ इतिहास जो वेद आदि पुस्तकों से निकालके मैं ने आगे कहा सो पुराणों में स्पष्ट और यथार्थ रूप से नहीं लिखा है। इस-का कारण यह कि पूर्वकाल का प्रथम वृत्तान्त ग्रन्थों में नहीं लिखा गया परम्परा से होके पुत्रों ने अपने पितरों के मुख से सुना। जो कुछ वृत्तान्त इस प्रकार से पुरखे लोगों के मुंह से जाना जाता है सो सदा थोड़े विलम्ब के पीछे बदल जाता है क्योंकि जो कुछ किसी ने युवावस्था में दूसरे के मुख से सुना है इसके पीछे वह उसका सम्पूर्ण वृत्तान्त बि-स्तार के साथ स्मरण नहीं कर सक्ता हैं। फिर जब अपने बुढ़ापे में उस कथा को दूसरे लोगों के पास बतलाता है तो अपने स्मरण के दोष के कारण सच्चा वृत्तान्त बिगाड़ डालता है इस रीति से प्रथम काल का वृत्तान्त जो निरे परम्परा से आता है कहनेवालों की न्यून स्मृति के हेतु मिथ्या बातों के सङ्ग मिल जाता है॥

फिर एक और कारण यह है कि कथा के कहनेवाले पूर्वकाल के वृ-त्तान्त कहने में राजाओं के सद्गुणों का बढ़ाव के सङ्ग बखान करते हैं सदा से यह रीति भारतखण्ड में चली आई है कि भाट लोग प्राचीन राजाओं के चरित्र सभाओं में बर्णन करते थे अपने बड़ों का यश इस रीति से सुन राजा लोग बड़े प्रसन्न होते हैं और बखान करनेहारे की प्रतिष्ठा करते हैं॥

फिर यह भी कि अद्भुत कथा के सुनने से सामान्य लोगों का मन अति आनन्दित होता है इस कारण राजाओं को प्रसन्न और सामान्य लोगों का मन मोहित करने की इच्छा से भाट और कवि पूर्वकाल के वृत्तान्त में अद्भुत और अयथार्थ कथाएं मिला लेते थे। अन्त में ऐसी कथाओं की जो भाट लोगों ने पूर्वकाल में परम्परा से पाय सुनाई थीं पण्डितों ने एक संहिता किई। पुराण नाम का अर्थ भी यही होगा अर्थात ऐसी कथाओं की जो ग्रन्थ बनने के काल में पुराणी हो गई थी एक संहिता॥

वेदविद्वान का वचन ॥ इसके अनुसार विष्णुपुराण में लिखा है ॥

आख्यानैश्चाप्युपाख्यानैर्गाथाभिः कल्पशुद्धिभिः
पुराणसंहितां चक्रे पुराणार्थविशारदः इति ॥

अर्थात व्यास जो पुराणों के अर्थ में प्रवीण था उसने इतिहास कहानियों और प्रबन्ध और कल्पशुद्धियों से पुराण की संहिता बनाई ॥

सत्यार्थी का वचन ॥ इस में तो उन ग्रन्थों को जो पुराण कहलाते हैं एक संहिता व्यास की बनाई हुई वर्णन होती है परन्तु पुराणों की कोई ऐसी संहिता आज कल कहीं नहीं मिलती है इस कारण उनका प्रथम स्वरूप कोई नहीं जान सक्ता है। और यद्यपि उनका प्रथम स्वरूप निश्चय करके उपस्थित भी होता तथापि वह वृत्तान्त जो ऐसे अस्पष्ट और अयथार्थ रूप से बन गया सो यथार्थ और प्रमाणिक और विश्वासयोग्य क्योंकर हो सक्ता ॥

वेदविद्वान का वचन ॥ इस में सन्देह नहीं है कि पुराणों के वृत्तान्त पर पहिले से कुछ अन्तर हो गया है आगे मैं यह बात जानता था परन्तु क्या आप इसका कोई कारण जानते हैं अथवा यह अन्तर किस रीति से हुआ सो भी बतला सक्ते हैं ॥

सत्यार्थी का वचन ॥ बहुत सम्भव है कि जिस प्रकार से नये २ मत भारतखण्ड में उपजे उस प्रकार से पुराणों के वृत्तान्त में भी अन्तर हो गया। आज कल पद्म और मत्स्य पुराणों में सात्विकादि भेद से सब पुराणों के तीन बिभाग किये गये हैं। इन में से वे जो सात्विक कहलाते हैं सो विशेष करके विष्णु की महिमा बखान करते हैं दूसरे वर्ग में जो तामस कहलाता है महादेव की विशेष प्रशंसा है और जो २ पुराण राजस कहाते हैं उन में बालकृष्ण अथवा देवी की स्तुति होती है। कितनों में वर्णन है कि विष्णु परमात्मा है कितनों में महादेव। परन्तु यह मत कि इन देवों में से कोई एक परमात्मा आप ही है सो

प्रथम भारतखण्ड में नहीं था क्रम २ से उत्पन्न हुआ क्योंकि जब अग्नि आदि वैदिक देवताओं की महिमा घट गई थी तब ही ब्रह्मा विष्णु महेश की प्रतिष्ठा बढ़ने लगी। किस प्रकार से साधारण लोग इन देवाताओं को प्रधान मानने लगे सो अब भली भांति निश्चय नहीं हो सक्ता है। उपनिषदों में तो संसार का एक आदि कारण ब्रह्मादि नामों से बतलाया जाता है परन्तु पण्डित लोग ऐसा मानते थे कि यद्यपि ब्रह्म सचमुच एकही है तथापि सृष्ट्यादि कर्म्मों के लिये तीन रूप धारण करता है इस प्रकार से ब्रह्मा विष्णु महेश देवता की पदवी लों पहुंचाये गये और शास्त्रों में ये तीनों इस रूप से प्रसिद्ध हैं कि ब्रह्मा सिरजनेहारा और विष्णु पालनेहारा और महेश संहार करनेहारा है। रामायण में भी इसी प्रकार से इन तीनों की महिमा बखानी है और महाभारत में इसके समान उनकी पूजा किई जाती है परन्तु ब्रह्मा का भजन क्रम २ से घट गया और उसके समान विष्णु और रुद्र की पूजा साधारण लोगों में बहुत बढ़ गई भजन और मत के ऐसे अन्तर होने के कारण पुराणों में भी वही अन्तर पड़ गया होगा॥

वेदविद्वान का बचन॥ इस विषय का जो वर्णन आप करते हैं सो सत्य होगा परन्तु यदि इसका कोई प्रमाण मिल सक्ता तो मन और भी सन्तुष्ट हो जाता॥

सत्यार्थी का बचन॥ पण्डितजी इस बात को वे जो पुराणों की विद्या में निपुण हैं जिस भांति से सिद्ध करते हैं उसका सारा बिस्तार मेरे मुख से सुनिये। कितने बिदेशी विद्यावान जो महाभारत का सम्पूर्ण वृत्तान्त भले प्रकार से जानते हैं बिचार कर कहते हैं कि उसके कितने भाग नवीन हैं क्योंकि उस में जो साधारण शिक्षा मिलती है इस की बिरुद्ध एक दूसरे प्रकार की शिक्षा कहीं २ पाई जाती है इस्से वे जो तत्वज्ञान के विवेकी हैं यह अनुमान करते कि ये अलग २ भाग जिन-

का अभिप्राय बिरुद्ध है से भिन्न २ काल में अर्थात एक दूसरे के पीछे लिखे गये ओर वह भाग जिस में प्राचीन मत देख पड़ता है से प्राचीन ओर वह भाग जिस में नवीन मत पाया जाता है से नवीन ठहरता है। इस रीति से बिचारी लोगों ने निर्णय किया है कि जिन भागों में परमात्मा के नाम से कृष्ण का बखान है से सब के सब नवीन हैं क्योंकि इस मत का कुछ वर्णन महाभारत के किसी ओर स्थल में देख नहीं पड़ता है ओर दूसरे प्रकार से भी जाना जाता है कि यह मत ओरों से नवीन है इस रीति से प्रसिद्ध भगवद्गीता जिस में परब्रह्म के नाम से कृष्ण का बखान है नवीन जानी जाती है। जिस काल पण्डितों ने पहिले महाभारत की संहिता किई उस काल भगवद्गीता बनी नहीं थी परंतु इस के उपरान्त जब कृष्ण की महिमा संसार में बहुत बढ़ गई थी तब पण्डितों ने गीता को बनाके महाभारत की संहिता में मिला लिया। इसके समान कितने पण्डित बिचार करते हैं कि रामायण का वह भाग जिस में विष्णु के अवतार के नाम से रामादिकों की महिमा है से भी नवीन है॥

वेदविद्वान का बचन॥ जो यह दशा है तो आपकी समझ में राम ओर कृष्ण का यथार्थ वृत्तान्त कैसा है॥

सत्यार्थी का बचन॥ इस में सन्देह नहीं है कि अयोध्या देश का स्वामी एक प्राचीन राजा राम नाम बड़ा प्रतापी ओर जयवन्त था ओर यह भी प्रसिद्ध है कि मथुरा के राजा कृष्ण ने महाभारत के बड़े युद्ध में पाण्डवों की सहायता किई इन दोनों राजाओं ने अपनी बीरता ओर गुणों से बड़ा यश पाया परन्तु उन को देवता करके मानना बुद्धिमान के योग्य नहीं है। कवि लोगों ने बड़े बढ़ाव के सङ्ग उन के चरित्र का बखान कर क्रम २ से उन की महिमा संसार में बहुत बढ़ाई फिर जब उनका यथार्थ वृत्तान्त मनुष्य के स्मरण से मिट गया था तब

अज्ञान लोग उनको देवता जानने लगे। जब लों कोई गुणवान पुरुष इस जगत में रहता है तब लों मनुष्य उसके देवता होने की भावना नहीं कर सक्ते हैं क्योंकि वे प्रतिदिन और साक्षात रीति से देखते हैं कि देवता के समान नहीं बरन मनुष्य के समान कार्य्य किया करता है। परन्तु जब वह जगत से अन्तर्ध्यान हुआ और परलोक की यात्रा कर गया तब उसके विषय में निष्प्रमाण और अयथार्थ कथाओं की उत्पत्ति हो सक्ती है। सारे देशों के मनुष्य अपने स्वाभाविक गुण से हर एक वस्तु का जो जगत में बहुत प्राचीन देख पड़ती है बड़ा आदर करते हैं और पूर्वकाल के जिन पुरुषों ने अपने गुणों से संसार में बड़ा यश पाया है उनके पीछे आनेवाले मनुष्य उनकी बड़ी प्रतिष्ठा करते हैं। जिस प्रकार से राम और कृष्ण के विषय में जो सचमुच देव नहीं हैं उसी प्रकार से औरों के विषय में भी देवता होने की भावना भारतखण्ड में उत्पन्न हुई क्योंकि पण्डितजी महाभारत के आदिपर्व में लिखा है कि देवताओं के अंश अवतार लेके बहुतेरे शूरों और वीरों के रूप में प्रगट हुए। यदि आप इस वृत्तान्त का निर्णय करना चाहें तो अंशावतरण नाम पर्व को देखिये बरन इस प्रकार का बढ़ाव अज्ञानता से उत्पन्न हो सदा से भारतखण्ड में प्रचलित हो रहा है शास्त्रकर्त्ता यह भी कहते हैं कि प्रसिद्ध शङ्कराचार्य्य शिव का और बड़ा मुनि कपिल विष्णु का अवतार था॥

वेदविद्वान का बचन॥ यह तो प्रसिद्ध बात है कि इन दिनों में भी इस देश के निवासी कितने लोगों को जो मर गये मिथ्या रूप से देव की महिमा देते हैं। महम्मद के कितने एक मतावलम्बी अनेक स्थानों में पीर नाम से प्रसिद्ध हैं वे जो इस देश में पुण्यात्मा की रीति बड़ा यश पाते हैं अज्ञान लोग फूल चढ़ाय उनकी पूजा करते हैं और उनकी ऐसी झूठी महिमा कहते हैं कि रोगियों के चंगा करने की आदि

शक्ति उन मृतकों में रहती है। इस प्रकार मनुष्यों में देवत्व की पदवी करने की यह व्यर्थ रीति पहिले से आज लों भारतखण्ड में देख पड़ती है परन्तु इस रीति की उत्पत्ति का कोई सत्य मूल तो होगा और मैं ने ऐसा समझा है कि जो औरों के विषय में साक्षात मिथ्या है सो राम और कृष्ण के विषय में सत्य होगा इस कारण मैं पूछता हूं कि आप किस प्रमाण से जानते हैं कि आरम्भ में राम और कृष्ण का यथार्थ वृत्तान्त देवता का सा नहीं था॥

सत्यार्थी का बचन॥ एक बात तो यह है कि उनके देवता होने का वृत्तान्त जो शास्त्रों में मिलता है सो परीक्षा करने से यथार्थ और प्रमाणिक नहीं ठहरता है परन्तु इस समय इसकी चर्चा भली भांति नहीं कर सक्ते पीछे सम्पूर्ण रूप से बिचार करेंगे कि यथार्थ और प्रमाणिक वृत्तान्त कैसा है और किन लक्षणों से जाना जाता है पर इसको छोड़ अब इसके सम्बन्ध में दो एक और बात कहूंगा आप सुनिये॥

बिक्रमादित्य के सन से ५०० बर्ष पहिले बौद्धमत की उत्पत्ति हुई उस मत के सब से प्राचीन शास्त्रों में अनेक देवताओं का वृत्तान्त मिलता है और जिन की पूजा वेदमतावलम्बी उस काल करते थे वे हरि नारायण ब्रह्म बरुण शङ्कर शिव कुबेर वासव शक्र आदि देवताओं के नाम से बखाने जाते हैं। परंतु बौद्धों के किसी प्राचीन सूत्र में जिसकी परीक्षा हुई कृष्ण का नाम नहीं आता है यदि कृष्ण की पूजा उस काल में साधारण रूप से प्रचलित होती तो क्या और देवताओं के समान बौद्धों के सूत्रों में उस का वर्णन न होता। इस रीति से अनुभव सिद्ध है कि जिस काल वे सूत्र रचे गये उस काल कृष्ण के देवता होने की भावना सामान्य लोगों में प्रचलित नहीं थी॥

वेदविद्वान का बचन॥ कदाचित बौद्धों के किसी और सूत्र में जिस की परीक्षा अब लों नहीं हुई कृष्ण का वर्णन होवे॥

सत्यार्थी का बचन ॥ यदि आप ऐसा समझें तो एक ऐसा सूत्र दिखाइये परन्तु केवल इतना नहीं क्योंकि छन्दोग्य उपनिषद के कर्त्ता एक प्राचीन पण्डित ने कृष्ण का यह वृत्तान्त किया है कि देवकी के पुत्र ने घोर से शिक्षा पाई। जैसे छन्दोग्य उपनिषद में लिखा है ॥

तद्धैतद् घोर आङ्गिरसः कृष्णाय देवकीपुत्रायोक्त्वोवाच इत्यादि ॥

अर्थात अङ्गिर का पुत्र घोर नामक ऋषि देवकी के पुत्र को यह कहके बोला। इस स्थल में कृष्ण का देवता की रीति वर्णन नहीं होता है और महिमा का कोई पद कहा नहीं जाता है। इससे अनुमान करते हैं कि जिस काल में उपनिषद बनाये गये उस काल देवकी का पुत्र प्रसिद्ध तो था परन्तु जब आदरप्रकाशक कोई शब्द उपस्थित नहीं है तो उससे सिद्ध है कि उसको देवता होने की भावना उस काल भारतखण्ड में प्रचलित नहीं थी। अब आप विचार कीजिये कि महाभारतादि इतिहासों और पुराणों में कृष्ण का वृत्तान्त नाना प्रकार का है और उसकी महिमा क्रम २ से बढ़ती जाती है यहां उसके युद्धादि कर्म्मों का वर्णन है वहां वह अन्य मनुष्यों की रीत कार्य्य करता है और अपनी रक्षा के लिये अथवा शत्रुओं के नाश के हेतु बहुधा दैव्यशक्ति प्रगट नहीं करता है। फिर बनपर्व में लिखा है कि उसने सहस्रों बरसों अनेक तीर्थों में अति कठिन तप किये। ऐसा वृत्तान्त देवता का सा नहीं है मनुष्य का सा है। फिर उसी महाभारत के कितने स्थलों में कहा है कि केशव नारायण ऋषि ही है यों कृष्ण आप ही कहता है ॥

त्वं चैवाहं च कौन्तेय नरनारायणौ स्मृताविति ॥

अर्थात हे कुन्ती के बेटे तू नर और मैं नारायण हूं। फिर दानधर्म में कहा है कि कृष्ण ने शिव का पुजारी हो स्त्री समेत उसको प्रसन्न कर उस से अनेक बर पाये। आप बतलाइये कि इसके बिरुद्ध कृष्ण का हरि के एक अंश का अवतार होना कैसा वर्णन होता है ॥

वेदविद्वान का बचन ॥ महाभारत के आदिपर्व में लिखा है कि हरि के एक काले केश से कृष्ण उत्पन्न हुआ जैसा ॥

व्यास उवाच ॥

तैरेवसार्द्धन्तु ततः स देवोजगाम नारायणमप्रमेयं
अनन्तमव्यक्तमजं पुराणं सनातनं विश्वमनन्तरूपं ॥ ८३०६ ॥
सचापितद्व्यधात्सर्वमेव ततः सर्वे संबभूवुर्द्धरण्यां
सचापि केशौ हरिरुद्ववर्ह शुक्लमेकमपरंचापि कृष्णम् ॥ ७६०७ ॥
तौ चापि केशौ निविशेतां यदूनां कुले स्त्रियौ देवकीं रोहिणीं च
तयोरेकोबलदेवोबभूव योऽसौ श्वेतस्तस्य देवस्य केशः
कृष्णोद्वतीयः केशवः सम्बभूव केशोयोसौवर्णतः कृष्ण उक्तः ॥ ६३०८ ॥

अर्थात तिसके पीछे वह देव अर्थात ब्रह्मा उन्हीं देवों के साथ नारायण के पास जो किसी से नहीं जाना जाता जिसका अन्त नहीं और जो किसी पर प्रगट नहीं और जिसकी उत्पत्ति नहीं और जो पुरातन और सदा एकरूप बना रहता और सर्वस्वरूप जिसके रूप अनन्त हैं गया। और उसने भी उनका वह सब काम किया तब सब देव पृथ्वी में उत्पन्न हुए और उस हरि ने भी दो केश निकाले एक श्वेत और एक काला। उन केशों ने यदूओं के वंश में देवकी और रोहिणी नाम स्त्रियों में प्रवेश किया उन में से जो उस देव का श्वेत केश था उस से बलदेव हुआ और दूसरा केश जो वर्ण में काला था उस्से कृष्णवर्णी केशव हुआ ॥

सत्यार्थी का बचन॥ इसके अनुसार विष्णुपुराण में भी पाराशर कहता है कि कृष्ण की उत्पत्ति एक केश से हुई जैसा॥

एवं संस्तुयमानस्तु भगवान परमेश्वरः
उज्जहारात्मनः केशौसितकृष्णौ महामुने
उवाच च सुरानेतौ मत्केशौ वसुधातले

अवतीर्य्य भुवोभारक्लेशहानिं करिष्यतः
सुराश्च सकलाः स्वांशैरवतीर्य्य महीतले
कुर्वन्तु युद्धमुन्मत्तैः पूर्वोत्पन्नैर्महासुरैः
ततः क्षयमशेषास्ते दैतेया धरणीतले
प्रयास्यन्ति न सन्देहोमद्दृक्पातविचूर्णिताः
वसुदेवस्य या पत्नी देवकी देवतोपमा
तस्यायमष्टमोगर्भोमत केशोभवितासुराः
अवतीर्य्य च तत्रायं कंसं घातयिता भुवि
कालनेमिसमुद्भूतमित्युक्त्वाऽन्तर्दधे हरिरिति॥

अर्थात हे महामुनि जब देवताओं ने इस भांति भगवान परमेश्वर की स्तुति किई तब उसने अपने दो केश एक श्वेत और एक काला उखाड़े और देवों से कहा कि यह मेरे केश भूमण्डल में अवतार लेके भूमि का भार और पीड़ा दूर करेंगे और सब देव अपने २ अंश से पृथ्वी में उतरके बड़े २ असुरों से जो पहिले उत्पन्न हुए और उन्मत्त हैं युद्ध करें। तब वे सारे दैत्य मेरी दृष्टि के पड़ने से चूरण होके भूमि पर नाश होंगे इस में कुछ सन्देह नहीं है। हे देवो देवकी नाम वसुदेव की स्त्री जो देवतासी है उसका आठवां गर्भ यही मेरा केश होगा और वह पृथ्वी में अवतार लेके कंस को जो कालनेमि से उत्पन्न है मार डालेगा ऐसा कहके हरि गुप्त हो गया॥

इन दो स्थलों में वर्णन है कि विष्णु के एक केशमात्र से कृष्ण उत्पन्न हुआ परन्तु गीता में इस्से आगे बढ़के क्या उसकी बहुत अधिक महिमा नहीं होती है॥

वेदविद्वान का बचन॥ हां भगवद्गीता में अर्जुन कहता है कि कृष्ण परमात्मा है जैसा॥

परं ब्रह्म परं धाम पवित्रं परमं भवान्
पुरुषं शाश्वतं दिव्यमादिदेवमजं विभुं ॥
आहुस्त्वामृषयः सर्वे देवर्षिर्नारदस्तथा
असितो देवलो व्यासः स्वयं चैव ब्रवीषि मे इति ॥

अर्थात तू परब्रह्म और बड़ा तेजोरूप और अति पवित्र है तुझको सब ऋषि जैसे देवऋषि नारद असित देवल और व्यास कहते हैं कि तू शाश्वत पुरुष दिव्य आदिदेव और व्यापक है और किसी से उत्पन्न नहीं वरन तू भी आप ऐसा कहता है ॥

सत्यार्थी का बचन॥ अब आप ध्यान कीजिये कि जिस प्रकार महाभारत में कृष्ण का भिन्न २ वृत्तान्त देख पड़ता है उसी प्रकार अन्य पुराणों में भिन्न २ मत दृष्टि आते हैं। ब्रह्मवैवर्त्त में बालकृष्ण और राधा का नवीन भजन विशेष करके किया जाता है जिसका चिन्ह विष्णु आदि पुराणों में कहीं नहीं देख पड़ता है। इस रीति से जब शास्त्रों की परीक्षा होती है तो सिद्ध है कि कृष्ण के विषय में नाना प्रकार के भिन्न २ मत क्रम २ से बदलते गये हैं और जब भारतखण्ड में कोई नया मत उत्पन्न हो प्रबल हुआ तब उस नये मत के पक्षपातियों ने उसके स्थापन के लिये एक नया शास्त्र भी बनाया ॥

वेदविद्वान का बचन॥ उस वर्णन से कि जो आपने कृष्ण के विषय में किया है मेरी समझ में ऐसी ठीक विरुद्धता सिद्ध नहीं होती है क्योंकि ईश्वर के किसी अवतार में ईश्वर और मनुष्य दोनों का गुण दृष्टि आना कुछ बुद्धि के विरुद्ध नहीं है। इस कारण मैं जानता हूं कि आपका वर्णन सिद्ध करने के लिये कुछ और प्रमाण चाहिये ॥

सत्यार्थी का बचन॥ आपका कहना ठीक है और मैं ने केवल इतना कहा है कि कृष्ण का जो वृत्तान्त शास्त्रों में मिलता है अनुमान की रीति से उसका वही अर्थ जो मैं ने बतलाया सम्भव और बुद्धि के अनु-

भार देख पड़ता है। क्योंकि आप बिचार कीजिये कि और प्रकरणों में भी समस्त पुराणों की यही रीति प्रत्यक्ष है शैव और वैष्णव पुराणों में इसी प्रकार की परस्पर विरुद्धता और द्वेष देख पड़ता है और एक २ अपने २ इष्ट देवता का बखान करता है। शास्त्रों में जो दक्ष के यज्ञनाश होने की कथा है उस्से जाना जाता है कि पूर्वकाल में भी शैव लोग वैष्णवों से द्वेष करते थे। शिव अथवा विष्णु का पक्ष लेके उनके पूजकों ने अपने २ इष्ट देवता की प्रशंसा के लिये पुराण बनाये। कितने पुराणों में विष्णु की स्तुति है और शिव के पूजकों की निन्दा। पद्मपुराण का उत्तर खण्ड जो आप देखिये तो उस में विष्णु के भजन की बड़ी प्रशंसा है। उस खण्ड में ऐसा लिखा है कि महादेव ने पार्वती से विष्णुपूजा और विष्णुभक्ति का सम्पूर्ण वृत्तान्त बिस्तार के साथ किया और जब रुद्र वर्णन कर चुका तब उन दोनों ने विष्णु की पूजा किई। फिर उसी पुराण में यह भी लिखा है कि एक समय ऋषियों की सभा में भृगु ने कहा कि तीन देवों में केवल हरि प्रशंसा के योग्य है जैसे पद्मपुराण के उत्तर खण्ड में अन्त के अध्याय में लिखा है॥

भृगुरुवाच॥

रजस्तमोगुणोद्रिक्तौ विधीशानौ सुरोत्तमौ
शप्तौ मया न पूज्यौ तौ विप्राणामृषिसत्तमाः॥
शुद्धसत्वमयो विष्णुः कल्याणगुणसागरः
नारायणः परं ब्रह्म विप्राणां दैवतं हरिरिति॥

अर्थात ब्रह्मा और रुद्र जो सब देवों में श्रेष्ठ हैं उन में रजोगुण और तमोगुण अधिक है हे श्रेष्ठ ऋषियो मैं ने उनको शाप दिया है वे ब्राह्मणों से पूजा पाने के योग्य नहीं हैं। परन्तु विष्णु शुद्ध और सद्गुणी है जो मङ्गलगुणों का समुद्र है और वह नारायण परब्रह्मरूपी है इस कारण हरि ही ब्राह्मणों का दैवत है॥

वेदविद्वान का बचन ॥ इसके समान भागवत में ब्रह्मा प्रजापति आप ऐसे ही वचनों से विष्णु की स्तुति करता है जैसे दूसरे स्कन्ध के छठे अध्याय में ब्रह्मा कहता है ॥

ब्रह्मोवाच ॥

नाहं न यूयं यदृतां गतिं विदुर्न वामदेवः किमुतापरे सुराः तन्मायया मोहितबुद्धयस्त्विदं विनिर्मितं चात्मसमं विचक्ष्महे ॥ ३६ ॥ यस्यावतार-कर्म्माणि गायन्ति ह्यस्मदादयः न यं विदन्ति तत्वेन तस्मै भागवते नमः ॥ ३० ॥ इत्यादिना

अर्थात जिसकी सत्य गति को न मैं न महादेव न तुम लोग जानते फिर और देवों की कौनसी गिनती है क्योंकि उस की माया से हम लोगों की बुद्धि में मोह पड़ा है इस कारण हम केवल यह जगत जो उसने अपने सदृश बनाया देखते हैं। जिस के अवतार और कर्म्मों को हम ऐसे गाते पर जिसको ठीक २ नहीं जानते उस भगवान को नमस्कार ॥

फिर पद्मपुराण के उत्तरखण्ड में ब्रह्मा कहता है ॥

व्यापकोऽयं सदा विष्णुः परमात्मा सनातनः
अनादिनिधनः श्रीमान् भूतात्मा भूतभावनः ॥
यस्मादहंहि सञ्जातः सोयं विष्णुः सदावतु
सोऽयं कालस्य कालोवै सोऽयं मम तु पूर्वजः ॥

अर्थात यह विष्णुः सदा व्यापक है और परमात्मा सदा से एकरूप बना है जिसका आदि और अन्त नहीं और ऐश्वर्य्यमान सब प्रणियों का आत्मा और उनका सिरजनहार है जिससे मैं उत्पन्न हुआ सो यह विष्णु सारे समय रक्षा करे सो यह मृत्यु का भी मृत्यु है सो यह मेरा पुरनियां है ॥

फिर यह भी कहा है ॥

स पिता जनिताऽस्माकं कीर्त्यते मधुसूदनः

अर्थात वह मधुसूदन हम लोगों का पिता और जन्म देनेहारा कहा-ता है॥

सत्यार्थी का बचन॥ अब इसके बिरुद्ध में आप बिचार कीजिये कि लिङ्ग कूर्म आदि शैव पुराणों में विष्णु की कैसी निन्दा और शिव की कैसी स्तुति है। लिङ्गपुराण में लिखा है कि एक दिन ब्रह्मा और विष्णु अपनी २ श्रेष्ठता के लिये झगड़ा करते थे तब एक अग्नि रूप महा-लिङ्ग प्रगट हुआ उस्से वे लज्जित हो और उसका बड़ा तेज देख दोनों ब्रह्मा और विष्णु ने शिव की पूजा किई। जैसे लिङ्गपुराण के १० वें अध्याय में लिखा है॥

आवयोस्त्वभवद्युद्धं सुघोरं रोमहर्षणं
प्रलयार्णवमध्ये तु रजसा बद्धवैरयोः॥
इतस्मिन्नन्तरे लिङ्गमभवच्चावयोः पुरः
विवादशमनार्थञ्च प्रबोधार्थञ्च भास्वरं॥
ज्वालामालासहस्राढ्यं कालानलशतोपमं
क्षयवृद्धिविनिर्मुक्तमादिमध्यान्तवर्ज्जितं॥
अनौपम्यमनिर्देश्यमव्यक्तं विश्वसम्भवं
तस्य ज्वालासहस्रेण मोहितोभगवान् हरिः॥
मोहितं प्राह मामत्र परीक्षावोऽग्निसम्भवं
अधो गमिष्याम्यनलस्तम्भस्यानुपमस्य च॥
भवानूर्द्धं प्रयत्नेन गन्तुमर्हति सत्वरं
एवं व्याहृत्य विश्वात्मा स्वरूपमकरोत्तदा॥
वाराहमहमप्येवं हंसत्वं प्राप्तवान् सुराः
एवंबर्षसहस्रन्तु त्वरन्विष्णुरधोगतः॥
नापश्यदल्पमप्यस्य मूलं लिङ्गस्य शूकरः

तावत्कालं गतोऽप्युद्धमहमप्यरिसूदनाः ॥
सत्वरं सर्व्वयत्नेन तस्यान्तं ज्ञातुमिच्छया
श्रान्तोन दृष्टा तस्यान्तमहङ्कालादधोगतः ॥
तथैव भगवान् विष्णुः श्रान्तसन् चललोचनः
सर्व्वदेवभवस्तूर्णमुत्थितस्तुमहावपुः ॥
समागतोमया सार्द्धं प्रणिपत्य भयान्मुहुः
मायया मोहितश्शम्भोस्तस्थौ सम्विग्नमानसः ॥
पृष्ठतः पार्श्वतश्चैव चाग्रतः परमेश्वरं
प्रणिपत्य मया सार्द्धं सस्मार किमिदं त्विति ॥
तदा समभवत्तत्र सनादं शब्दलक्षणं
श्रों श्रोमिति सुरश्रेष्ठाः सुव्यक्तं प्लुतलक्षणं ॥
किमिदंत्विति सञ्चिन्त्य मया तिष्ठन्महास्वनं
लिङ्गस्य दक्षिणे भागे तदाऽपश्यत सनातनमित्यादि ॥

अर्थात उस प्रलयकाल के समुद्र में हम दोनों का बड़ा भयानक युद्ध हुश्रा जिसके सुनने से रोम खड़े होते क्योंकि हम दोनों में रजोगुण के कारण से आपस में वैर था। उस समय हमारे झगड़े के मिटाने और समझाने के लिये हम दोनों के आगे एक तेजोमय लिङ्ग उत्पन्न हुआ जिसके चारों ओर सहस्रों ज्वालाओं की माला थीं और जो प्रलयकाल के सैकड़ों अग्नि के सदृश था जिसका क्षय और वृद्धि नहीं और आदि मध्य अन्त नहीं और जिस की उपमा नहीं दे सक्ते हैं और जिसका वर्णन नहीं कर सक्ते हैं क्योंकि वह अस्पष्ट और सब का कारण था उसकी सहस्रों ज्वाला देख भगवान हरि मोह में पड़ा और मैं भी मोहित हुआ। तब मुझे हरि ने कहा कि हम दोनों देखें कि यहां कहां से अग्नि आई मैं इस अनुपम स्तम्भ के नीचे जाऊंगा और आपको वेग प्रयत्न कर ऊपर जाना चाहिये। हे देवो। तब सर्वात्मा हरि ने इस

भांति करके वाराह रूप लिया और मैं ने भी उसी प्रकार हंस का रूप धारण किया। इस प्रकार सहस्र बर्ष पर्य्यन्त बड़े वेग से विष्णु नीचे गया परन्तु उस वाराहरूपी ने उस लिङ्ग का मल कुछ भी न देखा। हे शत्रुओं के नाश करनेहारो। मैं भी उतने काल लों वेग से बड़ी दूर लों ऊपर गया और कोई प्रयत्न न छोड़ा इस इच्छा से कि उसका अन्त जानूं परन्तु मैं थक गया उसका अन्त न देखा तब कुछ काल बीते मैं नीचे लौट आया। उसी भांति जब भगवान विष्णु जिस्से सब देवता उत्पन्न हुए और जो महाशरीरधारी था थक गया और उसके नयन पीड़ित हुए तब त्वरित ऊपर आया। और मेरे साथ आय भय खाय बारम्बार नमस्कार करता महादेव की माया से मोहित हो मन में घबराता खड़ा रहा। और मेरे सङ्ग आगे पीछे दहिने बायें परमेश्वर को नमस्कार करता चिन्ता करने लगा कि यह क्या है। हे उत्तम देवो। तब वहां ओं २ ऐसा एक स्पष्ट शब्द बड़े नाद से हुआ जिस में प्लुत अर्थात लम्बो ध्वनि थी। और जब वह मेरे साथ खड़ा होके यह चिन्ता कर रहा था कि यह क्या है तो लिङ्ग की दहिनी ओर उस समय सनातन को देखा॥

फिर यह भी कहा है॥

पञ्चमन्त्रं तथा लब्ध्वा जजाप भगवान् हरिः
अथ दृष्ट्वा कालवर्णं ऋग्यजुः साम लक्षणं॥
ईशानमीशमुकुटं पुरुषाख्यं पुरातनं
अघोरहृदयं हृद्यं वामगुह्यं सदाशिवं॥
सद्यपादं महादेवं महाभोगीन्द्रभूषणं
विश्वतः पादवदनं विश्वतोक्षिकरं हरं॥
ब्रह्मणोधिपतिं सर्गस्थितिसंहारकारणं
तुष्टाव पुनरिष्टाभिर्वाग्भिर्वरदमीश्वरमिति॥

अर्थात भगवान हरि ने पांच मन्त्रों को पाय जप किया तब मुख रूपी ईश्वर को देख उसने अच्छी वाणी से स्तुति किई। श्याम जिस का वर्ण और ऋक यजु साम रूपी और जो सब का ईश्वर है और ईश्वर मन्त्र जिसका मुकुट पुरुष जिसका नाम है और जो पुरातन है अघोरमन्त्र जिसका हृदय जो सब का प्रिय है वाममन्त्र जिस का गुह्य जो सदा कल्याण करता है सद्यमन्त्र जिसका पाद जो सब देवों में बड़ा है बड़े २ सर्प जिसके भूषण हैं जिसके सब ओर पाद मुंह आंख और हाथ हैं जो दुःख का हरनेहारा जो ब्रह्मा का भी अधिपति है और उत्पत्ति स्थिति और संहार का कारण है॥

वेदविद्वान का वचन॥ कुछ सन्देह नहीं है कि कितने पुराण विशेष करके विष्णु की महिमा बखान करते हैं और कितने महादेव की प्रशंसा करते हैं और पहिले दृष्टि से यह तो एक प्रकार की विरुद्धता देख पड़ती है। इसका जो कारण पण्डित लोग वर्णन करते हैं मैं पीछे कहूंगा परन्तु पहिले जितना वृत्तान्त आप करना चाहते हैं मैं सब का सब सुन लूंगा॥

सत्यार्थी का वचन॥ पण्डितजी एक और बात यह है कि पुराणों के कर्त्ता अपने २ इष्ट देवता का पक्ष धरके ऐसी ही बिरुद्धता के सङ्ग उनके लोकों का भी बखान करते हैं। पद्मपुराण का कर्त्ता जो वैष्णव था कहता है कि विष्णु का लोक वैकुण्ठ समस्त और लोकों से श्रेष्ठ है। फिर ब्रह्मवैवर्त्त में जो कृष्ण के पक्ष पर है कहा है कि सब से श्रेष्ठ लोक गोलोक है। इनके बिरुद्ध शिव पुराण और कर्म पुराण के कर्त्ता जो शैव हैं कहते हैं कि रुद्र का लोक सब से श्रेष्ठ है। परन्तु शैव और वैष्णव पुराणों में जो बिरुद्धता और द्वेष है उसे प्रगट करने के लिये और कुछ कहना क्या प्रयोजन है सारे संसार में यह बात प्रसिद्ध है॥

वेदविद्वान का बचन॥ क्या आपने नहीं कहा था कि कितने पुराण नवीन हैं आप इस बात को किस प्रमाण से सिद्ध करते हैं॥

सत्यार्थी का बचन॥ पुराणों के बहुतेरे खण्डों में वाराणसी अर्थात काशी आदि तीर्थों की महिमा बखानी है। अब वे जो यथार्थ वृत्तान्त से सुज्ञान हैं जानते हैं कि इन तीर्थों में से कितने नवीन हैं इस कारण पुराणों के वे खण्ड जिन में नवीन तीर्थों की महिमा है सो भी नवीन होंगे। जब से उत्कल देश में जगन्नाथ का प्रसिद्ध मन्दिर बन गया तब से छह सौ बर्ष बीत न गये होंगे इसके बनाने का काल यथार्थ लक्षणों से जाना जाता है। अब ब्रह्मपुराण में जिस में उत्कल देश के तीर्थों की महिमा बखानी है इसी मन्दिर का वर्णन लिखा है इससे यह अनुभव सिद्ध है कि वह पुराण जिस में इस मन्दिर का वर्णन है सो मन्दिर के बनने के पीछे लिखा गया। इसी प्रकार से पद्म पुराण की नवीनता भी सिद्ध है क्योंकि उस में श्रीरंग और व्यंकट के देव मन्दिरों का वर्णन है। पुराण के वे खण्ड जिन में तीर्थों की प्रशंसा है सम्भव है कि उनकी उत्पत्ति इस प्रकार से हुई होगी अर्थात सर्वत्र संसार में प्रसिद्ध है कि तीर्थों के पुरोहित और पंडे अपने अपने पवित्र स्थानों का यश बड़े यत्न से बढ़ाते हैं। जब किसी तीर्थ का यश इस प्रकार से बहुत बढ़ गया था तब उसके महात्म्य का एक खण्ड किसी पुराण में मिलाते थे। और ऐसे स्थानों की पवित्रता सिद्ध करने के लिये पण्डित लोगों ने अद्भुत कथाओं की कल्पना किई कि उन में किसी २ देवता का दर्शन हुआ॥

वेदविद्वान का बचन॥ जब कि आप भागवत का वृत्तान्त करते थे तब आपने कहा कि कितने पण्डितों की समझ में उसका कर्त्ता व्यास था क्या इस विषय में कुछ सन्देह है अथवा आप उसके बनने का काल किन्हीं लक्षणों से बतला सक्ते हैं॥

सत्यार्थी का वचन॥ भागवत ही की एक कथा से जाना जाता है कि उसके बनने का काल महाभारत के पीछे था। क्योंकि लिखा है कि जब व्यासजी ने वेदों की संहिता करके उन्हें पैल आदिकों को दिई और इतिहास पुराण सूत के पिता लोमहर्षण को दिये थे तब शूद्रादिकों के ज्ञान के लिये महाभारत की संहिता किई परन्तु उससे सन्तुष्ट न हो वह बड़ी व्याकुलता में डूब गया। इस दशा में नारदजो ने स्वर्ग से उतर दर्शन दे उसको समझाया इसके पीछे व्यास ने भागवत को बनाया। देखो भागवत के १ स्कन्ध ४ अध्याय में॥

इतिभारतमाख्यानं कृपया मुनिना कृतं
एवं प्रवृत्तस्य तदा भूतानां श्रेयसि द्विजाः॥
सर्वात्मकेनापि यदा नातुष्यद्धृदयं ततः
नातिप्रसीदद्धृदयः सरस्वत्यास्तटे शुचौ
वितर्कयन् विविक्तस्थ इदं प्रोवाच धर्म्मविदिति॥ १७॥

अर्थात इस प्रकार से कृपा कर मुनि ने भारतनाम इतिहास बनाया परन्तु हे ब्राह्मणो यद्यपि वह सब प्रकार से प्राणियों के कल्याण करने में ऐसा उद्योग करता था तौ भी जब उसके मन में सन्तोष न हुआ तब वह धर्म्मज्ञानी जिसका चित्त अति सन्तुष्ट न था सरस्वती के पवित्र तट पर एकान्त में बैठा हुआ विचार करता हुआ यह कहने लगा॥

भागवत के इन्हीं बचनों से देख पड़ता है कि उसकी उत्पत्ति पुराणों और महाभारत के पीछे थी फिर भी उसका नाम पुराण की रीति समस्त पुराणों के सूचीपत्र में आता है। कितने यहां के पण्डित कहते हैं कि मुग्धबोध व्याकरण के कर्त्ता वोपदेव ने सचमुच भागवत को बनाया। यह तो परम्परा की एक बात है परन्तु उस पर सन्देह करने का कोई यथार्थ कारण देख नहीं पड़ता। वोपदेव का काल देवगिरि के राजा हिमाद्रि का था अर्थात उसको छह सौ बर्ष बीत गये हैं कदा-

चित आप की समझ में यह काल बहुत नवीन देख पड़े परन्तु कितने पुराण इस्से भी नवीन हैं। सम्भव है कि पुराणों का काल उन आचार्यों के समान होगा जिनके मत विशेष करके उन में मिलते हैं अर्थात शङ्कर को एक सहस्र वर्ष हो गये रामानुज को छह सौ वर्ष माध्वाचार्य्य के पांच सौ वर्ष और बल्लभ को अढ़ाई सौ वर्ष। कोई पुराण जो अब उपस्थित है एक सहस्र वर्ष से प्राचीन नहीं होगा कितने तीन सौ वर्ष के होंगे। परन्तु उन में कितने ऐसे भाग और कथा हैं जो कदाचित इस्से प्राचीन होंगी पर किसी पुराण के सङ्ग्रहकर्त्ता और ठीक काल और इस प्रकार के वृत्तान्त को प्रमाणिक और यथार्थ रीति से कोई नहीं जानता है। इस रीति पर पुराणों की परीक्षा करने से सिद्ध होता है कि एक दूसरे के पीछे बन गया और उनका कोई यथार्थ प्रमाण देख नहीं पड़ता है। एक २ पुराण के कर्त्ता ने जैसा मत जिसको भाया अपनी २ बुद्धि के अनुसार पुराण में अपने मत की प्रशंसा किई। इन में से कितने अपने मत का बड़ा ही पक्ष प्रगट करते हैं और दूसरे मत के शास्त्रों की अपनिन्दा करते हैं। इसके अनुसार ब्रह्मवैवर्त्त का कर्त्ता वेद आदि समस्त शास्त्रों को दूषण देता है। जैसे उसके आदि श्लोक में कहा है॥

भगवन् यत्त्वया पूर्वं ज्ञातं सर्वमभीप्सितं।
सारभूतं पुराणेषु ब्रह्मवैवर्त्तमुत्तमम्॥
पुराणोपपुराणानां वेदानां भ्रमभञ्जनम्
हरिभक्तिप्रदं सर्वं तत्त्वज्ञानविवर्द्धकं॥
कामिनां कामदं चेदं मुमुक्षूणाञ्च मोक्षदं
भक्तिप्रदं वैष्णवानां कल्पवृक्षस्वरूपकम्॥ इति॥

अर्थात हे भगवान जो तू ब्रह्मवैवर्त्तपुराण को पहिले से जानता है सो चाहने के योग्य और पुराणों से उत्तम और सब का सार है। पुराण

और उपपुराण और वेदों की भूल मिटानेहारा और हरि की भक्ति देनेहारा और तत्वज्ञान का बढ़ानेहारा और कामी लोगों के मनोरथ पूर्ण करनेहारा मोक्ष के खोजियों को मोक्ष देनेहारा है और वैष्णवों का मानो कल्पवृक्ष सी भक्ति देवैया है ॥

अब आप बिचार कीजिये कि यदि पुराण ईश्वरवाणी और उनकी शिक्षा सत्य और यथार्थ है तो इस पुराण का यह बचन भी ठीक होगा और इसी समस्त और शास्त्र खण्डन हो चुके। सो जब मैं कहता हूं कि सम्पूर्ण शास्त्र निषप्रमाण हैं तो केवल शास्त्र ही की बात कहता हूं। परन्तु इसके सङ्ग मैं कुछ और भी कहता हूं अर्थात अपने बचन को सिद्ध करने के लिये प्रमाण भी लाता हूं। आप बिचार कीजिये कि मेरा प्रमाण यथार्थ है कि नहीं ॥

ग्रन्थकर्त्ता का बचन ॥ तब मैं ने देखा कि सत्यार्थी के इन बचनों से वेदविद्वान का मुंह तनिक उदास हो गया और उसके स्वरूप और डौल से मुझको ज्ञान हुआ कि यद्यपि सत्यार्थी के ऐसे वर्णन से उस का मन कुछ पीड़ित है तथापि सत्यपुरुष हो उसके प्रमाणों का उत्तर दे नहीं सक्ता है। और तिस पर भी उसी क्षण में ऐसा कहने को प्रसन्न नहीं था कि मेरे शास्त्र सर्वत्र निषप्रमाण हैं। इस कारण बड़ी दुबधा में पड़के केवल इतना ही कहा कि आपकी इच्छा हो तो कल प्रातःकाल को हम फिर इस भारी बिषय की चर्चा करेंगे तब प्रणाम करके बिदा हुआ और सत्यार्थी और मैं भी अपने २ घर को गये ॥

मतपरीक्षा का चौथा सत्सङ्ग समाप्त हुआ ॥

इति ॥

पांचवां सत्सङ्ग ।

नये २ मत की उत्पत्ति की चर्चा ।

ग्रन्थकर्त्ता का बचन ।

दूसरे दिन बड़े तड़के जाग उठ मैं गङ्गा तीर पर उसी पीपल के पास चला गया उस समय तो पौ नहीं फटी थी परन्तु पश्चिम की दिशा को चांद अस्त होने पर निकट था उसकी स्वप्नरूपी ज्योति से काशी के गृह मन्दिर घाट आदि अस्पष्ट रीति पर दिखाई देते थे और उस धुन्धलेपन के कारण कितने वस्तुओं के स्वरूप अपने यथार्थ आकार से भिन्न और अनिश्चित प्रकार से देख पड़ते थे। थोड़े बिलम्ब के पीछे धीरे २ पूर्व दिशा में पौ फटने लगी और दिन का सच्चा उजाला उस चांदनी से युद्ध करता और उसको जीतता गया तब मैं ने देखा कि जब लों ये दोनों उजाले इस रीति से आपस में सङ्ग्राम कर रहे थे तब लों चारों ओर के पदार्थ आगे से भी अस्पष्ट और अनिश्चित दृष्ट आते थे परन्तु जब कि दिन भली भांति खुल गया था और सूर्य्य के प्रत्यक्षकारक किरण संसार के ऊपर फैल गये थे तब एक २ वस्तु का ठीक स्वरूप स्पष्ट देखने में आया और कितने २ पदार्थ जो आगे गुप्त थे प्रत्यक्ष हुए॥

इस दशा पर ध्यान करते २ मैं ने सोचा कि कदाचित वेदविद्वान के मन की दशा इसके तुल्य है क्योंकि सत्यार्थी का विद्यारूपी वृत्तान्त पौ फटने के मध्य उजाले के समान है अब लों तो उसका पूरा तेज उदय नहीं हुआ और इस कारण वेदविद्वान की दृष्टि में चारों ओर के समस्त बिषय अनिश्चित और सन्देही देख पड़ते हैं परन्तु आसरा है कि ईश्वर की सहायता से सत्यपुरुष के नाईं धीरजवान हो और धुन्धलेपन का

कष्ट सह सच्चे दिन के जीवनदायक उजाले की बाट जोहता रहेगा तो कितनी बातें जो अब उसकी समझ में नहीं आती हैं भली भांति खुल जायेंगी और तत्वज्ञान प्राप्त होगा। इतने में वही वेदविद्वान और सत्यार्थी दोनों आ पहुंचे और आगे के समान आपस में सम्वाद करने लगे॥

वेदविद्वान का बचन॥ वेदादि शास्त्रों का जो वृत्तान्त आपने किया है मैं ने बड़े ध्यान के साथ सब का सब सुन लिया है। जो मैं ऐसा कहूं कि आपके सम्पूर्ण वर्णन से मैं आनन्दित हूं तो सच नहीं क्योंकि अपने विषय में यह ज्ञान पाना कि अब लों मैं भूल में पड़ा रहा हूं सो किसी को भला नहीं लगता है। फिर जो मैं ऐसा भी कहूं कि आपके सारे प्रमाण मेरी समझ में यथार्थ और सिद्ध हैं तब भी ठीक नहीं क्योंकि कितनों को अभी ग्रहण नहीं कर सका हूं और कितनों का अर्थ भली भांति नहीं समझता हूं। यद्यपि मैं उनका उत्तर नहीं देता हूं तथापि आप ऐसा न जानिये कि यह दे नहीं सका क्योंकि मैं पहिले आप का सारा कहना सुनने चाहता हूं। परन्तु इस समय आप से एक बात पूछता हूं सो यह है आपने बहुत ऐसा वर्णन किया है कि शास्त्र और विशेष करके पुराण किसी नये मत के उत्पन्न होने के पीछे और उसके कारण भी बन गये। परन्तु मैं ने ऐसा समझा था कि मत तो शास्त्र के कारण से बन जाता है शास्त्र मत के कारण से नहीं॥

सत्यार्थी का बचन॥ आपकी समझ में तो ऐसा चाहिये परन्तु आप उस दशा पर ध्यान कीजिये जो आज कल भारतखण्ड में फैल रही है। ऐसा देख पड़ता है कि अनेक मत जो शास्त्रों से सिद्ध नहीं होते परन्तु सामान्य लोगों को मन भावने लगते हैं भारतखण्ड में प्रचलित हैं। उनकी सङ्ख्या यहां लों अनगणित है कि इसके विषय में एक

दृष्टान्त प्रसिद्ध है अर्थात अट्ठासी सहस्र ऋषियों ने अट्ठासी सहस्र मत स्थापन किये हैं। आप देखिये कि इस में नहीं कहा है कि मत शास्त्र से स्थापन हुआ परन्तु ऋषि से। और एक २ मत के पक्षवादी अपने २ मत के स्थापनकर्त्ता को एक ऋषि जानते हैं परन्तु प्रसिद्ध बात है कि उन में से कितने मनुष्य शूद्र थे जो शास्त्रों से अनजान थे। निस्सन्देह उन्हों ने अपने नये २ मत को शास्त्रों के अनुसार नहीं परन्तु अपनी बुद्धि मात्र के समान बनाया। यदि आप इसका सम्पूर्ण समाचार जानने चाहते हैं तो कितनी एक पुस्तकें हैं जिन में इसका वृत्तान्त विस्तार के साथ लिखा है॥

वेदविद्वान का बचन॥ वे कौनसी पुस्तकें हैं जिनका वर्णन आप करते हैं॥

सत्यार्थी का बचन॥ एक तो शङ्करदिगविजय नाम है जिसको शङ्कराचार्य्य के एक शिष्य आनन्दगिरि ने साढ़े आठ सौ बर्ष बीते लिखा था उस में उन दिनों के भिन्न २ मतों का सम्पूर्ण वृत्तान्त है। दूसरा प्रसिद्ध माध्वाचार्य्य का लिखा हुआ सर्वदर्शनसङ्ग्रह नाम है उसको लिखे हुए कोई पांच सौ वर्ष बीत गये हैं। फिर एक तीन सौ बर्ष का भक्तमाला नाम नाभाजी का लिखा और उसकी टीका डेढ़ सौ बर्ष की कृष्णदास ने लिखी है। फिर पचास बर्ष हुए कि दो मनुष्य अर्थात सीतलसिंह और मथुरानाथ काशी निवासियों ने अपने दिनों के भिन्न २ मतों का वृत्तान्त फारसी भाषा में लिखा है। इन पुस्तकों में भिन्न २ कालों के नाना प्रकार के मत जो साधारण शास्त्रों से भिन्न हैं परन्तु एक २ अपना निज शास्त्र रखता है और इस देश में स्थापन हुए वर्णन होते हैं। इन में से कितने मिट गये और कितने आज लों भी प्रचलित हैं॥

वेदविद्वान का बचन॥ इस में सन्देह नहीं है कि बड़े २ आचार्य्य जैसे शङ्कर चैतन्य बल्लभ रामानुज रामानन्दी आदिकों ने शास्त्रों का

अर्थ नई २ रीति से खोलके इस देश में नये २ पंथ चलाये हैं परन्तु इन में शास्त्रों से क्या विरुद्धता सिद्ध हो सकी है॥

सत्यार्थी का बचन॥ ये नये २ पंथ उस रीति से शास्त्र के विरुद्ध हैं जिस रीति से कि शास्त्र आपस में विरुद्ध हैं परन्तु मैं इस समय विरुद्धता की बात नहीं कहता था मेरा अभिप्राय यह था कि जब इन लोगों ने अपने नये २ पंथ चलाये थे तब उन्हों ने और उनके शिष्यों ने उन पंथों को अधिक दृढ़ करने और बढ़ाने के निमित्त ग्रन्थ भी बनाये। जैसे कबीर और उसके संगियों ने बहुतेरे ग्रन्थ बनाये परन्तु कबीरपंथी को छोड़ कोई उन ग्रन्थों को ईश्वरोक्तशास्त्र नहीं मानता है। और इसी प्रकार से नानकशाही और शिवनारायणी इत्यादि एक २ पंथों के शिष्यों को छोड़ सब कोई मान लेता है कि ये ग्रन्थ सब के सब इन आचार्यों की बुद्धि मात्र की कल्पना हैं। अब इन ग्रन्थों और साधारण शास्त्रों में केवल प्राचीनता का भेद है जैसा इन दिनों के लोग अपनी बुद्धि से नये २ पंथ निकालते हैं तैसे ही पूर्व काल के शास्त्र कर्त्ताओं ने नये २ पंथ खड़े किये और उनके बढ़ाने के लिये अपनी बुद्धि से शास्त्र भी बनाये। जैसे बौद्धियों ने वेदों को त्याग कर अपने लिये एक नया मत स्थापन किया तैसे वेद के मतावलम्बियों ने अपनी बुद्धि-मात्र से अनगणित भिन्न २ मतों की कल्पना करके उनके स्थापन के लिये शास्त्र लिखा। इसी प्रकार से चैतन्य बल्लभाचार्य्य रामानुज आदिकों ने अपनी बुद्धिमात्र से नये २ पंथ चलाये। जैसे बर्षा की ऋतु में उपजाऊ भूमि नाना प्रकार के तृण आदि बनस्पति उगाती है उसी भांति इस देश के पण्डितों की बुद्धि से नाना प्रकार के शास्त्र उत्पन्न हुए। व्यासजी के काल से आज लों पण्डितों की बुद्धि नये २ शास्त्र के बनाने से थम्भ नहीं गई। क्या आप किसी प्रमाण से इस बात को सिद्ध कर सक्ते हैं कि जो २ शास्त्र किसी एक काल

से पहिले बन गये सो ईश्वरोक्तशास्त्र हैं परन्तु जो २ शास्त्र उसके पीछे बन गये सो केवल मनुष्यरचित पुस्तकें हैं। अथवा आप कोई ऐसा चिन्ह बतला सक्ते हैं कि जिस्से इन सारे भिन्न २ और विरुद्ध मतों और शास्त्रों का विचार कर उन में से एक सच्चा ईश्वरोक्त शास्त्र पहचानके प्रमाणिक कर सकें॥

वेदविद्वान का बचन॥ क्या एक ऐसा चिन्ह यह नहीं होगा कि ये सारे आचार्य्य और भिन्न २ पंथ के चलानेवाले सब के सब वेद पुराण आदिकों को ईश्वरोक्तशास्त्र मानने में सम्मति रखते हैं॥

सत्यार्थी का बचन॥ यद्यपि आपका कहना इस विषय में ठीक भी हो तथापि इस्से सिद्ध नहीं हो सक्ता कि वेद पुराण आदि ईश्वरोक्त-शास्त्र हैं क्योंकि प्रत्यक्ष है कि साधारण लोग अनेक निषप्रमाण अयथार्थ बातें सत्य मानते हैं। किसी मनुष्य के बरन सारे मनुष्यों के निरे मानने से कोई बात सत्य अथवा असत्य नहीं ठहरती है परन्तु यथार्थ प्रमाण से बात सिद्ध होती है। परन्तु आपका कहना परीक्षा करने से यथार्थ नहीं ठहरेगा क्योंकि इन आचार्य्यों में से कितने वेद पुराण आदिकों को ईश्वरोक्त शास्त्र मानने के बदले उनको खण्डन करते हैं। फिर जो स्पष्ट रूप से ऐसा भी नहीं करते तथापि शास्त्रों की शिक्षा के विरुद्ध अपनी नई शिक्षा को अपने ग्रन्थों में लिखते हैं जो लोग विशेष वर्ण का मानना और मूर्त्तिपूजा करना और देवतों का भजन इत्यादि रीतों को अपने ग्रन्थों में बर्ज्जित करते हैं ऐसे लोगों के वेदादि सत्य कहने से क्या। अब मेरा कहना यह है कि जिस रीति आज कल के नये २ ग्रन्थों में दैवीय उत्पत्ति का कोई लक्षण दृष्ट नहीं आता है बरन एक २ पंथ के शिष्यों को छोड़ सब कोई मान लेता है कि ये ईश्वरोक्तशास्त्र नहीं हैं केवल मनुष्यरचित पुस्तकें हैं उसी रीति पूर्व काल के ग्रन्थों में भी दैवीय उत्पत्ति का लक्षण कहीं देख नहीं पड़ता है और ईश्वरोक्त-

शास्त्र होने का कोई प्रमाण नहीं मिलता है बरन दोषी मनुष्य की बुद्धि मात्र से उत्पन्न होने के चिन्ह उन में अधिकाई के सङ्ग सूझ पड़ते हैं। इस कारण उनको भी मनुष्यरचित पुस्तक मानना चाहिये क्योंकि निरे प्राचीन होने से मनुष्यरचित पुस्तक ईश्वरोक्तशास्त्र बन नहीं जाते हैं ॥

वेदविद्वान का बचन॥ आपने जो भिन्न २ मतों की विरुद्धता बताई है सो आप की समझ में विरुद्धता है परन्तु हम लोग उसको सचमुच विरुद्धता नहीं मानते हैं क्योंकि वे सारे पंथवाले एकही सनातन परमात्मा को जो केवल नामों से बिलक्षण है भजते हैं॥

सत्यार्थी का बचन॥ हे पण्डितजी। आपको स्मरण होगा कि षटदर्शन के बिषय में मैं सिद्ध कर चुका कि उन में सचमुच विरुद्धता है क्योंकि एक कहता है कि ईश्वर है एक कहता कि ईश्वर नहीं। जो कोई कहे कि ये दो बातें सचमुच बिरुद्ध नहीं सो अपने को एक ऐसा मनुष्य प्रगट करता है जो स्पष्ट शब्दों का अर्थ नहीं जान सक्ता है आप तो कधी ऐसा न कहेंगे फिर भिन्न २ पंथों की विरुद्धता का पीछे वर्णन करूंगा अब एक और बात कहने चाहता हूं कि जिस्से अपना अभिप्राय अधिक प्रत्यक्ष करूं। पूर्व काल में भास्कर आदि इस देश के प्रवीण ज्योतिषियों ने अपनी विद्या के वर्णन में सिद्धान्त नाम ग्रन्थ बनाये। इन में वे अपनी बुद्धि के अनुसार अपने मत के सिद्ध करने के निमित्त बुद्धिरूपी प्रमाण लाये हैं। इन ग्रन्थों में भी अनेक प्रकार का परस्पर बिरोध देख पड़ता है और एक २ ज्योतिषी अपनी शक्ति के समान दूसरे के मत को खण्डन करने चाहता है। इन में से एक आर्य्याभट्ट नामी ने पृथ्वी के अपनी कील पर घूमने की वही शिक्षा बतलाई जिसको बिदेशी ज्योतिषियों ने इन दिनों में सिद्ध और प्रमाणिक कर दिया है॥ जैसे॥

भपञ्जरः स्थिरोभूरेवावृत्यावृत्य प्रातिदैवसिकौ।
उदयास्तमयौ सम्पादयति नक्षत्रग्रहाणामिति॥

अर्थात नक्षत्र तो स्थिर हैं परन्तु पृथ्वी ही घूम २ कर नक्षत्र और ग्रहों को प्रतिदिन उदय और अस्त करती है॥

परंतु इस यथार्थ शिक्षा को जिसका आर्य्यभट्ट ने अपनी बुद्धि मात्र से निर्णय किया था एक दूसरा ज्योतिषी ब्रह्मगुप्त नाम खण्डन करने चाहता था। फिर भास्कर आदि पण्डितों ने भूमण्डल के आकार और परिमाण के विषय में अनेक ऐसे सिद्धान्त बतलाये हैं जो शास्त्रों की शिक्षा के विरुद्ध हैं। आप को तो ज्ञान होगा कि पुराणकर्त्ता भूल करके पृथ्वी को चपटा आकार और कछुए की पीठ पर अथवा शेषनाग के सिर पर संभाले हुए बतलाते हैं। परन्तु भास्कराचार्य्य यथार्थ प्रमाण का अभिलाषी हो और अपनी बुद्धिशक्ति से ठीक शिक्षा का खोज कर यह सिद्धान्त प्रगट करता है कि पृथ्वी गोलाकार है और किसी के आधार से नहीं रहती है। जैसे॥

भूमेः पिण्डः शशाङ्कज्ञकविरविकुजेज्याकिनक्षत्रकक्षा
वृत्तैर्वृत्तोवृतः सन् मृदनिलसलिलव्योमतेजोमयोऽयम्।
नान्याधारः स्वशक्त्यैव वियति नियतं तिष्ठतीत्यादिना॥

अर्थात पृथ्वी का पिण्ड गोल है और चन्द्र बुध शुक्र सूर्य्य मङ्गल वृहस्पति शनैस्चर और नक्षत्रों के घूमने के मार्गों से घेरा हुआ मिट्टी वायु जल आकाश और तेज से बना है उसका दूसरा कोई आधार नहीं है किन्तु केवल अपनी सामर्थ से सदा आकाश में रहता है॥

फिर यह भी कहा है॥

मूर्त्तो धर्त्ता चेद्धरित्र्यास्तदन्यस्तस्याप्यन्योऽप्येवमत्रानवस्था।
अन्त्ये कल्प्या चेत् स्वशक्तिः किमाद्ये किन्नोभूमिरित्यादिना॥

अर्थात यदि धरित्री का कोई दूसरा मूर्त्तिमान आधार होगा तो

उसका भी दूसरा आधार होगा फिर उसका भी कोई इस भांति से इस में अनवस्था होगी। यदि किसी अन्त में ऐसी कल्पना करें कि वह अपनी सामर्थ से रहता है तो आदि में क्यों नहीं करते॥

अब मैं आप से पूछता हूं कि भूमण्डल के आकार आदि के विषय में पुराणों की शिक्षा और भास्कराचार्य्य की शिक्षा को आप परस्पर सचमुच विरुद्ध जानते हैं कि नहीं॥

वेदविद्वान का बचन॥ निस्सन्देह ये दो मत आपस में विरुद्ध हैं क्योंकि पृथ्वी का चपटा आकार होना और गोल आकार होना फिर किसी दूसरे के आधार से रहना और अपनी सामर्थ से रहना ये बातें ऐसी विरुद्ध हैं कि कोई उनका मिलान नहीं कर सक्ता है परन्तु क्या शास्त्रों की शिक्षा सिद्ध है अथवा भास्कर की भावना ठीक है यह तो एक दूसरा विषय है॥

सत्यार्थी का बचन॥ भला आप मान लेते हैं कि ये मत आप से सचमुच विरुद्ध हैं फिर इसी प्रकार की विरुद्धता शास्त्रों के भिन्न २ मतों से देख पड़ती है इस पर भी विरुद्धता माननी चाहिये परन्तु आप यह भी बतलाइये कि क्या भास्कराचार्य्य के सिद्धान्त ईश्वरोक्तशास्त्र के समान हैं अथवा उसने केवल अपनी बुद्धिमात्र से अपने ग्रन्थ को लिखा॥

वेदविद्वान का बचन॥ नहीं उसके सिद्धान्त तो शास्त्र नहीं हैं केवल उसी की भावनामात्र हैं इस कारण शास्त्र के विरुद्ध होने से उन से शास्त्र खण्डन नहीं होता है॥

सत्यार्थी का बचन॥ आपका कहना ठीक है कि भास्कर ने अपनी बुद्धिमात्र से अपना सिद्धान्त लिखा। भास्कर आदि ज्योतिषी सब के सब आप मान लेते हैं कि हम लोगों की विद्या की कोई दैवीय उत्पत्ति नहीं है केवल लौकिक विद्या है। परन्तु इस दशा में आप ध्यान कीजिये कि उनकी लौकिक विद्या शास्त्रों की विद्या से श्रेष्ठ और प्रमाणिक

है। भास्कर ने यह बात देखके शास्त्रों के विषय में यों कहा है। जैसा॥

अत्र गणितस्कन्धे उपपत्तिमानेवागमःप्रमाणमिति॥

अर्थात इस गणितस्कन्ध के विषय में युक्तमान ही शास्त्र प्रमाण है॥

और तनिक सन्देह नहीं है कि इस विषय में भास्कर का सिद्धान्त यथार्थ और प्रमाणिक है और समस्त प्रकार की परीक्षा की नई २ युक्तियों से सिद्ध और अटल ठहरता है क्योंकि इसी विद्या के अनुसार बिदेशी नौकाविद्या का सम्पूर्ण काम इन दिनों में होता जाता है बिदेशी लोग नक्षत्रों को छोड़ और किसी लक्षण को बिन देखे बारहों मास नौकागमनागमन करते और किसी स्थान से सिधारके अपनी नौका सीधी पूर्व दिशा को अथवा सीधी पश्चिम दिशा को चलाके अन्त में उसी स्थान पर पहुंचते हैं कि जहां से निकल गये। और जिस जिस स्थान पर वे पहुंचने चाहते हैं केवल नक्षत्रों को देखके ठीक उसी स्थान पर पहुंचते हैं। इस पर ध्यान करने से दो बात सिद्ध होती हैं॥

१ जब ऐसे विषयों में शास्त्रों की शिक्षा अशुद्ध और अयथार्थ है तो दूसरे बिषयों में भी उनकी शिक्षा पर क्या भरोसा हो सक्ता है॥

२ सिद्धान्त की सूक्ष्म और प्रमाणिक बातों के विचार करने से उन के कर्त्ताओं की बुद्धि की सामर्थ्य और तीक्ष्णता सिद्ध होती है। फिर यदि प्राचीन पण्डितों की बुद्धि सिद्धान्त के बनाने पर सामर्थ्य थी तो साङ्ख्य आदि दर्शनों और शास्त्रों के बनाने पर क्योंकर सामर्थ्य न होवे॥

वेदविद्वान का बचन॥ आपका वर्णन ठीक होगा परन्तु यदि दर्शन आदि शास्त्रों की एक निरी लौकिक उत्पत्ति हुई तो क्या कारण है कि इन दिनों में भी ऐसी ज्ञानपूर्वक पुस्तकें लिखी नहीं जाती हैं॥

सत्यार्थी का बचन॥ पण्डितजी। इसका एक कारण यह है कि इन दिनों में इस देश के पण्डित नई विद्या प्राप्त करने में तत्पर नहीं रहते

हैं। पूर्व काल में ऐसा नहीं था उस काल प्राचीन पण्डित बड़े साहस के सङ्ग सत्य बात के निर्णय करने में निरन्तर श्रम करते थे। जो मनुष्य ऐसा करते हैं उनकी बुद्धि की सामर्थ बढ़ती जाती है और वे नई २ विद्या प्राप्त करते जाते हैं क्योंकि विद्या उस प्रकार का पदार्थ नहीं है कि कोई मनुष्य उसका अन्त पावे अथवा उस पर सीमा बांधे। जैसी ईश्वर की सृष्टि असीम और प्रकृत के पदार्थ असङ्ख्य हैं तैसे जो मनुष्य अभिमानरहित हो अपने को अज्ञान समझ आदरमान की रीति गूढ़ बिषयों की परीक्षा कर सत्य का खोज करे सो ही मनुष्य नई २ विद्या पावेगा। इसके अनुसार प्राचीन पण्डितों ने भूमण्डल नक्षत्र आदि की यथार्थ दशा जानने के अभिलाषी हो ज्योतिषविद्या को निर्माण किया। और वेदान्ती आदि जो परम पुरुषार्थ के खोजक थे अपनी बुद्धि की शक्ति से नाना प्रकार की शिक्षा के प्रचारक ठहरे। परन्तु इन दिनों के विद्यार्थी बिना परीक्षा किये और बिना जांचे पुरखे लोगों की विद्या सम्पूर्ण जान शास्त्रों की शिक्षा जैसी की तैसी ग्रहण करते हैं। इस रीति से विद्या की कुछ बढ़ती कधी नहीं हो सकी और विद्यार्थी की बुद्धि दृढ़ता पाने के सन्ती अभिमानी और निर्बल और ऊषर भूमि के समान निष्फल होती जाती है॥

वेदविद्वान का वचन॥ आपके कहने से जान पड़ता है कि आपकी समझ में भी प्राचीन पण्डितों और शास्त्रों की विद्या सत्य और प्रमाणिक थी तो इस दशा में नई विद्या का खोज करना क्या प्रयोजन है॥

सत्यार्थी का वचन॥ मैं ने तो पण्डितजी ऐसा नहीं कहा कि उनकी सम्पूर्ण विद्या सत्य और प्रमाणिक थी। मैं ने केवल यही कहा कि वे पण्डित नई विद्या के खोज में भली भांति अपना मन लगाते थे और उन में से कितने जैसे आर्य्याभट्ट और भास्कर ने ज्योतिष विद्या की कई एक सत्य बातें निर्णय किईं। और इस प्रकार के अभ्यास करने में उनकी

बुद्धि आज कल के पण्डितों की बुद्धि से बड़ी सामर्थ थी परन्तु असङ्ख्य बातें रह गईं जिनका भेद उन्हों ने नहीं पाया और एक कारण से उनका जितना परिश्रम भी था तथापि ऐसा फलदायक नहीं था जैसा चाहिये क्योंकि सत्य के खोज करते भी वे बहुधा अपनी अथवा अपने पितरों की कल्पी हुई भावना का पालन अपने मन में करते थे और इस हेतु से अपने अनजान पक्ष के मारे निर्मल सत्य को भली भांति देख नहीं सक्ते थे। क्योंकि गूढ़ विषयों की परीक्षा करने में निपट अवश्य है कि सत्यार्थी अपने मन को सर्वथा निर्पक्ष कर रक्खे। जो अपने को ज्ञानी जानता है वह क्या सीख सक्ता है वह तो औरों को सिखाना चाहता है। इस कारण जो २ विवेचना और भावना पहिले से मन में रही है इनको बिना दूर किये तत्वज्ञान का भेद मन पर नहीं खुलता है। इसी कारण से बिदेशियों की विद्या ऐसी प्रमाणिक और प्रतिदिन ऐसी बढ़नेवाली है कि परखी हुई और जांची हुई बात को छोड़ वे किसी बात को सत्य नहीं मानते हैं निरी भावना और विवेचना पर तनिक भी आसरा नहीं धरते हैं। इस कारण से नये २ भेद प्रतिदिन उन पर प्रगट होते हैं और सृष्टि के तत्व और परमाणु उनकी बुद्धि के आधीन होते हैं परन्तु जब लों इस देश के पण्डित पूर्व काल की विद्या को सम्पूर्ण और समाप्त जानके उसी का पक्ष अपने मन में धरते हैं तब लों उनकी बुद्धि और विद्या की बढ़ती अनहोनी है॥

वेदविद्वान का बचन॥ क्या किसी दूसरी जात के मनुष्यों ने कोई ग्रन्थ जो हमारे शास्त्रों के तुल्य ज्ञानपूर्वक और आदर के योग्य थे किसी काल में बनाये॥

सत्यार्थी का बचन॥ पण्डितजी। जिस रीति भारतखण्ड के पण्डितों ने दर्शन आदिकों को बनाया उसी रीति अन्यदेशी भी गूढ़ विषयों के निर्णय करने में तत्पर रहे हैं जैसा॥

सर्वज्ञा यवना राजन शूराश्चैव विशेषतः

अर्थात हे राजा। यवन लोग सर्वज्ञ हैं और विशेष करके शूर हैं॥

महाभारत में यवनों का यही बखान है आप जानिये कि ये यवन उन लोगों से बहुत प्राचीन थे जो आज कल इस देश में मुसलमान कहलाते हैं क्योंकि मुसलमानों का काल बारह सौ पचास बरस से पहिले हुआ भी नहीं था। वे प्राचीन यवन कविता और न्यायशास्त्र विशेष और शिल्पविद्या में अति प्रवीण होके सम्पूर्ण भूमण्डल में विख्यात थे उस देश के पण्डितों ने सृष्टि की उत्पत्ति के विषय में तत्वज्ञान के अभिलाषी हो नाना प्रकार की शिक्षा कल्पना किई। परम पुरुषार्थ आदि विषयों की चर्चा में जो २ पुस्तकें उन्हों ने लिखीं सो आज लों संसार में उपस्थित हैं इन ग्रन्थों के बिचार करने से उन पण्डितों की बुद्धि की अति महान गम्भीरता और तीक्ष्णता प्रगट होती है। उन में से एक जगत के प्रसिद्ध पण्डित अरस्तू नामी ने न्याय अलङ्कार आदि विद्याओं के अनेक ग्रन्थ बनाये। जो कोई उसके ग्रन्थों को बुद्धिरूपी ध्यान करके जांचेगा सो उसको गौतमादिकों से न्यून आदर के योग्य नहीं मान सकेगा परन्तु अरस्तू आदि समस्त यवन पण्डितों ने कहा कि हमारी विद्या ईश्वरावेश से नहीं बरन हमारी बुद्धि के श्रम संयुक्त अभ्यास से उत्पन्न हुई। यदि इन यवन ऋषियों के ज्ञान की एक निरी लौकिक उत्पत्ति हुई तो गौतमादिकों की दैव्य उत्पत्ति क्योंकर सिद्ध होवे ऐसी बातों के बिचार करने से उनके शास्त्रों की लौकिक उत्पत्ति निस्सन्देह सिद्ध होती है॥

वेदविद्वान का बचन॥ उन लोगों का कैसा धर्म था॥

सत्यार्थी का बचन॥ धर्म के विषय में प्राचीन यवनों का एक ऐसा मत था जैसा आज कल भारतखण्ड में प्रचलित है अर्थात वे नाना प्रकार के देवताओं की पूजा करते थे अपने मन में कल्पना करके कि दि-

वस्पति आदि देवते और हीरा आदि देवी हैं अपनी इस भावना से भुलाये हुए इन पुरुषों ने उनका भजन किया। इसके उपरान्त एक नया मत उस देश में फैल गया और अन्त में समस्त यवनों ने इन कल्पे हुए मिथ्या देवताओं की पूजा छोड़ दिई। अब उस प्रसिद्ध यवन भूमि में उन प्राचीन देवताओं के भजन का कोई लक्षण कहीं नहीं देख पड़ता है परन्तु टूटे हुए खम्भ और मूरतें और शून्य मन्दिरों के टुकड़े कहीं २ बिथराये हुए आज लों भी दृष्ट पड़ते हैं॥

वेदविद्वान का बचन॥ ऐसा जान पड़ता है कि आपके सम्पूर्ण वृत्तान्त का सार यही है अर्थात मनुष्यजात अपने स्वाभाविक मन की शिक्षा से जान सक्ती है कि एक परमेश्वर है। फिर इस संसार पर जिसे उस ने सिरजा है ध्यान लगाने से परमेश्वर की महिमा समझी जाती है। जब आदि पुरुष अर्थात मनुष्यजात का पहिला पिता उत्पन्न हुआ यद्यपि उसकी बुद्धि की सामर्थ परिमित थी तथापि वह परमेश्वर का सत्य ज्ञान रखता था। परन्तु जब से परमेश्वर की आज्ञा भङ्ग करके वह पाप में पतित हुआ तब से परमेश्वर का ज्ञान क्रम २ उसके सन्तान में से घटने लगा। फिर जिस काल आर्य्यकुल भारतखण्ड में आया उस काल वे परमेश्वर का निर्मल और तत्वज्ञान नहीं रखते थे इस कारण जब वे वेद के सूक्तों को बनाने लगे तब उन्हों ने भ्रम करके अग्नि इन्द्रादि देवताओं को जो पूजा के योग्य नहीं थे स्तुति बखानी। इसके पीछे इन्द्रादिकों से भिन्न अनगणित और देवताओं की कल्पना करके देवियों के सङ्ग भजने लगे। फिर आप कहते हैं कि शास्त्रों के बिचार करने से देवताओं के बिषय में मतों का क्रम से अन्तर होना सिद्ध होता है और शास्त्रों के कर्त्ताओं में एक परस्पर बिरुद्धता देख पड़ती है कि कौन २ देवता श्रेष्ठ है। इसके अनुसार वेदान्तादि शास्त्रों में भी जिनको मुनि आदि सत्यार्थियों ने बनाया ऐसी ही बिरुद्धता दृष्टि आती है। फिर वेद वे-

दाङ्ग पुराणादि समस्त शास्त्रों के चक्र में कोई ऐसा तात्पर्य्य नहीं मिलता है जिसका निर्णय और प्राप्त करना मनुष्य की बुद्धि से बाहर था। आप यह भी कहते हैं कि बहुत काल के बीतने से शास्त्रों के प्राचीन कर्त्ताओं का प्रमाणिक वृत्तान्त सर्वथा खोया गया और अब नहीं मिल सक्ता है क्या आपके कहने का सार यह नहीं॥

सत्यार्थी का बचन॥ आप ठीक कहते हैं और इन सारी बातों से मैं यह परिणाम निकालता हूं कि शास्त्रों का ब्रह्मा से प्रचार होना किसी एक प्रमाण से सिद्ध नहीं हो सक्ता है। ऐसा वृत्तान्त तो मैं ने किया है इसके उत्तर में जो कुछ आप कहिये मैं बड़े ध्यान के साथ सुन लूंगा॥

वेदविद्वान का बचन॥ आपका बहुरूपी प्रमाण जांचने के लिये बहुत ध्यान करना प्रयोजन है क्योंकि इससे पहिले शास्त्रों के विषय में ऐसे दूषण का वृत्तान्त मैं ने कभी नहीं सुना। आपके प्रमाणों में जो २ चूक और कलङ्क पहिली दृष्टि से देख पड़ते हैं इस समय मैं नहीं बतलाऊंगा क्योंकि अब दिन बहुत चढ़ा है परन्तु सांझ काल को जो आपकी इच्छा हो मैं दो एक बात पूछूंगा और मुझे निश्चय है कि आप निर्पक्ष होके मेरे सन्देहों का विचार करेंगे॥

ग्रन्थकर्त्ता का बचन॥

इस पर हम तीनों पुरुष बिदा होके अपने २ स्थान को चले गये॥

मतपरीक्षा का पांचवां सत्सङ्ग समाप्त हुआ॥

इति॥

छठा सत्सङ्ग।

प्रमाणिक वृत्तान्त की चर्चा।

ग्रन्थकर्त्ता का बचन।

उसी दिन मैं ने वह अद्भुत समाचार सुना जो इन दिनों चीन देश से आया है अर्थात कि उस देश के निवासी बहुधा अपने पितरों का धर्म छोड़ और अपनी मूरतों को त्याग कर ख्रिस्तीय मत की अनेक शिक्षा ग्रहण करते हैं। और जब सांझ काल को मैं वेदविद्वान और सत्यार्थी के सम्वाद को सुनने को गया तब मैं ने उन दो पण्डितों के पास इस समाचार की तनिक चर्चा किई कि यह कैसी आश्चर्य की बात है क्योंकि सुनने में आता है कि भूमण्डल के समस्त निवासियों का तीसरा भाग चीन देश में रहता है अर्थात भूमण्डल में नव्वे करोड़ मनुष्य हैं और उन में से चीन में तीस करोड़ हैं परन्तु भारतखण्ड में हिन्दू मुसलमान और अङ्गरेज सब समेत चौदह करोड़ से अधिक न होंगे। इस बात के सुनते ही वेदविद्वान बड़ा आश्चर्यित हुआ और कहने लगा कि कदाचित यह वृत्तान्त प्रमाणिक नहीं है। तब सत्यार्थी ने उसको बतलाया कि इसकी कितनी एक बातें सन्देही होवें तो होवें परन्तु इस में सन्देह नहीं है कि उस देश में धर्म का एक बड़ा उलटाव होता जाता है और ख्रिस्तीय मत प्रबल होता जाता है फिर उन प्रमाणों का भी वर्णन करने लगा जिन से यह समाचार सिद्ध और प्रमाणिक ठहरता है तब वेदविद्वान ने कहा॥

वेदविद्वान का बचन॥ आपका वृत्तान्त सुनने से एक बात का स्मरण मेरे चित्त में आता है जो अगिले सम्वादों के सम्बन्ध में है और मैं आप से उसका प्रश्न करने चाहता हूं सो यह है अर्थात कि वह कौनसा

प्रमाण है जो आपको समझ में किसी भूतकाल के वृत्तान्त सिद्ध करने के लिये योग्य और यथार्थ ठहरता है। यदि वेद का ब्रह्मा के मुख से निकलना परम्परा की बात से सिद्ध नहीं हो सका है तो कोई प्राचीन वृत्तान्त किस प्रकार से निर्णय किया जावे क्या आपकी समझ में किसी भूत वृत्तान्त का निश्चय करना अब अनहोना है। परन्तु यदि किसी प्राचीन वृत्तान्त के निर्णय करने में परम्परा की बात काम आती है तो वेदादिकों के सिद्ध करने के लिये परम्परा की बात में क्या दोष है॥

सत्यार्थी का बचन॥ हे पण्डितजी। मैं नहीं कहता हूं कि भूत वृत्तान्त के निर्णय करने के लिये परम्परा की बात कभी काम की नहीं हो सकी है। इस बिषय में जो कुछ मेरी बुद्धि के अनुसार यथार्थ और प्रमाणिक देख पड़ता है आप सुनके भली भांति बिचार कीजिये। ऐसा जान पड़ता है कि भूत वृत्तान्तों का जो परम्परा से होते आये हैं कुछ तो बिश्वासयोग्य है और कुछ बिश्वासयोग्य नहीं है क्योंकि एक वृत्तान्त का यथार्थ प्रमाण मिलता है और दूसरे का कोई प्रमाण दृष्टि नहीं आता है। इस कारण एक २ वृत्तान्त की कथा निर्णय करने के लिये कि बिश्वासयोग्य है कि नहीं उस कथा के विशेष लक्षण जांच लेना अवश्य है। जैसे कि यह कथा किस काल में और किस स्थान पर और किसके मुख से उत्पन्न हुई और इसके प्रथम सुननेहारे कैसे और कितने थे और क्या यह कथा वृत्तान्त ही के उपस्थित होने पर लिखी गई अथवा केवल बाप दादों के मुख से कही हुई परम्परा से होती आई है। ऐसे लक्षणों की परीक्षा करने से विवेकी लोग जान लेते हैं कि वृत्तान्त सत्य है कि असत्य॥

वेदविद्वान का बचन॥ मैं जानता हूं कि अनेक कारणों से जैसे स्वभाव स्थान काल इत्यादि के अन्तर से मनुष्यों में बड़ा अन्तर होता है। कितने मनुष्य निर्बोध अज्ञान अविवेकी मन के क्षुद्र विद्याहीन सामान्य-

विश्वासी और भोले हैं। फिर कितने हैं जो पण्डित प्रवीण ज्ञानी ध्यानी मन के स्वतन्त्र विवेकी और सत्यार्थी हैं। और संसार में प्रसिद्ध है कि कितने देशों के निवासी जो पहिले अज्ञानता में डूबे थे निदान विद्या और ज्ञान के प्राप्त करने से यशवन्त ठहरे। अज्ञान लोगों की बुद्धि निर्बल रहती है और इस कारण वे नहीं जान सक्ते हैं कि कौन २ कथा असम्भव और निषप्रमाण और कौन प्रमाणिक है। पूर्व काल का जो वृत्तान्त वे सुनते हैं सो अपने कानों से तुरंत पी लेते और बिना जांचे विश्वास करते हैं। परन्तु ज्ञानियों और विद्यावानों की बुद्धि अधिक बलवन्त है वे कथाओं के निर्णय करने की शक्ति रखते हैं कि कौन प्रमाणिक है और कौन अप्रमाणिक। अब आप कह चुके हैं कि दर्शनों और सिद्धान्तों के कर्त्ता विद्यावान और बुद्धि के सामर्थी थे तो ऐसे पण्डित अप्रमाणिक कथाओं को क्यों ग्रहण कर सक्ते॥

सत्यार्थी का बचन॥ पण्डितजी। ऐसा जान पड़ता है कि वे जो लौकिक विद्या में बड़े विद्यावान और विवेकी हैं सो बहुधा धर्म्म के विषय में अपनी बुद्धि को दौड़ाना अनुचित जानते हैं और कभी २ वे धर्म्म की चिन्ता सच्चे मन से नहीं करते हैं अथवा यदि वे कदाचित कुछ चिन्ता भी करें तथापि वे अपने लौकिक सुख और संसार में अपने आदर और सन्मान की अधिक चिन्ता करते हैं। इस दशा में कुछ आश्चर्य की बात नहीं है कि वे वृथा और निषप्रमाण कथाओं को ग्रहण करते हैं। क्योंकि यदि वे उनको त्याग करें तो समस्त लोग उन्हें पाखण्डी कहेंगे और बहुतेरे जन इस प्रकार की अपनिन्दा से निपट डरते हैं। कदाचित ऐसे २ कारणों से होगा कि प्राचीन पण्डितों ने धर्म्म विशेष की कथाओं की परीक्षा और निर्णय करना बहुधा छोड़ दिया है। जैसे न्यायसूत्र के कर्त्ता ने शब्द प्रमाण के वर्णन में कहा है कि आप्तोक्तं शब्दः अर्थात विश्वासयोग्य का बचन शब्द प्रमाण है।

परन्तु विश्वासयोग्य का कैसा लक्षण है अथवा वह किस प्रकार से जाना जाता है इसका वर्णन उसने सर्वथा छोड़ दिया है। इस रीति से सारे प्राचीन पण्डितों ने ऐसे विषयों का निर्णय करना छोड़ दिया है और यही कारण है कि हिन्दूशास्त्रों में पूर्व काल का प्रमाणिक वृत्तान्त नहीं मिलता है॥

वेदविद्वान का वचन॥ आप कृपा करके बतलाइये कि प्रमाणिक और यथार्थ वृत्तान्त किस प्रकार से जाना जाता है॥

सत्यार्थी का वचन॥ जो कोई वृत्तान्त हो सो शब्द प्रमाण से अर्थात साक्षी के वचन से प्रमाणिक हो सक्ता है। परन्तु साक्षी का ठीक अर्थ है अपनी आंखों से जो देखनेवाला और ऐसे साक्षी का वचन तब बिश्वास योग्य होगा जब उसके बिषय में ये दो बातें सिद्ध हो चुकीं अर्थात॥

१ जब साक्षी को भली भांति अवसर और सामर्थ हो कि निर्पक्ष होके उस वृत्तान्त को सम्पूर्णरूप से परख लेवे जिस्से वह आप धोखा न खावे॥

२ यह जब प्रत्यक्ष लक्षणों से सिद्ध है कि साक्षी सत्पुरुष और बिश्वासी है जिस्से वह जान बूझके किसी को धोखा न देवे॥

बिश्वासयोग्य साक्षी के लिये ये दोनों बातें अवश्य हैं क्योंकि यदि वह आप किसी कारण से धोखा खावे तो उस का बचन बिश्वासयोग्य नहीं है और यदि वह किसी अभिप्राय के लिये दूसरों को धोखा देने चाहे तब भी वह बिश्वासयोग्य नहीं है अर्थात सामर्थ होना और बिश्वस्त होना ये दो बातें बिश्वासयोग्य साक्षी के लिये अवश्य हैं॥

वेदविद्वान का वचन॥ सारे वृत्तान्तों में इन बातों का निर्णय करना बड़ा कठिन काम देख पड़ता है क्या आपकी समझ में इसके बिना कोई वृत्तान्त सत्य नहीं हो सक्ता है॥

सत्यार्थी का बचन ॥ मैं नहीं कहता हूं कि इसके बिना कोई वृत्तान्त सत्य नहीं हो सक्ता है परन्तु यह कि इसके बिना कोई वृत्तान्त निश्चय सिद्ध और प्रमाणिक नहीं हो सक्ता है कदाचित सत्य होवे कदाचित असत्य और यह दुबधा की दशा है परन्तु ऐसी दशा में बुद्धिमान जन अधिक प्रमाण चाहेगा और खोज करेगा और किसी भारी प्रकरण में बिना भारी प्रमाण के बिश्वास नहीं लावेगा। परन्तु इन बातों का निर्णय करना ऐसा बहुत कठिन काम नहीं है क्योंकि संसार के व्यवहार में अनेक ऐसे प्रकरण सब किसी को प्रतिदिन होते हैं जिन में इस प्रकार का निर्णय करना अवश्य पड़ता है और अपने किसी संसारिक लाभ के लिये सब कोई भली भांति परख लेने और निर्णय करने जानता है। अब वह मनुष्य जिसके मन में परलोक और धर्म की ऐसी चिन्ता है जैसी बहुतेरे मनुष्यों के मन में संसार की चिन्ता है सो इस रीति से निर्णय करना कुछ कठिन नहीं जानेगा। परन्तु वह जो सत्य धर्म को कुछ चिन्ता नहीं करता है सो इतना भी अभ्यास करना निपट भारी कष्ट समझके ग्रहण नहीं करेगा ऐसा मनुष्य निस्सन्देह धर्म बिशेष की सारी कथा को प्रमाणिक हो वा अप्रमाणिक हो सब की सब समान जानेगा॥

बेदविद्वान का बचन॥ यदि आपका वर्णन ठीक होवे तथापि मैं नहीं समझता हूं कि वह भूत वृत्तान्त के बिषय में किस रीति से काम आवेगा क्योंकि प्राचीन वृत्तान्त के देखनेवाले सब के सब बहुत काल से परलोक को चले गये सो हम उनका बचन किस प्रकार से सुन भी सकें॥

सत्यार्थी का बचन॥ हम उनका बचन तो सुन नहीं सक्ते हैं परन्तु जो उनका वृत्तान्त उनके ग्रन्थ में लिखा है, तो उसको पढ़के निर्णय कर सक्ते हैं। भूत काल का वृत्तान्त तो दो प्रकार का है पहिला वह जो ग्रन्थ में नहीं लिखा है केवल मुख से कहा आया है दूसरा वह जो ग्रन्थ में लिखा है। अब प्राचीन काल का वह वृत्तान्त जो ग्रन्थ में

नहीं लिखा है सो किसी रीति से निर्णय नहीं हो सक्ता है। सब कोई जानता है कि बर्त्तमान काल का भी जो वृत्तान्त साक्षी के बचन की परीक्षा करने से निर्णय नहीं हो जाता है तो उस में कैसा बढ़ाव और कैसी मिथ्यता तुरन्त मिल जाती है। जब बर्त्तमान काल की भी यह दशा है तो प्राचीन काल की कैसी दशा होगी कदाचित सत्य हो कदाचित असत्य परन्तु निर्णय न होने से बुद्धिमान उस पर बिश्वास नहीं लावेगा॥

फिर प्राचीन काल का वह वृत्तान्त जो ग्रन्थ में लिखा है सो भी दो प्रकार का है पहिला साक्षियों का वृत्तान्त दूसरा उनका वृत्तान्त जो साक्षी नहीं थे परन्तु वे केवल अपनी कल्पना अथवा औरों का कहा जो साक्षी नहीं थे लिखते हैं। सो यह दूसरा प्रकार भी साक्षियों का वृत्तान्त न होके निर्णय नहीं हो सक्ता है इस कारण बुद्धिमान उसका प्रमाण न देखके उस पर बिश्वास नहीं लावेगा॥

पहिला प्रकार अर्थात साक्षियों का वृत्तान्त जो ग्रन्थ में लिखा है उस रीति से परख लेना और जांचना चाहिये जिस रीति से जीवते साक्षी का बचन परखा जाता है अर्थात॥

१ क्या साक्षी को अवसर और सामर्थ्य थी कि भली भांति परीक्षा करके बिना धोखा खाये वृत्तान्त को स्पष्ट रूप से जान सके॥

२ क्या सत्यता और बिश्वास के लक्षण साक्षी में प्रत्यक्ष देख पड़ते हैं। जब ये दोनों बातें साक्षी में देख पड़ती हैं तब ही बुद्धिमान उस के वृत्तान्त पर बिश्वास लावेगा कि निस्सन्देह प्रमाणिक और सत्य है॥

वेदविद्वान का बचन॥ क्या प्राचीन काल का कोई ऐसा वृत्तान्त मिल सक्ता है जो इस प्रकार की गूढ़ परीक्षा से प्रमाणिक निकलेगा॥

सत्यार्थी का बचन॥ निस्सन्देह बहुत ऐसे वृत्तान्त हैं और मैं आपके लिये दृष्टान्त की रीति दो एक का वर्णन करूंगा आप सुनिये॥

पूर्व काल में पारस देश के अति पराक्रमी महाराजा ने बड़ी सेना साथ लिये यवन देश पर चढ़ाई किई। उस काल से आज लों पण्डितजी दो सहस्र तीन सौ वर्ष बीत गये हैं। यवन लोगों ने यद्यपि थोड़े थे तथापि निर्भय शूर वीर हो अनेक सङ्ग्रामों में शत्रु की सेना को जीत अपने देश से भगा दिया। उस काल जब यह चढ़ाई हुई तब यवन देश में एक बालक था जब वह बालक जिसका नाम हेरोडोटुस था युवा हो गया तब उसने चाहा कि उस युद्ध का ठीक इतिहास मैं लिखूंगा। उस काल उस बड़े युद्ध के सम्पूर्ण वृत्तान्त के बहुतेरे साक्षी जीवते थे उन साक्षियों के मुख से युद्ध का वृत्तान्त निर्णय करके उसने एक इतिहास का ग्रन्थ गद्य में बनाया॥

फिर अपने ग्रन्थ के आरम्भ में उसने पारसी आदि परदेशियों का कुछ वृत्तान्त भी लिखा है। वह उन परदेशियों के इतिहास जानने का अभिलाषी हो बड़ा परिश्रम कर दूर २ देशों में यात्रा करने को गया और उन देशों के ऐसे लोगों के मुख से जो अपने देश के इतिहास से सज्ञान थे उनके प्राचीन काल का वृत्तान्त सुन उसने अपने ग्रन्थ में लिखा है॥

अब जानना चाहिये कि उस यवन देश में मेले की रीति लीला क्रीड़ा के बड़े कालक्रमिक सभा स्थापन हुईं जिन में उस भूमि के भिन्न २ भागों के समस्त निवासी यवन आते थे। जब समस्त लोग इस रीति से लीला क्रीड़ा करने के लिये उपस्थित थे तब हेरोडोटुस ने सम्पूर्ण सभा के सन्मुख अपना इतिहास पढ़के सुनाया। फिर यह पण्डित अपना वृत्तान्त सब लोगों को सुनाने की इच्छा कर एक नगर में जिसका नाम अथीनी था आया वह नगर समस्त यवन नगरों में प्रसिद्ध था और उसके निवासी अपनी प्रवीणता और बुद्धि के कारण बिख्यात थे। फिर पारसियों के युद्ध में अथीनी नगर के निवासियों ने हरावल की रीति

बड़े खटके का साम्हना कर अत्यन्त बीरता के सङ्ग शत्रु के नाश के लिये निपट परिश्रम किया था। जब ये मनुष्य एक सभा में उपस्थित थे तब उस इतिहासवेत्ता ने उनके सन्मुख अपना वृत्तान्त फिरके सुनाया उसके सुननेहारों में से बहुतेरों ने पारसियों की चढ़ाई के काल में योद्धा हो उनके बिरुद्ध सङ्ग्राम किया था और बहुतेरे औरों ने जो चढ़ाई के काल में बालक थे अपने पितरों के मुख से जो योद्धा थे उस सङ्ग्राम का वृत्तान्त सुन लिया था इस कारण हेरोडोटुस के समस्त सुननेहारे उसके वृत्तान्त का सारार्थ पहिले से जानते थे और उस काल वे न तो असभ्य न अविवेकी न अज्ञान थे उन में से बहुतेरे चतुर और ज्ञानी और विवेकी और मन के स्वतन्त्र और विश्वास करने में धैर्य्यवान थे। और संसार में प्रसिद्ध है कि उस नगर के सामान्य लोग भी तीक्ष्णबुद्धि और गूढ़ बिषयों के खोजक थे ऐसे लोगों के सन्मुख जब वे सभा में उपस्थित थे हेरोडोटुस ने उस बड़े युद्ध का अपना वृत्तान्त सुनाया तो इस दशा में मेरी बुद्धि को अत्यन्त असम्भव देख पड़ता है कि ऐसे प्रवीण और विवेकी लोगों के सन्मुख हेरोडोटस एक अप्रमाणिक और अयथार्थ वृत्तान्त कैसे सुनावे क्योंकि उस यवनभूमि में अनेक भिन्न २ भाग थे और एक २ भाग का एक अलग २ राज्य था इन अलग भागों के निवासी भिन्न २ राज्य के कारण आपस में द्वेष करते थे जो लोग इतिहास से सज्ञान हैं इस बात को भली भांति जानते हैं। इस दशा में हेरोडोटस उन अलग भागों के निवासियों के किसी चरित्र को किसी प्रकार से छिपा नहीं सक्ता था। और यदि वह किसी एक भाग के निवासियों की बीरता का बढ़ाव के सङ्ग बखान करता तो दूसरे भागों के निवासी निस्सन्देह उस पर दोष लगाते और उसके वृत्तान्त को झूठ जाते। इस कारण पण्डितजी निश्चय है कि युद्ध का जो वृत्तान्त उसने लिखा सो सम्पूर्णरूप से बिश्वासयोग्य है। फिर यह भी एक बात भली

भांति निर्णय है कि यह वृत्तान्त जो उस काल लिखा था सो उसी काल भी सब लोगों में फैल गया क्योंकि दूसरे ग्रन्थकर्त्ताओं की एक श्रेणी साची देती है कि उस काल से आज लों यह वृत्तान्त उपस्थित और प्रचलित हो रहा है। और कुछ सन्देह नहीं है कि जो ग्रन्थकर्त्ता इस वृत्तान्त का उपस्थित होना बतलाते हैं सो उसको भली भांति जानते थे। जो आप हमारे इस वर्णन का निर्णय करने चाहें तो पण्डितजी बहुतेरी पुस्तकें इस प्रकरण में बड़े सहज से मिल सकी हैं और इस रीति से हेरोडोटुस के वृत्तान्त की प्राचीनता भी सिद्ध होती है॥

वेदविद्वान का बचन॥ तो क्या आप इन कारणों से उस वृत्तान्त की समस्त बातों को निश्चय प्रमाणिक समझते हैं॥

सत्यार्थी का बचन॥ उस वृत्तान्त की वे बातें जो पारसीय युद्ध के वर्णन में हैं सो निस्सन्देह बहुधा करके बिश्वासयोग्य हैं। परन्तु मैं ने कहा कि उस ग्रन्थ के आरम्भ में पारस आदि परदेशों का प्राचीन वृत्तान्त भी लिखा है। हेरोडोटुस उनका इतिहास जानने के लिये उन दूर देशों में घूमा परदेशों का यह इतिहास प्राचीनता आदि कारणों से बहुत बिश्वासयोग्य नहीं समझा जाता है। उन देशों के निवासियों के मुख से जो २ प्राचीन कथा उसने सुनी सो भली भांति निर्णय नहीं कर सका क्योंकि वह उन देशों में बहुत काल नहीं रहा और उनके निवासियों के स्वाभाविक गुण से अच्छी रीति सज्ञान नहीं था फिर जो कथा उसने सुनी सो बहुत प्राचीन वृत्तान्तों के बिषय में थी इस दशा में निर्णय न होने के कारण वह परदेशों का वृत्तान्त बिश्वासयोग्य नहीं है। इस प्रकार से पण्डितजी वे जो प्रमाणिक इतिहास के विवेकी हैं हेरोडोटुस के वृत्तान्त के दो भाग कर लेते हैं। उस भाग को जिस में वह अपने काल के उस बड़े युद्ध का वर्णन करता है वे बिश्वासयोग्य मानते हैं परन्तु उस भाग पर जिस में उसने परदेशों का प्राचीन वृत्तान्त लिखा

है वे विश्वास नहीं लाते हैं क्योंकि वे यह विचार करते हैं कि यद्यपि वह निस्सन्देह सत्य कहने को चाहता था तथापि परदेशों का प्राचीन वृत्तान्त भले प्रकार से निर्णय नहीं कर सका ॥

वेदविद्वान का वचन ॥ क्या यवन लोगों के सम्पूर्ण ग्रन्थ इसी प्रकार के थे ॥

सत्यार्थी का वचन ॥ नहीं पण्डितजी। प्रमाणिक इतिहास के ग्रन्थों को छोड़ उन्हों ने नाना प्रकार की पुस्तकें बनाईं जो सम्पूर्ण संसार में प्रसिद्ध हैं। अरस्तू महा पण्डित के विद्यारूपी ग्रन्थों का वर्णन तो मैं कर चुका फिर कविता के लिखने में वे अति प्रवीण और श्रेष्ठ थे। यवनी भाषा में जो नाटक उपस्थित हैं समस्त कवीश्वरों की समझ में उस प्रकार के काव्य लिखने के लिये एक प्रसिद्ध उदाहरण ठहरते हैं और इसके सम्बन्ध में मैं एक बात वर्णन करूंगा जिस्से निषप्रमाण वृत्तान्त और कल्पी हुई कथा की रीति प्रगट हो जायगी ॥

यवन लोगों की प्राचीन काल की वही दशा थी जो मैं ने बतलाई कि आर्य्यकुल की थी और जैसी सारे गोत्रों और कुलों की पहिली दशा है क्योंकि कुलों के आरम्भ में मनुष्य थोड़े और असभ्य हैं और अपने काल के दुःखों के दूर करने में तत्पर रहते हैं इस कारण उन को विद्या प्राप्त करने का अवसर नहीं मिलता है इस दशा में वे लिखना पढ़ना बहुधा नहीं जानते और अपने वृत्तान्त का जो स्मरण वे करते हैं सो केवल मुख की कही हुई कथाओं के द्वारा से करते हैं। यही परम्परा की बात है कि जिसको छोड़ प्राचीन कुलों की पहिली दशा का कोई और वृत्तान्त बहुधा नहीं मिलता है। इसी अज्ञानता और मूर्खता की दशा में दूसरे जातिगणों की रीति यवन लोगों ने भी अपना वही मत बनाया जिसका थोड़ासा वर्णन मैं कर चुका। पाप के कारण सच्चे परमेश्वर का तत्वज्ञान अपने हृदय में से खोके और सम्पूर्ण

सृष्टि में इस बात का प्रत्यक्ष लक्षण देखके कि हम से श्रेष्ठ कोई बड़ा सामर्थी है उन्हों ने अनेक देवताओं और देवियों की कल्पना किई। पहिले प्रकृत की शक्तियों को देव्य जान उनकी पूजा करने लगे इसके पीछे बड़े सामर्थी मनुष्यों के चरित्र का परम्परा की रीति बड़े बढ़ाव के सङ्ग बखान कर उनको भी देवता मानने लगे। जब इस रीति से देवतागण की एक भावनासंयुक्त कल्पना हुई तब मनुष्यजात उनके दर्शन और चरित्र और शक्ति के चिन्ह अपने सारे वृत्तान्तों में देखने लगे। इसके अनुसार जब भूकम्प हुआ तो उन्हों ने समझा कि देवता ने पृथ्वी को हिलाया। जब सूर्य्यग्रहण वा चन्द्रग्रहण हुआ तो यह भी किसी देवता का काम ठहराया उन अज्ञानियों की यही भावना थी। इस रीति से देवतागण के चरित्र मनुष्यजात के प्राचीन वृत्तान्तों में ऐसे मिलाये गये कि कोई बतला नहीं सक्ता है कि कौन बात निरे मन की कल्पना है अथवा किस वृत्तान्त में सत्यता का कोई मूल है॥

मनुष्यजात की बुद्धि की ऐसी दशा में कवीश्वर बहुधा उत्पन्न होते हैं क्योंकि काव्य का गुण मन की भावना और कल्पना से सम्बन्ध रखता है और विद्यारूपी परीक्षा से और प्रमाणिक वृत्तान्त से भिन्न है। कोई कवीश्वर अपने कुल की सब से मनभावनी कथाओं को सङ्ग्रह करके और सामर्थ्य भर बढ़ाव के सङ्ग संवारके एक सुन्दर कविता लिखता है। इस कविता में देवतागण और जातिगण के चरित्र का एक ही सङ्ग बखान करता है। कदाचित उस कुल का कोई ऐसा सत्य वृत्तान्त बीत गया हो जो उस कविता का मूल ठहरे परन्तु यदि ऐसा भी है तथापि कोई उसको जान नहीं सक्ता है क्योंकि कविता के स्वरूप के कारण वह गुप्त हो गया और उसका कोई प्रमाण अर्थात साक्षी का विश्वासयोग्य बचन नहीं मिलता है॥

वेदविद्वान का बचन॥ क्या कोई ऐसी कविता जैसी आप वर्णन करते हैं यवन लोगों की बनाई हुई इन दिनों में उपस्थित है॥

सत्यार्थी का बचन॥ पण्डितजी कितनी एक ऐसी हैं परन्तु सब से श्रेष्ठ और प्रसिद्ध इलियड नाम है। परम्परा की रीति से इस का लिखनेवाला होमर कहलाता है परन्तु इस बात का कोई यथार्थ प्रमाण नहीं मिलता है और बहुतेरे विद्यावान जानते हैं कि उस कविता की रचना में अनेक कवियों के लक्षण देख पड़ते हैं सन्देह नहीं है कि उस में अनेक भिन्न २ काव्यरूपी कथाओं की एक संहिता किई गई है। एक २ कथा के कल्पने का काल कोई नहीं जानता है और उनके सङ्ग्रह होने का काल भी कोई नहीं जानता है क्योंकि इसके बिषय में जो परम्परा की बात होती आई है इसके सिद्ध करने के लिये कोई यथार्थ प्रमाण कहीं नहीं मिलता है। इसके कितने सहस्र श्लोक सुन्दर यवनी भाषा के अति मनोहर काव्य में बने हैं और उसका तात्पर्य्य एक बड़े युद्ध का वर्णन है। इस वर्णन में यवन लोगों के देवतागण के चरित्र और बड़े २ महावीरों का यश एक ही सङ्ग बखाना जाता है और यवन लोग सनातन से मानते थे कि इसकी समस्त बातें सत्य और प्रमाणिक हैं और इसका सम्पूर्ण वृत्तान्त निश्चय और सिद्ध है। परन्तु जैसे वे प्रमाणिक इतिहास की विद्या में निपुण होते गये तैसे वे ऐसे वृत्तान्तों पर सन्देह करने लगे। निदान उनको निश्चय हुआ कि यह वृत्तान्त प्रमाणिक नहीं है केवल मन की कल्पना है। अब कोई विद्यावान ऐसा नहीं है जो इस कविता को इतिहास की रीति प्रमाणिक और यथार्थ वृत्तान्त मानेगा परन्तु उसकी सुन्दरता की प्रशंसा सब कोई करता है॥

वेदविद्वान का बचन॥ क्या आपकी समझ में जितना वृत्तान्त काव्य में लिखा है सब का सब असत्य और अयथार्थ है॥

सत्यार्थी का वचन ॥ पण्डितजी मैं नहीं कहता हूं कि काव्य का कोई वृत्तान्त सत्य नहीं हो सक्ता है परन्तु यह कि यदि उसका कोई और प्रमाण न हो केवल काव्य में लिखे जाने से कोई वृत्तान्त प्रमाणिक नहीं ठहरता है। क्योंकि काव्य का सम्बन्ध विद्यारूपी परीक्षा से अथवा प्रमाणिक इतिहास से नहीं है मन की भावना और कल्पना से है। और उसका अभिप्राय भी सत्य वृत्तान्त का निर्णय करना नहीं है राजाओं का यश बढ़ाना और सामान्य लोगों के मन को बहलाना है। अब आप बिचार कीजिये कि प्राचीन काल का वृत्तान्त जो शास्त्रों में मिलता है कैसा है और इस विषय में दो एक बातों पर जिन्हें मैं बतलाता हूं ध्यान कीजिये अर्थात ॥

१ महाभारत और रामायण और अठारह पुराण सब के सब काव्य हैं और उनका वृत्तान्त बहुधा ठीक उसी प्रकार का है जैसी यवनी प्रसिद्ध कविता इलियड की है अर्थात परम्परा की मुख से कही हुई कथाओं की संहिता है और कवि लोगों ने उन कथाओं को सङ्ग्रह करके बढ़ाव के सङ्ग अपनी बुद्धिबल के अनुसार सिंगारा है॥

२ उनके लिखे जाने का काल स्पष्ट रूप से निर्णय नहीं हो सक्ता है परन्तु निश्चय है कि वृत्तान्त के अनेक सन्तानों के पीछे उनका सङ्ग्रह हुआ इस कारण वृत्तान्त के साक्षियों का विश्वासयोग्य और निर्णय किया हुआ वचन उन में नहीं मिलता है॥

३ उनके कर्त्ताओं का यथार्थ समाचार कहीं नहीं मिलता है। परम्परा से तो कहा आया है कि व्यास जी महाभारत और पुराणों का कर्त्ता हैं परन्तु अनेक व्यासों का वर्णन भी मिलता है और कृष्णद्वैपायन और सूत आदिकों का जो वर्णन मिलता है सो निर्णय न होने से प्रमाणिक नहीं ठहरता है। फिर अनेक प्रत्यक्ष लक्षणों से जिनका थोड़ासा वर्णन मैं कर चुका सिद्ध है कि कितने पुराणों का काल बहुत

नवीन है। इसी प्रकार से महाभारत के भी कितने भाग नवीन हैं। फिर जब इन सभों के भिन्न २ काल साक्षात हैं तो उनका एक ही कर्त्ता किस प्रकार से सम्भव हो सक्ता है ॥

वेदविद्वान का वचन ॥ आपने तो पहिले कहा था कि वेद की संहिता बहुत प्राचीन है। फिर जो वर्णन आप इस समय करते हैं यदि सत्य भी हो तो उस्से वेदों पर क्या आपत्ति लगती है ॥

सत्यार्थी का बचन ॥ मैं ने तो निस्सन्देह पण्डितजी मान लिया है कि वेद के सूक्त और उनकी संहिता दोनों बहुत प्राचीन काल के हैं उन को तीन सहस्र वर्ष से न्यून न हुए होंगे। परन्तु इस्से उनका ब्रह्मा के मुख से निकलना अथवा ईश्वरावेश से होना सिद्ध नहीं होता है। मैं तो सिद्ध कर चुका हूं कि सूक्तों में ईश्वरवाणी होने का कोई लक्षण देख नहीं पड़ता है। यह भावना तो बहुत काल के पीछे जब सूक्तकर्त्ताओं का सत्य वृत्तान्त निर्णय नहीं हो सका उत्पन्न हुई और इस भावना के उत्पन्न होने की रीति भी मैं ने बतलाई अर्थात कि यज्ञ करने के समय पुरोहितों ने सूक्तों के उच्चारण करने से बड़ी प्रतिष्ठा प्राप्त किई और अन्त को ब्राह्मण का विशेष वर्ण स्थापित हुआ। फिर जब ब्राह्मणों ने उन सूक्तों की महिमा बढ़ाने के लिये उनका और उनके कर्त्ताओं का ऐसा वृत्तान्त लिखा जैसा ऋषियों और मुनियों का वृत्तान्त शास्त्रों में मिलता है तो अनेक कारण हैं जिन से यह वृत्तान्त प्रमाणिक नहीं हो सक्ता है अर्थात ॥

१ इस वृत्तान्त के कर्त्ता अर्थात ब्राह्मण इस प्रकरण में निरभिप्राय और निर्पक्ष नहीं थे ॥

२ उनकी सामर्थ्य न थी कि इतने सन्तानों के पीछे ऋषियों का सत्य वृत्तान्त निर्णय करें ॥

३ सामान्य लोगों की भी जब उन्हों ने यह वृत्तान्त सुन लिया तो इसके निर्णय करने की सामर्थ्य न थी॥

४ यदि सामान्य लोगों की यह सामर्थ्य भी होती तथापि ऐसा करने से वे बहुत डरते। क्योंकि ब्राह्मणों के बचन पर जो कोई कुछ सन्देह करता तो वह पाखण्डी ठहरता और उस काल ब्राह्मण प्रबल थे॥

५ ऋषियों और मुनियों का जो वृत्तान्त शास्त्रों में मिलता है उसके सिद्ध करने के लिये कोई ग्रन्थ जो वेदों के काल का हो कहीं नहीं मिलता है। अर्थात साक्षी का विश्वासयोग्य बचन न मिलने के कारण वह वृत्तान्त किसी प्रकार से सिद्ध और प्रमाणिक नहीं हो सक्ता है। मैं आप से पूछता हूं कि मुनियों और ऋषियों के दैव्य चरित्रों का वृत्तान्त जो उनकी मृत्यु से सहस्रों बर्ष पीछे लिखा गया किस प्रकार से प्रमाणिक और विश्वासयोग्य हो सक्ता है॥

वेदविद्वान का बचन॥ क्या आप ने नहीं कहा कि यद्यपि कोई वृत्तान्त प्रमाणिक न ठहरे तथापि कदाचित सत्य होवे सो ऋषियों का जो वृत्तान्त शास्त्रों में मिलता है यदि मैं ग्रहण भी करूं कि प्रमाणिक नहीं है तो आप किस प्रकार से सिद्ध करेंगे कि अयथार्थ और मिथ्या है॥

सत्यार्थी का बचन॥ कितने वृत्तान्त जो प्रमाणिक नहीं ठहर सके फिर भी कदाचित सत्य होवें यह बात पण्डितजी मैं ने तो कही है परन्तु ऐसे वृत्तान्त के निर्णय करने के लिये कि सम्भव है कि नहीं दूसरे बिषयों से अनुमान करना अवश्य है। इस रीति से मैं ने शास्त्रों के भी दो एक वृत्तान्त जैसे आर्य्यकुल की पहिली दशा विशेष वर्ण का स्थापन होना इत्यादि सम्भव बतलाया क्योंकि मैं ने उनके सिद्ध करने के लिये दूसरे बिषयों से अनुमान किया। इसी प्रकार से किसी निषप्रमाण वृत्तान्त की मिथ्यता भी सिद्ध हो सक्ती है क्योंकि मिथ्या वृत्तान्तों का एक विशेष लक्षण है कि वे आपस में बिरुद्ध हैं और इसी लक्षण से अनुमान करके

हम कहते हैं कि ऋषियों और मुनियों का जो वृत्तान्त शास्त्रों में मिलता है सो केवल निषप्रमाण नहीं बरन उसकी मिथ्यता प्रत्यक्ष है। बिश्वामित्र भारद्वाज वशिष्ठ अत्रि पाराशर आदिक समस्त मुनियों का वृत्तान्त मैं इस समय नहीं कह सक्ता हूं परन्तु एक अर्थात वशिष्ठ का थोड़ा वर्णन करूंगा ॥

विष्णुपुराण का कर्त्ता कहता है कि ब्रह्मा के भृगु आदि नव मानसिक पुत्र थे उन में से वशिष्ठ एक था। महाभारत का कर्त्ता एक स्थल में कहता है कि ब्रह्मा के सात पुत्र थे और वशिष्ठ सातवां था। फिर महाभारत के दूसरे स्थल में ब्रह्मा के पुत्रों में वशिष्ठ का नाम नहीं आता है परन्तु दक्ष सातवां पुत्र कहा है। जैसा ॥

ब्रह्मानु सस्रजे पुत्रान् मानसान दक्षसप्तमान्।
मरीचिमत्र्यङ्गिरसं पुलस्त्यं पुलहं क्रतुम ॥

अर्थात ब्रह्मा ने मरीचि अत्रि अङ्गिरस पुलस्त्य पुलह और क्रतु ये छः मानस पुत्र उत्पन्न किये और सातवां दक्ष ॥

वायुपुराण से जान पड़ता है कि ये सात पुत्र सप्तर्षि कहलाते थे। जैसा ॥

भूयः सप्तर्षयस्तेव उत्पन्नाः सप्त मानसाः
पुत्रत्वे कल्पितास्चैव स्वयमेव स्वयम्भुवः ॥

अर्थात फिर सात सप्तर्षि ब्रह्मा के मन से उत्पन्न हुए और उसने उन को पुत्र करके माना ॥

फिर पद्मपुराण में वशिष्ठ का नाम नहीं आता है उसके बदले कर्दम लिखा है। मत्स्य में ब्रह्मा के दस पुत्र भागवत में नव कूर्म में बारह लिङ्ग में चौदह लिखे हैं। फिर भागवत आदि पुराणों में कहा है कि मरीचि को छोड़ सब और पुत्र ब्रह्मा के शरीर से उत्पन्न हुए। जैसे भागवत के तीसरे स्कन्ध के बारहवें अध्याय में लिखा है ॥

अथाभिध्यायतः सर्गं दश पुत्राः प्रजज्ञिरे
भगवच्छक्तियुक्तस्य लोकसन्तानहेतवः ॥ २१ ॥
मरीचिरत्र्यङ्गिरसौ पुलस्त्यः पुलहः क्रतुः
भृगुर्वशिष्टो दक्षस्तु दशमस्तत्र नारदः ॥ २२ ॥
उत्सङ्गान्नारदो जज्ञे दक्षोऽङ्गुष्ठात् स्वयम्भुवः
प्राणाद्वशिष्ठः सञ्जातो भृगुस्त्वचि करात् क्रतुः ॥ २३ ॥
पुलहो नाभितो जज्ञे पुलस्त्यः कर्णयोर्ऋषिः
अङ्गिरा मुखतोऽक्ष्णोऽत्रिर्मरीचिर्मनसोऽभवदिति ॥ २४ ॥

अर्थात जब ब्रह्मा ने जो भगवान की शक्ति रखता था सृष्टि करने का ध्यान किया तब दस पुत्र उत्पन्न हुए जो संसार के वंश के कारण थे। वे ये हैं। मरीचि अत्रि अङ्गिरस पुलस्त्य पुलह क्रतु भृगु वशिष्ठ और दक्ष उन में दसवां नारद है। ब्रह्मा की जांघ से नारद उत्पन्न हुआ और अंगूठे से दक्ष प्राण से वशिष्ठ हुआ त्वचा से भृगु और हाथ से क्रतु नाभि से पुलह हुआ और कानों से पुलस्त्य ऋषि मुख से अङ्गिरस नयनों से अत्रि और मन से मरीचि हुआ ॥

परन्तु लिङ्गपुराण की कथा में इससे बड़ा भेद है क्योंकि इसके अनुसार अत्रि उसके कानों से और मरीचि उसकी आंखों से उत्पन्न हुए। भागवत में वशिष्ठ की स्त्री अरुन्धती परंतु विष्णुपुराण में ऊर्जा कही है। फिर विष्णुपुराण में लिखा है कि वशिष्ठ के सात पुत्र रजोगात्र ऊर्ध्वबाहु इत्यादि थे। परंतु भागवत में उनके नाम चित्रकेतु आदि हैं। शास्त्रों में वशिष्ठ का जो वृत्तान्त है सो इस प्रकार की अद्भुत और बहुरूपी परस्पर विरुद्धता से परिपूर्ण है ॥

वेदविद्वान का बचन॥ तो क्या आप की समझ में वशिष्ठ का सम्पूर्ण वृत्तान्त जो शास्त्रों में मिलता है सर्वथा मिथ्या है॥

सत्यार्थी का बचन॥ मैं नहीं कहता हूं कि पूर्वकाल में एक मनुष्य

जिसका नाम वशिष्ठ था किसी राजा का पुरोहित और वैदिक सूक्तों का कर्त्ता नहीं था। यह नाम तो सूक्तों में आता है उन सूक्तों का कोई कर्त्ता हुआ होगा और कदाचित उस कर्त्ता का नाम वशिष्ठ होगा इस में कुछ असम्भव अथवा विरुद्ध बात नहीं है और यह भी सम्भव है कि उसके सन्तान में कितने पुरोहित वैदिक सूक्तों के कर्त्ता पूर्व काल में विख्यात हुए होंगे। परंतु उसका ब्रह्मा के पुत्र होने का इत्यादि जो वृत्तान्त पुराणों में लिखा है सो निस्सन्देह सर्वथा प्रलाप है और उस वृत्तान्त की उत्पत्ति अज्ञानता अथवा छल से हुई। जिन मनुष्यों ने भारतखण्ड में वेदों का मत चलाया और उसके द्वारा अपनी प्रतिष्ठा बढ़ाई उनही ने सूक्तकर्त्ता ऋषियों को ब्रह्मा के पुत्र ठहराया परंतु यदि वे सचमुच ब्रह्मा के पुत्र होते तो पुराणों में उनका वृत्तान्त क्योंकर ऐसा विरुद्ध हो सक्ता इससे साक्षात है कि एक २ पुराणकर्त्ता ने जैसा उसके मन में आया तैसा अपना वृत्तान्त लिखा आप विचार कीजिये कि ऐसा वृत्तान्त सत्य है कि असत्य॥

वेदविद्वान का वचन॥ आप तो फिर विरुद्धता के कारण शास्त्रों पर आपत्ति लगाते हैं। मैं ने पहिले कहा था कि जो आपकी समझ में विरुद्ध देख पड़ता है सो सचमुच विरुद्ध नहीं है और अब वेदानुक्रमणिका के कर्त्ता का एक वचन मेरे चित्त में आता है जिस में यह सिद्धान्त स्पष्टरूप से कहा है अर्थात कि भिन्न नामों से केवल एक ही ब्रह्मा का अर्थ है। जैसा॥

तिस्र एवं देवताःक्षित्यन्तरिक्षद्युस्थाना अग्निर्वायुः सूर्य्य इति॥ एवं व्याहृतयः प्रोक्ता व्यस्ताः समस्तानां प्रजापतिः ओङ्कारः सार्वदेवत्याः पारमेष्ठ्यो ब्राह्मो दैवो वा अध्यात्मिकः॥ तत्तत्स्थाना अन्यास्तद्विभूतयः कर्मपृथक्त्वाद्धि पृथगभिधानस्तुतयोभवन्ति॥ एकैव वा महानात्मा देवता॥ स सूर्य्य इत्याचक्षते स हि सर्वभूतात्मा॥ तदुक्तमृषिणा सूर्य्य आत्मा

जगतस्तस्थुषश्चेति तद्विभूतयोऽन्या देवताः ॥ तदप्येतदृषिणोक्तम इन्द्रम मित्रं वरुणमग्निमाहुरिति ॥

अर्थात तीन ही देवता हैं अग्नि वायु और सूर्य्य जो पृथिवी आकाश और स्वर्ग में बास करते हैं। व्याहृति अर्थात भूः भुवः स्वः इन सभों का प्रजापति देवता है। ओङ्कार के सब देवता हैं अथवा परमेष्ठी ही उसका देवता अथवा ब्रह्मा अथवा देव अथवा अन्तरात्मा उसका देवता है। और सब देवता जो अपने २ स्थान में रहते हैं वे इसी की बिभूतियां हैं केवल कर्मों के भिन्न २ होने से उनके भिन्न २ नाम हैं और पृथक २ स्तुति हैं। अथवा एक ही परमात्मा सब का देवता है। और कहते हैं कि वह सूर्य्य है क्योंकि वह भूतों का आत्मा है। जैसा कि ऋषि ने कहा है कि सूर्य्य सब चराचर का आत्मा है और सब देवता इसी की बिभूति हैं। यह भी ऋषि ने कहा है कि एक ही को इन्द्र मित्रवरुण इत्यादि कहते हैं॥

सत्यार्थी का वचन॥ पण्डितजी आप कहते हैं कि इन्द्रादिक एक ही परमेश्वर की बिभूति हैं और वेद में भी इस बिषय में एक मन्त्र देख पड़ता है परन्तु यह उत्तर ठीक नहीं है क्योंकि सूर्य्य अग्नि वायु इत्यादि सचमुच केवल जड़ पदार्थ हैं जिन्हें ईश्वर ने मनुष्यादिकों के उपयोग्य के लिये बनाया है और मनुष्य केवल भ्रान्ति से उनको देव करके मानने लगे तो ऐसे जड़ पदार्थों को किस प्रकार से ईश्वर की बिभूति मान सकेंगे और उनके पूजने से क्या लाभ है। और यदि कहिये कि सूर्य्यादिकों के अधिष्ठाता कोई देवता होते हैं तो इसका कुछ प्रमाण नहीं है इस लिये ऐसे देवताओं की पूजा उचित नहीं हो सक्ती। फिर इन्द्रादिकों के ऐसे चरित्र लिखे हुए हैं जो कभी ईश्वर के योग्य नहीं हो सक्ते। पुराणों में तो अनेक नीच और पापयुक्त बातें उनके बिषय में लिखी हैं और उनके आपस में एक दूसरे से झगड़ने का भी बहुत

वर्णन है तो क्या वे एक ईश्वर की विभूति हो सक्ते हैं। इसी प्रकार से जो आपने पहिले भी कहा कि शैव और वैष्णव पुराणों में सचमुच बिरुद्धता नहीं है इसके विषय में मैं आप से पूछता हूं कि यदि यह बिरुद्धता नहीं है तो पण्डितजी बिरुद्धता किस प्रकार की वस्तु है। आप को तनिक भी सन्देह करना नहीं चाहिये कि जो वाद विवाद शैव और वैष्णव आपस में करते थे सो कुछ देखने का झगड़ा नहीं था एक सत्य झगड़ा था क्योंकि एक २ अपने इष्ट देवता की प्रशंसा यत्न से कर दूसरे देवता की और उसके पूजकों की निन्दा करता और शाप देता था। जब पुराण के कर्त्ता आप इसको एक वृथा और निष्फल झगड़ा नहीं मानते थे तो हम इसको व्यर्थ क्योंकर मानें। इस दशा में यदि शैव मत सत्य है तो वैष्णव असत्य होगा और यदि वैष्णव सत्य है तो शैव असत्य होगा। परन्तु हे मित्र सत्य बात यह है कि ये दोनों मत भ्रान्ति से उत्पन्न हुए इस में कुछ सन्देह नहीं है॥

वेदविद्वान का बचन॥ बाल्यावस्था से मैं ने अपने देश के शास्त्रों का बड़ा सन्मान किया है क्योंकि मैं ने ऐसा समझा कि ये बड़े २ ऋषियों से उचारे गये हैं और इन में धर्म्म का मार्ग जिस पर साधु लोग सनातन से चले आये हैं और मुक्ति का सत्य उपाय भी बतलाया जाता है ऐसे शास्त्रों के खण्डन करने के प्रमाण सुन्ने से मुझ को बड़ा दुःख होता है फिर भी आप को द्वेषरहित और सत्यार्थी जान मैं ने आपका वर्णन सुन लिया है। क्या इस प्रकरण में आप और कुछ कहने चाहते हैं कि नहीं॥

सत्यार्थी का बचन॥ कुछ आश्चर्य की बात नहीं है कि मेरे वर्णन सुनने से आपका मन खेदित होवे क्योंकि मनुष्य का स्वभाव ऐसा है कि जब कोई अन्यपुरुष उस बिषय को जिससे हम बहुत काल से आनन्दित हो रहे हैं दोषित बतलाता है तो मन मलिन हो जाता है और बि-

शेष करके अपने पितरों के धर्म्म में तत्पर हो कोई जन उसके खण्डन होने से प्रसन्न नहीं है। पहिले से मैं ने इस बात को जान रक्खा है और इस कारण से निन्दापूर्वक अथवा खेदजनक बचन कहना मैं ने सामर्थ्य भर छोड़ दिया है। परन्तु आप भी मेरे समान मान लेते हैं कि धर्म्म में जो सब से भारी प्रकरण है सत्य बात निर्णय करना अति अवश्य है इस कारण आपकी इच्छा हो तो कल प्रातःकाल को हम फिर सत्सङ्ग करेंगे और जितना प्रमाण और चर्चा रह गई है उस में मैं सामर्थ्य भर कोमल और उचित और प्रेमपूर्वक बचन कहूंगा॥

ग्रन्थकर्त्ता का बचन ॥

इस पर हम तीनों मनुष्य प्रणाम कर बिदा हुए और अपने २ घर को सिधारे॥

मतपरीक्षा का छठा सत्सङ्ग समाप्त हुआ॥

इति॥

सातवां सत्सङ्ग।

ईश्वरीय शास्त्र की शिक्षा की चर्चा।

ग्रन्थकर्त्ता का बचन।

दूसरे दिन आगे की रीति प्रातःकाल को हम तीनों मनुष्य उसी स्थान पर उपस्थित थे और मैं ने देखा कि वेदविद्वान का मुख किसी कारण से बड़ा आनन्दित देख पड़ता है उसके नेत्र हर्ष से चमकते थे और उसका सारा स्वरूप आल्हाद से परिपूर्ण था। यह दशा देख सत्यार्थी कहने लगा कि आज के दिन आप बड़े मगन देख पड़ते हैं आसरा

है कि आगे के सम्वादों के अभिप्राय पर ध्यान करके ईश्वर के अनुग्रह से आप का मन सन्तुष्ट होने लगा। इस पर वेदविद्वान ने कहा कि नहीं पण्डितजी मेरे हर्ष का कारण यह नहीं है बात यह है कि आज मैं ने अपने एक आत्मीय मित्र की ओर से एक अति सुन्दर पत्र पाया है इस कारण से मैं अत्यन्त प्रसन्न हूं क्योंकि मेरा मित्र एक बड़ा गुणवान पुरुष है और उसके पत्र में ऐसी ज्ञानपूर्वक और गुणदायक बातें लिखी हैं कि जिन से मेरा जी बड़ा सन्तुष्ट हुआ और मेरे अन्तःकरण का प्रेम जो उस पर लगा था निपट बढ़ गया है। तब सत्यार्थी कहने लगा॥

सत्यार्थी का वचन॥ आपके इस विवरण से मुझको एक ठीक और यथार्थ औसर मिलता है कि उस बात को जिसकी चर्चा मैं इस समय करने चाहता हूं आपके सन्मुख बतलाऊं क्योंकि जो आप प्रसन्न हों तो मेरी इच्छा है कि ईश्वर के प्रत्यक्ष गुणों पर ध्यान कर हम दोनों इस सत्सङ्ग में बिचारें कि ऐसे ईश्वर का कौनसा शास्त्र योग्य होगा अर्थात ईश्वरीय मत की शिक्षा ईश्वर के योग्य होने के लिये कैसी चाहिये॥

वेदविद्वान का बचन॥ यह तो पण्डितजी एक बहुत अच्छा बिषय है जिस पर बुद्धिमान और सत्यार्थी भली भांति ध्यान करें। परन्तु इस के आरम्भ में मैं आप से मन खोलके कहता हूं कि आपका जो वर्णन पहिले सम्वादों में हो चुका है उसके अभिप्राय से मेरे मन में सन्देह है कि कदाचित इसके तात्पर्य्य से भी हिन्दू शास्त्रों का खण्डन करना होगा इस कारण से कुछ आश्चर्य्य नहीं है कि एक प्रकार की चिन्ता मेरे अन्तः-करण में रहती है। फिर भी मैं आप का वर्णन सुनने पर सिद्ध हूं क्यों-कि यदि सत्य हो तो जैसे मेरे मित्र ने अपने पत्र में लिखा है कि सत्य बात के सुनने से किसी प्रकार की हानि नहीं हो सक्ती है और यदि असत्य हो तो इस बात के निर्णय और प्रकाश करने से बड़ा लाभ होगा। परन्तु पहिले आप को उचित है कि परमेश्वर के प्रत्यक्ष गुणों का तनिक

वर्णन कीजिये और इसके पीछे ईश्वरीय मत की योग्य शिक्षा बतलाइये ॥

सत्यार्थी का बचन॥ परमेश्वर के प्रत्यक्ष गुणों का जो वर्णन मैं करता हूं आप सुनिये ॥

सम्पूर्ण सृष्टि पर ध्यान करने से सिद्ध है कि परमेश्वर अनादि असीम अनन्त निराकार धर्म्ममय सर्वज्ञानी सर्वसामर्थी और दयावान है। उसी ने इस बहुरूपी जगत स्थिर और अस्थिर को सिरजा वही उसका सदा पालन करता है और अपनी सिरजी हुई प्रजाओं के ऊपर धर्म्म का राज्य करता है। पण्डितजी अपनी प्रजाओं के कर्मों को देख वह संसार का स्वामी प्रमाद नहीं करता यद्यपि रागद्वेष्यादिकों से रहित तो है तथापि बुरे भले कर्मों पर अथवा बुरे भले मनुष्यों पर सामान्य दृष्टि से ध्यान नहीं करता है परन्तु पाप पुण्य का विचार कर निर्पक्ष हो उनको योग्य प्रतिफल देता है। इस रीति से सिद्ध है कि वह सुकर्मियों से प्रसन्न और कुकर्मियों से अप्रसन्न है। मनुष्य के कर्मों का न्याय कर इसी जगत में भी वह उनका कुछ प्रतिफल देता है परन्तु परलोक में उन का यथार्थ और सम्पूर्ण प्रतिफल देगा क्योंकि यद्यपि परमेश्वर इस लोक में कुकर्मियों से बड़ा धीरज करता है तथापि परलोक में उनको योग्य दण्ड देगा। क्या आपकी बुद्धि में परमेश्वर का यह वर्णन यथार्थ और योग्य है कि नहीं ॥

वेदविद्वान का बचन॥ पण्डितजी आपके वर्णन पर मैं कुछ दोष नहीं लगा सक्ता हूं क्योंकि मेरी समझ में यह ठीक है इस कारण आप आगे बढ़के बतलाइये कि इस वर्णन के अनुसार ईश्वरीय शास्त्र की कैसी शिक्षा चाहिये ॥

सत्यार्थी का बचन॥ ईश्वरीय शास्त्र का प्रसिद्ध लक्षण यह है कि उस में ऐसे २ गुण देख पड़ेंगे जैसे ईश्वर के प्रत्यक्ष गुण हैं क्योंकि समस्त

जातें क्या दैविक क्या लौकिक अपने २ निज गुण और स्वभाव के अनुसार कार्य्य करती हैं अर्थात अपने स्वभाव के विरुद्ध कुछ नहीं कर सक्ती हैं। इस रीति से जब किसी कर्त्ता का कार्य्य साक्षात है तो उस कार्य्य के गुण से कर्त्ता का गुण भी जाना जाता है फिर जब कर्त्ता का गुण प्रत्यक्ष है तो इस्से अनुमान हो सक्ता है कि कोई कार्य्य उसका है कि नहीं परन्तु अपना अर्थ स्पष्टरूप से खोलने के लिये मैं एक लौकिक दृष्टान्त लाऊंगा आप सुनिये॥

पूर्वकाल में मगध देश का एक भूपति था जिसका नाम सत्यसिंह था। वह एक बड़ा दयावान धर्मी विवेकी बिश्वासी और अपनी प्रजाओं का पालन करता था। उसका बड़ा बेटा रूपसिंह नाम था। उसके पिता ने पहिले उसको अपने पास घर पर कुछ विद्या पढ़ाके पीछे अधिक शिक्षा पाने के लिये काशी में भेजा परन्तु जिस्तें बुरी सङ्गति से भ्रष्ट न हो पिता ने उसको नाना प्रकार का ज्ञानपूर्वक उपदेश किया। फिर रूपसिंह घर को छोड़ वाराणसी में पहुंच एक पण्डित के पास विद्या प्राप्त करने में तत्पर रहा॥

कितने दिनों के पीछे कितने एक दुष्ट जनों ने जो सत्यसिंह के शत्रु थे उसके धन और भाग्यवानी को देख डाह से मोहित हो उसको दुःख देना चाहा। इन दुष्टों ने यह जान कि वह अपने पुत्र को बहुत प्यार करता है उसके बिगाड़ने का यही उपाय रचा कि सत्यसिंह की छाप की सदृश एक मिथ्या छाप बनाके उन्हों ने उसके पुत्र के पास एक कृत्रिम पत्र भेजा। इस में अनेक माया संयुक्त मिथ्या परामर्श दे उन्हों ने रूपसिंह के मन को दुष्टता की ओर बहकाय। जैसे हे प्यारे पुत्र युवावस्था में कामादि शरीरी अभिलाषों को रोकना न चाहिये इत्यादि ऐसी २ बातें इस पत्र में लिखी थीं। जब वह तरुण विद्या के प्राप्त करने में तत्पर था तब यह पत्र किसी दूत के हाथ से उसके पास पहुंचा॥

पहिले रूपसिंह ने उस दूत के कपटी बचनों से धोखा खाया और यह जान कि पत्र मेरे पिता से आया है बड़े आनन्द के साथ उसको ग्रहण किया परन्तु जब ध्यान करके उसके तात्पर्य्य को देखा तो तुरंत उसके मन में सन्देह आया कि मेरा भला पवित्रमन ज्ञानी और दयावान पिता सम्पूर्णरूप से मेरी सत्य भलाई को नित्य चाहता है और मेरे बिदा होने के समय उसने मुझे बार २ समझाया कि हे मेरे प्यारे पुत्र वेश्याओं की सङ्गति से सदा अपने को दूर रख। मेरा पिता ऐसा गुणवान हो मेरी चाल बिगाड़ने के लिये ऐसा बुरा परामर्श जो इस पत्र में लिखा है किस प्रकार से लिख सक्ता। मुझको निश्चय ज्ञान है कि मेरे पिता ने इस दुष्टतामय पत्र को कभी नहीं लिखा होगा मेरे किसी शत्रु ने यह किया है। यह कहके उस तरुण ने उस दूत से जो पत्र लाया था पूछा कि मुझे तो बता तू ने किसके हाथ से यह पत्र पाया। इतनी बात सुन उस दूत ने कहा कि आपके पिता के हाथ से उसी के घर में मैं ने यह पाया। परन्तु जब रूपसिंह ने उस दूत के मुख पर फिर दृष्टि लगाई तो उसको चेत हुआ कि यह मनुष्य तो मेरे पिता के शत्रु का सेवक है मैं ने पहिले इस को देखा है। इस बात का स्मरण कर वह तरुण निश्चय जान गया कि यह पत्र मेरे पिता का नहीं परन्तु उसके शत्रुओं का भेजा हुआ है॥

इसके थोड़े दिनों के पीछे रूपसिंह ने एक सच्चा पत्र अपने पिता के एक सेवक के हाथ से पाया। उस सेवक को बिश्वासी सत्यपुरुष जान उसने बेधड़क उसके बचन पर बिश्वास किया फिर जब उस पत्र को पढ़ लिया तो देखा कि योग्य और गुणदायक परामर्श लिखा है। इस रीति से उस तरुण को दो प्रमाणों से निश्चय हुआ कि यह पत्र निस्सन्देह मेरे पिता का भेजा हुआ है पहिले उस दूत को पहिचाना कि सच्चा बिश्वस्त मेरे पिता का सेवक है निश्चय करने का एक प्रमाण यह था।

दूसरा उसने उस पत्र के अभिप्राय को अपने पिता के धर्म्ममय और पवित्र स्वभाव के समान पाया किसी बात में उसके विरुद्ध नहीं पाया सो यह निश्चय करने का दूसरा प्रमाण था ॥

वेदविद्वान का बचन ॥ आप ने तो एक बहुत अच्छा दृष्टान्त कहा है अब ईश्वरीय शास्त्र की परीक्षा करने में इसको किस प्रकार से लगावेंगे ॥

सत्यार्थी का बचन॥ पण्डितजी। जिस प्रकार से उस तरुण ने उस दूत की जो पहिला पत्र लाया था परीक्षा करके देखा कि यह मेरे पिता का सेवक नहीं है उसके शत्रु का सेवक है उसी प्रकार से हमको चाहिये कि शास्त्र के कर्त्ताओं की परीक्षा करके देखें कि वे कौन और कैसे थे और किन प्रमाणों से वे सिद्ध करते हैं कि ईश्वर के सच्चे दूत हैं। सो इस बात का निर्णय अगिले सम्वाद में हम कुछ थोड़ासा कर चुके हैं और उस परीक्षा से यह परिणाम सिद्ध हुआ कि वेदादि शास्त्रों के कर्त्ताओं के कुछ प्रमाणिक वृत्तान्त नहीं मिलते हैं परन्तु जितना उनके बिषय में अनुमान की रीति सम्भव हो सक्ता है सो यह है कि उन्हों ने केवल अपनी दोषवान बुद्धिमात्र से उन शास्त्रों को बनाया ईश्वर के दैवीय दूत होने का लक्षण उन में पाया नहीं जाता है ॥

फिर जिस रीति से उस तरुण को उन दो पत्रों के तात्पर्य्य की परीक्षा से निश्चय हुआ कि पहिला पत्र तो मेरे पिता का नहीं हो सक्ता है परन्तु दूसरा पत्र निस्सन्देह उसका लिखा हुआ होगा उसी रीति से हमको भी उचित है कि शास्त्र के तात्पर्य्य की परीक्षा करें क्योंकि सच्चा शास्त्र एक पत्र के तुल्य है जिसको हमारा स्वर्गीय पिता परमेश्वर हमारे पास भेज देता है। उस युवा ने पहिले पत्र के बिषय में सत्य बिचार किया कि मेरे पवित्रमन पिता एक ऐसे दुष्टाभिप्राय का पत्र मेरे पास भेजना मेरी बुद्धि में एक अनहोनी बात है। अब इसी रीति से वेदादि शास्त्रों के

तात्पर्य्य और शिक्षा को जांचके देखना चाहिये कि वे ईश्वर के प्रत्यक्ष गुण के समान हैं कि नहीं। इस समय तो बड़े बिस्तार के साथ इसकी चर्चा नहीं कर सक्ते हैं परन्तु दो एक प्रसिद्ध बातों का तनिक विचार करेंगे॥

पहिले आप मान लेते हैं कि परमेश्वर दयावान है उसकी दया और कृपा के लक्षण सम्पूर्ण सृष्टि में देख पड़ते हैं क्योंकि वह सारे जीवधारियों का प्रतिपालन नित्य करता है। फिर यद्यपि उसके कार्य्यों पर ध्यान करने से यह बात निश्चय भी नहीं होती तथापि बुद्धि की शिक्षा से हम जान सक्ते हैं कि निस्सन्देह वह प्रेम का सागर है क्योंकि परमेश्वर होके अवश्य निर्दोषी होगा परन्तु जिसके स्वभाव में प्रेम नहीं है वह निर्दोषी क्योंकर हो सक्ता है। फिर वह सारे मनुष्यजातों का पिता भी है क्योंकि उसी की सामर्थ्य और युक्ति से हम सब के सब जन्म पाते हैं और उसकी दया समस्त जातिगणों के ऊपर है। अब समस्त जातिगणों का दयावान और प्रेमी पिता होके निस्सन्देह उसकी इच्छा होगी कि सारे मनुष्य आपस में प्रेम रक्खें। वह कैसा पिता होगा जो अपने पुत्रों के बीच द्वेष और बिरुद्धता और झगड़ा पालन करे॥

वेदविद्वान का बचन॥ आपका वर्णन ठीक है निस्सन्देह सारे मनुष्यों को चाहिये कि इसी रीति से आपस में प्रेम रक्खें॥

सत्यार्थी का बचन॥ फिर पण्डितजी जो यह दशा है तो मैं आप से पूछता हूं कि वह शास्त्र जिस में बिशेष वर्ण का व्यवहार स्थापित होता है उस प्रेमी पिता का शास्त्र क्योंकर हो सक्ता है अथवा वह शास्त्र जो मनुष्य की किसी एक जात को समस्त और जातों से भिन्न कर देता है और सम्पूर्ण अन्यजातियों को अशुद्ध ठहराता है और उनके सङ्ग प्रेम का व्यवहार रखना बर्ज्जित करता है ऐसा शास्त्र उस प्रेमी और दयावान परमेश्वर का क्योंकर हो सक्ता है। मैं तो जानता हूं कि पापमय मनुष्य

आपस में द्वेष और डाह करते हैं और अनेक बातों से जैसे भिन्न देश और भाषा और रीति इत्यादि से आपस में द्वेष करने का कारण वृथा उत्पन्न करते हैं। परन्तु यह तो उनकी अज्ञानता और मूर्खता है कुछ ईश्वर की इच्छा के समान नहीं है इसी प्रकार से विशेष वर्ण भी जो द्वेष और अभिमान और झगड़े का सब से बड़ा कारण है ईश्वर की इच्छा के समान नहीं हो सक्ता है। और वह शास्त्र भी जिस में इस बात की आज्ञा है यदि और कोई प्रमाण भी न होता तथापि इसी प्रमाण से निश्चय है कि वह ईश्वर का शास्त्र नहीं हो सक्ता है क्योंकि ऐसी आज्ञा उसके प्रत्यक्ष गुणों के ठीक विरुद्ध है॥

वेदविद्वान का बचन॥ आप ने पहिले कहा था कि विशेष वर्ण कुछ स्वभाविक अथवा प्रकृतसंयुक्त वस्तु नहीं है केवल मनुष्य की रचित बात है अब आप कहते हैं कि ईश्वर की इच्छा के विरुद्ध है ऐसा जान पड़ता है कि आपकी समझ में उस्से कुछ लाभ नहीं निकलता है॥

सत्यार्थी का बचन॥ पण्डितजी। मेरी समझ में लाभ के बदले उस्से अनेक प्रकार की हिंसा उत्पन्न होती हैं बरन यही एक विशेष कारण है जिस्से इन दिनों के हिन्दू पूर्वकाल के हिन्दुओं से निर्बल और अज्ञान और विद्याहीन हो गये। परन्तु यद्यपि उस्से कुछ संसारिक लाभ भी निकलता तथापि जब उसका धातु अर्थ निरा अभिमान और द्वेष है तो एक प्रेमी परमेश्वर की आज्ञा नहीं हो सक्ती। अब हम इस बात को छोड़ एक दूसरे विषय की चर्चा करते हैं अर्थात॥

परमेश्वर एक है और उसको छोड़ कोई दूसरा ईश्वर नहीं है और नहीं हो सक्ता इस कारण से वही अकेला भजन के योग्य है क्योंकि अपने ईश्वरत्व ही के हेतु से वह भजन के योग्य है और जब कि कोई दूसरा परमेश्वर नहीं है तो कोई दूसरा भजन के योग्य नहीं हो सक्ता। सो मैं फिर आप से पूछता हूं कि वह शास्त्र जिस में अनगणित देवता-

ओं के भजन करने की और प्रतिमा बनाके उनकी पूजा करने की आज्ञा मिलती है सो अकेले सच्चे परमेश्वर का शास्त्र क्योंकर हो सक्ता है। ऐसी भावना तो परमेश्वर के ईश्वरत्व और उसकी सत्यता के विरुद्ध है क्योंकि यदि परमेश्वर ऐसी आज्ञा करता तो अपने को छोड़ किसी दूसरे को ईश्वर ठहराता। परन्तु मैं वर्णन कर चुका हूं कि वेदादि शास्त्रों में अनेक देवताओं के भजन करने की आज्ञा है। सृष्टि के तत्व प्रकृति की शक्ति जड़ पदार्थ पराक्रमी मनुष्य जीव जन्तु बनस्पति धातु विशेष अनेक वस्तुओं का ऐसा वर्णन शास्त्रों में मिलता है कि इनका भजन करना योग्य और उचित है। ऐसी बातों पर ध्यान करने से मुझे निश्चय है कि वह शास्त्र परमेश्वर का शास्त्र नहीं हो सक्ता है क्योंकि ये बातें उसके प्रत्यक्ष गुण के ठीक विरुद्ध हैं॥

वेदविद्वान का वचन॥ आप तो क्या बिचार नहीं करते हैं कि प्रतिमा आदि पदार्थों की पूजा करने का क्या अर्थ है उसका अर्थ यह है कि उन की सहायता से पूजकों का मन ईश्वर ही पर स्थिर रहता है और उनकी पूजा करके ईश्वर ही का भजन करते हैं। फिर देवतागण का भजन करना इस कारण से उचित और योग्य है कि परमेश्वर के अवतार अर्थात आप ही परमेश्वर हैं सो जब उनका भजन करते तो ईश्वर ही का भजन करते हैं॥

सत्यार्थी का वचन॥ आप जो प्रतिमा आदि पदार्थों का वर्णन करते हैं सो इसका उत्तर यह है कि सामान्य लोग उनको सचमुच ईश्वर मानते हैं वरन शास्त्रों में भी लिखा है कि जब ब्राह्मण के मन्त्र से स्थापन हुए तो ईश्वर आप उन में व्याप्त हुआ है फिर यद्यपि शास्त्र में ऐसा लिखा भी न होता तथापि अन्त में निस्सन्देह ऐसा करने से यही भावना निकलती क्योंकि ये पदार्थ कुछ ईश्वर के समान नहीं हैं जिस्से उसके गुणों का चेत पूजकों के मन में उत्पन्न करें वरन समस्त रीति से उसके

ठीक विरुद्ध हैं और इस कारण से ईश्वर को मन पर प्रकाश करने के बदले वे सचमुच उसको एक घूंघट की नाईं मन से छिपा रखते हैं निदान पूजक अवश्य यह भावना करने लगता है कि ईश्वर इनके समान है वरन ये ही आप मेरे ईश्वर हैं। इसके अनुसार जो कोई इस जगत के इतिहास से सज्ञान है सो भली भांति जानता है कि जहां कहीं प्रतिमा की पूजा प्रचलित हो रही है उसका जो ही अर्थ आरम्भ में हुआ हो पर अन्त में उसका फल वही ठहरा जो मैं ने बतलाया। अब मुझको निश्चय है कि परमेश्वर के शास्त्र में कोई ऐसी आज्ञा जिस पर चलने से यही फल अवश्य निकलता है कभी नहीं होनेकी क्योंकि वह परमेश्वर के प्रत्यक्ष गुण के ठीक विरुद्ध होती॥

फिर जो आप देवतागण के विषय में कहते हैं मैं मान लेता हूं कि यदि सचमुच परमेश्वर के अवतार होते तो उनका भजन करना कुछ अनुचित न होता क्योंकि ईश्वर के अवतार का भजन करना ईश्वर ही का भजन करना है परन्तु उनके वृत्तान्त पर जो शास्त्रों में मिलता है तनिक ध्यान करना चाहिये क्योंकि यदि उनके विषय में ऐसी २ बातें लिखी हैं जो परमेश्वर के प्रत्यक्ष गुण के विरुद्ध हैं तो वे उसके अवतार क्योंकर हो सकें। और वह शास्त्र जिस में ऐसा वृत्तान्त लिखा है परमेश्वर का शास्त्र क्योंकर हो सक्ता है और पहिले आप ब्रह्मा के उस वृत्तान्त पर जो भागवत में लिखा है ध्यान कीजिये जैसे भागवत के तीसरे स्कन्ध के बारहवें अध्याय में लिखा है॥

वाचं दुहितरं तन्वीं स्वयम्भूर्हरतीं मनः
अकामां चकमे क्षत्तः सकाम इतिनः श्रुतम्॥ २८॥
तमधर्मे कृतमतिं विलोक्य पितरं सुताः
मरीचिमुख्या मुनयो विस्रम्भात् प्रत्यबोधयन्॥ २९॥
नैतत् पूर्वैः कृतं त्वद्य न करिष्यन्ति चापरे

यस्त्वं दुहितरं गच्छेरनिगृह्याङ्गजं प्रभुः ॥ ३० ॥
तेजीयसामपि ह्येतन्नसुश्लोक्यं जगद्गुरो
यद्वृत्तमनुतिष्ठन् वै लोकः क्षेमाय कल्पते ॥ ३१ ॥
तस्मै नमोभगवते य इदं स्वेन रोचिषा
आत्मस्थं व्यञ्जयामास स धर्म्मं पातु मर्हति ॥ ३२ ॥
स इत्थं गृणतः पुत्रान् पुरोदृष्ट्वा प्रजापतीन्
प्रजापतिपतिस्तन्वम् तत्याज व्रीडितस्तदा ॥ ३३ ॥

अर्थात हे मैत्रेय। हमने ऐसा सुना है कि ब्रह्मा ने अपनी छशांगी और मन हरनेवाली कन्या सरस्वती को यद्यपि उसे काम की वासना न थी तौ भी आप काम के आधीन हो बुरे भाव से चाहा ॥ २८ ॥ तब उसके पुत्र मरीचि आदि मुनि पिता को कि जिसने अधर्म्म करने में मन किया था देख आर्जव कर समझाने लगे ॥ २९ ॥ ऐसा काम आगे के लोगों ने न किया न कभी करेंगे जैसा तू काम के रोकने की सामर्थ रखके भी नहीं रोकता और कन्या से गमन किया चाहता है ॥ ३० ॥ हे जगत के गुरु तेजस्वी पुरुषों को भी जिनके आचार के अनुसार चलने से लोग कल्याण को पा सके हैं यह काम यशदाई नहीं ॥ ३१ ॥ उस भगवान को नमस्कार जो अपने तेज से इस जगत को जो उसी में वर्त्तमान है प्रकाशित करता है वही धर्म्म की रक्षा करे ॥ ३२ ॥ तब ब्रह्मा जो प्रजाओं के स्वामियों का भी स्वामी है पुत्रों को जो आप प्रजाओं के स्वामी थे अपने साम्हने ऐसा कहते देखकर लजाया और अपना शरीर छोड़ा ॥

वही प्रजापति जिसने ऐसा अपवित्र काम किया सो पवित्र मन मनुष्यों के भजने के क्योंकर योग्य हो सक्ता ॥

वेदविद्वान का वचन ॥ कितने पण्डित कहते हैं कि उस कुकर्म का

कर्त्ता ब्रह्मा सचमुच परमात्मा नहीं है और इस कारण वह राग के वश में पड़ा ॥

सत्यार्थी का वचन ॥ यह तो मैं कहता हूं पण्डितजी ऐसा कुकर्मी परमात्मा नहीं हो सक्ता परन्तु वह कैसा शास्त्र होगा जिस में उसका ऐसा बखान लिखा है क्या ऐसी बातें परमेश्वर की पवित्रता के ठीक विरुद्ध नहीं हैं। फिर दूसरी बात यह है कि उसी भागवत में कृष्ण का ऐसा बखान होता है कि वह परमात्मा आप ही है फिर भी उसी प्रकार के रागादि के आधीन था। उसका ऐसा वृत्तान्त है कि पूर्णब्रह्म का अवतार हो उसने अनगणित ऐसे अपवित्र कर्म किये ऐसे कर्मों का कर्त्ता पवित्र परमात्मा क्योंकर हो सक्ता और वह शास्त्र जिस में ऐसे कर्म परमात्मा पर लगाये जाते हैं मैं आप से पूछता हूं कि भले मनुष्य उसको परमेश्वर का शास्त्र क्योंकर मान सक्ते हैं। परमेश्वर ने किसी शास्त्र को जिस में ऐसे देवताओं के भजन की आज्ञा है कधी नहीं दिया। मेरे दृष्टान्त के तरुण ने तो सत्य विचार किया कि यह बुरे अभिप्राय का पत्र मेरे पवित्रमन पिता ने कधी नहीं भेजा इस रीति से शास्त्रों के विषय में भी बुद्धिमान और भले मनुष्य को निश्चय करना चाहिये ॥

वेदविद्वान का वचन ॥ जो आपत्ति कृष्ण के विषय में आप लगाते हैं भागवत में शुक ने पहिले से उसको दूर कर दिया है जैसे भागवत के दशवें स्कन्ध के तेतीसवें अध्याय में ॥

राजोवाच ॥

संस्थापनाय धर्मस्य प्रशमायेतरस्य च
अवतीर्णो हि भगवानंशेन जगदीश्वरः ॥
स कथं धर्मसेतूनां वक्ता कर्त्ताऽभिरक्षिता
प्रतीपमाचरद् ब्रह्मन् परदाराभिमर्शनम् ॥

आप्तकामोयदुत्पतिः कृतवान् वै जुगुप्सितम्
किमभिप्राय एतन्नः संशयं छिन्धि सुव्रत ॥
श्री शुकउवाच ॥
धर्म्मव्यतिक्रमोदृष्ट ईश्वराणां च साहसं
तेजीयसां न दोषय वन्हेः सर्वभुजो यथा ॥
नैतत्समाचरेज्जातु मनसापिह्यनीश्वरः
विनश्यत्याचरन् मौढ्याद् यथा ऽरुद्रोऽब्धिजंविषम्॥
ईश्वराणां वचः सत्यं तथैवाचरितं क्वचित्
तेषां यत स्ववचो युक्तं बुद्धिमांस्तत्समाचरेत्॥
कुशलाचरितेनैषामिह चार्थोन विद्यते
विपर्य्ययेण चानर्थोनिरहङ्कारिणां प्रभो॥
किमुताखिलसत्वानां तिर्यङ्मर्त्यदिवौकसाम
ईशितुश्चेतिव्यानां कुशलाकुशलान्वयः ॥

अर्थात राजा परीचित का बचन। जगत के स्वामी भगवान ने धर्म्म की भली भांति स्थापना और अधर्म्म के नाश के लिये अंश से अवतार लिया। हे ब्राह्मण जो धर्मरूपी सेतुओं का कहनेहारा बनानेहारा और रचा करनेहारा है उसने कैसा उलटा परस्त्रीप्रसङ्ग किया। यदु-कुल के स्वामी ने जिसकी इच्छा सदा परिपूर्ण थी घिनित कर्म किया इसका क्या अभिप्राय है हे बड़े नियमी इस सन्देह को तोड़िये॥ शुक का बचन॥ सामर्थवानों को धर्म्म के बिरुद्ध चलते और ढिठाई करते देखा है तेजस्वी लोगों को कुछ दोष नहीं जैसे अग्नि को जो सब बस्तुओं को भच्चण करता है। जिसको सामर्थ्य नहीं है वह मन से भी कभी ऐसा काम न करे यदि कदाचित मूर्खता से करे तो नाश पावेगा जैसे रुद्र को छोड़ कोई बिष खावे। ईश्वरों का बचन सत्य है और कभी २ आचार भी सत्य रहता है परन्तु जो काम उनके बचन के अनुसार हो बुद्धिमान

को वही काम करना चाहिये क्योंकि उनको इस संसार में भला कर्म करने से कुछ लाभ नहीं और बुरा कर्म करने से कुछ घटी नहीं क्योंकि उनको कर्तृत्व का अभिमान नहीं है। जो ऐसी और सामर्थ्यवानों की बात है तो जो सब प्राणियों का अर्थात तिर्यग्योनि मनुष्य और स्वर्गवासी आदि जितने परतन्त्र हैं उन सभों का ईश्वर है उसको कैसे भले बुरे का सम्बन्ध हो॥

सत्यार्थी का बचन॥ पण्डितजी। राजा का सन्देह शुक के इन बचनों से दूर नहीं हो सक्ता है क्योंकि गीता में कृष्ण ने आप ही शुक का प्रमाण स्पष्ट रूप से खण्डित किया है जैसे गीता के तीसरे अध्याय में बीसवें आदि श्लोक हैं॥

कर्मणैव हि संसिद्धिमास्थिता जनकादयः
लोक सङ्ग्रहमेवापि संपश्यन् कर्त्तुमर्हसि॥
यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरोजनः
स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्त्तते॥
न मे पार्थास्ति कर्त्तव्यं त्रिषु लोकेषु किञ्चन
नानवाप्तमवाप्तव्यं वर्त्त एव च कर्मणि॥
यद्यहं हि न वर्त्तयं जातु कर्मण्यतन्द्रितः
मम वर्त्मानुवर्त्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः॥
उत्सीदेयुरिमे लोका न कुर्यां कर्म चेदहं
सङ्करस्य च कर्त्ता स्यामुपाहन्यामिमाः प्रजाः॥
सक्ताः कर्मण्यविद्वांसोयथा कुर्वन्ति भारत
कुर्याद्विद्वांस्तथा ऽसक्तश्चिकीर्षुर्लोकसङ्ग्रहमिति॥

अर्थात जनकादि कर्म ही करके सिद्ध को पहुंचे तुम को उचित है कि लोगों के उपकार के लिये कर्म करो। क्योंकि श्रेष्ठ जन जो २ कर्म करता है उस कर्म को सामान्य लोग करते हैं और वह जिस बात को

प्रमाण मानता है लोग भी उसी के अनुसार चलते हैं। हे कुन्ती के पुत्र यद्यपि मुझे तीनों लोक में कुछ करना नहीं है और न कुछ पाना है जो मैं ने नहीं पाया तौ भी कर्म करता रहता हूं। क्योंकि यदि मैं आलस्य को छोड़ कदाचित कर्म में न लगा रहूं तो हे कुन्ती के पुत्र सब मनुष्य जो मेरे पन्थ के अनुसार चलते हैं सो तितर बितर हो नष्ट हो जायेंगे। जो मैं कर्म न करूं तो सङ्कर का कारण हो इन प्रजाओं का बधक हो जाऊं। हे भरतवंशी जैसे अज्ञानी लोग लवलीन होके कर्म करते हैं तैसे ज्ञानी भी करें परन्तु उस में आसक्ति न रखके इस इच्छा से करें कि लोगों का उपकार होवे॥

फिर भागवत के उन श्लोकों में जिनको मैं ने ब्रह्मा के वृत्तान्त दिखाने के लिये कहा मरीचि आदि उसके पुत्र प्रजापति पर दोष लगाते हैं। सो यदि तेजोमय ब्रह्मा काम से मोहित हो दोष के योग्य ठहरता तो कृष्ण की क्या सामर्थ्य है कि कुकर्म करके निर्दोषी ठहरे। रघुवंश के कर्त्ता कालीदास ने जो कहा है सो इस प्रकरण में बुद्धिमान ग्रहण करेगा जैसा रघुवंश के तीसरे सर्ग का तेंतालीसवां श्लोक॥

पथः श्रुतेर्दर्शयितार ईश्वरा मलीमसामाददते न पद्धतिम्

अर्थात पवित्र मार्ग के दिखानेहारे सामर्थ्यवन्त लोग मलिन डगर पर नहीं चलते। यह वचन सत्य और यथार्थ है क्योंकि सब कोई जानता है कि किसी की चाल का उदाहरण उसकी शिक्षा से निपट गुणदायक है यद्यपि गुरु अपने चेले को भली भांति सिखावे कि व्यभिचार न करना जो गुरु आप वही कुकर्म करे तो क्या चेला उसकी शिक्षा का कुछ आदर करेगा॥

वेदविद्वान का वचन॥ पण्डितजी। जब मनुष्य की बुद्धि ऐसी अति निर्बल है तो वह क्योंकर जान सक्ता है कि परमेश्वर को जिसकी अनन्त बुद्धि है क्या करना उचित है और क्या करना अनुचित है उसकी बुद्धि

का गहराव तो अथाह है वह सर्वज्ञानी है और मनुष्य उसको सम्पूर्णरूप से जान नहीं सक्ता है। संसारिक राजनीति में भी मन्त्री लोग कभी २ ऐसे उपाय करते हैं जो अज्ञान लोगों की समझ में नहीं आते हैं परन्तु ईश्वर का राज्य अनादि से और त्रिलोक की सम्पूर्ण सृष्टि के ऊपर फैल रहा है थोड़े दिनों के बुद्धिहीन मनुष्य उस राज्य के उपाय को क्योंकर समझ सके॥

सत्यार्थी का वचन॥ आपका वचन ठीक है मैं मान लेता हूं कि ईश्वर के राज्य में कितनी ऐसी बातें हैं जिनको हम सम्पूर्ण रूप से समझ नहीं सक्ते हैं। इस प्रकार से सुकर्मियों के कष्ट और कुकर्मियों की भाग्यवानी पर दृष्टि करने से कभी २ मन अचंभित और व्याकुल हो जाता है कि यदि परमेश्वर सचमुच धर्म का राज्य करता है तो कर्मों का ठीक न्याय और प्रतिफल इस जीवन में भी क्यों नहीं होता और सत्य पुरुष किस लिये वर्त्तमान काल में आनन्द नहीं भोगते और दुष्टाचारी वर्त्तमान काल का दण्ड क्यों नहीं पाते ऐसे २ सन्देह तो मन में आते हैं। परन्तु ध्यानी मनुष्य इसका यह उत्तर देता है कि यह जीवन परीक्षा का काल और यह संसार परीक्षा का स्थान है और परीक्षा के लिये दुःख और सुख कुकर्मियों और सुकर्मियों दोनों को मिलता है। परलोक में जो परीक्षा हो चुकेगी तब एक २ को ठीक यथार्थ प्रतिफल दिया जायगा। इस रीति से परमेश्वर के सत्य न्याय और मनुष्य की अस्थिर दशा इन दो बातों पर एक ही सङ्ग ध्यान करने से एक दृढ़ अनुमान उत्पन्न होता है कि परलोक में इन सब बातों का ठीक बिचार होगा॥

परन्तु आप ध्यान कीजिये कि यह विषय उस बात से जिसका वर्णन मैं ने किया बड़ा भिन्न है क्योंकि यद्यपि इसका अर्थ परलोक के बिचार से खुल भी नहीं सक्ता तथापि यह केवल एक ऐसी बात होती जो

हमारे समझ में नहीं आ सक्ती परन्तु देवतागण के चरित्र ऐसे नहीं हैं और परमेश्वर के प्रत्यक्ष गुण भी ऐसे नहीं हैं क्योंकि परमेश्वर ने मनुष्यजाति को एक बुद्धि दिई है जिस में भले बुरे का विवेक अटल है और जो सुकर्मों को इष्ट और कुकर्मों को अनिष्ट जानती है इस विवेकी बुद्धि के द्वारा हम जान सक्ते हैं कि परमेश्वर आप पवित्रमय है नहीं तो वह हमको ऐसी बुद्धि क्योंकर देता फिर उसी बुद्धि के द्वारा हम जानते हैं कि व्यभिचारादि कुकर्म दुष्ट हैं यदि कोई मनुष्य ऐसा कर्म करे तो निस्सन्देह समस्त भले मनुष्य उसको दुष्ट कहेंगे और उसको बिना दण्ड दिये छोड़ना बड़ा अन्धेर जानेंगे इस कारण भले मनुष्य के मन में यह भावना किसी प्रकार से नहीं आ सक्ती है कि परमेश्वर अवतार लेके ऐसा कुकर्म करेगा क्योंकि हम स्पष्टरूप से देखके निश्चय जान सक्ते हैं कि यह बात परमेश्वर के प्रत्यक्ष गुण के ठीक विरुद्ध होती ऐसे भारी प्रकरण में पण्डितजी निश्चय हमको बड़ी दीनता के सङ्ग बात करना उचित है परन्तु यह वचन मैं बेधड़क कहता हूं कि जो कोई एक व्यभिचारी मनुष्य को ईश्वर कहता है सो ईश्वर की बड़ी अपनिन्दा करता है और जो कहते हैं कि परमात्मा ऐसा कुकर्म करेगा सो उसकी पवित्रता का भाव नहीं समझते हैं यह क्योंकर हो सक्ता है कि वह परमेश्वर जो मनुष्यजाति की शुद्धता और मन की पवित्रता चाहता है आप उनके सन्मुख ऐसे कुकर्मों का उदाहरण दिखावे। इस कारण पण्डितजी आपको जो बुद्धिमान और सत्यार्थी हैं कृष्ण को ईश्वर करके मानना किसी रीति से आगे को उचित नहीं हो सक्ता है और वह शास्त्र भी जिस में इस प्रकार का वृत्तान्त लिखा है निस्सन्देह ईश्वर का शास्त्र नहीं हो सक्ता केवल दोषवान और पापमय मनुष्य की बनाई हुई पुस्तक है॥

वेदविद्वान का वचन॥ जैसा कृष्ण का वृत्तान्त पुराणों में लिखा है

तैसा ही महादेव आदिकों का बहुतसा वृत्तान्त मिलता है पुराणों के पढ़नेहारे यह सब भली भांति जानते हैं इस कारण इसका वर्णन करना कुछ प्रयोजन नहीं है। यदि कृष्ण के ऐसे कर्मों से शास्त्रों की लौकिक उत्पत्ति सिद्ध होती है तो शिव आदिकों के भी वैसे ही कर्मों से वही परिणाम निकलेगा॥

सत्यार्थी का वचन॥ पण्डितजी। सत्य यह है कि पुराण के कर्त्ता जिन्हों ने ऐसे कुकर्म परमेश्वर पर लगाये उसकी पवित्रता को नहीं जानते थे। अपने पापमय स्वभाव के अनुसार मनुष्यजाति के गुणसंयुक्त किसी बड़े तेजोमय और सामर्थी की भावना करके उन्हीं ने उसको परमेश्वर कहा सो यह भी एक प्रसिद्ध लक्षण है जिस्से वेदादि शास्त्रों की शिक्षा परमेश्वर के प्रत्यक्ष गुण के ठीक विरुद्ध देख पड़ती है॥

अब इसके सम्बन्ध में एक और बात रह गई है जिस पर तनिक ध्यान करना चाहिये यदि परमेश्वर सचमुच किसी शास्त्र को देवे तो निस्सन्देह उसका विशेष अर्थ यह होगा कि मनुष्य के पाप को किसी गुणदायक युक्ति के द्वारा दूर करे और उसके पापमय स्वभाव को पवित्र करे अर्थात मनुष्य का पाप नष्ट करके मनुष्य को उस पाप से और उसके दण्ड से और उसकी प्रबलता से बचावे। अब मैं आप से पूछता हूं कि इन कठिन कामों के निर्वाह करने के लिये वेदादि शास्त्रों में कैसा उपाय और कैसी युक्ति वर्णित होती है। किसी स्थल में ऐसा लिखा है कि पापमय मनुष्य देवता का नाम जपने से अपने समस्त पाप से पवित्र हो सक्ता है जैसे विष्णुधर्मतन्त्र में लिखा है॥

चक्रायुधस्य नामानि सदा सर्वत्र कीर्त्तयेत्
नाशौचं कीर्त्तने तस्य सपवित्रकरोयथा
हरिर्हरति पापानि दुष्टचित्तैरपि स्मृतः
अनिच्छयापि संस्पृष्टोदहत्यपि हि पावक इति॥

अर्थात चक्रायुध अर्थात विष्णु के नाम सदा सर्वत्र लेते रहना उसके स्मरण करने से किसी प्रकार की अपवित्रता नहीं रहती है क्योंकि वह पवित्र करनेहारा है। यद्यपि दुष्टमन से उसका स्मरण किया जाय तौभी हरि पापों को हरता है क्योंकि यह प्रसिद्ध है कि बिन चाहना से भी यदि अग्नि से स्पर्श हो तो भी वह जलाय ही डालता है॥

पण्डितजी क्या ऐसी शिक्षा जैसी यह है सच्चे परमेश्वर की ओर से हो सक्ती है। क्या पाप अर्थात परमेश्वर का अनादर करना उसकी आज्ञा का भङ्ग करना उस्से बैर करना जिसके कारण से मनुष्य इस संसार में दुःखित रहता है और अन्त को मर भी जाता है और परलोक के विलोकन करने से निपट डरता है क्या यह पाप ऐसी हलकी वस्तु है कि निरे एक बचन के उच्चारण से मोक्ष हो सक्ता है यह शिक्षा तो मेरी समझ में साक्षात मिथ्या है॥

फिर कितने एक स्थलों में यह भी कहा है कि गङ्गास्नान करने से और तीर्थ को जाने से पापमोक्षण हो सक्ता यह तो पण्डितजी एक निपट दुष्टतर शिक्षा है कि पाप के बिना छोड़े अथवा मन के बिना पवित्र किये कोई जन मुक्ति पा सक्ता है। यदि वे जो अपने कुकर्मों को नहीं छोड़ देते हैं फिर भी पाप मोक्षण पा सक्ते हैं तो कौन पाप को छोड़ेगा अथवा मन की पवित्रता कौन चाहेगा कौन धर्म्मी मनुष्य ऐसी भावना कर सक्ता है कि परमेश्वर जो मनुष्य के मन की पवित्रता चाहता है इस प्रकार की शिक्षा देगा ऐसा करना तो उसके प्रत्यक्ष गुण के ठीक विरुद्ध होता॥

वेदविद्वान का वचन॥ आप जो वर्णन करते हैं सो शास्त्रों की ठीक शिक्षा नहीं क्योंकि दूसरे स्थलों में मन की पवित्रता की शिक्षा मिलती है॥

सत्यार्थी का वचन॥ पण्डितजी। मैं आपका कहना नहीं मुकरता

हूं मैं जानता हूं कि शास्त्रों के दूसरे स्थलों में मन की पवित्रता की शिक्षा है परन्तु इन स्थलों में जिनका वर्णन मैं कर चुका ऐसी शिक्षा नहीं मिलती है इन स्थलों का अभिप्राय स्पष्ट है कि निरे नाम जपने से अथवा निरे गङ्गा में स्नान करने से पापमोचण हो सक्ता है और इसका तात्पर्य्य निस्सन्देह यह है कि पापमोचण के लिये मन का पवित्र होना कुछ प्रयोजन नहीं और ऐसा भी साधारण लोगों से सर्वथा समझा जाता है। सो ऐसी भिन्न २ शिक्षा में एक नई प्रकार की विरुद्धता देख पड़ती है कि यदि गङ्गास्नान जप तप तीर्थ इत्यादि कर्मों से पापमोचण हो सक्ता है तो मन का पवित्र होना क्या प्रयोजन है फिर यदि मन की पवित्रता अवश्य है तो गङ्गास्नान जप तीर्थ इत्यादि से क्या लाभ है। परन्तु यद्यपि शास्त्रों में मन की पवित्रता की शिक्षा मिलती तो है तथापि इसके प्राप्त करने के लिये कोई यथार्थ युक्ति वर्णित नहीं होती है। क्या गङ्गास्नान करने से किसी का मन पवित्र हो जायगा कोई बुद्धिमान ऐसी बात नहीं कहेगा फिर बिचारा मनुष्य उसी अपवित्र दशा में पड़ा रहता है और सम्पूर्ण हिन्दूशास्त्रों में कोई ऐसा योग्य उपाय नहीं पा सक्ता है जिसके द्वारा उसके किये हुए पाप कट जावें जिस्सें उनके दण्ड भोगने से छुटकारा पावे न कोई ऐसी युक्ति मिलती है जो उसका पापमय स्वभाव पवित्र करे जिस्सें आगे को पाप न करे। इन समस्त प्रमाणों से पण्डितजी मेरी समझ में यह बात सिद्ध है कि वेदादि शास्त्रों की शिक्षा परमेश्वर के प्रत्यक्ष गुण के ठीक विरुद्ध है तो ऐसे शास्त्रों में ईश्वरीय मत क्योंकर हो सक्ता है॥

ग्रन्थकर्त्ता का वचन॥

इतनी बात सुनते ही मैं ने देखा कि वेदविद्वान का मुख गम्भीर और उदास दृष्टि पड़ता है परन्तु ध्यान करते २ उसने उस समय सत्यार्थी

के वचन का कुछ उत्तर नहीं दिया केवल यह कहा कि आप प्रसन्न हो तो हम सांझ काल एक और बार सत्सङ्ग करेंगे। इस पर हम तीनों मनुष्य अपने २ घर को चले गये॥

मतपरीक्षा का सातवां सत्सङ्ग समाप्त हुआ॥

इति॥

आठवां सत्सङ्ग।

वेदान्तादि मतों की शिक्षा की चर्चा।

ग्रन्थकर्त्ता का बचन।

सांझ काल जब वेदविद्वान और सत्यार्थी अपना अन्तवाला सत्सङ्ग करने को इकट्ठे हुए तो मैं भी आगे की रीति उपस्थित था क्योंकि मैं ने यह समझा कि यदि वेदविद्वान अपने शास्त्रों के प्रमाण सिद्ध करने के लिये और सत्यार्थी की आपत्तियों को त्याग करने के निमित्त कुछ कहना चाहेगा तो अभी कहेगा और मैं उन प्रमाणों का जिनके हेतु ऐसा भला मनुष्य हिन्दूधर्म पर बिश्वास करके उसकी रीतों पर चलता है अभिप्राय जानने का निपट अभिलाषी था। जैसा मैं ने समझा था तैसाही वेदविद्वान इच्छा करके आया और बड़े आदर और गम्भीरता के सङ्ग इस प्रकार से बात करने लगा॥

वेदविद्वान का बचन॥ पण्डितजी। आपने जो कुछ प्रमाण हिन्दूशास्त्रों को खण्डन करने के निमित्त बतलाया मैं ने धीरज करके सुन लिया है आप कहते हैं कि शास्त्रों का वृत्तान्त प्रमाणिक नहीं हो सका है क्योंकि उनको सिद्ध करने के लिये साक्षी का बिश्वासयोग्य बचन कहीं

नहीं मिलता है फिर उनकी शिक्षा का तात्पर्य्य ईश्वर के प्रत्यक्ष गुण के समान नहीं है और उन में परस्पर विरुद्धता आदि लक्षण देख पड़ने से निश्चय है कि वे केवल दोषी मनुष्य की रची हुई पुस्तकें हैं। ऐसे २ कारणों से आपकी समझ में उचित नहीं है कि कोई मनुष्य ईश्वरवाणी की रीति उनका आदर करे अथवा मुक्ति के प्रकरण में उन पर विश्वास लावे किम्वा उनकी धार्म्मिक रीतों पर चले। सो मैं मान लेता हूं कि यदि ईश्वर का और उसके गुणों का जो वर्णन आपने किया है सो निश्चय करके सिद्ध और प्रमाणिक हो सक्ता है तो आप के दूसरे प्रमाणों का उत्तर देना एक अत्यन्त कठिन काम होगा परन्तु आपको ज्ञान होगा कि वेदान्तमत के अनुसार जो कुछ आपने ईश्वर के विषय में कहा है सो किसी रीति से सिद्ध नहीं हो सक्ता क्योंकि उस मत की ज्ञानदशा में सम्पूर्ण जगत ब्रह्मस्वरूप एकरूप है और हिन्दू अङ्गरेज़ मुसलमान प्रभृति जाति भेद कुछ नहीं है क्योंकि सकल जीव ईश्वर ही के अंश हैं यही निवृत्तिमार्ग है और ज्ञानी लोग जानते हैं कि सकल जगत ईश्वर ही है एको ब्रह्म द्वितयोनास्ति अर्थात ईश्वर को छोड़ और कुछ नहीं है और यह संसार और भिन्न २ जीव जो देख पड़ते हैं सो केवल माया के कारण ऐसे देख पड़ते हैं सचमुच कुछ पदार्थ है नहीं क्योंकि जब जीव में माया के विकार से अहङ्कार मद मोह प्रभृति व्याप्त हुए तब ईश्वर से जीव भिन्न दिखाई देता है परन्तु जीव में से यह विकार जब चला जायगा तो ईश्वर से जीव का कुछ भेद नहीं रहेगा॥

फिर उस मत में दूसरा मार्ग प्रवृत्ति कहलाता है जो अल्पज्ञ लोगों के लिये स्थापित हुआ और इसके अनुसार भजन के मार्ग भिन्न २ हो सक्ते हैं परन्तु सभों का अभिप्राय एक ही है और ईश्वरीय ज्ञान प्राप्त होने तक स्वस्वजात्यनुसार ईश्वर का भजन करते रहना मुक्तिहेतु है। और पुराणों की जो विरुद्धता देख पड़ती है यह तो केवल धर्म्म के

भिन्न २ मार्ग हैं और अन्तिम विचार करने में सर्व पुराणों का मत एक ही है इस रीति से जितने मत संसार में प्रचलित हैं और पाखण्ड मत भी सब के सब ईश्वर के सिरजे हुए हैं और किसी को मिथ्या कहना ईश्वर की अपनिन्दा करना है। आप ऐसा न जानिये कि मैं इस वेदान्तमत पर सम्पूर्ण भरोसा रखता हूं क्योंकि आपके ज्ञानपूर्वक सत्सङ्ग के कारण मेरे मन में कुछ सन्देह होने लगा है परन्तु जैसे मैं ने पहिले कहा कि शारीरिक विशेष वस्तुओं की अनर्थता को ध्यान करते २ मेरा मन बहुत दिनों से उस मत में अधिक सन्तुष्ट और प्रसन्न रहा है क्योंकि ऐसा देख पड़ता है कि उस मत के अनुसार जितनी विरुद्धता और अज्ञानता और भ्रान्ति इस जगत में फैल रही है सब की सब समान और सत्य ठहरती है और इस रीति से मन की सारी चिन्ता और सन्देह क्षण भर में दूर हो जाता है॥

सत्यार्थी का वचन॥ वेदान्तमत का जो वृत्तान्त आपने अभी किया है उस में आपके एक वचन से मैं अति आनन्दित हूं अर्थात कि आप उस मत पर सन्देह करने लगे हैं और मुझको निश्चय है कि जो कोई आपकी नाईं बुद्धिमान और सत्यार्थी हो उस मत पर सीधे अन्तःकरण से ध्यान करेगा तो अवश्य अन्त में उसको सर्वथा मिथ्या जानेगा क्योंकि पण्डितजी विचार किया चाहिये कि इस मत अर्थात अद्वैतमत का क्या प्रमाण है अथवा कोई उसको किस हेतु से सत्य मानता है बुद्धि की रीति से तो प्रमाणिक नहीं हो सक्ता है क्योंकि बुद्धि की रीति से सकल मनुष्य पर साक्षात है कि मैं ईश्वर से भिन्न हूं। फिर जो कोई कहे कि माया के कारण बुद्धि की साक्षात बात पर आसरा नहीं हो सक्ता है तो मैं पूछता हूं कि इस दशा में उस बात पर जो साक्षात नहीं है बरन साक्षात मिथ्या है आसरा क्योंकर हो सक्ता है। यदि कोई कहे यह मत शास्त्र की शिक्षा से जाना जाता है तो मैं फिर पूछता हूं कि माया के

वश में होके शास्त्र को अथवा उसके अर्थ को किम्वा उसके प्रमाण को कौन जान सक्ता है। सचमुच इस मत का तात्पर्य्य यह है कि सत्य असत्य में कुछ भेद नहीं है तो वेदान्ती क्योंकर कह सक्ते हैं कि वेदान्तमत सत्य है और उसका गुण यह है कि असत्य को सत्य कहना और सत्य को असत्य ठहराना और बुद्धि का काम उलटी रीति से समझ लेना। यदि कोई बात सत्य है तो निस्सन्देह वेदान्तमत मिथ्या है क्योंकि साक्षात बात के विरुद्ध है यदि कोई बात सत्य नहीं है तो वेदान्तमत भी सत्य नहीं है॥

परन्तु आप मान लेते हैं कि सत्य और असत्य में बड़ा भेद है तो सत्य किस प्रकार से जाना जाता है निस्सन्देह किसी प्रमाण से सत्य बात सिद्ध होती है। परन्तु सम्पूर्ण प्रमाणों की जड़ कोई साक्षात बात होगी फिर जो साक्षात बात पर भी आसरा नहीं हो सक्ता है तो प्रमाण लाने की क्या सामर्थ रही अथवा कोई बात क्योंकर सिद्ध हो सक्ती है। फिर इस मत में अनेक ऐसी बिरुद्धता हैं कि किसी बुद्धिमान का क्षण भर के लिये भी उस पर बिश्वास करना अत्यन्त आश्चर्य्य की बात है और जब लों अपनी बुद्धि के उजाले को बरबस अन्धकार न करे कोई उसको सत्य नहीं मान सकेगा। परन्तु इस विषय में एक पुस्तक वेदान्तमतविचार नाम काशी के एक पण्डित की लिखी हुई मेरी समझ में अत्यन्त सुन्दर और ज्ञान पूर्वक है आपको चाहिये तो उसको मंगाके ध्यान के साथ पढ़ लेना और मैं जानता हूं कि निस्सन्देह आप उस मत की भ्रान्ति से तुरंत छूटेंगे कदाचित आपके लिये जो सत्यार्थी है इतना भी करना कुछ प्रयोजन नहीं क्योंकि जब कोई कहता है कि सत्य और असत्य उजाला और अन्धकार पाप और पुण्य दुःख और सुख सब एक ही हैं केवल भ्रान्ति से भिन्न देख पड़ते हैं तो ऐसा मनुष्य साक्षात रीति से भ्रान्ति में यहां लों फंसा है कि बुद्धिमान जो अपनी बुद्धि की

खराई का अभिलाषी है उसकी किसी दूसरी बात सुनने भी नहीं चाहेगा। और जब कोई कहता है कि पापमय निर्बल अज्ञान मनुष्य का जीव ईश्वर का अंश है केवल ईश्वर का वह अंश माया के वश में पड़ा है तो धर्मी मनुष्य ईश्वर की ऐसी निन्दापूर्वक और पाखण्डी बात सुनके निपट डरेगा॥

वेदविद्वान का वचन॥ आप तो वेदान्तमत के विषय में बड़ी चेष्टा के सङ्ग बात करते हैं और निस्सन्देह यदि वह बात सत्य नहीं है तो अवश्य मनुष्य के लिये निपट हानिजनक और परमेश्वर के लिये अत्यन्त निन्दापूर्वक है क्योंकि जितना पाप और भ्रमणा और पाखण्ड इत्यादि मनुष्य से उत्पन्न हुए उन सभों का दोष ईश्वर ही पर लगाता और जैसा आप कहते हैं मैं नहीं देखता हूं कि उसी मत की शिक्षा के अनुसार वह मत क्योंकर सत्य और प्रमाणिक ठहर सक्ता है क्योंकि यदि सब कुछ माया है तो वह भी मायिक होगा॥

सत्यार्थी का वचन॥ आपका कहना ठीक है और मैं आप से बिन्ती करता हूं कि जैसे आप ईश्वर को प्रसन्न करने और सत्य बात तत्वज्ञान प्राप्त करने चाहते हैं तैसे उस मत के सिद्धान्त पर जो सम्पूर्ण भ्रमणा ही है किसी रीति से तनिक भी बिश्वास न कीजिये। सच्ची बुद्धि और विवेक की शिक्षा यह है कि वह जिसको सारे बुद्धिमान परमात्मा करके मानते हैं सो चैतन्य हो सम्पूर्ण जगत का सृष्टिकर्त्ता पालनकर्त्ता और स्वामी है। मनुष्यजाति की स्वाभाविक प्रकृति और सारे पदार्थों के गुण केवल उसी की इच्छा से उत्पन्न हुए और किसी रीति से नहीं इस कारण पृथक २ मनुष्य की व्यक्ति का जो स्वाभाविक ज्ञान है सो एक अकस्मातीय अथवा व्यर्थ बात नहीं है परन्तु परमात्मा ही की इच्छा से सब किसी के मन में उत्पन्न हो अटल रहता है। परन्तु जो कुछ जगत का स्वामी परमात्मा करता है सो किसी भले और योग्य अभिप्राय के लिये करता

है त्रिलोक का स्वामी सर्वज्ञानी और सर्वसामर्थी महाराजा क्षुद्र मनुष्य के समान व्यर्थ लीला क्रीड़ा के लिये कुछ नहीं करता है वह तो नित्य शुद्ध बुद्ध मुक्तस्वभाव नित्यानन्द और निर्विकार है और मनुष्य की नाईं अपनी प्रजाओं को कभी धोखा नहीं देता है। दुःख सुखआदि जो मनुष्य इस जीवन में सहते हैं सो पण्डितजी सब सत्य और परमात्मा के ठहराये हुए हैं सब कोई साक्षात रीति से जानता है कि मैं दूसरों से भिन्न हूं यह मेरा सेवक है वह मेरा स्वामी है इत्यादि और कोई ऐसी भावना नहीं करता है कि जो कुछ मेरे मन में आवे सो मैं कर सक्ता हूं क्योंकि मेरा कोई स्वामी नहीं है और राजा प्रजा का कुछ भेद नहीं है। यद्यपि कोई ऐसी व्यर्थ भावना भी करता तथापि इस संसार में उस पर चल नहीं सक्ता और जो ऐसा उद्योग करता तो अपनी आयु निर्वाह नहीं कर सक्ता। यदि कोई प्रजा अपने जीव को राजा के जीव से एक ही जान अपनी इच्छा पर चल राजा की आज्ञा का उल्लङ्घन करता तो क्या राजा उसको दण्ड के लिये पकड़ न लेता और जब उसको कोड़े से मरवाता तो क्या उस प्रजा का दुःख सत्य नहीं होता। अब इस संसार में राजा प्रजा का सम्बन्ध परमात्मा का ठहराया हुआ है और वही आप सभों का महाराजा और स्वामी है और मृत्यु काल लों यही सम्बन्ध अटल रहता है तो किस प्रमाण से सिद्ध अथवा सम्भव हो सक्ता है कि यही सम्बन्ध परलोक में भी स्थिर नहीं रहेगा॥

वेदविद्वान का वचन॥ आप जो कहते हैं सो सब ठीक है और एक और बात भी है जिसके कारण से मेरे मन में वेदान्तमत का कुछ सन्देह हो रहा है अर्थात वह जो अपने को परमात्मा से भिन्न नहीं जानता है तो उसका भजन क्यों कर सक्ता है परन्तु जिसके आधीन सकल मनुष्य हैं चाहिये कि उसका भजन समस्त बुद्धिमानों से निरन्तर होता रहे। इस प्रकार से वेदान्तमत त्रिलोक के स्वामी के उचित भजन

के विरुद्ध देख पड़ता है तो ऐसा मत परमात्मा से क्योंकर निकले यह तो एक सन्देह मेरे मन में बहुत दिनों से आ रहा है॥

सत्यार्थी का वचन॥ सच पण्डितजी समस्त धर्ममय पुरुषों के मन में यही सन्देह अवश्य आवेगा क्योंकि अपने २ आत्मत्व का ज्ञान जो मनुष्यों के मन में स्वाभाविक है सो इसी हेतु से परमात्मा ने ठहराया कि एक २ के मन की अगुवाई करके उसको परमात्मा के भजन में तत्पर करे। जो कोई इस अगुवाई को त्याग करता है सो भूल करके परमात्मा के दिखाये हुए मार्ग से भटक जाता है और अपने कल्पे हुए मार्ग पर चलके अपने अभिप्राय को बिना प्राप्त किये भ्रम के अन्धकार में सदा सर्वदा ठोकर खाता गिरता पड़ता रहेगा इस कारण पण्डितजी वेदान्त के इस अन्धकारमय सिद्धान्त को त्याग करके अपने निज आत्मत्व के स्वाभाविक ज्ञान पर अटल और दृढ़ विश्वास धरिये॥

वेदविद्वान का वचन॥ साङ्ख्य और न्याय शास्त्रों में द्वैतमत अर्थात भिन्न २ जीव की निज व्यक्ति की शिक्षा है परन्तु इस रीति से कि समस्त आत्मा अनादि और नित्य है आप इस शिक्षा को कैसा जानते हैं॥

सत्यार्थी का वचन॥ मेरी समझ में पण्डितजी यह शिक्षा कि परमात्मा को छोड़ अन्य आत्मा भी नित्य और अनादि है सो वृथा निष्प्रमाण है क्योंकि कोई इस बात का स्मरण नहीं कर सक्ता है कि इस जन्म से पहिले किसी काल में मैं जीता था परन्तु यदि मनुष्य का आत्मा पहिले से जीता था तो अपने प्रथम जीवन के स्मरण क्यों नहीं कर सक्ता है ऐसा स्मरण न होने से मनुष्य के आत्मा की नित्यता निष्प्रमाण ठहरती है और इसके सिद्ध करने के लिये बुद्धि का कोई और प्रमाण उपस्थित नहीं है क्योंकि वह बात जिसे प्रमाण की रीति कितने लोग कहते हैं अर्थात कि इस जन्म का दुःख किसी पहिले जन्म के पाप का दण्ड है किसी प्रकार से सिद्ध नहीं हो सक्ती है यदि ऐसे पाप का दण्ड होता

तो क्या उस पाप का स्मरण भी नहीं रहता जिससे दण्ड ग्राहक उस पाप से पछतावे ऐसी अच्छी रीति से दण्ड देना सर्वथा निष्फल और वृथा ठहरता जो सर्वज्ञानी परमात्मा के योग्य नहीं हो सक्ता है। इसके अनुसार आवागमन की शिक्षा अप्रामाणिक और एक रीति से निपट हानिजनक भी ठहरती है क्योंकि अनेक जन्मों का आसरा करके जिन में अपने पापों का दण्ड भोग अन्त को मुक्ति पावे बहुतेरे मनुष्य इसी जन्म में पाप करते रहते हैं सो मेरी समझ में यह समस्त शिक्षा बुद्धि के विरुद्ध और मनुष्य के स्वाभाविक सुधराव के प्रतिकूल है॥

वेदविद्वान का बचन॥ नैयायिक कहते हैं कि परमाणु जिन से सृष्टि उत्पन्न हुई अनादि हैं और कपिल मानता है कि प्रकृति अनादि है आप इन बातों का कैसा बिचार करते हैं॥

सत्यार्थी का बचन॥ पण्डितजी। मेरी बुद्धि में ऐसा आता है कि परमात्मा को छोड़ कोई वस्तु अनादि नहीं है इन दो पक्षों के कर्त्ता और वेदान्ती भी ऐसा मानते थे कि परमात्मा को शून्य अर्थात नास्ति से सृष्टि को उत्पन्न करने की सामर्थ न थी इस कारण वेदान्ती कहते हैं कि परमात्मा ने अपने को पसारके जगत को बनाया और यों सम्पूर्ण जगत ब्रह्मस्वरूप है। परन्तु नैयायिक कहते हैं कि ऐसा नहीं ईश्वर ने अनादि परमाणु से जगत को बनाया। इस में इनकी यह सम्मति देख पड़ती है कि ईश्वर जगत को शून्य से नहीं बना सक्ता है परन्तु यह भावना सर्वथा निष्प्रमाण है क्योंकि परमात्मा जिसको सारे बुद्धिमान नित्य और स्वयंभू मानते हैं सो निस्सन्देह सर्वसामर्थी भी होगा परन्तु यदि सर्वसामर्थी है तो शून्य से जगत को बनाना उसके लिये क्या बड़ी बात होती। वे पण्डित जो उस नित्य स्वयंभू ही की सामर्थ का अन्त पा नहीं सके हैं तो उसकी सामर्थ पर सीमा क्योंकर बांधते हैं। और वेदान्तियों की यह भावना कि ब्रह्म ने अपने को पसारके जगत बनाया सो किसी

प्रकार से बुद्धि में नहीं आती है क्योंकि जितने पदार्थ दृश्यमान और स्पर्श के योग्य हैं सो न तो आत्मास्वरूप हैं और न चैतन्य हैं और क्योंकर हो सके कि चैतन्य और निर्विकार परमात्मा एक जड़ पदार्थ और अनात्मिक वस्तु बन जावे ॥

वेदविद्वान का बचन ॥ न्याय आदि शास्त्रों में यह सिद्धान्त है कि रागादि भावों के बिना नाश किये सिद्धि नहीं हो सक्ती है। क्या आपकी समझ में यह शिक्षा यथार्थ है कि नहीं ॥

सत्यार्थी का बचन ॥ नहीं पण्डितजी मेरी बुद्धि के अनुसार यह शिक्षा भी यथार्थ नहीं है परन्तु भ्रान्ति से उत्पन्न हुई क्योंकि निरे रागादि भावों में कुछ दोष नहीं है दोष केवल यह है कि रागादिकों का अनुचित रीति पर अभ्यास और साधन करना और परमात्मा के किसी प्रत्यक्ष कार्य्य पर दोष लगाना निस्सन्देह उसकी अपनिन्दा और बड़ी पाखण्ड की बात है। परन्तु रागादि तो परमात्मा के प्रत्यक्ष कार्य्य हैं क्योंकि मनुष्य की प्रकृति के स्वाभाविक गुण हैं कुछ मनुष्य की कल्पी हुई बात नहीं है और परमात्मा ने रागादि को किसी योग्य अभिप्राय के लिये ठहराया होगा। इस जगत के सृष्टिकर्त्ता ने रागादिकों के निमित्त कोई योग्य और उचित विषय भी बनाया होगा इस लिये मनुष्य को चाहिये कि अपने रागादिकों को जैसे प्रेम इच्छा द्वेष इत्यादि अपने २ योग्य और यथार्थ बिषयों पर लगावे और एक २ को अपने २ भाव और पदवी के समान साधन करे। सब से श्रेष्ठ बिषयों को सब से अतिशय अभिलाषा के सङ्ग चाहना चाहिये परन्तु जो २ बिषय उन से न्यून है न्यून अभिलाषा के साथ चाहना योग्य है। धन से तो ज्ञान श्रेष्ठ है और ज्ञान से शुद्धता श्रेष्ठ है इस कारण धन को न्यून अभिलाषा से ज्ञान को अधिक अभिलाषा से परन्तु मन की शुद्धता को सब से अत्यन्त अभिलाषा से खोजना चाहिये। फिर समस्त बिषयों में परमात्मा सब

से श्रेष्ठ है इस कारण सब से अतिशय प्रेम और इच्छा के सङ्ग उसका खोज करना चाहिये। संसार के जितने पदार्थों की अभिलाषा मन करता है उनके प्राप्त किये पर भी मन सम्पूर्ण रूप से सन्तुष्ट नहीं होता है क्योंकि परमेश्वर को छोड़ कोई विषय उपस्थित नहीं है जो मनुष्यजाति के मन को सम्पूर्ण रूप से शान्ति अथवा सन्तोष देवे। बिश्वास प्रेम आदर ऐसे २ राग जिनका योग्य विषय परमात्मा आप ही है सो मनुष्य की प्रकृति के स्वाभाविक गुण हैं। और परमात्मा के प्रत्यक्ष गुण जैसे सत्यता दया पवित्रता महिमा इत्यादि सो इन्हीं रागों के ठीक और यथार्थ विषय हैं। इस दशा में क्या सन्देह हो सक्ता है कि परमात्मा ने मनुष्यजाति में इन गुणों को अपनी ही सेवा के लिये उत्पन्न किया इस लिये इनका इसी रीति से साधन करना परमात्मा को इष्ट है। परन्तु वे जो इस बात से निश्चिन्त हो अपने रागादिकों को नाश करने चाहते हैं सो परमात्मा की इच्छा के विरुद्ध करते और एक प्रकार के आत्मघातक ठहरते हैं मानों वे अपनी प्रकृति के उत्तम अङ्ग को काट डालते हैं। जैसा हीनाङ्ग मनुष्य जिसके हाथ कट गये हैं उस काम को नहीं कर सक्ता है कि जो हाथों से किया जाता है इसी रीति से जो रागादि को नाश करने चाहता है वह परमात्मा की सेवा नहीं कर सक्ता है जो रागादिकों से होती है। इसके अनुसार ऐसे मनुष्य अन्त में अचेत मूढ़ असामर्थी बन जाते हैं क्योंकि वे परमात्मा के बनाये हुए अपने स्वाभाविक गुण को बिगाड़ डालते हैं ऐसा करना तो किसी प्रकार से उचित नहीं हो सक्ता है परन्तु रागादिकों को अपने २ योग्य यथार्थ विषयों पर लगाके उचित और क्रमिक भाव के साथ साधन करना कि जिस्से वे अपनी प्रकृति की सिद्धि को प्राप्त करें यही उचित है क्योंकि जिस प्रकार से इस जीवन में रागादिकों के योग्य और सब से श्रेष्ठ विषय परमात्मा है उसी रीति से परलोक में भी सदा सर्वदा रहेगा॥

वेदविद्वान का बचन॥ आपने जो वर्णन अभी किया है सो केवल प्रेम इच्छा आदर ऐसे २ रागों के विषय में है परन्तु मनुष्य के स्वभाव में द्वेष घिन क्रोध भी हैं क्या इनका भी किसी प्रकार से साधन करना चाहिये॥

सत्यार्थी का बचन॥ निस्सन्देह पण्डितजी इनके भी यथार्थ और योग्य विषय इस पापमय जगत में बहुत हैं अर्थात सम्पूर्ण मनुष्यों को चाहिये कि मिथ्यता से द्वेष करना अपवित्रता से घिन करना और पाप से क्रोध करना। ऐसा नहीं कि किसी मनुष्य से जितना मिथ्या अपवित्र पापी हो द्वेष अथवा क्रोध करना उचित है क्योंकि हम सब के सब पापी हैं और पाप इत्यादि मनुष्य जाति के कुछ स्वाभाविक गुण नहीं हैं केवल उस जाति की एक अति बुरी दशा है। मनुष्यजाति के प्रकृतिसिद्ध गुण तो उससे भिन्न हैं और परमात्मा के अनुग्रह से उससे सर्वदा अलग हो सक्ता है इस कारण पापी मनुष्य पर क्रोध करना नहीं चाहिये। परन्तु उसके और अपने भी पाप और मिथ्यता और अपवित्रता से जितना द्वेष और घिन हो सक्ता है उतना करना निस्सन्देह बहुत उचित और परमात्मा को इष्ट भी है। परन्तु यह भी उस रीति से करना नहीं चाहिये जिस रीति से बैरागी और योगी करने को कहते हैं अर्थात संसार से भागके निर्जनस्थान में रहना और बनवासी हो जाना क्योंकि यह तो मनुष्य ही से द्वेष और घिन करना है जो किसी रीति से उचित नहीं हो सक्ता है। मनुष्यजाति से प्रेम करना चाहिये और उनका उपकार करना और सामर्थभर अपनी २ उस अवस्था में जिसे परमेश्वर ने एक २ के लिये ठहराया है उनका उपयोग करना उचित है। जितना घिन और द्वेष उनके पाप से और अपने पाप से हम करें फिर भी उस पाप के नाश करने के लिये संसार की उसी अवस्था में जिसे परमात्मा ने ठहराया है उपस्थित रहना अवश्य है। नहीं तो हम

परमात्मा के ठहराये हुए नियम को उलटा देते और अपने भाइयों के उपकार से हाथ उठाते और अपनी योग्य और यथार्थ परीक्षा से भी भाग जाते और ऐसा करके हम अपनी प्रकृति की सिद्धि को क्योंकर प्राप्त कर सक्ते हैं। दुष्ट से भाग जाना तो उसको जीत लेना नहीं है परन्तु उसको दबाके नाश करना यही तो जय है जो संसार से भागके निर्जनस्थान में रहने का मन करता है सो अपनी हार मान लेता है और फिर भी अपने मनही मन में अपने सङ्ग उसी दुष्ट को लिये जाता है॥

अब पण्डितजी हिन्दूशास्त्रों के और उनकी शिक्षा के विषय में जितना मैं कहने चाहता था सो कह चुका हूं जो कुछ मैं ने कहा है सो आपके मन को दुःखी करने की इच्छा से कुछ भी नहीं कहा मेरी इच्छा केवल यह थी कि शक्य भर सत्य बात को और उसके यथार्थ प्रमाणों को आप पर प्रकाश करूं क्योंकि मैं भली भांति जानता हूं कि केवल सत्य बात से सकल मनुष्यों का कल्याण हो सक्ता है। मेरी यह समझ थी कि जैसा मेरा निज वृत्तान्त आपके वृत्तान्त से कितनी बातों में भिन्न हो रहा है तैसे कितनी बातों का ज्ञान मेरे पास था जिनका यथार्थ सन्देशा आपके पास नहीं हुआ होगा इस कारण यद्यपि मैं जानता था कि इनके सुनने से जो पहिले आपको कुछ दुःख होवे तो कुछ आश्चर्य नहीं तथापि मैं ने सोचा कि सची मित्रता का एक प्रसिद्ध लक्षण यह है कि अपने मित्र के अनन्त कल्याण के लिये उसको थोड़े दुःख देने पर भी प्रसन्न होना इस लिये अकस्मात मेरे मुख से जो कोई ऐसी बात अनुचित निकली हो कि जिस्से आपको निष्फल दुःख हुआ तो दया करके क्षमा कीजिये और मेरे मन की सीधी अभिलाषा पर ध्यान रखिये। अब जो कुछ मेरे वर्णन के उत्तर में आप कहने चाहें मैं बड़े आनन्द के साथ सुन लूंगा॥

वेदविद्वान का बचन ॥ मैं जानता हूं पण्डितजी कि आपकी इच्छा मुझको दुःख देने की नहीं थी और आपने केवल प्रेमपूर्वक बचन कहा है आपकी किसी बात को क्षमा करना प्रयोजन नहीं है। फिर भी अपने शास्त्रों के और अपने धर्म के खण्डनपूर्वक प्रमाण सुनने से निस्सन्देह मुझको दुःख हुआ और अब मेरा सब से बड़ा दुःख यह है कि जो मैं निर्पक्ष होके सत्य बचन कहूं तो आपके प्रमाणों का यथार्थ उत्तर दे नहीं सक्ता हूं इस दशा में क्या आश्चर्य है कि मेरा मन अत्यन्त दुःखित होवे और यदि इस देश के सम्पूर्ण शास्त्र निष्प्रमाण हैं तो अपने मन की व्याकुलता दूर करने के लिये मैं तत्वज्ञान को कहां से पा सकूं ॥

सत्यार्थी का वचन ॥ हे मित्र यदि कोई शास्त्र जो इन दो प्रमाणों से सिद्ध होवे कहीं देखने में आवे तो निस्सन्देह बिश्वासयोग्य होगा अर्थात कि शास्त्र की शिक्षा और अभिप्राय परमेश्वर के प्रत्यक्ष गुण के योग्य और मनुष्यजाति की मानसिक शुद्धता के उपकारक होवे यही पहिला प्रमाण है। फिर उस शास्त्र के प्रचारक में साक्षी के बिश्वासयोग्य बचन से दैवीय शक्ति का सिद्ध और प्रमाणिक होना यह दूसरा प्रमाण है। यदि कोई ऐसे शुद्धाभिप्राय शास्त्र का प्रचारक कहे कि इसके सिद्ध करने के लिये मेरे पास दैवीय शक्ति है तो उसके बचन की परीक्षा किई जावे और यदि निर्णय करने पर सिद्ध होवे तो वह शास्त्र निस्सन्देह दैवीय और बिश्वास योग्य ठहरेगा। यदि ऐसा शास्त्र पूर्वकाल के प्रमाणिक और बिश्वास योग्य वृत्तान्तों से सिद्ध होवे तो बुद्धिमान उसकी परीक्षा करे और यदि मनुष्यजाति के लिये मुक्ति का यथार्थ मार्ग उस में वर्णित होवे तो समस्त मुक्ति के खोजक उसको ग्रहण करके उस पर चलें॥

वेदविद्वान का बचन ॥ क्या आपके पास किसी ऐसे शास्त्र का समाचार है जो इन दो प्रमाणों से सिद्ध हो सक्ता है ॥

सत्यार्थी का बचन॥ वह शास्त्र जिसका पूर्वकाल में यिसू मसीह अर्थात यिसू ख्रिस्त प्रचारक था इन दो प्रमाणों से सिद्ध होता है उस में कुछ भी ऐसा तात्पर्य्य अथवा वृत्तान्त कहीं नहीं देख पड़ता है कि जो परमेश्वर के अयोग्य किम्वा उसके प्रत्यक्ष गुण के बिरुद्ध है। उसका सम्पूर्ण अभिप्राय मनुष्य की शुद्धता के अनुकूल और उपकारक है और अनेक दृढ़ प्रमाणों से सिद्ध है कि यिसू ख्रिस्त जो इस शास्त्र का प्रचारक था दैवीय शक्ति रखता था बरन वह आप ईश्वर का अवतार था। उसके चरित्रों के साक्षी अर्थात देखनेवालों ने उसी काल उन चरित्रों का सम्पूर्ण वृत्तान्त पुस्तकों में लिखा और अनेक प्रत्यक्ष लक्षणों से यह भी सिद्ध किया कि हम सामर्थ और बिश्वस्त पुरुष हो बिश्वासयोग्य साक्षी हैं अर्थात कि उस वृत्तान्त के विषय में उनका धोखा खाना अनहोना था और दूसरों को धोखा देने का उनको कुछ अभिप्राय नहीं हो सका। उनकी पुस्तकें उसी काल से संसार में प्रचलित हो रही हैं और इस बात का प्रमाण उसी काल से आज लों सनातन के दूसरे ग्रन्थकर्त्ताओं के बिश्वासयोग्य वचन से सिद्ध होता है उन साक्षियों की वे हो पुस्तकें आज लों उपस्थित हैं और उस मत के शिष्य उनको निरन्तर पढ़ते हैं। उस शास्त्र के प्रचारक ने संसार के पाप के प्रायश्चित्त अपनी मृत्यु से कर और तीसरे दिन मृत्युञ्जय हो समाधि में से जी उठ अपने शिष्यों को आज्ञा दिई कि मुझ पर बिश्वास लाने से पापमोचण और मुक्ति का मङ्गलसमाचार समस्त जातिगणों में प्रचारो। ऐसे २ अनेक दृढ़ प्रमाणों से सिद्ध है कि यिसू ख्रिस्त का वही शास्त्र सारे देशों के सम्पूर्ण जातिगणों से ग्रहण होने के योग्य है बरन यह वही शास्त्र है जिसे दयासागर सर्वज्ञानी परमात्मा ने अपने प्रिय सन्तान अर्थात दुःखी और भटकी हुई मनुष्यजाति की मुक्ति के लिये ठहराया है। परन्तु इस समय मैं आपके लिये इस बात का वर्णन बिस्तार के साथ नहीं कर सक्ता हूं ईश्वर की इच्छा

हो तो आसरा है कि किसी दूसरे समय सत्सङ्ग कर आपके लिये उस दैवीय शास्त्र का अर्थ और प्रमाण भी बतलाऊं। इतने में आप परमात्मा से प्रार्थना करते रहिये कि उसके अनुग्रह से आपका मन निर्पक्ष हो उस शास्त्र के समाचार सुनने पर सिद्ध होवे क्योंकि उस में अनन्त जीवन का वचन है॥

ग्रन्थकर्त्ता का वचन॥

इतनी बात सुनते ही वेदविद्वान आदर के साथ सत्यार्थी को प्रणाम कर बिदा हुआ और हम सब अपने घर को चले गये। इसके कुछ बिलम्ब के पीछे उन दो महा पण्डितों का फिरके सत्सङ्ग हुआ और सत्यार्थी ने वेदविद्वान के लिये उस दैवीय ख्रिस्तीय शास्त्र के अर्थ और प्रमाण का सम्पूर्ण वर्णन किया। उस काल मैं भी उपस्थित था और उनके प्रश्नोत्तर का वृत्तान्त इस मतपरीक्षा नाम पुस्तक के द्वितीय खण्ड में लिखा है। अब मैं इसके सारे पढ़नेवालों से बिन्ती करता हूं कि उस द्वितीय खण्ड को भी मंगाके पढ़िये तब इस भारी प्रकरण का सारा बिस्तार प्रगट हो जायगा। प्रणाम॥

मतपरीक्षा का प्रथम खण्ड समाप्त हुआ॥

इति॥



मतपरीक्षा

अर्थात

दो महापण्डितों के सत्सङ्ग ।

द्वितीय खण्ड

ख्रिष्टीयशास्त्रनिरूपण ।

पहिला सत्सङ्ग ।

ख्रिष्टीय शास्त्र के साधारण वृत्तान्त की चर्चा ।

महिमा हो उस परमेश्वर को जो अनादि अनन्त असीम सर्वशक्तिमान सर्वव्यापक आत्मस्वरूप धर्ममय दयासागर है उसी अकेले अनादि ने अपनी सामर्थ्य से सकल संसारों को जो आगे उपस्थित न थे रचित किया और नाना प्रकार के जीवधारियों को उत्पन्न करके उन संसारों में सुख भोग करने के लिये बसाया। उसी परमेश्वर ने अपने भजन के निमित्त एक उत्तम बुद्धिमान जाति को पृथिवी पर रचने का अभिलाषी हो मनुष्य ही के पहिले माता पिता को शुद्ध उत्पन्न करके भूमण्डल पर रक्खा। उन आदि माता पिता से मनुष्यों का जो सन्तान निकला है उसका वही दयालु परमेश्वर निरन्तर पालन करता है और उन की करणी के समान एक २ को प्रतिफल देता है। उसी दयामय

प्रभु ने मनुष्यों को पाप के मलिन गह्विराव में पतित हुए देखके उनके निस्तार करने की इच्छा कर अपने अति तेजोमय पुत्र को स्वर्ग लोक से प्रेरित करके भूमण्डल में भेजा। उसी की जो मनुष्य जाति का अति महान सृष्टिकर्त्ता और पालनकर्त्ता स्वामी है जो बुरे भले का विवेककर्त्ता और पतित जनों का उपकारक और तारणकर्त्ता है उसी की स्तुति और महिमा मनुष्य जाति की ओर से निरन्तर होती रहे॥

ग्रन्थकर्त्ता का बचन॥ इस मतपरीक्षा पुस्तक के प्रथम खण्ड में मैं वर्णन कर चुका कि दो महापण्डित काशी निवासी जिन के नाम वेदविद्वान और सत्यार्थी थे बसन्त ऋतु में गंगा के तट पर भेंट कर परमपुरुषार्थ और भारतीय शास्त्र के विषय में सत्सङ्ग करते थे और उनके प्रश्नोत्तर और तर्क प्रमाण का वृत्तान्त मैं ने उस ग्रन्थ में लिखा है॥

बसन्त की पुष्पभूषित ऋतु जब बीत गई थी तब भूमि का जलानेहारा ग्रीष्म काल आया। धूल से व्याप्त एक अति प्रचण्ड वायु बहने और आकाश में शुभ्र मेघों की पंक्ति बिराजने लगी। फिर जब कष्टजनक झुलसानेहारे दो मास चले गये थे तो बर्षा की ऋतु ने सेनापति के समान अपनी सेनाओं को इकट्ठा बुलाया। बादलों की काली काली घटा ने जो धरती को छिड़काव करने पर सिद्ध थी सम्पूर्ण आकाशमण्डल को घेर लिया। तिसके पीछे बडी २ धूल को उड़ाती और आकाश के अन्त से बड़े बल के साथ दौड़ती हुई एक अति डरावनी आंधी ने आकाश को धूल से भर दिया और दिन को रात के समान अन्धकार कर डाला। तब जल की दो चार बड़ी उजली बून्दें प्यासी धूल पर पड़ने लगीं और होते २ मेघों ने सारी पृथिवी को जल की उपजावकारक धाराओं से भिगोके सींचा। इस मूसलधारा बर्षा के कारण एक ठण्डी सुखदायक पवन बहने लगी जिसके बहने से तपन के सताये हुए मनुष्य आनन्दित हुए और धरती भी अपने झुलसाये हुए तृण इत्यादि

के पहिनाव को उतारके हरे रंग के नये सुन्दर वस्त्रों से शोभायमान हो गई ॥

उस वर्षा की ऋतु में पूर्वोक्त महापण्डितों की दोबारा भेंट हुई क्योंकि सत्यार्थी अपने मित्र के सत्सङ्ग का अभिलाषी हो वेदविद्वान के घर पर आया मैं भी उस के संग था। परस्पर दर्शनों से हर्षित हो एक दूसरे को प्रणाम कर अटाली पर बैठ गये और कुशल क्षेम पूछने लगे जब नाना प्रकार की कथा वार्त्ता हो चुकी थी तब अन्त को वेदविद्वान सत्यार्थी से संवाद करके कहने लगा ॥

वेदविद्वान का वचन॥ हे मेरे मित्र जो कुछ कि पहिले सत्सङ्गों में आपने वर्णन किया उस पर मैं ने बारंबार ध्यान किया है। आप के प्रमाणों से जो कुछ कि मेरी समझ में बुद्धिानुसार सिद्ध ठहरता है उस का संक्षेप वर्णन मैं अभी करता हूं। आप ने ठीक कहा कि किसी शास्त्र का दैव्य मूल से होना प्रमाण के बिना ग्रहण करना बुद्धिमान को उचित नहीं है। यदि कोई कहे कि मैं ईश्वर की ओर से प्रेरित दूत हूं तो उसके कहे का प्रमाण ढूंढना बुद्धिमानों को अवश्य चाहिये। यदि अदृश्य परमेश्वर मनुष्य जाति के पास कोई सन्देशा पहुंचावे तो अपने दूत को कुछ ऐसा चिन्ह जिस से अपनी दूतता प्रत्यक्ष कर सके अवश्य देगा क्योंकि दयावान परमेश्वर मनुष्यजाति को सत्यमार्ग में ले जाने चाहता है हम को निश्चय विश्वास है कि वह धर्मी सत्यार्थी लोगों को भ्रान्ति से बचावेगा। परन्तु चिन्ह के बिना मनुष्य किस प्रकार से जान सकेंगे कि यह पुरुष परमेश्वर का दूत है वा छली है। संसार के व्यवहार में बहुधा देख पड़ता है कि लोग यश अथवा धन के मोह से अपना अभिप्राय प्राप्त करने के निमित्त मिथ्या बोलते हैं। इस दशा में कुछ असम्भव नहीं है कि ऐसी ही इच्छा कर मनुष्य अपने को परमेश्वर के दूत भी प्रगट करें इस कारण ऐसी अद्भुत सामर्थ्य के बिना जो मनुष्य की शक्ति से

अधिक हो शास्त्र का कोई प्रचारकर्त्ता बिश्वासयोग्य नहीं हो सक्ता है। फिर आपने जो कहा कि ईश्वरीय शास्त्र में शिक्षा का उत्तम अभिप्राय होना उस का दूसरा चिन्ह है इस में भी मेरी सम्मति निश्चय जानिये क्योंकि ऐसा शास्त्र जिस से मनुष्य ठग जाके दुष्ट मार्ग में भ्रमण करे परमेश्वर कभी नहीं देगा वरन निःसन्देह वह ऐसा शास्त्र देगा जो मनुष्य की शुद्धिता और मन की पवित्रता के अनकूल हो। निदान यदि कोई पुरुष जो आश्चर्य सामर्थ्य रखता हो एक ऐसे शास्त्र को जिस का तात्पर्य शुद्धि और पवित्र है परमेश्वर का दिया हुआ बतलावे तो वह विश्वास-योग्य होगा। वह शास्त्र जिसके ये दो चिन्ह हैं परमेश्वर की ओर से आया और सारे जातिगण को ग्राह्य है। परन्तु जो शास्त्र इन दो चिन्हों से रहित है सो केवल मनुष्यरचित है और उस को त्यागना सारे बुद्धिमानों को चाहिये। सो पहिले सत्सङ्गों में आप ने बहुतेरे ऐसे प्रमाण बतलाये जिन से भारतीय शास्त्र की संहिता का इन दो चिन्हों से रहित और इस कारण अप्रमाणिक होना सिद्ध होवे। आपके बहु-रूपी प्रमाणों पर ध्यान करने से उन शास्त्रों पर मेरा जो बिश्वास पहिले था सो निःसन्देह कुछ मिट गया है। इस कारण मेरे मन में ग्रीष्म ऋतु के कष्टजनक तपन के समान एक अति कठिन दुर्भिक्ष पड़ गया है। मुक्ति रूपी अमृत के बिना क्या सहा जाता है। परन्तु अन्तवाले सत्सङ्ग में आपने ख्रिष्टीय शास्त्र का तनिक वर्णन किया सो मैं उस शास्त्र का वृत्तान्त कुछ बिस्तार के साथ सुन्ने चाहता हूं। कदाचित उसके द्वारा जिस रीति कि वर्षा ऋतु में सूखी धरती की प्यास मिट जाती है सो मेरे जी की प्यास भी शान्ति होवे। इस कारण आप कृपा करके बतला-इये कि ख्रिष्टीय शास्त्र किस काल में बन गया उसका प्रचारकर्त्ता कौन था क्या उस प्रचारकर्त्ता की आश्चर्य्य सामर्थ्य थी कि नहीं क्या उसके वृत्तान्त का एक योग्य वर्णन समकालिक साक्षियों से परीक्षित होके तुरन्त

ग्रन्थों में लिखा था अथवा उसकी केवल एक अनिश्चय कल्पनायुक्त कथा जो पूर्वी लोगों की परम्परा से होती आई संसार में प्रचलित हो गई। यदि आप इन विषयों का एक बिस्तारपूर्वक वर्णन करेंगे तो मैं ख्रिष्टीय शास्त्र का निरूपण कर सकूंगा॥

सत्यार्थी का बचन॥ आप की इच्छा के समान मैं बड़े आनन्द के साथ इन बिषयों का वर्णन करूंगा श्री यिशू ख्रिष्ट का वृत्तान्त और ख्रिष्टीय शास्त्र का रचित और ख्रिष्टीय मत का प्रचलित होना और इन बातों के सिद्ध होने का प्रमाण बतलाऊंगा। परन्तु जिस रीति पूर्वी सत्सङ्गों के आरम्भ में हम ने सत्यमार्ग के खोज में परमेश्वर की अगुवाई के लिये बिनती किई उसी रीति अब भी उस दयावान प्रभु की प्रार्थना करनी चाहिये॥

प्रार्थना॥ हे परमेश्वर सारी आशीषों का दाता जितनी आशीष तू देता है उनका मुकुट तू आपही है। हे दयावान जो कुछ तू दान करे तथापि तुझे प्राप्त किये बिना हम दरिद्र हैं और जो कुछ तू हम से ले लेवे तथापि तुझे प्राप्त किये से हम धनी हैं। हमारी मानसिक दृष्टि को तू अपनी ज्योत से प्रकाशमान कर जिस्तें हम तेरे संबन्धी सत्य शिक्षा को खोजके शुद्धि रीति से उसको पा सकें॥

सत्यार्थी का बचन॥ अब मैं पहिले आपके लिये ख्रिष्टीय शास्त्र का संक्षेप वर्णन करूंगा कि उस में कौन २ खण्ड संयुक्त होते हैं और वह किस काल और किस देश में और किन २ लोगों के हाथ से लिखा था आप सुनिये॥

भारतवर्ष से दूर पारस देश की पश्चिम ओर को एक देश उपस्थित है जो यहूदिया कहलाता है। उस देश का प्रधान नगर यरूशलीम नाम से प्रसिद्ध है। उस नगर में पूर्वकाल का बना हुआ परमेश्वर के नाम पर एक अतिविस्तृत मन्दिर शोभायमान था। उस देश का नि-

वासी यहूदी नाम एक कुल निराकार परमेश्वर का भजन किया करता था। वहां प्रत्येक धार्मिक आचार्य्य परमेश्वर के प्रेरित पीढ़ी २ के अनुक्रम से प्रगट हो उस कुल के लोगों को सत्य मार्ग की शिक्षा दिया करते थे। उन में से एक मूसा नाम शास्त्र के प्रसिद्ध प्रचारकर्त्ता ने यहूदी लोगों को नाना प्रकार की शिक्षा दिई उसका काल ईसी संवत के आगे १५०० बरस अर्थात बर्त्तमान काल से ३३५० बरस पहिले था। तिसके पीछे परमेश्वर ने उन लोगों के पास अपनी आज्ञा बतलाने के निमित्त अनेक धर्मोपदेशक और आचार्य्य भेजे। सत्यमार्ग की शिक्षा को छोड़ इन आचार्य्यों ने आनेवाले वृत्तान्तों का समाचार ईश्वरावेश से पाके यहूदी कुल के और आस पास की जातियों के भी ऐसे ही बहुतेरे वृत्तान्त भविष्यद्वाणी की रीति बतलाये। जो २ वृत्तान्त जिस २ प्रकार से उन्हों ने ईश्वर की शिक्षा से कहा कि होवेगा सो ही वृत्तान्त उसी प्रकार से सम्पूर्ण समाप्त हुए। बिशेष करके उन्हों ने यह समाचार प्रचारा कि जगत का एक दैव्य तारणकर्त्ता इसी देश में और इसी कुल के वंश में से प्रगट होनेवाला है और यहूदी कुल इस भविष्यद्वाणी पर बिश्वास लाके उस तारणकर्त्ता की बाट नित्य जोहता था। इन आचार्य्यों ने बहुधा अपनी भविष्यद्वाणी और उपदेश ग्रन्थों में लिखे। अन्तवाले का नाम मलाकी भविष्यद्वक्ता है उस का काल ईसी संवत से ४०० बरस पहिले था। इस प्रकार से ११०० बरस के समय में उनतालीस भिन्न २ पुस्तकें लिखी थीं। तिसके पीछे इन सभों की एक संहिता हो गई जो ख्रिष्टीय शास्त्र का पहिला भाग ठहरता है। इस संहिता का नाम प्राचीनबाचापत्र है क्योंकि उस में वह बाचा जिस को परमेश्वर ने प्रसन्न होके मनुष्यजाति से और बिशेष करके यहूदी कुल से बांधी थी अर्थात कि जगतत्राता प्रगट होनेवाला है सम्पूर्णरूप से वर्णित होती है॥

तिसके पीछे भविष्यद्वाणी के समान स्थापित समय पर जगत का त्राता

उसी देश में प्रगट हुआ। अपने स्वर्गीय तेज को उतार मनुष्यरूप धारण कर भूमण्डल में आया। उस के आश्चर्य्य जन्म और चरित्र और मरण और पुनरुत्थान और स्वर्गारोहण का वृत्तान्त मैं पीछे कहूंगा। राजा विक्रमाजीत के संवत को जब पचास एक बरस बीत गये थे तब उसका मुक्तिदायक दर्शन हुआ। उस काल में उसके शिष्यों ने उसका बर्णन पुस्तकों में लिखा और खिष्टीय मत के कितने शिक्षापूर्वक पत्र भी लिखे। ये पुस्तकें सब पत्रों समेत २० हैं और इनकी संहिता खिष्टीय शास्त्र का दूसरा भाग है। इस भाग का नाम नवीनवाचापत्र और मङ्गलसमाचार भी है क्योंकि उस में मुक्ति और पापमोचण की उस नवीन वाचा का जिस को परमेश्वर ने जगतत्राता के द्वारा मनुष्यजाति से बांधी है सम्पूर्णरूप से वह मङ्गलसमाचार लिखा है जो सारे जातिगणों के विश्वास के लिये प्रचारा जाता है॥

वेदविद्वान का बचन॥ आप जो कहते हैं कि यह तारणकर्त्ता जो यहूदिया देश और यहूदी कुल में प्रगट हुआ सो सारे जातिगणों के बिश्वास के लिये उस का समाचार प्रचारा जाता है इस पर मेरे मन में बड़ा सन्देह आता है क्योंकि प्रत्येक कुलों का व्यवहार है कि अपने २ तारणकर्त्ता और मुक्तिदाता का बखान करते हैं। परन्तु कोई नहीं कहता है कि हमारा तारणकर्त्ता सारे जातिगणों के बिश्वास के लिये है जब यह तारणकर्त्ता उसी कुल में प्रगट हुआ तो क्या केवल उस कुल की मुक्ति के लिये प्रगट नहीं हुआ होगा॥

सत्यार्थी का बचन॥ सच है पण्डित जी कि जितने और तारणकर्त्ता संसार में बखाने जाते हैं सो केवल एकही जाति के तारणकर्त्ता बखाने हैं और यह तो मनुष्य के स्वाभाविक गुण के अनुसार है कि अपनी ही जाति और कुल का पक्ष करते हैं। और इस के समान यहूदी कुल के मनुष्य भी जानते थे कि यह तारणकर्त्ता जब आवेगा तो केवल हमा-

रेही लिये होगा। फिर जब उसने आप कहा कि मैं सारे जातिगणों का तारणकर्त्ता हूं तो यहूदियों ने उस से अप्रसन्न होके उस को त्याग किया क्योंकि सारे जातिगणों की मुक्ति का उपाय रचना अथवा उसकी इच्छा भी करनी मनुष्य के मन में नहीं आती है केवल परमेश्वर से जो सारे जातिगणों का दयावान पिता है इस का बिचार हो सक्ता है। इस प्रकार से प्रत्येक जाति के जो तारणकर्त्ता बखाने जाते हैं सो केवल ख २ जाति के कल्पितमात्र देख पड़ते हैं और परमेश्वर के भेजे हुए नहीं ठहर सक्ते हैं। परन्तु जब यहूदियों ने आप इस तारणकर्त्ता से अप्रसन्न होके उसको अङ्गीकार न किया तो उसके वृत्तान्त की कल्पना उनके मन से क्योंकर हो सके। इसी बात से अनुमान सिद्ध होता है कि यह तारणकर्त्ता परमेश्वर का भेजा हुआ होगा और उसके सारे वृत्तान्त पर ध्यान करने से यह बात निश्चय होती है आप दो एक विषय का वर्णन सुनिये॥

इस सामर्थी मुक्तिदाता के आश्चर्य और फलदायक जन्म का जो मङ्गलसमाचार ख्रिष्टीय शास्त्र में लिखा है सो इस प्रकार का है। अर्थात उन दिनों में एक पवित्र कुमारी थी जिसका नाम मरियम था यह अनबियाही कुमारी यहूदिया देश में रहती थी। इतने में एक स्वर्गीय दूत परमेश्वर का पठाया हुआ अकस्मात उस कुमारी के निकट आ उस को यह आश्चर्य सन्देशा कहने लगा।

स्वर्गीय दूत का बचन॥ हे कन्या तुझको आशीर्वाद तेरे ऊपर बड़ा अनुग्रह हुआ क्योंकि परमेश्वर तेरा सहायक है और तू सारी स्त्रियों में धन्य है॥

सत्यार्थी का बचन॥ इतने बचन सुनते ही और उस बड़े तेजस्वी दूत को देख कुमारी निपट डर गई परन्तु दूत फिर कहने लगा॥

दूत का बचन॥ हे मरियम तू भय के मारे व्याकुल मत हो क्योंकि

तू ने परमेश्वर से बड़ा अनुग्रह पाया है। तू गर्भिणी होगी और एक पुत्र जनेगी और उस का नाम यिसू रक्खेगी॥

सत्यार्थी का वचन॥ जब मरियम ने दूत के मुख से ऐसा समाचार सुना तो अचम्भित हो उसने यह उत्तर दिया॥

मरियम का वचन॥ आप ने जो कहा है सो किस भांति से हो सकेगा क्योंकि पुरुष से मुझ को कभी कुछ सम्बन्ध नहीं हुआ॥

सत्यार्थी का बचन॥ कुमारी का यह सन्देहपूर्वक वचन सुनके उस तेजस्वी दूत ने यह प्रत्युत्तर दिया॥

दूत का बचन॥ परमेश्वर का पवित्र आत्मा तेरे ऊपर आवेगा और सर्वशक्तिमान की शक्ति तुझ पर छाया डालेगी इस कारण वह पवित्र बालक जो तुझसे उत्पन्न होगा परमेश्वर का पुत्र कहलावेगा॥

सत्यार्थी का बचन॥ उस भागवन्त कुमारी को यह समाचार जो मनुष्यजाति के लिये ऐसा कल्याणपूर्वक था सुनाके वह परमेश्वर का पठाया स्वर्गीय दूत स्वर्गारूढ़ हुआ। फिर जब जन्मे का दिन आ पहुंचा तो दूत के बचन के समान उस साधु आनन्दित कुमारी मरियम से एक पवित्र दैव्य पुत्र उत्पन्न हुआ और दूत की आज्ञानुसार उसकी माता ने उस का नाम यिसू रक्खा। इसके उपरान्त जब उसका धर्म पृथिवी पर प्रचलित होने लगा तब उसके शिष्यों ने उसको ख्रिष्ट नाम से भी कहा। इस प्रकार से ख्रिष्टीय धर्म का सामर्थी प्रचारकर्त्ता इन दो नामों के संयुक्त होने से श्री यिसू ख्रिष्ट प्रसिद्ध हुआ है॥

वेदविद्वान का बचन॥ आप कृपा करके बतलाइये कि इन दो नामों के रखने का कोई कारण था कि नहीं अथवा उन से कुछ अर्थ निकलता है॥

सत्यार्थी का बचन॥ पण्डितजी। यिसू नाम इबरानी अर्थात यहूदी भाषा का शब्द है और उसका अर्थ मुक्तिदाता है। जब स्वर्गीय दूत ने

आज्ञा सुनाई कि उस बालक का यिसू नाम रखना तो उसने इसका यह कारण बतलाया कि वह अपने बिश्वासियों को उनके पापों से बचावेगा यिसू नाम का कारण और अर्थ यही था। फिर ख्रिष्ट नाम यवनी भाषा का शब्द है यहूदी आचार्यों ने जगतत्राता के दर्शन की भविष्यद्वाणी करके कहा था कि वह मसीह कहलावेगा सो यहूदी भाषा में मसीह शब्द का अर्थ अभिषिक्त है अर्थात जो तेल डालने से किसी विशेष काम पर स्थापित होता है। फिर यवनी भाषा में अभिषिक्त अर्थ का बोधक शब्द ख्रिष्ट है इस कारण यवनी शिष्यों ने अपनी ही भाषा में मसीह नाम के बदले ख्रिष्ट नाम ठहराया। इस रीति से ये दोनों नाम अर्थात ईसा मसीह और यिसू ख्रिष्ट भी प्रचलित होते हैं और इन दोनों नामों का अर्थ एकही है अर्थात विशेष रूप से स्थापित मुक्तिदाता॥

वेदविद्वान का बचन॥ जिस का ऐसा आश्चर्यजनक जन्म था जैसे आप बतलाते हैं तो अवश्य उसके बालकपन और तरुणाई और सम्पूर्ण बय में अनगणित चमत्कार प्रकाशित भये होंगे। आप इस वृत्तान्त का तनिक वर्णन कीजिये॥

सत्यार्थी का बचन॥ सच है महाराज कि उसके सम्पूर्ण जीवन में अनोखे और आश्चर्य वृत्तान्त उपस्थित होते थे उसके जन्म का जो वर्णन मैं ने किया है सो उस वृत्तान्त से जो ख्रिष्टीय शास्त्र में लिखा है बहुत ही थोड़ा है। आप को मंगलसमाचार नामक पुस्तक ध्यान के साथ पढ़नी चाहिये तब उसका जितना वृत्तान्त प्रयोजक है आप को विदित होगा। परन्तु उस महात्मा के बालकपन और तरुणाई का वर्णन विस्तार के साथ नहीं लिखा है केवल इतना लिखा है कि जब वह बारह बरस का था तो परमेश्वर के उस प्रसिद्ध मन्दिर में जो यिरूशलीम नगर में बना था गया और उन पण्डितों से जो वहां बैठे थे यहूदी शास्त्र के विषय में सत्सङ्ग करने लगा और जितने मनुष्यों ने

उसके प्रश्नोत्तर सुने सो उसकी अति महान बुद्धि को देख अचम्भित हुए। फिर जब उसकी माता ने उस्से पूछा कि तू कहां था हम तुझे ढूंढते थे तो उसने उत्तर दिया कि मुझको अपने पिता के यहां रहना अवश्य है। और यह भी लिखा है कि वह बुद्धि और डील में परमेश्वर और मनुष्यों की प्रसन्नता में बढ़ता गया उसके बालकपन और तरुणाई का इतनाही वर्णन लिखा है॥

वेदविद्वान का बचन॥ हे पण्डित क्या कारण था कि उसकी इतनी अवस्था का ऐसा संक्षेप वर्णन लिखा है और उसका विस्तारपूर्वक वृत्तान्त उसके वय के किस बरस से आरम्भ होता है॥

सत्यार्थी का बचन॥ जब यिसू खिष्ट तीस बरस का होने लगा तब उसने उस महा कर्म का जिसके लिये भूमण्डल में आया था अर्थात मनुष्य जाति के उद्धारक महा कर्म का प्रकाशित रूप से आरम्भ किया और इस कारण उस समय से उसका वृत्तान्त अधिक विस्तार के साथ लिखा है। उस काल वह मुक्तिमार्ग की नई शिक्षा और धर्मोपदेश साधारण लोगों में प्रचारने लगा उस शिक्षा का तात्पर्य मैं पीछे कहूंगा। परन्तु केवल अपने बचन से नहीं बरन विशेष करके अपनी चाल से उसने सच्ची शुद्धता और निष्कपट भक्ति का डौल प्रकाशित किया। यद्यपि परमेश्वर का बलवन्त पुत्र और सर्वसामर्थी भी था तथापि उसने संसारिक विभव और सुख को त्यज एक दीन पुरुष के समान दरिद्रता का कष्ट सह लिया। परन्तु सब लोगों में अपनी दैव्य प्रभुता को सिद्ध करने के निमित्त उस सामर्थी यिसू खिष्ट ने नाना प्रकार के अनगणित चमत्कार और आश्चर्य कर्म दिखाये जिसतें सारे मनुष्य जानें कि मनुष्य जाति का मुक्तिदाता और जगत का त्राता यही है। अन्धों को उसने नेत्र दिये जिस्से विदित होवे कि आत्मिक दृष्टिदाता वही है। कोढ़ियों को उसने पावन किया जिसतें प्रगट हो कि पाप के कोढ़ से पावन करनेहारा

वही है। सारे रोगियों को उसने चंगा किया और उस रीति से मांसिक रोग का वैद्य वही है वरन मृतकों को भी उसने अपने वचनमात्र से जिलाया क्योंकि सच्चे आत्मिक अनन्त जीवन का स्वामी और दाता वही है और उसके जितने आश्चर्य कर्म थे सो सब के सब इस रीति से दयासंयुक्त और शिक्षापूर्वक थे। परन्तु इस सत्सङ्ग में मैं आप से इसका क्या वर्णन कर सक्ता हूं। आप इसका वृत्तान्त जो मंगलसमाचार पुस्तक में लिखा है देखिये॥

वेदविद्वान का वचन॥ ईश्वर की इच्छा हो तो अवश्य उस पुस्तक को मंगाके पढूंगा परन्तु आप कृपा करके इस समय उदाहरण की रीति उसके दो एक आश्चर्य कर्मों का वर्णन कुछ विस्तार के साथ कीजिये॥

सत्यार्थी का वचन॥ एक दिन ऐसा हुआ कि यिसू ने अपने शिष्यों को साथ लिये यिरूशलीम नगर के मार्ग पर चलता हुआ एक जन्म के अन्धे को देखा। उसके चंगे करने की इच्छा कर उस सामर्थ्यवान ने भूमि पर थूका और थूक से मिट्टी गूंधी और वह मिट्टी उस अन्धे की आंखों पर लगाके कहा कि जा सिलोहा के कुण्ड में अपनी आंख धो तब उस अन्धे ने उस कुण्ड में जाके स्नान किया और भली भांति देखते हुए आया। जब परोसियों ने देखा कि इसके नेत्र खुल गये हैं तो अचम्भित हो आपस में इस प्रकार का वचन कहने लगे क्या यह वह नहीं है जो आगे मार्ग पर बैठा भीख मांगता था। कितनों ने कहा कि यह वही है कितने बोले कि यह उसके सदृश है परन्तु उस ने आप कहा कि मैं वही हूं। इतने वचन सुनते ही उन्हों ने उस लब्धदृष्टि को कहा कि तेरी आंखें क्योंकर खुल गईं। उस ने उत्तर दिया कि यिसू नाम एक पुरुष ने मेरी आंखों पर मिट्टी लगाके मुझको कहा कि जा कुण्ड में अपनी आंख धो सो मैं कुण्ड में गया और स्नान करके

अपनी दृष्टि पाई तब लोग इस आश्चर्य्य की परीक्षा करने के निमित्त उस लब्धदृष्टि को यिरूशलीम के प्रधान पुरोहितों के पास जो यिसू के वैरी थे ले गये॥

वेदविद्वान का बचन॥ हे मित्र उस नगर के प्रधान पुरोहित किस कारण से यिसू के वैरी थे॥

सत्यार्थी का बचन॥ पण्डितजी। इस वैर के दो एक कारण थे कि ये पुरोहित यद्यपि अपने शास्त्र की ऊपरी धार्मिक रीतियों पर चलने में अत्यन्त चिन्तित थे तथापि वे बहुधा मन के अशुद्ध थे। उनकी अशुद्धता को देख उस शुद्ध जगतगुरु यिसू ने वारम्वार उसके कारण प्रकाशित रूप से उनको दोषित किया। फिर इस अशुद्धता के हेतु अपने भी शास्त्र के सत्य अभिप्राय को न जानके उन्हों ने उसके अर्थ में नाना प्रकार की कल्पनायुक्त और विरुद्ध बातों की मिलानी किई थी। ऐसी मिथ्या शिक्षा से अप्रसन्न हो यिसू उसको खण्डित करने में सदा यत्न करता था उस कारण इन पुरोहितों ने यिसू को ऐसा माना कि यह हमारे सनातन के धर्म्म को नाश करने चाहता है। फिर उनके शास्त्र में जगतत्राता की जो भविष्यद्वाणी लिखी थी उन्हों ने उसका अर्थ अशुद्ध रीति से समझके अपने मन में निश्चय आसरा धरा था कि यह दैव्य जगतत्राता जो आनेवाला है सो हमारे ही कुल की सांसारिक महिमा बढ़ाने को आवेगा। परन्तु यिसू यद्यपि दैव्य आश्चर्य्य शक्ति को प्रकाश करता था तथापि अपने कुल का पक्ष करके उसके लौकिक विभव को कभी नहीं बढ़ाता था। उस कारण प्रधान यहूदियों ने सांसारिक यश का मोह करके मूल धर्म्म की सत्य शिक्षा से निश्चिन्त होके कहा कि यह दीन यशहीन पुरुष हमारा तारणकर्त्ता नहीं है। ऐसे २ कारणों से ये प्रधान यहूदी यिसू के शत्रु हो उस की आश्चर्य्य शक्ति को त्याग करने चाहते थे॥

वेदविद्वान का बचन ॥ यदि ये प्रधान पुरोहित यिसू के ऐसे कठिन वैरी थे तो लोग उस लब्धदृष्टि को उनके पास किस लिये ले गये ॥

सत्यार्थी का बचन ॥ उसका कारण पण्डितजी कदाचित यह था कि उन पुरोहितों की एक सभा स्थापित थी जिस में ऐसे २ धार्मिक प्रकरणों की परीक्षा होती थी और साधारण लोग बहुधा उस सभा का भय मानते थे। श्री यिसू ने उस आश्चर्य कर्म को शनिवार पर किया था और वह दिन यहूदी लोगों के लिये पवित्र और विश्राम का दिन नियत हुआ था और उस दिन पर कोई सांसारिक कर्म करना उनको निषेध था। परन्तु इस आज्ञा में जो मूसा आचार्य के द्वारा स्पष्टरूप से इन को मिली थी उन अशुद्ध यहूदियों ने नाना प्रकार की अयोग्य मिलौनी किई थी। सो श्री यिसू ख्रिष्ट उनकी व्यर्थ भावनाओं पर ध्यान न कर अपने शुद्ध धार्मिक और प्राणोपकारक कर्मों को उस दिन पर भी किया करता था। फिर जब साधारण लोगों ने देखा कि यह निःसन्देह एक प्रकाशित आश्चर्य हुआ फिर ध्यान किया कि यह कर्म विश्राम के दिन पर उपस्थित हुआ तो दुबधे में पड़के उस लब्धदृष्टि को पुरोहितों की सभा में ले गये कि जिस्तें इस वृत्तान्त की परीक्षा भली भांति हो जावे ॥

वेदविद्वान का वचन ॥ इस दशा में उन पुरोहितों ने इस वृत्तान्त का कैसा विचार किया क्या उन्हों ने उस आश्चर्य का प्रत्यक्ष प्रमाण मान लिया अथवा उस मनुष्य के भ्रम वा छल को प्रगट किया ॥

सत्यार्थी का बचन ॥ मैं बतलाऊंगा पण्डितजी उनकी चाल से ऐसा देख पड़ता है कि सत्य के निर्णय करने की इच्छा उनके मन में न थी। उनकी अभिलाषा केवल यह देख पड़ती है कि यिसू की आश्चर्य शक्ति और शिक्षा को त्यागकर अपने ही मत का और उसके संयुक्त अपने ही पराक्रम और सन्मान का प्रतिपालन करें। जब वह लब्धदृष्टि उनके

पास पहुंचाया गया तो उन्हों ने उस्से पूछा कि तेरी आखें किस रीति से खुल गईं तब उसने आगे के तुल्य कहा कि यिसू ने मेरी आंखों पर मिट्टी लगाई और मैं ने उसकी आज्ञानुसार आंख धोके दृष्टि पाई। इतने बचन सुनतेही प्रधान यहूदियों ने कहा कि यह पुरुष अर्थात यिसू परमेश्वर की ओर से नहीं क्योंकि यह विश्राम का दिन नहीं मानता है। कदाचित ऐसा कहने में उनकी यह इच्छा थी कि इस रीति से हम इस चर्चा को सर्वत्र बन्द करेंगे। परन्तु कितने यह समझके कि इस रीति से बन्द नहीं होगी कहने लगे कि कोई छली मनुष्य ऐसा आश्चर्य्य क्योंकर कर सके इस प्रकार से उन में विभाग पड़ गया॥

वेदविद्वान का बचन॥ फिर इस विवाद का निर्णय किस प्रकार से हुआ॥

सत्यार्थी का बचन॥ जब प्रधान पुरोहितों ने देखा कि इस रीति से यह बात बन्द नहीं होती है तो उन्हों ने एक और उपाय निकाला जान्ना चाहिये कि पहिले से उन्हों ने ठहराया था कि जो कोई यिसू को परमेश्वर का भेजा हुआ कहे हम उसको धर्म की मण्डली अर्थात जाति की पंक्ति से बाहर निकालेंगे। अब देखा चाहिये कि यह लब्धदृष्टि मनुष्य यिसू को ऐसा कहेगा अथवा डर के मारे कुछ और कहेगा सो उन्हों ने उस से पूछा॥

प्रधान पुरोहितों का बचन॥ जब तुम कहते हो कि इस पुरुष ने हम को दृष्टि दिई है तो तुम उसके विषय में क्या कहते हो॥

सत्यार्थी का बचन॥ इतने बचन सुनते ही उस लब्धदृष्टि मनुष्य ने स्पष्टरूप से कहा कि निःसन्देह वह परमेश्वर का भेजा हुआ है। जब प्रधानों ने देखा कि इस रीति से भी कुछ बन नहीं पड़ता है तो उन्हों ने कुछ और भी युक्ति किई। कदाचित इस मनुष्य के बचन पर अर्थात

कि मैं जन्म का अन्धा था सन्देह डाल सकेंगे तो भला होगा तब उन्हों ने उसके माता पिता को बुलाके उन से यह प्रश्न किया॥

प्रधान यहूदियों का वचन॥ क्या यह तुम्हारा पुत्र है जिसको तुम कहते हो कि जन्म का अन्धा था तो इस ने अपनी दृष्टि क्योंकर पाई है॥

सत्यार्थी का वचन॥ उस मनुष्य के माता पिता प्रधान यहूदियों को यिसू के बैरी जानके उन के क्रोध से डरते थे इस कारण उन्हों ने बड़ी सावधानी से यों उत्तर दिया॥

माता पिता का वचन॥ हम जानते हैं कि यह हमारा पुत्र है और यह अन्धा उत्पन्न हुआ था परन्तु यह अब किस रीति से देखता है हम नहीं जानते हैं अथवा इसकी आंखें किस ने खोलीं हम नहीं जानते हैं। यह तरुण है इसी से पूछ लो यह अपनी आप कहेगा॥

सत्यार्थी का वचन॥ जब प्रधान यहूदियों ने देखा कि हमारे अभिप्राय समान इस युक्ति से भी कुछ नहीं बनता है तो उन्हों ने उस मनुष्य को जो अन्धा था फिर बुलाकर कहा कि परमेश्वर की स्तुति कर हम जानते हैं कि यह मनुष्य अर्थात यिसू पापी है इति। ऐसे कहने में उनका कुछ सीधा अभिप्राय देख नहीं पड़ता है क्योंकि सत्य बात के दबाये रखने से परमेश्वर की स्तुति कभी नहीं हो सकी है और सचमुच वे परमेश्वर की स्तुति नहीं चाहते थे नहीं तो उसकी आश्चर्य शक्ति का यह प्रत्यक्ष प्रमाण जो उनके सन्मुख था वे अवश्य अंगीकार करते। उनका अभिप्राय था कि धर्म के मिष से और अपने पराक्रम के बल से उस दीन पुरुष को डराके उससे दूसरी प्रकार की साक्षी पावें। परन्तु वह जो अन्धा था यद्यपि दीन तो था तथापि सत्पुरुष हो और ईश्वर का अनुग्रह पाय बेधड़क बोला॥

लब्धदृष्टि का बचन॥ यदि यह मनुष्य पापी हो मैं नहीं जानता केवल एक बात मैं जानता हूं कि मैं अन्धा था अब देखता हूं

सत्यार्थी का बचन॥ प्रधान यहूदी उसका यह भोलापन देख अपने अभिप्राय प्राप्त करने से निरास न हुए उन्हों ने उसको प्रश्नों के एक जाल में फंसाने की युक्ति किई और उस्से फिर पूछा कि उसने तुझे क्या किया उसने किस रीति से तेरी आंखें खोलीं इति। उनकी ऐसी चेष्टा देख कदाचित उस दीन मनुष्य के मन में कुछ सन्देह आया कि ये लोग क्या किया चाहते हैं सो उनके घात से चौकस हो साहसपूर्वक रूप से उसने उत्तर दिया॥

लब्धदृष्टि का बचन॥ मैं तुमसे अभी कह चुका और तुमने न सुना किस लिये तुम फिर सुना चाहते हो क्या तुम भी उसके शिष्य होने चाहते हो॥

सत्यार्थी का बचन॥ उस दीन पुरुष के ऐसे साहस पूर्वक बचन से प्रधान यहूदी अति क्रोधित हुए क्योंकि उनको ऐसा देख पड़ा कि यदि साधारण लोग यिसू के आश्चर्य कर्म और शिक्षा के कारण इस रीति पर हमारी आज्ञा के निराधीन हो आगे के तुल्य हमारा आदर न करें तो बड़ी आपत्ति होगी। परन्तु वे उसके बचन को किसी रीति से झुठला न सके इस कारण वे उसे दुर्बचन कहके बोले कि तू उसका शिष्य है हम मूसा के शिष्य हैं हम जानते हैं कि परमेश्वर ने मूसा से बार्त्ता किई पर यह जन जो है हम नहीं जानते हैं कि कहां का है इति। ऐसे कहने में प्रधान पुरोहितों ने बड़ी भूल किई और अपने को डाह और द्वेष से अन्धा प्रगट किया क्योंकि धार्मिक सभा के अधिकारी हो यिसू कहां का था इस बात को जानना और निर्णय करना उनका विशेष काम था। और इस विषय में उस लब्धदृष्टि के उत्तर से प्रत्यक्ष देख पड़ता है कि सत्य के निर्णय करने में एक सीधा अन्तःकरण परमपदार्थ

है क्योंकि उन प्रधानों की यह बड़ी भूल पकड़के उस भोले मनुष्य ने अति सीधाई और दृढ़ता से उनको यह ठीक उत्तर दिया॥

लब्धदृष्टि का बचन॥ यह क्या ही आश्चर्य है कि तुम नहीं जानते हो कि वह कहां का है और उसने मेरी आंखें खोली हैं। हम तो जानते हैं कि परमेश्वर पापियों की नहीं सुनता है परन्तु यदि कोई परमेश्वर का भक्त हो और उसकी इच्छा पर चलता हो वह उसकी सुनता है। जगत के आरम्भ से कभी सुन्ने में न आया था कि किसी ने किसी की आखें जो अन्धा उत्पन्न हुआ खोली होये यदि यह मनुष्य परमेश्वर की ओर से न होता तो कुछ न कर सक्ता॥

सत्यार्थी का बचन॥ जब अभिमानी प्रधान पुरोहितों ने उस दीन अज्ञान मनुष्य का ऐसा अनोखा भोलापन और साहस देखा और जान भी लिया कि इसका बचन हम झुठला नहीं सक्ते हैं तो वे क्रोध से भर गये और उसकी निन्दा करके बोले कि तू तो सर्वथा पापों में उत्पन्न हुआ और क्या तू हमें सिखलाता है। यह कहके उन्हों ने उसको धर्म की मण्डली से बाहर निकाल दिया। इस वृत्तान्त का शेष बर्णन यूहन्ना रचित मंगलसमाचार पुस्तक के नवें पर्ब्ब में लिखा है॥

अब पण्डितजी इस वृत्तान्त पर ध्यान करने से प्रगट होता है कि ये प्रधान पुरोहित यिसू ख्रिष्ट के कैसे कठिन बैरी थे और उस्से विरोध करने में उनकी कैसी सामर्थ्य और कैसा उत्साह था। फिर भी यिसू ने बहुधा उनके देखते ही अपने आश्चर्य कर्म दिखाये यदि वे सचमुच आश्चर्य न थे तो क्या ये बैरी उसका छल प्रगट न करते। परन्तु वे यद्यपि ऐसा करना चाहते थे तथापि उसके आश्चर्यों की सत्यता झुठला नहीं सक्ते थे॥

वेदविद्वान का बचन॥ एक सन्देह पण्डितजी मेरे मन में आता है

अर्थात कि यदि यिसू के बैरी उसकी आश्चर्य्य शक्ति का त्याग नहीं कर सके थे तो किस कारण से उसके शिष्य नहीं हो गये॥

सत्यार्थी का बचन॥ हे महाराज बहुतेरे मनुष्य संसार में देख पड़ते हैं कि जिनका विवेक पक्ष के मारे बिगड़ जाता है। अर्थात किसी अयोग्य पक्ष को ग्रहण कर और निर्मल सत्य के अभिलाषी न हो वे सत्य और मिथ्या का विवेक शुद्ध रीति से नहीं कर सके हैं। क्योंकि जो पक्ष उनको भावता है वे बड़े आनन्द से उसी को सिद्ध और प्रमाणिक जानते हैं परन्तु जो पक्ष उनको नहीं भावता है वे उसके प्रमाणों के बिना ध्यान किये उसका त्याग करते हैं। उस दीन यिसू को ग्रहण करना कि यह हमारा महानुभाव मुक्तिदाता है जिसकी भविष्यद्वाणी हमारे शास्त्र में लिखी है उन यहूदियों के लिये एक अति अग्राह्य बात देख पड़ती थी। इस कारण यद्यपि वे उसकी आश्चर्य्य शक्ति का त्याग नहीं कर सके थे तथापि उसको ईश्वर के पठाये हुए के समान ग्रहण करने पर प्रसन्न न थे॥

वेदविद्वान का बचन॥ जब कि वे उसकी आश्चर्य्य शक्ति का त्याग नहीं कर सके और फिर भी उसकी शिक्षा का ग्रहण नहीं करते थे तो उन्हों ने उसके कर्मों का कैसा बर्णन किया॥

सत्यार्थी का बचन॥ आपके प्रश्न के उत्तर में एक दूसरे आश्चर्य्य कर्म का बर्णन करूंगा सुनिये॥

एक दिन ऐसा हुआ कि लोग किसी कुभागी को जिस पर एक पिशाच चढ़ा था यिसू के पास लाये यिसू ने अपनी आज्ञा से पिशाच को निकालके उस कुभागी को चंगा किया। यह आश्चर्य्य देख साधारण लोग निरपक्ष हो कहने लगे कि यह बड़ा पराक्रमी है क्योंकि पिशाच भी इसकी आज्ञा मानते हैं। परन्तु कितने पण्डितों ने कहा कि पिशाचों के स्वामी दुष्टात्मा अर्थात शैतान की सहायता पाके यह पिशाचों को निकालता है।

इन टेढ़े मन के पण्डितों की यह भावना जानके यिशू ने उसको इस रीति से खंडन किया ॥

श्री यिशू ख्रिष्ट का वचन ॥ जो २ राज अपने विरुद्ध दो भाग होवे उजाड़ होता है और जो २ नगर अथवा घर अपने बिरुद्ध दो भाग होवे स्थिर न रहेगा। और यदि शैतान शैतान को दूर करे तो वह अपने विरोध में विभाग हुआ फिर उसका राज कैसे स्थिर रहेगा ॥

वेदविद्वान का वचन ॥ हे पण्डित ये पिशाच किस प्रकार के जीव थे और उनका स्वामी कौन और उसका राज कैसा था और यिशू के इन वचनों का जिनको आप ने अभी कहा है क्या अभिप्राय था। आप कृपा करके इन बातों का वर्णन कीजिये जिस्से मेरे मन का सन्देह दूर हो ॥

सत्यार्थी का वचन ॥ पण्डितजी मैं इन विषयों का वर्णन ख्रिष्टीय शास्त्र के अनुसार करूंगा। सारी सृष्टि का महाराजा परमेश्वर है क्योंकि उसका राज सम्पूर्ण त्रिलोक के ऊपर प्रबल है। अब राज शब्द का अर्थ उस दशा से संबन्धी है जिस में राजा की आज्ञा चलती है। इसके अनुसार परमेश्वर की आज्ञा सम्पूर्ण त्रिलोक में चलती है क्योंकि वही अकेला स्वाधीन और सारी सृष्टि उसके आधीन है। परन्तु उसने प्रसन्न होके दो प्रकार की सृष्टि उत्पन्न किई है एक जिसका स्वभाव इच्छा रहित है और एक जो इच्छारूपी है। सो इच्छा रहित सृष्टि पर परमेश्वर की आज्ञा बलात्कार से चलती है अर्थात ईश्वर की आज्ञा उलंघन करनी उसकी सामर्थ नहीं इस कारण उसको न पाप न पुण्य गिना जाता है। परन्तु इच्छारूपी सृष्टि पर ईश्वर की आज्ञा बलात्कार से नहीं बरन स्वतन्त्रता और निर्बन्धता की रीति चलती है अर्थात ईश्वर की आज्ञा पालन करनी अथवा उलंघन करनी उस सृष्टि की इच्छा के आधीन है

इस कारण उसको पाप और पुण्य गिना जाता है। क्या आप मेरा अभिप्राय भली भांति समझ लेते हैं॥

वेदविद्वान का बचन॥ हां मैं जानता हूं कि जो कोई मनुष्य किसी का घर बेकारण फूंक देवे तो कोई नहीं कहेगा कि आग को पाप लगता है परन्तु उसी मनुष्य पापी को कहेंगे क्योंकि वह उस कुकर्म को अपनी इच्छा से करता है॥

सत्यार्थी का बचन॥ आप का दृष्टान्त ठीक है क्योंकि आग तो अपनी इच्छा से नहीं वरन आवश्यक्ता से घर को जलाती है परन्तु फूंकनेहारा आवश्यक्ता से नहीं केवल अपनी इच्छा से घर में आग लगाता है। अब ख्रिष्टीय शास्त्र से समाचार मिलता है कि परमेश्वर ने त्रिलोक के अपने बड़े राज में नाना प्रकार की इच्छारूपी सृष्टि को उत्पन्न किया है। इन में से कितने जो मनुष्यजाति से उत्तम और श्रेष्ठ हैं दूत कहलाते हैं वे सारे दूतगण अपनी उत्पत्ति के समय में पवित्र और धर्ममय थे। इसके पीछे कितने दूत अपनी इच्छारूपी स्वतन्त्रता को अनुचित रीति पर चलाके पाप में पतित हुए और परमेश्वर के बैरी बने। इन का प्रधान और स्वामी शैतान कहलाता है और ख्रिष्टीय शास्त्र से ज्ञान होता है कि वह एक अति बलवन्त दुष्टात्मा है। उसी के बहकाने से मनुष्य जाति के आदि माता पिता पाप में पतित हुए और उस काल से वह और उसके संबन्धी दुष्टात्मा जो पिशाच कहलाते हैं मनुष्य जाति को सर्वथा भ्रष्ट करने में तत्पर रहते हैं। उनकी कितनी सामर्थ है इस बात का सम्पूर्ण वर्णन नहीं मिलता है परन्तु जितनी हो परमेश्वर से उस पर एक सीमा बांधी है और निश्चय है कि वे किसी मनुष्य को उसकी प्रसन्नता के बिना पाप में नहीं फंसा सके हैं। परन्तु जब कि मनुष्य आप पापमय हो गये हैं तो वे बहुधा दुष्टात्मा के आधीन होने पर प्रसन्न रहते हैं। इस रीति से मनुष्य जाति की परीक्षा के लिये परमेश्वर

ने शैतान को अपना एक राज जो परमेश्वर के धर्मरूपी राज के विरुद्ध है संसार में मनुष्यों के बीच स्थापन करने दिया है। और इस राज को अधिक बल देने के निमित्त शैतान ने नाना प्रकार के मिथ्या धर्म आदि दुष्टताओं को प्रचलित कराया है। अब आप को स्पष्ट ज्ञान होगा कि शैतान का राज इन वचनों से यिसू ख्रिष्ट का क्या अभिप्राय था॥

वेदविद्वान का वचन॥ आप का वर्णन तो कुछ मेरी समझ में आता है परन्तु जब यिसू ख्रिष्ट ने कहा कि शैतान शैतान को दूर करके अपने विरोध में विभाग हुआ तो इस में उसका क्या अभिप्राय था। क्या शैतान ऐसा भी छल करके एक मिथ्या धर्म को स्थापन नहीं कर सक्ता है॥

सत्यार्थी का वचन॥ निश्चय है पण्डितजी कि परमेश्वर शैतान को एक मिथ्या धर्म स्थापन करने के निमित्त कोई सत्य आश्चर्य करने नहीं देगा। और मिथ्या धर्म के स्थापन में जो पहिली दृष्टि से सत्य आश्चर्य के समान देख पड़ते हैं सो परीक्षित होने से सत्य नहीं ठहरते हैं। अथवा यद्यपि कोई मनुष्य अज्ञानता के कारण ऐसे कहे हुए आश्चर्यों की भली भांति परीक्षा न कर सके तथापि प्रत्येक धर्म की शिक्षा कि सच्ची शुद्धता के अनुकूल है कि नहीं सब कोई जान सक्ता है और परमेश्वर सारे धर्मी सत्यार्थी मनुष्यों की अगुवाई अवश्य करेगा। परन्तु यिसू ख्रिष्ट के इन वचनों का विशेष अभिप्राय इस प्रकार का था कि मानो वह यों कहता है अर्थात यह बात प्रत्यक्ष है कि मैं परमेश्वर का धर्मरूपी राज मनुष्यों के बीच दोबारा स्थापन करने को आया हूं और मेरी सारी शिक्षा इसके अनुसार है। अब परमेश्वर का राज शैतान के राज के ठीक विरुद्ध है सो यदि शैतान मेरे द्वारा शैतान को दूर करके मेरी शिक्षा को स्थापन करता तो वह अपने विरुद्ध करता और इस

दशा में उसका राज कैसे स्थिर रहता इति। इसके अनुसार यिसू ने बार २ साधारण लोगों को उपदेश किया कि पाप से पछतावा करो क्योंकि परमेश्वर का राज समीप है। और उस राज को स्वर्ग का राज और धर्म का राज और मेरा राज भी कहके उसका नाना प्रकार का वर्णन किया और कहा कि मेरा राज संसारिक और बलात्कारिक नहीं वरन आत्मिक है और मनुष्य अपनी इच्छारूपी स्वतन्त्रता के समान परमेश्वर के अनुग्रह से उसमें प्रवेश करते हैं॥

वेदविद्वान का बचन॥ आप के वर्णन से यिसू के इन बचनों का अभिप्राय अब भली भांति मेरी समझ में आता और मैं बड़े आनन्द से ग्रहण करता हूं कि इस विषय में आपका वर्णन बुद्धि के अनुसार है। यदि यिषू ख्रिष्ट की सारी शिक्षा ऐसी धर्ममय और शुद्धाभिप्राय की थी जैसा आप कहते हैं तो उसके स्थापन में शैतान का कोई आश्चर्य करना अति असम्भव देख पड़ता है। और यदि यिसू ने सचमुच ऐसे २ आश्चर्य जैसा आप ने वर्णन किया हैं दिखाये तो निःसन्देह शैतान की सहायता के विना केवल परमेश्वर की शक्ति से उसने किये होंगे और ऐसे आश्चर्य का शास्त्र निश्चय देव्य होगा। परन्तु अब यिसू का शेष वृत्तान्त जितना कहना है आप कृपा करके संक्षेप कहिये॥

सत्यार्थी का बचन॥ महाराज ऐसे २ आश्चर्य कर्म प्रतिदिन प्रगट कर और धर्म का सत्य और मुक्तिदायक मार्ग बतला वह दयावान जगद्गुरु यिसू तीन बरस लों अपने देश में कुशल देता हुआ घूमता फिरा। उसके दयापूर्वक और शिक्षासंयुक्त आश्चर्य कर्म इतने थे कि उनके सम्पूर्ण वर्णन के लिये बहुतेरे बड़े २ ग्रन्थों में भी समाई न होती मंगलसमाचार पुस्तक में उनका जो वर्णन लिखा है यद्यपि अति आश्चर्यजनक तो है तथापि वस्तुतः संक्षेप वर्णन है। क्योंकि बार २ ऐसा लिखा है कि यिसू ने किसी नगर में आके वहां के सारे रोगियों को चंगा किया

अथवा उसने बड़ी भीड़ों को उनके समस्त रोगों से चंगा किया इत्यादि ऐसे स्थलों को छोड़ पैंतीस एक आश्चर्य कर्मों का वर्णन कुछ विस्तार के साथ लिखा है। और ये सबके सब एक ही प्रकार के थे अर्थात दयासंयुक्त और शिक्षापूर्वक थे और लंगड़े अन्धे लूले गूंगे बहिरे कोढ़ी अर्द्धांगी जो ही हो वह उन सभों को वचनमात्र से चंगा किया करता था। पांच रोटियों से उसने पांच सहस्र मनुष्यों को खिलाके तृप्त किया आंधियों को उसने शान्ति किया मृतकों को उसने जिलाया। निदान उसने सर्व प्रकार से प्रगट किया कि परमेश्वर के सारे गुणों की सम्पूर्ण शक्ति मेरे पास है और मैं पूर्ण ब्रह्म का अवतार हूं॥

वेदविद्वान का वचन॥ इस दशा में मुझको बड़ा आश्चर्य यह देख पड़ता है कि सारे मनुष्य जो उसके कर्मों के साक्षी थे तुरन्त उसके शिष्य नहीं हुए॥

सत्यार्थी का वचन॥ पण्डित इसका कारण मैं ने पहिले तनिक वर्णन किया सच यह है कि शुद्ध और पवित्र परमेश्वर को ग्रहण करने के लिये मनकी कुछ शुद्धता अवश्य है। परन्तु बहुतेरे मनुष्य उसके आश्चर्य कर्म और दैव्य उपदेश के कारण उस पर विश्वास लाके उसके शिष्य हुए और साधारण लोग बहुधा उसका बड़ा आदर करते थे। निदान तीन बरस के बीच उसका यश सम्पूर्ण देश में फैल गया यह दशा देख प्रधान यहूदी डाह से भर गये और उसके घात करने की युक्ति करने लगे॥

वेदविद्वान का वचन॥ ऐसे सामर्थवान के घात करने का आसरा क्या उनके मन में हो सक्ता था॥

सत्यार्थी का वचन॥ हे मित्र उसी प्रकार का आसरा उनके मन में हुआ होगा जैसे बहुतेरे मनुष्यों के मन में जब वे परमेश्वर की इच्छा और सत्य बचन के प्रत्यक्ष लक्षणों से निश्चिन्त रहते हैं इन दिनों भी होता है प्रत्येक मनुष्य जो पाप से पछतावा करके सत्य मुक्ति का

खोज नहीं करता है सो अपने मन में वैसाही वृथा आसरा रखता है। परन्तु एक और बात यह है कि जब यिसू ने मनुष्य रूप धारण कर भूमण्डल में अवतार लिया तो उसने मनुष्य जाति सम्बन्धी सारी दशा को ग्रहण किया। इसके अनुसार उसने एक निर्दोषी मनुष्य के समान धर्म की सारी आज्ञाओं और कर्त्तव्य कर्मों का पालन किया। अंधेर का प्रतियोग बलात्कार से करने के बदले उसने धीरजवान होके सब के सब सह लिया इस कारण वह अपने शत्रुओं की दृष्टि में एक अति दीन और निर्बल मनुष्य देख पड़ा। फिर जब वे उसके कोमल तेज के कारण डाह से भर जाके अत्यन्त क्रोधित हुए तो उन घातकों ने उस पवित्र धीरजवान को पियादों के हाथ से पकड़वायके अपने विचारस्थान में खिंचवाया। उन विचारकर्त्ताओं ने जिन के मन में न्याय का विवेक नष्ट हो गया था उस पर कितने मिथ्या दोष लगाके उसको जो जगत के दण्डारहित का कारण था दंड के योग्य ठहराया। उन कठोर मन के मनुष्यों ने उसकी जो परम सन्मान के योग्य था नाना प्रकार की अपनिन्दा करके अन्त को मनुष्यजाति के उस श्रेष्ठ कुशलदाता को जो भयानक दुःखों से दुःखी था घात किया। परमेश्वर का बलवन्त पुत्र जो सर्वसामर्थी था अपने निर्बल शत्रुओं को दबाके अपने को उनके अन्धेर से छुड़ा तो सक्ता था परन्तु अति धीरजवान हो और उन पर दया कर उसने उनका अन्धेर सह लेने से अपना अत्यन्त बल प्रगट किया॥

वेदविद्वान का वचन॥ यदि वह सचमुच परमेश्वर का पुत्र था तो परमेश्वर ने उसको ऐसे भयानक अन्धेर और कठिन दुःख से क्यों नहीं बचाया॥

सत्यार्थी का वचन॥ पण्डितजी जो मैं इसका कारण सम्पूर्ण रूप से बतलाता तो ख्रिष्टीय मत का मूल अर्थ बतलाता इस विषय का उचित वर्णन मैं पीछे करूंगा। परन्तु इस समय संक्षेप से इतना कहता हूं कि

यिसू के पिता परमात्मा की यह इच्छा थी कि मेरा सामर्थी पुत्र एक शुद्धिकारक बलिदान की रीति अपने को अर्प्पण करके पाप की भ्रष्ट किई हुई मनुष्यजाति को नरक से उद्धार करे। इसी कारण से धीरजवान यिसू ने अपने अशक्ति शत्रुओं के बल का प्रतियोग्य न करके और अपराधी के समान दुष्टतर मनुष्यों के हाथ से बलिदान होके जगत के पाप का दण्ड भोग किया। जब जगत के सृष्टिकर्त्ता का मनुष्यरूपी प्राण निकल गया तो एक भयानक अन्धकार भूमि पर फैल गया और धरती उस रीति से कांपने लगी कि मानो इस अकथ अन्धेर से थरथराती है और उस भूकंप के कारण आस पास के पर्बत फट गये। श्री यिसू ख्रिष्ट की मृत्यु के समय ये अचम्भे वृत्तान्त उपस्थित हुए॥

वेदविद्वान का बचन॥ निस्सन्देह पण्डितजी आप का बर्णन बड़े आश्चर्य्य का है ऐसा वृत्तान्त मैं ने आगे कभी नहीं सुना था। परन्तु एक सन्देह मेरे मन में आता है अर्थात यदि यिसू ख्रिष्ट अन्य मनुष्यों के समान मर भी गया और अब लों एक मृतक ही है तो सारे जातिगणों का त्राणकर्त्ता किस रीति से हो सक्ता है॥

सत्यार्थी का बचन॥ यद्यपि यिसू ख्रिष्ट इस रीति से जो मैं ने कही मर तो गया तथापि वह अब लों मृतक नहीं है बरन जीता है क्योंकि मृत्यु की सामर्थ न थी कि जीवन के स्वामी और दाता को अपने बश में रख छोड़े। वह सत्य मृत्युंजय अपनी भविष्यद्वाणी के समान अकस्मात तीसरे दिन समाधि में से जीता निकला और अपने शिष्यों को बार २ दर्शन देके और नाना प्रकार का उपदेश करके उस ने उन को सारे जातिगणों में अपने धर्म का प्रचार करने के निमित्त मंगलोपदेशक ठहराया॥

वेदविद्वान का बचन॥ तो क्या यिसू ख्रिष्ट अब लों भी भूमण्डल में जीता है॥

सत्यार्थी का बचन॥ हां पण्डितजी आत्मिक रीति से वह जीता और जगत में उपस्थित भी है परन्तु शारीरिक रीति से नहीं। क्योंकि पृथिवी पर चालीसदिन लों रहके और अपने शिष्यों को वार २ दर्शन देके अन्त को वह अमृतदाता यिशू अपने शिष्यों के देखते ही पृथिवी को छोड़ स्वर्गारूढ़ हुआ। अब उस मुक्तिदाता पर विश्वास लाने से और उसकी सेवा में तत्पर होने से और पाप का त्याग करने से मनुष्य पाप के बन्धन से छुटकारा पाके अन्त को सम्पूर्ण और अनन्त परमगत को प्राप्त होते हैं। सो पण्डितजी खिष्टीय शास्त्र के वृत्तान्त का सार इसी समाचार में संयुक्त होता है॥

वेदविद्वान का बचन॥ हे मेरे मित्र यह समाचार जो सत्य और प्रमाणिक हो तो निःसन्देह बड़ा मंगलसमाचार होता है परन्तु इस के सिद्ध करने के लिये दृढ़ प्रमाण अवश्य चाहिये। आप की इच्छा हो तो किसी दूसरे समय पर इस के प्रमाणों के विषय में हम फिर सत्सङ्ग करेंगे और इतने में मैं आप के वर्णन पर भली भांति ध्यान करूंगा॥

ग्रन्थकर्त्ता का बचन॥ इस पर हम तीनों मनुष्य परस्पर प्रणाम कर अपने २ स्थानों को प्रस्थित हुए॥

मतपरीक्षा के द्वितीयखण्ड का पहिला सत्सङ्ग

समाप्त हुआ॥



दूसरा सत्सङ्ग।

पहिले साक्षियों के समकालिक होने की चर्चा।

ग्रन्थकर्त्ता का वचन॥ दूसरे दिन उसी स्थान पर वेदविद्वान और सत्यार्थी की भेंट हुई और मैं भी आज्ञानुसार उपस्थित हो उनका संवाद सुन्ने लगा। सो अब लिखता हूं॥

वेदविद्वान का वचन॥ श्री यिसू ख्रिष्ट के आश्चर्य वृत्तान्त का जो वर्णन आप ने पहिले सत्सङ्ग में किया उस पर मैं ने बहुत ध्यान किया है पण्डितजी मैं इस बात को नहीं मुकरता हूं कि वह वृत्तान्त अत्यन्त आश्चर्य का है। क्योंकि ऐसे दयासंयुक्त और शिक्षापूर्वक चमत्कार प्रगट करना ऐसा उपदेश देना ऐसी चाल चलना ऐसी मृत्यु से मरना ऐसे पुनरुत्थान से जी उठना और अन्त को मनुष्यों के देखते ही स्वर्गारूढ़ होना निःसन्देह जगत के व्यवहार से बिपरीत है। उस पर ध्यान करते २ मैं निपट अचम्भित और विस्मित भी हो जाता हूं कि ऐसा अनोखा वृत्तान्त क्योंकर सत्य हो सक्ता है अथवा यद्यपि सत्य भी हो तथापि इतने काल के पीछे उसका निर्णय क्योंकर होवे। आप ने एक पूर्वी सत्सङ्ग में प्रमाणिक वृत्तान्त के लक्षणों की कुछ चर्चा किई सो अब मैं आप से पूछता हूं कि प्रमाणिक होने के येही लक्षण यिसू ख्रिष्ट के वृत्तान्त में देख पड़ते हैं कि नहीं॥

सत्यार्थी का बचन॥ पण्डितजी ख्रिष्टीय शास्त्र का वृत्तान्त सिद्ध करने में साधारण रूप से दो प्रकार के प्रमाण बतलाये जाते हैं। पहिले बुद्धिरूपी प्रमाण दूसरे अन्तःकरणरूपी प्रमाण। क्योंकि जिस प्रकार से मनुष्य अपनी बुद्धि के द्वारा सत्य और मिथ्या का विवेक और उनके प्रमाणों की परीक्षा करता है उसी प्रकार से अपने अन्तःकरण के द्वारा भले और बुरे का विवेक करता और उनके गुणों और लक्षणों को

जांच लेता है। इन दो प्रकारों में से अन्तःकरणरूपी प्रमाण अधिक बल रखते हैं क्योंकि वे प्रत्यक्ष और साक्षात हैं। परन्तु किसी पदार्थ को स्पष्ट निश्चय रूप से जान्ने के लिये कि भला है वा बुरा है उस पदार्थ को उस की जाति के अनुसार अभ्यास करना अवश्य है। जैसा भला भोजन उसी समय सम्पूर्ण निश्चय के सङ्ग जाना जाता है कि भला है जब कोई उसको भोग करके उसकी भलाई के गुण अपने शरीर में जान लेवे। इसके अनुसार ख्रिष्टीय मत के स्थापन में अन्तःकरणरूपी प्रमाणों का सम्पूर्ण बल केवल उस मत के सच्चे शिष्य जान सक्ते हैं। परन्तु भले पदार्थ का गुण बिना भोग किये भी स्पर्श अथवा दृष्टि अथवा घ्राण से किंवा बिश्वासयोग्य साक्षी के बचन से अनुमान करके कुछ थोड़ा सा ज्ञात हो सक्ता है। ऐसे प्रमाण बिशेष करके पदार्थ के स्वाभाविक गुणों के संबन्ध में होते हैं परन्तु बुद्धिरूपी प्रमाण पदार्थ के स्वाभाविक गुणों को छोड़ उसके अन्य वृत्तान्तों के संबन्धी हैं। और इस संबन्ध में वही विषय है जिस पर आप ने अभी प्रश्न किया है इस कारण आप की इच्छा हो तो इसी क्रम के अनुसार हम ख्रिष्टीय शास्त्र के प्रमाणों की चर्चा करेंगे॥

वेदविद्वान का बचन॥ इस प्रकरण में आप का बिचार ठीक है क्योंकि जब लों मैं ख्रिष्टीय शास्त्र को ग्रहण कर और यिसू ख्रिष्ट पर बिश्वास ला उसका शिष्य न होऊं तो अपने मन में उसके मत के गुण सम्पूर्ण रूप से क्योंकर जान सकूं। इस कारण पहिले कुछ ऐसा बुद्धिरूपी प्रमाण अवश्य चाहिये जिस्से सत्यार्थी मनुष्य को निश्चय होवे कि यिसू का जो वृत्तान्त ख्रिष्टीय शास्त्र में लिखा है सो सत्य और प्रामाणिक है॥

सत्यार्थी का बचन॥ पण्डितजी प्रामाणिक वृत्तान्त की चर्चा में मैं ने बर्णन किया कि उसके साक्षियों का समर्थ और बिश्वस्त होना अवश्य है जिससे वे आप धोखा न खावें और न औरों को जान बूझके धोखा

खिलावें। अब साक्षी का अर्थ है कि जो अपनी आंख से देखनेवाला सो पहिले निर्णय करना चाहिये कि ख्रिष्टीय शास्त्र का वृत्तान्त अपनी आंखों से देखनेवालों ने लिखा था कि नहीं इस के पीछे साक्षियों के समर्थ और विश्वस्त होने की चर्चा करेंगे। परन्तु इस बात की ठीक समझ के लिये मैं यिसू ख्रिष्ट के अन्तर्धान होने के पीछे उस के मत के प्रचलित होने का कुछ बर्णन करता हूं आप सुनिये॥

सत्य धर्म का प्रचार सारे संसार में कराने के निमित्त यिसू ख्रिष्ट ने अपने शिष्यों में से बारह मनुष्यों को अपने दूत अथवा प्रेरित ठहराया। इस बड़े काम के निर्वाह करने के लिये परमेश्वर का आत्मा विशेष रूप से उन के मन में उतर आया। ऐसी दैव्य सहायता पाके वे धीरजवान उद्योगी साहसी धर्म के गूढ़ विषयों में अति विवेकी हो गये। फिर उन की धार्मिक शिक्षा प्रामाणिक और सिद्ध करने की इच्छा से परमेश्वर ने उनको आश्चर्य कर्म करने की शक्ति दिई। इस शक्ति से आश्चर्य कर्म कर वे पहिले अपने देश में अपने प्रभु का धर्म बड़े उद्योग के साथ प्रचारने लगे। यिसू के जी उठने के पीछे पचासवें दिन पर यिरूशलीम नगर में कि जिस में यिसू का मरण और पुनरुत्थान उपस्थित हुए थे अपने शत्रुओं के सन्मुख इसी वृत्तान्त की जिस को उन्हों ने अपने नेत्रों से देखा था सम्पूर्ण साक्षी बड़े ही साहस के साथ प्रकाशित रूप से देने लगे। उनकी साक्षी का तात्पर्य्य यह था कि वह यिसू जिस को तुम लोगों ने दुष्टहाथों से घात किया परमेश्वर ने उसको जिलाके उठाया है इस कारण अपने पाप से पछतावा करके उस पर विश्वास लाओ तो तुम पापमोक्षण पाओगे इति। उन का यह बचन सुन और उनके आश्चर्य कर्म देख उसी दिन तीन सहस्र मनुष्य यिसू के शिष्य हुए और शिष्यों की गिनती प्रतिदिन बढ़ती गई॥

वेदविद्वान का वचन॥ जो यही दशा थी पण्डितजी तो सम्भव है

कि वे मनुष्य जो पहिले उनके शत्रु थे सब के सब उनके मित्र हो गये और इस रीति से शारीरिक दुःख और सांसारिक क्लेश के बदले यिसू के शिष्यों ने बड़ा सुख और भागवानी पाई होगी। अथवा क्या उनके शत्रु यिसू के जी उठने के उस अद्भुत समाचार को खंडन कर सक्ते थे॥

सत्यार्थी का बचन॥ महाराज यदि वह समाचार सच्चा न होता तो निःसन्देह प्रधान यहूदी उसको खंडन कर सक्ते क्योंकि उन्हीं के उद्योग से यिसू के घात करने की आज्ञा हुई और उसकी लोथ उन्हीं की रखवाली में छोड़ी गई और उन्हों ने उसको समाधि के पत्थर पर रूमी प्रधान की छाप लगवाई और रूमी पियादों का एक जथा समाधि के पास पहरा के लिये बैठाया। इस दशा में यिसू के शिष्यों का बचन झुठलाने के लिये केवल यिसू की लोथ सब लोगों के सन्मुख उपस्थित करना प्रयोजक था तब सब कोई जान सक्ता कि उन का समाचार मिथ्या है। परन्तु जब कि यिसू ख्रिष्ट सचमुच जी उठा था तो प्रधान यहूदी उसकी लोथ दिखा नहीं सक्ते थे॥

वेदविद्वान का बचन॥ फिर उन्हों ने इन सारी बातों का कैसा बर्णन किया क्या उन्हों ने मान लिया कि यिसू सचमुच जी उठा है॥

सत्यार्थी का बचन॥ नहीं पण्डितजी उन्हों ने कहा कि यिसू के शिष्य रात के समय जब रूमी पियादे सोते थे उसकी लोथ चुरा ले गये। परन्तु उनका यह बचन साक्षात मिथ्या है क्योंकि रूमी पियादों के पहरे में साठ योधा थे और रूमी सेना में आज्ञा थी कि जो कोई पियादा पहरे में सो जायगा सो बधयोग्य ठहरेगा। फिर साठों योधा सब के सब ऐसी कठिन आज्ञा के विरुद्ध एक ही घड़ी क्योंकर सो जाते और यद्यपि सो भी जाते तथापि शिष्य इस बात को क्योंकर जान सक्ते और थोड़े बलहीन निरास मनुष्य होके इतने योधाओं की डर न मान उनकी चौकी पर क्योंकर चढ़ सक्ते। फिर यद्यपि पियादे सचमुच सो

गये थे तो वे क्योंकर जान सके कि शिष्य यिसू की लोथ चुरा ले गये थे निद्रा के वश में हो वे ऐसा ज्ञान कहां से पा सके। सचमुच पण्डितजी प्रधान यहूदियों का यह बचन एक ऐसा साक्षात छल है कि यिसू का जी उठना खण्डन करने के संती उसके स्थापन करने में बड़ा उपकारक है। परन्तु आप इस अद्भुत वृत्तान्त का जो वर्णन मंगलसमाचार पुस्तक में लिखा है ध्यान के साथ पढ़िये तो आप को विदित होगा कि पूर्वकाल का कोई वृत्तान्त इस के समान निश्चय सिद्ध और प्रामाणिक नहीं हो सक्ता है॥

वेदविद्वान का बचन॥ फिर पण्डितजी यदि यह अद्भुत वृत्तान्त ऐसा निश्चय सत्य था तो प्रधान यहूदी लोगों ने जब उसका निर्णय भली भांति किया था तो अन्त को क्या यिसू के शिष्य नहीं हो गये। क्योंकि मृतकों में से जी उठना परमेश्वर की शक्ति का एक ऐसा प्रत्यक्ष लक्षण है कि उसके विषय में कोई मनुष्य सन्देह नहीं कर सक्ता है॥

सत्यार्थी का बचन॥ ऐसा लक्षण तो है पण्डितजी परन्तु यद्यपि साधारण लोगों में से बहुतेरे मनुष्य शिष्य हो गये तथापि दुष्ट मन के प्रधान यहूदी यिसू के शिष्यों की बढ़ती को देख केवल डाह की ज्वाला से जल गये और उसका धर्म नाश करने की इच्छा कर उन्हों ने उस धर्म के प्रचारकर्त्ताओं को नाना प्रकार के दुःखों से सताया। कितनों को बन्दीगृह में डाला कितनों को कोड़े मारे कितनों को यद्यपि निर्दोषी थे तथापि बध किया। परन्तु ऐसे भयानक दुःखों से भी निर्भय होके ख्रिष्टीय धर्म के प्रचारकर्त्ता अपने काम से हट नहीं गये। इस रीति से बहुतेरे यहूदी यिसू के शिष्य हो गये इस के पीछे वे अपने देश के सिवानों से पार जाके अन्यदेशों में भी यिसू का धर्म बड़े उद्योग के साथ प्रचारने लगे॥

वेदविद्वान का बचन॥ हे पण्डित उस काल में कौन सी जातें

पृथिवी के उस खण्ड में रहती थीं और उन का कैसा धर्म्म था और वे किन २ बातों के लिये बिख्यात थीं आप कृपा करके इन बिषयों का थोड़ा वर्णन कीजिये ॥

सत्यार्थी का वचन॥ महाराज उस काल में प्राचीन यवन और रूमी जातें भूमण्डल के पश्चिम खण्ड में रहती थीं। यवन लोग ज्ञान और बीरता के कारण बिख्यात थे जैसे महाभारत में लिखा है ॥

सर्वज्ञा यवना राजन शूराश्चैव विशेषतः॥

अर्थात हे राजा यवन लोग सर्वज्ञ हैं और विशेष करके शूर हैं इति। एक पूर्वी सत्सङ्ग में मैं ने उन के मत का कुछ बर्णन किया। यिसू ख्रिष्ट के काल में रूमी लोगों का राज्य यवनों के ऊपर प्रबल हो गया था वरन सम्पूर्ण पश्चिमीय खण्ड और यहूदी देश में भी इन्हीं रूमियों का एक बहुत बड़ा पराक्रमी राज्य स्थापन हुआ। रूमी लोग यवनों के समान ज्ञानी और विद्यावान नहीं थे और इस कारण यवनी भाषा और विद्या भी रूमी विद्यावानों में प्रचलित थीं परन्तु राजनीति और संग्राम की विद्या में रूमी लोग समस्त अन्यजातियों से बलवन्त थे। उन का धर्म यवन लोगों के मत के सदृश था अर्थात सच्चे जीवते परमेश्वर को जो अकेला भजन के योग्य है बिसराके उन्हों ने नाना प्रकार के देवताओं और देवियों को जो उन्हीं के कल्पित मात्र थे भजन के लिये ठहराया। धर्म के सत्य मार्ग की ऐसी विपरीतता को देख यिसू के शिष्य अपने मन में अति दुःखित हुए और यिसू की आज्ञानुसार इन भ्रान्ति लोगों को उपदेश कर उन को बतलाया कि मिथ्या देवताओं का भजन त्यागना चाहिये। फिर सच्चे जीवते परमेश्वर की महिमा और पवित्र गुणों का बखान कर उन्हों ने यह समाचार प्रचारा कि केवल ईश्वर के सच्चे अवतार यिसू ख्रिष्ट के द्वारा से मुक्ति प्राप्त होती है और इस समाचार का दैव्य मूल निश्चय सिद्ध और प्रमाणिक करने

के निमित्त उन्हों ने उस आश्चर्य शक्ति को जिसे परमेश्वर ने उनको दिया था प्रकाश किया ॥

वेदविद्वान का बचन ॥ उन अन्यदेशियों में खिष्टीय धर्म का प्रचार करने से क्या कुछ फल प्राप्त ङ्गआ कि नहीं ॥

सत्यार्थी का बचन ॥ हां पण्डित जी कुछ फल निकला क्योंकि बङ्गतेरे सत्यार्थी मनुष्यों ने उस धर्म की उत्तमता और सिद्धता को देख उसको सत्य और ईश्वरीय मान ग्रहण कर लिया। परन्तु औरों ने जिन की बुद्धि भ्रान्ति में फसी थी और जो सत्य जानने के अभिलाषी न थे अपने २ देश के धर्म का पक्ष किया। फिर अपने इष्ट देवताओं के अनादर होने से अप्रसन्न हो उन्हों ने उस नये धर्म के प्रचारकों को द्वेष की दृष्टि से देखा और कोड़े मारना इत्यादि भयानक दण्डों से उन को सताया। परन्तु यिसू के शिष्य यद्यपि ऐसी कठिन पीड़ा का सहन करते थे तथापि मुक्ति के सत्यमार्ग प्रचारने से रह नहीं गये। उन की सीधाई और भक्ति और पवित्र चाल और धीरज को देख अत्यन्त अधिक मनुष्य यिसू के शिष्य हो गये। इतने में उन देशों के प्रधानों ने जब उस मत की ऐसी वृद्धि को देखा तो उसके नाश करने की युक्ति किई और यिसू के शिष्यों को अति क्रूरता के संग बड़े २ दुःखों से सताने लगे कि जिसतें वे उस धर्म को त्याग करें। कितनों को खड्ग से मारा कितनों को अग्नि में जलाया कितनों को क्रीड़ागृह में डाल दिया कि सिंह उन को फाड़ डाले। ऐसी भयानक पीड़ाओं से डरके कोई २ शिष्य अपने धर्म के विश्वास घातक ठहरे परन्तु बङ्गतेरों ने बेधड़क हो अत्यन्त कठिन दुःख को सह सत्य धर्म का विश्वास थांभ मृत्यु को भी ग्रहण किया। तरुण और बालक बूढ़े और कन्याओं ने दैव्यशक्ति से दृढ़ हो प्रभु के लिये इस रीति से अपने प्राणों को भी अर्पित किया। इस प्रकार से यिसू खिष्ट का धर्म होते २ पश्चिमीय देशों के सारे मिथ्या धर्मों को

नाश कर तीन सौ ईस्वी संवत में पृथिवी के यूरप नाम महाखण्ड में प्रबल हुआ। इन दिनों उस खण्ड में सत्तरह भिन्न २ राज और देश उपस्थित हैं और उन में सारे भूमण्डल के सब से सामर्थी और विद्यावान जातें रहती हैं परन्तु उन सभों में केवल यिसू ख्रिष्ट का धर्म प्रबल है। और इस को छोड़ कि कितनों ने उस धर्म की शुद्ध मूल शिक्षा में अयोग्य मिलावनी किई है उस खण्ड की किसी जाति में देवपूजा अथवा मूर्तिपूजा का कोई चिन्ह कहीं नहीं देख पड़ता है॥

वेदविद्वान का बचन॥ आप के बर्णन से देख पड़ता है कि ख्रिष्टीय धर्म तीन सौ बरस के बीच सम्पूर्ण पश्चिमीय खण्ड के ऊपर प्रचलित हो गया और उस काल से आज लों वही धर्म उस दिशा में प्रबल हो रहा है। परन्तु मैं इस बात को जानने चाहता हूं कि उस धर्म का मूल वृत्तान्त जो आप ने बर्णन किया है किस रीति से सिद्ध और प्रामाणिक हो सक्ता है और ख्रिष्टीय शास्त्र का जो वृत्तान्त आप ने बतलाया है मैं कैसे जान सक्ता हूं कि वह निश्चय सत्य और यथार्थ बिश्वासयोग्य है॥

सत्यार्थी का बचन॥ पण्डितजी मैं ने ऊपर बतलाया कि श्री यिसू ख्रिष्ट ने अपने शिष्यों में से बारह मनुष्यों को जो आरम्भ से अन्त लों उस की सङ्गति में रहे थे अपने विशेष प्रेरित ठहराया जिसतें जो वृत्तान्त उन्हों ने अपनी आंखों से देखा था उस को बिश्वासयोग्य साक्षी को सम्पूर्ण लोगों के बीच देवें। सो प्रथम उन्हों ने उस साक्षी को केवल अपने मुख के बचन मात्र से दिया और अपने बचन के स्थापन में आश्चर्य कर्म दिखाये और प्राचीन वाचापत्र की पुस्तक से प्रमाण भी लाये। इसके पीछे जब उन की साक्षी के कारण बहुतेरे मनुष्य शिष्य हो गये थे और नगर २ में शिष्यों की मण्डली स्थापित हुई थीं और प्रेरित लोग अन्यदेशों में मंगलसमाचार प्रचारने को जाते थे तब शिष्यों की शिक्षा के निमित्त उन्हों ने यिसू का वृत्तान्त पुस्तकों में लिखा।

बारह प्रेरितों में से एक मती नामे ने यिसू का एक ऐसा वृत्तान्त लिखा जो मंगलसमाचार पुस्तक में पहिले आता है। उसी समय दो और मनुष्य जो प्रेरितों के संगी थे अर्थात मरकुस और लूका ने दो और ऐसे वृत्तान्त लिखे। सम्भव है कि मती रचित मंगलसमाचार ईसवी संवत ४५ में लिखा था अर्थात यिसू ख्रिष्ट के स्वर्गारोहण से बारह चौदह बरस पीछे। परन्तु कितने जानते हैं कि कदाचित इस के लिखने में १०। १५ बरस का और बिलम्ब हुआ और उसी काल में मरकुस और लूका ने भी अपना २ वृत्तान्त लिखा। इस के कितने बरस पीछे अर्थात ईसवी संवत के ८०। ९० और १०० बरस के बीच एक दूसरे प्रेरित यूहन्ना नामे ने यिसू ख्रिष्ट का एक चौथा वृत्तान्त लिखा और ये चारों वृत्तान्त मंगलसमाचार पुस्तक में संयुक्त हैं। अब आप ध्यान कीजिये कि आरम्भ में जब यिसू के प्रेरित उस के सारे वृत्तान्त की साक्षी केवल अपने मुख के वचनमात्र से देते थे तो उन के सब सुनेहारे उनकी साक्षी की परीक्षा भली भांति कर सक्ते थे। क्योंकि यिसू का वृत्तान्त साधारण यहूदी लोगों के बीच प्रकाशित रूप से उपस्थित हुआ था और यदि प्रेरित लोग उस का कोई निषप्रमाण अयथार्थ वृत्तान्त बतलाते तो सब कोई उसको खण्डन कर सक्ते। इस दशा में कोई मनुष्य केवल संसारिक क्लेश पाने के निमित्त मिथ्या वृत्तान्त पर विश्वास लाके क्योंकर शिष्य हो जाते परन्तु पहिले ही दिन तीन सहस्र मनुष्य शिष्य हो गये और दिन प्रतिदिन उनकी गिनती बढ़ती गई। इसी प्रकार से जब नगर २ में बहुतेरे मनुष्य प्रेरितों की साक्षी के कारण शिष्य हो गये थे और उनकी शिक्षा पाके यिसू के सारे वृत्तान्त से भली भांति सज्ञात हो गये थे फिर जब उसका वृत्तान्त पुस्तकों में लिखा गया तो उसी प्रकार से उसकी भी परीक्षा कर सक्ते थे और यदि उन पुस्तकों में कोई निषप्रमाण वृत्तान्त लिखा जाता तो अवश्य वे उसका त्याग करते। परन्तु इस के सन्ती उसी

काल से ख्रिष्टीय शिष्यों की मण्डलियों में जब भजन करने के लिये रविवार को इकट्ठे होते थे तो यही चार पुस्तकें निरन्तर पढ़ी और सुनाई जाती थीं और इसी प्रकार से आज लों चली आई हैं। इस रीति से केवल इन चार पुस्तकों के लिखनेहारे अथवा केवल बारह प्रेरित ही नहीं परन्तु सारे पहिले शिष्य जो यिसू के वृत्तान्त को अपनी आंखों से देखनेवाले थे इन पुस्तकों के वृत्तान्त के सिद्ध और यथार्थ होने पर साक्षी ठहरते हैं॥

वेदविद्वान का बचन॥ आप को किस प्रकार से ज्ञान होता है कि वेही पुस्तकें जिन को ख्रिष्टीय शिष्य इन दिनों में ग्रहण करते हैं सो सचमुच यिसू ख्रिष्ट के प्रेरितों की लिखी हुई पुस्तकें हैं॥

सत्यार्थी का बचन॥ पण्डितजी मैं इस प्रश्न का उत्तर अभी देता हूं परन्तु पहिले जितनी और लिखावटें मंगलसमाचार पुस्तक में संयुक्त होती हैं उनका तनिक बर्णन करना चाहिये। उन में की पांचवीं लिखावट प्रेरितों की क्रिया कहाती है क्योंकि उस में यिसू के स्वर्गारोहण से लेके ईस्वी सम्बत ६१। ६२ लों यिसू के प्रेरितों के और विशेष करके पुलूस नाम प्रेरित के परिश्रम और उद्योग जिन को वे मंगलसमाचार प्रचारने में नगर २ में करते थे बर्णित होते हैं। इस का लेखक वही लूका था जो एक मंगलसमाचार का कर्त्ता भी था। उस लिखित वृत्तान्त से जाना जाता है कि उसका कर्त्ता लूका पुलूस प्रेरित के संग यात्रा करके अन्यदेशों में गया और उस प्रेरित के आश्चर्य्य कर्मों को देखा और उसका उपदेश सुना और इस रीति से एक समर्थ साक्षी होके उसका वृत्तान्त लिखा है। परन्तु इन सारे साक्षियों के समर्थ और बिश्वस्त होने की चर्चा पीछे हो जायगी अब केवल उनके समकालिक होने का बर्णन होता है॥

वेदविद्वान का बचन॥ आप ने मंगलसमाचार पुस्तक की पांच लि-

खावटों का वर्णन किया है परन्तु आप ने पहिले सत्सङ्ग में कहा था कि उसकी सब समेत सताईस लिखावटें हैं। सो अब आप कृपा करके बतलाइये कि शेष बाईस कैसी हैं क्या ये भी सब की सब समकालिक साक्षियों की लिखी हुई हैं॥

सत्यार्थी का वचन॥ पण्डितजी शेष बाईस लिखावटें जो मंगलसमाचार पुस्तक में संयुक्त हुई हैं सो सब की सब यिसू के बारह प्रेरितों में से पांच प्रेरितों की लिखी हुई हैं। उन प्रेरितों के नाम ये हैं पुलूस अर्थात पाऊल पतरस यअकूब यहूदा और यूहन्ना। एक को छोड़ ये सब लिखावटें पत्र की रीति ख्रिष्टीय मण्डलियों के जो नगर २ में स्थापित हुई थीं अथवा ख्रिष्टीय शिष्यों के पास उनकी शिक्षा के लिये उन प्रेरितों के हाथ से लिखी थीं। और अन्तवाली पुस्तक में जो प्रकाशित नाम से प्रसिद्ध है यूहन्ना नाम प्रेरित ने साधारण ख्रिष्टीय मण्डली का आनेहारा वृत्तान्त जगत के अन्त लों भविष्यद्वाणी की रीति लिखा है। इक्कीस पत्रों में से चैादह पत्र पुलूस प्रेरित के हाथ से लिखे थे उस प्रेरित ने बहुतेरे नगरों में मंगलसमाचार प्रचारके ख्रिष्टीय शिष्यों की मण्डलियां स्थापित किईं। फिर उन शिष्यों की सुशीलता का और दैव्य ज्ञान में उनकी बढ़ती का निपट अभिलाषी हो वह उन से भेंट किया करता था जब उसने उनके किसी दोष अथवा भूल का समाचार पाया तो उनको शुद्ध और ठीक बनाने के निमित्त उनके पास पत्र लिख भेजा। जब शिष्यों में किसी प्रकार की फूट पड़ी तो उनमें मेल कराने की इच्छा से उनके नाम पर उपदेशपूर्वक पत्र भेजा। जब ख्रिष्टीय धर्म की मूल शिक्षा से अपनी अज्ञानता प्रगट करते थे अथवा जब मिथ्या गुरु उनके बहकाने की युक्ति करते थे तब पुलूस ने पत्र लिखके उनके लिये ख्रिष्टीय मूल शिक्षा बतलाई। इस रीति से ये सारे पत्र ख्रिष्टीय शिष्यों के लिये दैव्य सूत्रों के समान शुद्ध मार्ग के बतानेहारे ठहरते हैं॥

वेदविद्वान का बचन॥ जो मिथ्या गुरु भी पहिले शिष्यों के पास उनके बहकाने के लिये जाते थे तो शिष्य उन की मिथ्या शिक्षा और प्रेरितों की सत्य शिक्षा का विवेक कैसे कर सके थे कि किसका बचन सत्य और ग्राह्य है॥

सत्यार्थी का बचन॥ मैं ने पहिले बतलाया पण्डितजी कि यिसू ख्रिष्ट ने अपने बारह शिष्यों को उनका वचन स्थापन करने के निमित्त आश्चर्य कर्म करने की शक्ति दिई। अब पुलूस प्रेरित के पत्रों से देख पड़ता है कि उसने पहिले शिष्यों के बीच यह आश्चर्य शक्ति प्रकाशित किई। फिर जब मिथ्या गुरु उन शिष्यों के पास जाके प्रेरित की शिक्षा और प्रमाण खंडन करने चाहते थे तो उसने पत्र के द्वारा उन शिष्यों को अपने आश्चर्य कर्मों का स्मरण दिलाया। इस विषय में आप के मन को शान्ति देने के लिये मैं एक वृत्तान्त की तनिक चर्चा करूंगा आप सुनिये॥

प्राचीन यवन देश में कोरिंत नाम एक अति प्रसिद्ध और बड़ा सुन्दर नगर बना था। इस नगर के निवासी नौकागमनागमन व्यापार और लौकिक ज्ञान सुख बिलास राग रंग के लिये सारे पश्चिमीय खण्ड में बिख्यात थे। इस नगर में देवताओं के अनेक मन्दिर बने थे परन्तु सब से बड़ा और शोभायमान मन्दिर आफरोदैत्य अर्थात रति देवी के नाम पर बना था। उस देवी की पूजा में एक सहस्र से अधिक वेश्या उस मन्दिर में सदा रहती थीं और इस पूजा के कारण नगरनिवासी ऐसे भ्रष्ट हो गये थे कि सारे यवन देश में कामातुर लोग कोरिंती नाम से प्रसिद्ध हो गये थे। इस नगर में ईस्वी संबत ५२। ५४ में पुलूस प्रेरित मंगलसमाचार प्रचारने को अकेला आया इस वृत्तान्त का संक्षेप बर्णन प्ररितों की क्रिया की पुस्तक के अठारहवें पर्व्व में लिखा है। उस काल रूमी राज के सारे बड़े नगरों में यहूदी कुल के मनुष्य व्या-

पार करने के लिये बसे थे से कोरिंत नगर में भी यहूदी लोगों की एक मण्डली थी। अपने व्यवहार के समान पुलूस प्रेरित ने पहिले इन यहूदियों के पास जाके अपना समाचार सुनाया परमेश्वर के अनुग्रह से दो एक यहूदियों ने उसका बचन मान लिया। परन्तु जब बहुतेरों ने ग्रहण न किया तो वह यवनों के पास सुनाने लगा और डेढ़ बरस लों उनके बीच रहके उन में से ख्रिष्टीय शिष्यों की एक मण्डली स्थापित किई तब वह दूसरे नगरों में सत्य मार्ग का समाचार सुनाने को गया॥

इसके उपरान्त जब पुलूस प्रेरित चला गया था तब उस मण्डली के कितने मनुष्य अपने पूर्वी मिथ्या ज्ञान के वश हो गुरु की रीति नई शिक्षा देने लगे। इस कारण मण्डली के लोगों में फूट पड़ी और कितने जन कुचाल भी चलने लगे विशेष करके एक धनी मान्य मनुष्य ऐसी अपवित्रता में फंस गया कि जिसके कारण उसको मण्डली से निकालना उचित था। परन्तु इसके सन्ती वे मिथ्या शिक्षक उसके पक्षपाती हो उस की रक्षा करते थे और पुलूस प्रेरित को अपने बिरुद्ध जान उसका पराक्रम जो बहुधा शिष्यों पर था घटाने की युक्ति करने लगे। जब पुलूस ने इस दशा का समाचार सुना तो उसने उनके पास दो पत्र लिख भेजे जो मंगलसमाचार में कोरिंतियों के नाम पर पहिले और दूसरे पत्र कहलाते हैं। उन पत्रों में पुलूस उनके दोष और कुचाल और फूट का वर्णन करके उनकी ताड़ना करता और उनको आज्ञा भी देता है कि उस व्यभिचारी को मण्डली में से निकालना चाहिये। फिर उन मिथ्या शिक्षकों पर बड़ी दृढ़ता के संग दोष लगाता और उन की मिथ्या शिक्षा को खण्डन करके अपने पराक्रम के स्थापन में इस प्रकार का बर्णन करता है जो दूसरे पत्र के बारहवें पर्ब्ब में लिखा है अर्थात॥

पुलूस प्रेरित का बचन॥ निश्चय मेरे प्रेरित होने के चिन्ह तुम पर

समस्त सन्तोष और लक्षण और आश्चर्य और प्रभाव के कार्यों से प्रगट हुए॥

सत्यार्थी का वचन॥ इस रीति से पुलूस प्रेरित अपने वचन और पराक्रम के स्थापन में अपने आश्चर्य कर्मों का वर्णन करता है जिस्से कोरिंती शिष्य निश्चय जानें कि मिथ्या शिक्षकों का तो वचन नहीं परन्तु पुलूस ही का वचन सत्य है। फिर उन की मिथ्या शिक्षा की एक बात यह थी कि उन्हों ने कहा कि पुनरुत्थान कुछ नहीं है और मनुष्यों का जी उठना नहीं होगा। सो पुलूस प्रेरित अपने पहिले पत्र के पंदरहवें पर्व्व में इस के खण्डनार्थ यों लिखता है अर्थात।

पुलूस प्रेरित का वचन॥ मैं ने तुम्हें पहिले वह सौंपा जो मैं ने भी पाया कि ख्रिष्ट लिखित के समान हमारे पापों के सन्ती मूआ और गाड़ा गया और तीसरे दिन लिखित के समान जी उठा और पतरस को फिर उन बारहओं को दिखलाई दिया उस के पीछे पांच सौ से अधिक भाइयों को एक साथ दिखलाई दिया जिन में अधिक भाग अब लों हैं परन्तु कई एक सो गये॥

सत्यार्थी का बचन॥ अब आप ध्यान कीजिये कि जब उस मण्डली में कितने मनुष्य जो पराक्रमी और धनी और शिक्षक भी थे और पुलूस प्रेरित के विरोध पर थे और उस ने अपने आश्चर्य कर्मों का ऐसा बर्णन किया तो यदि वह बर्णन सत्य न होता क्या वे विरोधी शिक्षक उस को न झुठलाते। अथवा यदि पुलूस आप भी जानता कि सत्य नहीं है तो क्या अपने शत्रुओं के पास ऐसा बर्णन करता। निश्चय उस ने उनके बीच सचमुच आश्चर्य कर्म दिखाये थे और वे सब के सब यह बात जानते थे नहीं तो अवश्य उस के बैरी उस पर मिथ्यता और छल का दोष लगायके उस के पराकर्म को तुरन्त नाश करते। इस रीति से जब पुलूस बर्णन करता है कि पांच सौ से अधिक भाइयों ने जिन में से बहु-

तेरे आज लों जीते हैं जो उठे हुए यिसू ख्रिष्ट को देखा यदि वह वचन सत्य न होता तो क्या उस के बैरी उस वचन को पकड़के उस की मिथ्यता को प्रकाश न करते। सो यह वृत्तान्त यिसू ख्रिष्ट के जी उठने का एक दृढ़प्रमाण है और इसी प्रेरितों के आश्चर्य कर्म करने की शक्ति सिद्ध होती है और मंगलसमाचार पुस्तक के साक्षी समकालिक मनुष्य ठहरते हैं। अर्थात वे ऐसे मनुष्य थे जो उस वृत्तान्त ही के काल में जीते और अपनी आंखों से उस के देखनेवाले थे। और उस वृत्तान्त के होते ही अथवा उस के थोड़े समय पीछे उन्हों ने उसका सारा वर्णन मंगलसमाचार की भिन्न २ पुस्तकों में लिखा है और यह वर्णन उसी काल के लोगों में जो आप भी देखनेवाले थे फैल गया और यदि उस में कोई निष्प्रमाण बात होती तो वे उसको जान सक्ते। फिर जब उन सभों ने उसको ग्रहण किया तो इस रीति से वे सब के सब उस के सत्य होने के साक्षी ठहरते हैं॥

वेदविद्वान का वचन॥ पण्डितजी आपका सारा वर्णन बहुत ही पक्का और यथार्थ देख पड़ता है परन्तु अब लों भी उस विषय का वर्णन नहीं हुआ जिस पर मैं ने प्रश्न किया था। अर्थात ऐसा देख पड़ता है कि आप का सारा वर्णन ख्रिष्टीय शास्त्र ही की पुस्तकों में से निकाला गया है। परन्तु जब कि आप के कहने के अनुसार उन पुस्तकों के लिखे जाने से अठारह सौ बरस बीत गये हैं तो कैसे जाना जाता है कि वे पुस्तकें सचमुच उन्हीं मनुष्यों की लिखी हुई थीं अथवा जो पुस्तकें आज कल उन के नामों से प्रचलित हैं सो सचमुच उन्हीं की पुस्तकें हैं किंवा जो वृत्तान्त उन पुस्तकों में जो आज कल प्रचलित हैं लिखा है सो सचमुच सिद्ध और प्रामाणिक और यथार्थ है। आप को स्मरण होगा कि हिन्दू शास्त्रों की चर्चा में जो सत्सङ्ग हम करते थे आप ने कहा कि हिन्दू शास्त्र अपने बचनमात्र से सिद्ध नहीं हो सक्ते हैं फिर ख्रिष्टीय शास्त्र भी

अपने वचनमात्र से क्योंकर सिद्ध होवे। इस प्रकरण में मेरे मन का यह सन्देह है कि ख्रिष्टीय शास्त्र की वे पुस्तकें जो आज कल प्रचलित होती हैं कदाचित लिखे हुए वृत्तान्त के काल से एक सहस्र बरस पीछे लिखी गई हों तो फिर उन का वृत्तान्त सिद्ध और प्रामाणिक क्योंकर हो सक्ता है॥

सत्यार्थी का वचन॥ सच पण्डितजी मैं ने तो ऐसा कहा कि जब दो जनों के बीच किसी प्रकार का विवाद है तो बिचारी पुरुष ऐसा मानते हैं कि पराई साक्षी के बिना निरकेवल वादी अथवा प्रतिवादी का वचनमात्र अपने ही प्रकरण में विश्वासयोग्य नहीं है। और ऐसा कहने में मेरा अभिप्राय यह था कि यदि वादी अथवा प्रतिवादी कहे कि मेरी साक्षी सत्य है तो केवल ऐसा कहने से कोई उस को सत्य नहीं मानता है और इसके अनुसार मैं ने कहा कि हिन्दू शास्त्रों का प्रामाणिक होना निरकेवल उन्हीं शास्त्रों के ऐसा कहने से सिद्ध नहीं होता है। और इस रीति से ख्रिष्टीय शास्त्र का भी प्रामाणिक होना केवल उन्हीं शास्त्रों के ऐसा कहने से सिद्ध नहीं हो सक्ता है मैं यह बात मान लेता हूं। परन्तु ऐसा भी हो सक्ता है कि वादी अथवा प्रतिवादी अपना ऐसा वृत्तान्त बतलावे अथवा उस की साक्षी में सत्यता के ऐसे प्रसिद्ध लक्षण देख पड़ें कि बिचारी मनुष्य पराई साक्षी के बिना भी अनुमान की रीति से उस को सत्य मानेंगे। और यदि यह सिद्धान्त किसी मनुष्य के विषय में ठीक है तो निःसन्देह परमेश्वर के विषय में ठीक होगा क्योंकि उस के जितने कार्य हैं वे सब के सब प्रकाशित रूप से उसी के देख पड़ते हैं और किसी दूसरे के नहीं। उस का शास्त्र भी ऐसा ही होगा कि यद्यपि उस के स्थापन में पराई साक्षी भी न हो तथापि उस के वृत्तान्त और प्रत्यक्ष गुणों पर ध्यान करके बिचारी और सीधे अन्तःकरण के मनुष्य अनुमान की रीति से उसको ईश्वरीय मानेंगे। इस के अनुसार

मैं ने इस विषय में हिन्दू शास्त्रों की परीक्षा किई है और उस परीक्षा से जो परिणाम सिद्ध ठहरा सो आप को भली भांति विदित होता है। फिर मैं ने ख्रिष्टीय शास्त्र के वृत्तान्त का थोड़ा सा वर्णन किया है सो अब मैं आप से पूछता हूं कि जितना वृत्तान्त आप ने सुना है क्या उस में कोई ऐसा विषय देख पड़ता है जिस के कारण से उस शास्त्र को ईश्वरीय न मानना बरन उस को त्यागना आप को उचित होगा॥

वेदविद्वान का वचन॥ मैं नहीं कह सक्ता हूं पण्डितजी कि इतने वृत्तान्त में जो मैं ने आप के मुख से सुना है कोई ऐसा विषय देख पड़ता है जिस के कारण से ख्रिष्टीय शास्त्र का त्याग करना अवश्य चाहिये परन्तु उस को त्यागना और उस को ग्रहण करना इन दो बातों में तो बड़ा भेद होता है। यदि उस को बिना कारण त्यागना अनुचित है तो उस को बिना कारण ग्रहण करना भी अनुचित होगा और यद्यपि आप का बर्णन निःसन्देह ठीक और यथार्थ देख पड़ता है तथापि कदाचित यह सारा वर्णन मनुष्य की बुद्धि की कल्पना मात्र होवे। इस कारण ख्रिष्टीय शास्त्र को ईश्वरीय मान्ने और ग्रहण करने के लिये कुछ और प्रमाण अवश्य चाहिये॥

सत्यार्थी का वचन॥ पण्डितजी अब लों मैं ने ख्रिष्टीय शास्त्र का केवल संक्षेप बर्णन किया है और आप के मन में जो सन्देह था कदाचित इतने वर्णन से दूर नहीं हो सक्ता है। ईश्वर की इच्छा हो तो आसरा है कि जब आप उस शास्त्र का सम्पूर्ण वृत्तान्त जान लेंगे तो आप उस में ऐसे २ गुण और लक्षण देखेंगे जिन से पराई साक्षी के बिना भी वह प्रत्यक्ष रूप से ईश्वरीय शास्त्र ठहरेगा। परन्तु आप ऐसा न जानिये कि पराई साक्षी न होने के कारण मैं ऐसा कहता हूं क्योंकि यद्यपि ख्रिष्टीय शास्त्र अपने ही वृत्तान्त के लक्षणों से ईश्वरीय ठहरता है तथापि इस को छोड़ उस के सिद्ध करने के लिये पराई साक्षी भी बहुत हैं।

सो अब मैं बतलाता हूं कि पराई साक्षी के द्वारा ख्रिष्टीय शास्त्र का वृत्तान्त क्योंकर सिद्ध ठहरता है ॥

जान्ना चाहिये कि ईस्वी संवत के आदि से आज लों ख्रिष्टीय शास्त्र को छोड़ अनगणित और ग्रंथ भी ख्रिष्टीय शिष्यों के और अन्य मतावलम्बियों के हाथ से लिखे गये और आज लों उपस्थित और प्रचलित हैं। पहिले ये ग्रन्थ यवन और रूमी भाषाओं में लिखे थे इन में से कितनों की प्राचीनता बहुत है कितनों की न्यून है। किसी ग्रन्थ की प्राचीनता और उसके कर्त्ता का वृत्तान्त उन ग्रन्थों के वर्णन से निर्णय होता है जो उस के समकालिक अथवा उसके थोड़े काल पीछे लिखे थे। अपना अर्थ स्पष्टता से बतलाने के लिये मैं एक दृष्टान्त कहूंगा आप सुनिये ॥

विद्योद्यान नाम एक देश में विद्वन्नामा एक राजा था उस के काल से आज लों एक सहस्र बरस बीत गये हैं। वह राजा विद्या का प्रतिपालक था और बहुतेरे पण्डित उस की सभा का अवलंबन कर उसके अनुग्रह से प्रतिष्ठित हुए। उन में से एक पण्डित मंगलनामा अनेक सद्गुणों से शोभित हो एक बड़ा प्रसिद्ध ज्योतिषी था। नाना प्रकार के यंत्रों से सारे आकाशमण्डल को देख भालके उस ने एक नये ग्रह को पाया और ज्योतिष विद्या के कई एक नये सिद्धान्त निर्माण करके सिद्धान्तार्क नाम एक ग्रन्थ बनाया। उस नये ग्रह का समाचार और मंगल पण्डित का नाम चारों ओर बहुत दूर लों फैल गया परन्तु उस समय छापने की विद्या निर्माण नहीं हुई और सारे ग्रन्थ बड़े श्रम और व्यय के साथ हाथ से लिखे जाते थे इस कारण सिद्धान्तार्क नाम ग्रन्थ विलम्ब करके फैल गया। इस के रचित होने के तीस बरस पीछे मंगल पण्डित परलोक को चला गया ॥

जिस समय मंगल पण्डित मर गया उसी बरस किसी दूसरे पण्डित

के घर में एक अति बुद्धिमान बालक उत्पन्न हुआ उस का नाम शुक्र था। वह युवावस्था में विद्या का अभिलाषी हो विशेष करके ज्योतिष विद्या के अभ्यास में तत्पर रहा। इस प्रकार से वह उस विद्या में बड़ा निपुण हो गया और जब मध्यावस्था में था तब उस ने उस विद्या के वर्णन में शुक्रसिद्धान्त नाम एक ग्रन्थ बनाया। उस ग्रन्थ में उस ने इस विषय का वर्णन किया कि प्रसिद्ध ज्योतिषी मंगल ने एक नये ग्रह को देखा था और इस के संग इसने उस पण्डित की विद्या और ज्ञान की प्रशंसा भी किई॥

इस के साठ सत्तर बरस पीछे एक और ज्योतिषी चन्द्र नामे ने मंगल और शुक्र के सिद्धान्तों को त्याग करने के निमित्त उन के खण्डनार्थ एक ग्रन्थ बनाया और सिद्धान्तार्क और शुक्रसिद्धान्त की कई एक बातों को उतारके अपने ग्रन्थ में लिखा। इस प्रकार से ज्योतिषी लोगों के बीच उन सिद्धान्तों के विषय में कुछ विवाद होने लगा और प्रत्येक उत्तरवर्ती पीढ़ी के ज्योतिषियों ने अपनी २ सामर्थ्य के समान उन ग्रन्थों का अभ्यास करके अपने २ पक्ष को सिद्ध करने के निमित्त ज्योतिषीय ग्रन्थों की एक श्रेणी बनाई। कितनों में मंगल और शुक्र नाम ज्योतिषियों का और उन के ग्रन्थों का वर्णन कुछ विस्तार के साथ लिखा था कितनों में केवल उनके दो एक सिद्धान्तों का था कितनों में इतना ही लिखा था कि हम- ने ऐसा सुना है कि मंगल ज्योतिषी ने एक नये ग्रह को देखा था। अब जो कोई इन सारे ग्रन्थों को देखेगा सो सम्पूर्ण रूप से निश्चय जानेगा कि विद्दन राजा के काल में मंगल नाम एक ज्योतिषी ने सिद्धान्तार्क नाम ग्रन्थ को बनाया और प्रचलित सिद्धान्तार्क की परीक्षा करके जान सकेगा कि वही ग्रन्थ है कि नहीं। निदान सनातन के उन ज्योतिषियों की साक्षी सिद्धान्तार्क ग्रन्थ पर वही पराई साक्षी है जिस का वर्णन मैं ने किया क्योंकि प्रत्येक ज्योतिषी अपने २ पूर्वगामी पर साक्षी देके अन्त को

वे सब के सब सिद्धान्तार्क ग्रन्थ और उस के कर्त्ता मंगल पण्डित पर साक्षी देते हैं॥

वेदविद्वान का बचन॥ निःसन्देह पण्डितजी इस दशा में सिद्धान्तार्क ग्रन्थ अथवा मंगल पण्डित के वृत्तान्त पर किसी के मन में कुछ सन्देह नहीं हो सक्ता है। क्योंकि यद्यपि शुक्रसिद्धान्त में सिद्धान्तार्क ग्रन्थ का सम्पूर्ण बर्णन नहीं मिलता है और कदाचित शुक्र पण्डित ने उस ग्रन्थ को नहीं देखा था तथापि मंगल ज्योतिषी का नाम और उस के एक नये ग्रह देखने का बर्णन तो मिलता है। फिर जब सिद्धान्तार्क ग्रन्थ जिस में उस नये ग्रह देखने का सम्पूर्ण बर्णन लिखा है मंगल नामे किसी का लिखा हुआ उपस्थित है तो कौन सन्देह कर सक्ता है कि उसी ज्योतिषी का जिस का बर्णन शुक्र पण्डित करता है बनाया हुआ होगा। परन्तु क्या ख्रिष्टीय शास्त्र पर और उसके कर्त्ताओं पर इसी प्रकार की पराई साक्षी मिल सक्ती है अथवा जो मिलती है तो क्या उसको सम्पूर्ण रूप से ध्यान करके जान लेना अवश्य है। क्योंकि यह एक बड़ा कठिन काम देख पड़ता है जो साधारण लोगों से कभी नहीं हो सकेगा। क्या कोई दूसरी रीति नहीं है जिस से किसी ग्रन्थ के वृत्तान्त का सिद्ध और प्रामाणिक होना निर्णय होवे॥

सत्यार्थी का वचन॥ पण्डितजी ख्रिष्टीय शास्त्र के और उसके कर्त्ताओं के वृत्तान्त पर उसी प्रकार की पराई साक्षी जो मैं ने मंगल ज्योतिषी का दृष्टान्त लाके बतलाई मिलती है और सनातन के उन ग्रन्थकर्त्ताओं का थोड़ा सा वर्णन मैं पीछे करूंगा। परन्तु ख्रिष्टीय शास्त्र की सिद्धता जान्ने के लिये उन साक्षियों का सम्पूर्ण वृत्तान्त जान्ना कुछ अवश्य नहीं है। क्योंकि एक और रीति है जिस से अनुमान करके किसी ग्रन्थ के वृत्तान्त का सिद्ध अथवा असिद्ध होना और उसके रचित होने का काल निर्णय हो सक्ता है विशेष करके ऐसी रचना जैसी

खिष्टीय शास्त्र में मिलती है सो इस रीति से भली भांति निर्णय हो सक्ती है। क्योंकि उस का जो वृत्तान्त मैं ने बतलाया उस्से आप को विदित होगा कि उस में अनेक राजाओं और देशों और कुलों के नाना प्रकार के वृत्तान्त जैसे राजाओं और प्रधानों के नाम और उनके काल और आज्ञा इत्यादि और अनेक जातियों के धर्म और रीतें और बहुतेरे मनुष्यों के नाम और व्यवहार इत्यादि वृत्तान्त लिखे हैं। अब उन देशों और उन राजाओं इत्यादि की जो दशा उस काल में उपस्थित थी सो बहुतेरे अन्य ग्रन्थों से भली भांति जानी जाती हैं। क्योंकि उन दिनों में यवन और रूमी लोग बड़े विद्यावान थे और उन्हों ने अपना ऐसा ही वृत्तान्त अपने बहुतेरे ग्रन्थों में जो आज लों उपस्थित हैं लिख छोड़ा है और उन ग्रन्थों के देखने से उन की जो दशा उस काल में थी सो भली भांति जानी जाती है। अब आप ध्यान कीजिये कि यदि खिष्टीय शास्त्र उस काल से कई सा बरस पीछे लिखा जाता तो इस प्रकार का वृत्तान्त जो उस में लिखा है उस काल के अन्य ग्रन्थों के वृत्तान्त से क्योंकर मिल सक्ता अथवा यदि खिष्टीय शास्त्र के कर्त्ता केवल अपनी कल्पना मात्र से लिखते तो इस प्रकार का वृत्तान्त लिखके अपने लिये ऐसा जाल क्योंकर फैलाते। सच यह है कि कल्पना के वृत्तान्त में बहुधा केवल ऐसे विषयों का वर्णन मिलता है जिन का निर्णय नहीं हो सक्ता। और किसी मनुष्य को जितना विद्यावान हो अपने काल से कई सा बरस पहिले का विस्तारपूर्वक वृत्तान्त शुद्धता के संग लिखना एक अत्यन्त कठिन काम वरन अनहोना देख पड़ता है क्योंकि अवश्य उस में अज्ञानता के कारण अपने ही काल का कुछ वृत्तान्त मिला लेता। इस के अनुसार पहिले सत्संगों में मैं ने बतलाया कि पुराणों के बहुतेरे वृत्तान्तों से निश्चय है कि उन में से कई एक सचमुच नवीन हैं क्योंकि उन में नवीन वृत्तान्त लिखे हैं। परन्तु खिष्टीय शास्त्र

में कोई ऐसा वृत्तान्त नहीं मिलता है जो उस काल से किसी पीछे काल का वृत्तान्त देख पड़ता है बरन उस का सारा वृत्तान्त उस काल के अन्य ग्रन्थों के वृत्तान्त से ठीक मिलता है॥

वेदविद्वान का बचन॥ आप कृपा करके दो एक ऐसा वृत्तान्त संक्षेप से बतलाइये कि जिस्से आप का अभिप्राय मेरी समझ में आवे॥

सत्यार्थी का बचन॥ पण्डित जी मैं ऐसा ही करूंगा परन्तु पहिले भूगोल विद्या की रीति से उन देशों का थोड़ा सा वर्णन करना चाहिये। विदित हो कि भारतखण्ड की सीमा से पश्चिम ओर को आठ सौ एक कोस की दूर पर एक बड़ा सागर है जिस को भूमध्यस्थ सागर कहते हैं इस कारण से कि एक संकोच भाग को छोड़ वह चारों ओर थल से घिरा हुआ है। उस की लंबाई पश्चिम पूरब को आठ सौ कोस के लग भग है और चौड़ाई उत्तर दक्षिण को तीन सौ कोस की। इस के चारों तटों पर वे देश उपस्थित हैं जिन में उस समय प्राचीन रूमी महाराज प्रबल था। उस के पुर्वी तट पर और भूमण्डल के आशिया नाम उस महाखण्ड में जिस का भारतखण्ड एक भाग है यहूदी कुल का यहूदिया देश था उस देश में ख्रिष्टीय धर्म का आरम्भ हुआ और उस की राजधानी यरूशलीम नगर में श्री यिसू ख्रिष्ट बलिदान की रीति मारा गया। उस सागर के दक्षिणीय तट पर भूमण्डल का एक दूसरा महाखण्ड आफ़्रिका नाम उपस्थित है जिस में मिस्र आदि देश प्रसिद्ध हैं। फिर सागर के उत्तरीय तट पर आशिया महाखण्ड का एक छोटा भाग जो छोटा आशिया कहलाता उपस्थित है। उस में पहिले से कई एक भिन्न २ राज थे और यवन लोगों के बसे हुए अफसूस स्मरना इत्यादि बड़े २ सुन्दर नगर विख्यात थे। फिर छोटे आशिया से पश्चिम ओर को उस सागर के एक छोटे भाग के वारपार प्राचीन यवनों का देश था जिस में अथीनी कोरिंत इसपार्त्ता इत्यादि नगर अति

प्रसिद्ध थे यह देश भूमण्डल के यूरप नाम महाखण्ड का एक भाग है। फिर उस की और पश्चिम ओर को यूरप महाखण्ड में और भूमध्यस्थ सागर के उत्तरीय तट पर एक अन्तरीप इटली नाम उपस्थित है। उस देश की राजधानी रूम नाम अति प्रसिद्ध नगर था जिस का महाराजाधिराज उन दिनों में उन सारे देशों के ऊपर राज करता था। इस के पश्चिम और उत्तर को कई एक और भी देश थे जैसे स्पेन गाल अङ्गरेजिस्थान इत्यादि जिन के निवासी उन दिनों में असभ्य थे। उस सागर के निकट में छोटे बड़े समेत पचास एक भिन्न २ राज थे जो रूमी महाराजाधिराज के आधीन थे और उस की ओर से रूमी प्रधान नियत होके इन सारे देशों में राज करते थे॥

वेदविद्वान का वचन॥ क्या आप ने नहीं कहा कि उन दिनों में प्राचीन रूमियों का धर्म्म देवपूजा और मूर्त्तिपूजा था॥

सत्यार्थी का वचन॥ हां पण्डितजी मैं ने ऐसा कहा और यही कारण था कि ख्रिष्टीय धर्म्म के आरम्भ में उन देशों के प्रधानों ने उस धर्म्म के शिष्यों को ऐसी कठिन पीड़ा से सताया। इतिहासवेत्ता ऐसा वर्णन करते हैं कि तीन सौ ईसवी सम्वत से पहिले रूमी महाराजाओं की आज्ञा से ख्रिष्टीय शिष्यों की दश बड़ी यंत्रणा अर्थात कसन हुए। और सचमुच सात ऐसे महाराजा थे जिन्हों ने तीन सौ ईसवी सम्वत से पहिले ख्रिष्टीय शिष्यों को कष्ट देने और घात करने की आज्ञा चलाई। उन का अभिप्राय यह था कि शिष्यों को सर्व स्थानों से खोज कर उन से श्री यिसू ख्रिष्ट की अपनिन्दा और देवताओं की पूजा करावें जो शिष्य ऐसा न करे तो उस को कष्ट देके मार डालने की आज्ञा थी। इस में उन की यह अभिलाषा थी कि इस रीति से ख्रिष्टीय धर्म्म को सर्वत्र नाश कर देंगे इसी प्रकार से सारे देशों में जो रूमी महाराज के संबन्धी थे रूमी प्रधान समय २ ख्रिष्टीय शिष्यों को सताते थे। परन्तु इसके होते

ही खिष्टीय धर्म सत्यता के बल से और ईश्वर की सहायता से चारों ओर फैलता गया और तीन सौ ईसवी सम्वत में रूमी महाराज के अधिक मनुष्य शिष्य हो गये थे। इतने में एक रूमी प्रधान जिस की माता खिष्टीय शिष्य थी महाराजाधिराज हो गया उस का नाम कानष्टेंटाइन था और चाहे उस धर्म के सत्य विश्वास से चाहे लौकिक चतुराई से वह भी खिष्टीय शिष्य हो गया। इस के उपरान्त खिष्टीय धर्म की और उस के शिष्यों की नवीन दशा हो गई उन के शारीरिक दुःख का अन्त हुआ और उन की सांसारिक प्रतिष्ठा होने लगी। इस के संग धर्म की मूल शिक्षा में नाना प्रकार की अयोग्य मिलावनी हो गई और शिष्यों का विश्वास और स्वभाव बहुत बिगड़ गये। अब आप ध्यान कीजिये कि यदि खिष्टीय शास्त्र उस काल से पीछे लिखा जाता तो अवश्य इस अद्भुत वृत्तान्त के बहुत लक्षण उस में देख पड़ते परन्तु इस का कोई पता सम्पूर्ण खिष्टीय शास्त्र में कहीं दृष्टि नहीं आता। इस के विरुद्ध शिष्यों की अपनिन्दा और सांसारिक कष्ट और शारीरिक क्लेश और दुःख के लक्षण सदा देख पड़ते हैं। इस्से निश्चय है कि खिष्टीय शास्त्र तीन सौ ईसवी सम्वत से पहिले लिखा था और शिष्यों के इन दुःखों का वृत्तान्त पराई साक्षी से सिद्ध और प्रमाणिक होता है॥

वेदविद्वान का वचन॥ यद्यपि खिष्टीय शास्त्र तीन सौ ईसवी सम्वत के पीछे नहीं लिखा था तथापि उस के वृत्तान्त की कल्पना करने के लिये तीन सौ बरस तो कुछ थोड़ा काल नहीं है कदाचित उस सम्वत से पहिले लिखा गया होगा फिर भी कल्पित मात्र हो सके॥

सत्यार्थी का वचन॥ आप इस बात पर ध्यान कीजिये कि इस वृत्तान्त के आरम्भ से लेके तीन सौ ईसवी सम्वत लों उस पर साक्षी देने के लिये उस के शिष्य इतने दुःख सहते थे और वृत्तान्त पर साक्षी देना सिद्धान्त पर विश्वास लाने से बड़ा भेद है। भ्रान्त मनुष्य यदि सच्चा हो तो

मिथ्या सिद्धान्त पर निष्कपट बिस्वास लाके कभी २ अनन्त जीवन के आस-रा से अपने बिस्वास के हेतु मर जाने पर प्रसन्न हो सक्ता है। परन्तु मिथ्या वृत्तान्त की कल्पना करके उस के बिस्वास के हेतु कौन मनुष्य मर जाने पर प्रसन्न होगा और ऐसे दुःख और क्लेश की दशा में जैसी पहिले ख्रिष्टीय शिष्यों की थी ऐसे मिथ्या वृत्तान्त की कल्पना कौन करता अथवा जो कोई करता भी फिर जब उस का निर्णय भली भांति हो सक्ता तो कौन उस पर बिस्वास लाके मर जाने पर प्रसन्न होता। परन्तु एक और प्रसिद्ध वृत्तान्त अन्य ग्रन्थों से जाना जाता है जिस्से अनुमान सिद्ध होता है कि बहुधा ख्रिष्टीय शास्त्र ईसवी सम्वत के सत्तर बरस से पहिले लिखा गया होगा। क्योंकि उस सम्वत से थोड़ी देर पहिले यहूदी कुल के लोग जो रूमी महाराज के सम्बन्ध में थे उस राज से दंगा करके हट गये। इस पर रूमी महाराजा वेसपासीयन नामे ने अपने पुत्र और सेनापति टीटस नामे को जो पीछे से महाराजाधिराज हो गया सेना समेत यीरशलीम नगर के बिरुद्ध भेज दिया। उस नगर को कुछ देर लों घेरा करके अन्त को टीटस ने ले लिया और बहुधा यहूदियों का घात करके नगर को सर्वच ढा दिया। जितने यहूदी उस बड़ी कठिन हत्या से बच निकले सो सब के सब स्वदेशत्यागी हो अन्य-देशों में जा बसे उस काल से आज लों यहूदी राज का नाम और लक्षण कभी नहीं देख पड़ा है। अब ख्रिष्टीय शास्त्र के वृत्तान्त देखने से जाना जाता है कि जब वह लिखा गया तब यीरशलीम नगर कुशल से था और यहूदी कुल के लोग अपनी राजधानी में रहते थे और इस बात को छोड़ कि श्री यिसू ख्रिष्ट ने इस कठिन विपत की दृष्टान्तपूर्वक भविष्य-द्वाणी कही थी उस भयानक दशा का कोई पता ख्रिष्टीय शास्त्र में देख नहीं पड़ता है। अब आप ध्यान कीजिये कि जब ख्रिष्टीय शास्त्र के कर्त्ता सब के सब यहूदी कुल के मनुष्य थे और ख्रिष्टीय धर्म का आरम्भ

उसी नगर में था और यिसू के प्रेरित और पहिले शिष्य भी उसी नगर में रहते थे यदि ख्रिष्टीय शास्त्र नगर के विनाश होने के पीछे लिखा जाता तो क्या उस वृत्तान्त का बहुत सा वर्णन उस शास्त्र में नहीं मिलता। क्योंकि श्री यिसु ख्रिष्ट ने कहा था कि मुझे ग्रहण न करने के हेतु से नगर का विनाश हो जायगा और यहूदी लोग तितर बितर और घातित किये जायेंगे। फिर जब यह दशा उपस्थित हो गई यदि ख्रिष्टीय शास्त्र उस के पीछे लिखा जाता तो क्या उस के कर्त्ता अपने प्रभु का वचन सत्य दिखाने के निमित्त और यहूदी शत्रुओं से बिश्वास कराने की इच्छा से उस दशा का वर्णन न करते। इस रीति से जब आप ख्रिष्टीय शास्त्र के सम्पूर्ण वृत्तान्त पर भली भान्ति ध्यान करेंगे तो अनुमान सिद्ध ठहरेगा कि वह बहुधा सत्तर बरस ईसवी सम्वत से पहिले लिखा गया होगा नहीं तो पलूस आदि प्रेरितों के पत्रों में औरशलीम नगर के विनाश होने का वर्णन अवश्य मिलता। परन्तु इस के बिरुद्ध उन में से एक पत्र उन यहूदियों के नाम पर जो यहूदिया देश में रहते थे लिखा है और उस में उस नगर के प्रसिद्ध मन्दिर और उस की सामग्री का विस्तारपूर्वक वर्णन इस रीति से लिखा है कि यह सब तुम लोगों के बीच इन दिनों में उपस्थित हैं॥

वेदविद्वान का बचन॥ अब आप का अभिप्राय मेरी समझ में आ जाता है अर्थात कि ख्रिष्टीय शास्त्र के वृत्तान्त के स्वरूप ही से अनुमान सिद्ध है कि उस के कर्त्ता समकालिक मनुष्य भये होंगे क्योंकि दूसरे काल के मनुष्य ऐसा वृत्तान्त जैसा उस में लिखा है नहीं लिख सक्ते॥

सत्यार्थी का बचन॥ हां पण्डितजी मेरा अभिप्राय यही है और जहां लों आप उस शास्त्र का वृत्तान्त जान लेंगे तहां लों आप को निश्चय होगा कि यही अनुमान सिद्ध है। क्योंकि प्रेरितों की क्रिया की पुस्तक में बहुतेरे देशों और नगरों का जिन में पलूस प्रेरित मंगल-

समाचार प्रचारने को गया वर्णन होता है। वह प्रेरित सब से बड़े और प्रसिद्ध नगरों अर्थात अफसूस अन्ताकिया दमिश्क फिलपी तेसलोनीका अथीनी कोरिन्त रूम इत्यादि बड़े २ प्रसिद्ध नगरों में मंगलसमाचार सुनाने को गया और उस की यात्राओं का वर्णन उस पुस्तक में लिखा है। और इस के पीछे उस ने उन नगरों के शिष्यों के पास पत्र भी लिख भेजे और उन सभों का वृत्तान्त उस काल की दशा से जैसी अन्य ग्रन्थों से जानी जाती है ठीक मिलता है और किसी पीछे काल का वृत्तान्त कहीं पाया नहीं जाता है। ख्रिष्टीय शास्त्र के कर्त्ताओं के समकालिक मनुष्य होने पर इतना अनुमान पूर्वक प्रमाण मैं ने बतलाया परन्तु अब अवसर नहीं रहा कि आज के दिन सनातन के अन्य ग्रन्थकर्त्ताओं की साक्षी बतलावें। आप की इच्छा हो तो कल के दिन हम इस की चर्चा करेंगे॥

ग्रन्थकर्त्ता का बचन॥ इस पर हम तीनों मनुष्य बिदा होके अपने २ घर को चले गये॥

इति मतपरीक्षा का द्वितीय खण्ड का दूसरा

सत्सङ्ग समाप्त हुआ॥

तीसरा सत्सङ्ग।

सनातन के अन्य ग्रन्थकर्त्ताओं की साक्षी की चर्चा।

ग्रन्थकर्त्ता का वचन॥ तीसरे दिन जब हम तीनों मनुष्यों की भेंट हुई तब वेदविद्वान इस प्रकार से संवाद करने लगे॥

वेदविद्वान का वचन॥ पण्डितजी मैं ने उस सारे वर्णन पर जो आप ने पहिले सत्सङ्गों में किया बहुत ध्यान किया है। और मुझ को ऐसा देख पड़ता है कि जब ईसवी सम्वत के सत्तर बरस हो चुके तब अर्थात यिसू ख्रिष्ट के अन्तर्ध्यान होने के सैंतीस बरस पीछे यरुशलीम नगर जिस में ख्रिष्टीय धर्म्म का बहुधा लिखा हुआ वृत्तान्त उपस्थित था विनाश हुआ और यहूदी कुल का राज सर्वथा मिट गया। और जब इस दशा का वर्णन ख्रिष्टीय शास्त्र में नहीं लिखा है तो अनुमान सिद्ध होता है कि ख्रिष्टीय शास्त्र का वृत्तान्त बहुधा नगर के विनाश होने से पहिले लिखा गया होगा क्योंकि यदि उस के पीछे लिखा जाता तो अति असम्भव है कि प्रेरितों के इक्कीस पत्रों में से उस का कुछ वर्णन किसी एक पत्र में न मिले। फिर यदि आरम्भ ही से ख्रिष्टीय शिष्यों की ऐसी क्लेश-पूर्वक दशा थी जैसी उस शास्त्र में लिखी है तो अति असम्भव है कि कोई मनुष्य ऐसे वृत्तान्त की कल्पना करके अथवा उस पर जो सत्य और प्रामाणिक न हो बिश्वास लाके अपने को ऐसी दुर्दशा में निष्फल और व्यर्थ फसावे। परन्तु आप ने कहा था कि शिष्यों की ऐसी दुःखित दशा की साक्षी अन्य ग्रन्थकर्त्ताओं की ओर से मिलती है सो कृपा करके बतलाइये कि यह साक्षी किस प्रकार की है॥

सत्यार्थी का वचन॥ आप ध्यान कीजिये कि संसार का व्यवहार ऐसा है कि जब कोई नया मत उत्पन्न होता है तो आरम्भ में बहुधा मनुष्य

उस को अपना विरुद्ध जान उस पर बड़ी विरुद्धता करते हैं और सामर्थ भर उस के शिष्यों को दुःख भी देते हैं। और यदि अन्य धर्मों के आरम्भ में यही दशा है तो ख्रिष्टीय धर्म के विषय में कितनी अधिक न होगी क्योंकि वह समस्त अन्य धर्मों से आगे बढ़के उन सभों को मिथ्या ठहराता है और केवल अपने को परमेश्वर का दिया हुआ धर्म बतलाता है। इस कारण बहुतेरे मनुष्य जब उस का समाचार पहिले सुनते हैं तो उस को बड़ा पक्षपाती और द्वेषी जान उस्से बड़ा वैर रखते हैं और उस के शिष्यों को सताते हैं और जब लों उस के प्रमाणों की दृढ़ परीक्षा करके उस को सच न देखें तो उस को ग्रहण नहीं करते हैं। सो ख्रिष्टीय धर्म के आरम्भ में उस के शिष्यों की यही दशा थी और अब मैं इस बात की साक्षी अन्य ग्रन्थों से निकालके बतलाता हूं॥

जानना चाहिये कि ईसवी सम्वत के सत्तर बरस से लेके एक सौ बरस लों रूम नगर में एक अति प्रसिद्ध रूमी इतिहासवेत्ता विराजता था जिस का नाम तासीतूस था। उस ने सोलह ग्रन्थों में उन रूमी महाराजाओं का वृत्तान्त जो ईसवी सम्वत के चौदह बरस से लेके छियानवे बरस लों राज करते थे लिखा। उन में से पहिले चार ग्रन्थ और पांचवें का एक भाग बचके आज लों उपस्थित हैं। इन में नीरो नामे एक महाराजा का जो ईसवी सम्वत के चौवन बरस से लेके अठसठ लों राज करता था वृत्तान्त लिखा है उस के राज में अर्थात ईसवी सम्वत के चौंसठ बरस में रूम नगर अकस्मात फूंका गया और उस के बहुधा गृह भस्म हुए। कितने मनुष्य जानते थे कि यह वृत्तान्त अकस्मात से नहीं वरन महाराजा की आज्ञा से उपस्थित हुआ क्योंकि नीरो महाराजा एक अति निर्दयी और दुष्टाचार था और अपने जीवन को लीला क्रीड़ा

और लुचपन में गंवाता था। सो इस का वृत्तान्त तासीतूस इतिहासवेत्ता यों लिखता है॥

तासीतूस रूमी इतिहासवेत्ता का बचन॥ परन्तु यह सन्देह कि महाराजा ने नगर को फुंकवाया था न तो किसी मनुष्य के उद्योग से न तो महाराजा के बड़े २ दानों से न तो देवताओं की बड़ी पूजा से दूर हो सका। इस कारण इस सन्देह को दूर करने के निमित्त उस ने नगर जलाने का दोष उन लोगों पर जो ख्रिष्टीय कहलाते थे लगाया और उन को अति कठिन दंडों से सताया। ये मनुष्य जो ख्रिष्टीय कहलाते थे अपनी दुराचारी के कारण संसार में घिनित और दंड के योग्य थे। एक मनुष्य जिस का नाम ख्रिष्ट था ख्रिष्टीय मत का कर्त्ता था और तिबीरीऊस नामे महाराजा के समय में पन्तूस पिलातूस रूमी प्रधान की आज्ञा से वह बध किया गया। उस का मिथ्या मत बन्द होके फिर बढ़ने लगा और यहूदियों के देश में जो उस का मूल स्थान था व्याप्त हो रूम नगर में भी जिस में चारों ओर से दुष्ट और घिनौनी बस्तु बहके मिलती हैं पहुंचा। कितने मनुष्य अपने को ख्रिष्टीय शिष्य प्रगट कर पकड़े गये और उन के बतलाने से दूसरे मनुष्यों का एक बड़ा समूह हाथ आया। ये मनुष्य नगर के जलाने के कारण से तो नहीं परन्तु संसार की घिन के कारण से अपराधी गिने गये। कितने बनैले पशुओं की खालों में बन्द होके कुत्तों से फाड़े गये कितनों के हाथ और पांव काठ की कड़ियों पर कीलों से टांके गये और वे इस रीति से लटकाये जाके मर गये कितने राल भरे हुए बस्त्रों में लपेटे गये जिन में सांझ को आग लगाई गई कि रात में उजाला करें। महाराजा ने आप ही अपनी बाटिकाओं में और उपवनों में इन दंडों का दिखलावा किया और सारथी का भेष कर देखने को खड़ा था। यह दशा देख उन ख्रिष्टीय शिष्यों पर जो ऐसा दुःख सहते थे यद्यपि दंड के योग्य तो थे तथापि साधारण

लोगों को उन पर दया आई क्योंकि वे जानते थे कि यह दंड साधारण कल्याण के लिये तो नहीं वरन निर्दयी महाराजा के आनन्द के कारण इन अपराधियों को दिया जाता है॥

सत्यार्थी का वचन॥ अब आप ध्यान कीजिये कि तासीतूस रूमी इतिहासवेत्ता की इस साक्षी पर इस कारण तनिक भी सन्देह नहीं हो सक्ता है कि वह प्रत्यक्ष रूप से ख्रिष्टीय धर्म का वैरी था और इस साक्षी के द्वारा कई एक बातें सिद्ध होती हैं अर्थात॥

१ यिसू ख्रिष्ट का यहूदिया देश में पंतूस पिलातूस रूमी प्रधान की आज्ञा से मारा जाना और इस वृत्तान्त का काल भी अर्थात तैबीरीऊस महाराजा के राज में जो ईसवी सम्वत के सैंतीस बरस में अर्थात यिसू ख्रिष्ट के अन्तर्ध्यान होने के चार बरस पीछे मर गया और यह सब ख्रिष्टीय शास्त्र के वृत्तान्त के समान है॥

२ यद्यपि ख्रिष्ट के वध होने से ख्रिष्टीय धर्म पहिले कुछ बन्द हो गया तथापि अकस्मात वह फिर बढ़ने लगा और यहूदी देश में तुरन्त व्याप्त हुआ और अन्य देशों में भी बड़े बल के साथ फैल गया। यहां लों कि ईसवी सम्वत के चौंसठ बरस में अर्थात यिसू ख्रिष्ट के अन्तर्ध्यान होने के एकतीस बरस पीछे रूम नगर में जो अन्यदेश की राजधानी और सागर के वार पार और कई सौ कोस दूर था और जिस के निवासी यहूदी लोगों से एक दूसरी भाषा बोलते थे फिर भी उस समय उस नगर में इतने मनुष्य ख्रिष्टीय शिष्य हो गये थे कि नगर के साधारण देवपूजक उन से घिन और भय मानते थे और तासीतूस कहता है कि उन का एक बहुत बड़ा समूह हाथ आया। इन्हीं लोगों के नाम पर पुलूस प्रेरित ने अपना एक पत्र जो ख्रिष्टीय शास्त्र में है लिखा॥

३ अन्य धर्म के लोग ख्रिष्टीय शिष्यों से बड़ी घिन और वैर करते और उन को सताते थे यहां लों कि रूमी महाराजा ने समझा कि जब

मैं उन पर नगर जलाने का दोष लगाऊं तो साधारण लोग इस बात को सत्य मानके प्रसन्न होंगे और उन को दंड देने से आनन्दित होंगे। इसके अनुसार उस ने उन को अत्यन्त कठिन दंडों से सताया॥

वेदविद्वान का बचन॥ क्या इस साक्षी से एक और बात भी सिद्ध नहीं होती है अर्थात कि ख्रिष्टीय शिष्य अत्यन्त दुराचार और दंड के योग्य थे नहीं तो साधारण लोग उन से ऐसी घिन क्यों करते थे॥

सत्यार्थी का बचन॥ पण्डितजी मैं ने पहिले बतलाया कि अन्य धर्म्म के लोग उन से ऐसी घिन किस कारण करते थे। कारण यह था कि ख्रिष्टीय धर्म्म समस्त अन्य धर्म्मों को मिथ्या ठहराता है और सारे मनुष्य जाति को आज्ञा करता है कि देवपूजा आदि मिथ्या धर्म्म को त्याग और अपने पापों से पछतावा कर परमेश्वर के सत्य अवतार श्री यिशू ख्रिष्ट पर बिश्वास लावें और काम क्रोध लोभ मोह को वश कर पवित्र चाल चलें ऐसी शिक्षा से संसारिक मनुष्य अत्यन्त घिन सदा करते हैं। परन्तु यह बात कि ख्रिष्टीय शिष्य ऐसे दुराचार नहीं थे एक दूसरे प्रसिद्ध रूमी देवपूजक की साक्षी से सिद्ध होती है इस विषय में आप एक रूमी प्रधान के बचन सुनिये॥

उस काल का एक कुलीन रूमी था जिस का नाम प्लिनीयूस था वह पूर्वोक्त इतिहासवेत्ता तासीतूस का समकालिक और मित्र था। ईसवी सम्वत के एक सौ बरस में यह कुलीन पुरुष रूमी महाराजा की आज्ञा से छोटे आशिया के एक देश बैथूनिया नाम का प्रधान ठहरा। उस देश में पहुंचके उस ने बहुतेरे ख्रिष्टीय शिष्यों को पाया यहां लों कि ख्रिष्टीय धर्म्म की वृद्धि के कारण देश की देवपूजा प्राय: नाश हो गई थी। परन्तु रूमी महाराज की यह आज्ञा थी कि राजआज्ञा के बिरुद्ध कोई नया धर्म्म प्रचलित होने न पावे इस कारण उस देश के मनुष्य प्रधान के बिचारस्थान में ख्रिष्टीय शिष्यों पर नये धर्म्म चलाने का दोष लगाने लगे।

इस पर रूमी प्रधान प्लिनीयूस ने इस प्रकरण में आज्ञा पाने के निमित्त रूमी महाराजा त्रेजानूस नामे के पास एक पत्र लिख भेजा यह पत्र और रूमी महाराजा का उत्तर भी दोनों रूमी भाषा में आज लों उपस्थित हैं। प्लिनीयूस के पत्र से दो एक बातें उतारके मैं बतलाता हूं आप सुनिये॥

प्लिनीयूस रूमी प्रधान का वचन॥ उन लोगों के प्रकरण में जिन पर ख्रिष्टीय शिष्य होने का दोष लगाया गया मैं ने ऐसा किया कि मैं ने उन से पूछा क्या तुम ख्रिष्टीय शिष्य हो और जब उन्हों ने मान लिया तो धमकी देके उन से दोबारा पूछा। इतने में यदि वे अपने बिश्वास में हठी रहे तो मैं ने उन को तुरन्त दंड देने की आज्ञा किई क्योंकि मैं ने समझा कि उन का जो ही धर्म होवे ऐसे हठ और ढिठाई के कारण दंड के योग्य थे। कितनों ने जिन पर यह दोष लगाया गया पहिले मान लिया कि हम ख्रिष्टीय शिष्य हैं परन्तु पीछे से ना किया अथवा कहा कि ख्रिष्टीय धर्म को छोड़ दिया था कितने तो तीन बरस से कितने इस्से अधिक और थोड़े तो बीस बरस से पहिले। इन सभों ने आप की और देवताओं की मूर्त्तों की पूजा किई और ख्रिष्ट को धिक्कार किया जो सच्चे ख्रिष्टीय शिष्य किसी प्रकार से कभी न करेंगे। परन्तु उन्हों ने यह भी कहा कि जब ख्रिष्टीय शिष्य थे इस्से अधिक उन का कोई दोष अथवा भ्रम न था कि स्थापित दिन पर पौ फटने से पहिले एकट्ठे होने का और आपस में अनुवाद करके परमेश्वर की रीति ख्रिष्ट की स्तुति में गीत गाने का व्यवहार था। और वे परस्पर सौगन्ध करते थे किसी कुकर्म के अभिप्राय से तो नहीं बरन इस के बिरुद्ध कि चोरी से डकैती से और व्यभिचार से अलग रहेंगे और अपने बचन पर अटल बिश्वासी रहेंगे और बन्धक को फेर देंगे और इसके पीछे वे अलग हो जाते थे फिर भोजन करने के लिये एकट्ठे होते थे जिस में सब के

सन्न मिले जुले लो थे परन्तु निर्दोषता के संग भोजन करते थे इस व्यवहार को भी मेरी आज्ञा से उन्हों ने छोड़ दिया था। इतना समाचार पाके मैं ने अवश्य जाना कि दे। कन्याओं को जो धर्म्म सेवक कहलाती थीं सताके सत्य दशा का निर्णय करूं परन्तु एक निष्प्रमाण और असंगत मत को छोड़ मैं ने कुछ न पाया। इस कारण अधिक विचार न कर मैं आप से परामर्श ढूंढता हूं क्योंकि यह प्रकरण मुझ को परामर्श के योग्य देख पड़ता है विशेष करके जब उन लोगों की संख्या पर जो दोषी ठहरते ध्यान होता है। सच तो है कि प्रत्येक आयुष के और प्रत्येक पदवी के बहुतेरे पुरुषों और स्त्रियों पर दोष लगाया जाता है और यह केवल बस्तियों और नगरों में नहीं बरन गावों में भी। फिर भी इस का कुछ अटकाव हो सक्ता है क्योंकि मन्दिर जो प्रायः शून्य हो रहे थे अब फिर प्रतिष्ठित होने लगे और पूजा जो बन्द हो गई थी कुछ होती जाती है और बलिदान के पशु जिन को कोई नहीं लेता था अब बिकने लगते हैं इसी अनुमान सिद्ध होता है कि यदि पछतावा का औसर मिले तो बहुतेरे मनुष्य फेर आवेंगे॥

सत्यार्थी का बचन॥ स्निनीयूस प्रधान के इस पत्र के उत्तर में त्रेजानूस महाराजा ने इस अभिप्राय की आज्ञा भेजी कि जिस किसी पर खिष्टीय शिष्य होने का दोष प्रमाणिक हो तो उसको दंड देना चाहिये परन्तु उस को मन फिरने का औसर भी देना चाहिये। और इस प्रकरण में प्रधान अपनी ओर से किसी का खोज न करे और ऐसे दोष पत्र जिन में वादी का नाम लिखा न हो किसी प्रकार से ग्रहण न होवे इत्यादि॥

अब आप ध्यान कीजिये कि यद्यपि यह प्रधान स्निनीयूस ख्रिष्टीय धर्म्म का ऐसा बैरी था और उस के एक निष्प्रमाण और असङ्गत मत जानता था तथापि ख्रिष्टीय शिष्यों को परीक्षा करके और उन को सता-

के उन पर किसी प्रकार की दुराचारी का दोष प्रमाणिक नहीं कर सक्ता था। उस ने केवल यह कहा कि आज्ञानुसार अपना धर्म्म त्याग न करने से वे हठी और ढीठे हैं क्योंकि वह नहीं जानता था कि धर्म्म के प्रकरण में मनुष्य की आज्ञा ते। नहीं बरन केवल ईश्वर की आज्ञा माननी चाहिये। अब आप ख्रिष्टीय शास्त्र में देखिये कि जिस रीति से पुलूस प्रेरित ने रूम नगर के शिष्यों के नाम पर एक शिक्षापूर्वक पत्र भेजा उसी रीति से इस बैथूनिया देश के शिष्यों के नाम पर पतरस प्रेरित ने एक पत्र लिख भेजा। और उन पत्रों के अभिप्राय से प्रगट होता है कि ख्रिष्टीय धर्म्म के शिक्षक अपने शिष्यों को किस प्रकार का उपदेश करते थे और ऐसी दुर्दशा में शिष्यों का दृढ़ विश्वास और पवित्र चाल किस हेतु से अटल रही जैसे पतरस के पहिले पत्र में दूसरे पर्व्व के उन्नीसवें पद से लेके पचीसवें पद लों और चौथे पर्व्व के बारहवें पद से लेके सोलहवें पद लों लिखा है॥

वेदविद्वान का बचन॥ इन दो साक्षियों के बचन से पण्डित जी निःसन्देह सिद्ध होता है कि पहिले ख्रिष्टीय शिष्य एक बड़ी क्लेशपूर्वक दशा में फंसे थे और यह प्रत्यक्ष बात है कि ऐसी दशा में पड़ जाने के अभिप्राय से कोई मनुष्य मिथ्या वृत्तान्त की कल्पना नहीं करता और जान बूझके मिथ्या वृत्तान्त पर विश्वास नहीं लाता। परन्तु अब लों आप ने ख्रिष्टीय शास्त्र पर उस प्रकार की साक्षी नहीं बतलाई जैसी मंगल ज्योतिषी का दृष्टान्त लाके आप ने वर्णन किया था। अर्थात इन दो मनुष्यों की साक्षी से कुछ सिद्ध नहीं होता है कि ख्रिष्टीय शास्त्र के कर्त्ता सच मुच वेही मनुष्य थे जिन का वर्णन आप ने पहिले किया॥

सत्यार्थी का बचन॥ सच पण्डितजी इन दो मनुष्यों की साक्षी से ख्रिष्टीय शास्त्र ते। प्रमाणिक नहीं होता है यह बात मैं मान लेता हूं परन्तु इस साक्षी से उस शास्त्र का इतना वृत्तान्त अर्थात शिष्यों का सताया

जाना तो सिद्ध और प्रमाणिक होता है। फिर शास्त्र तो वृत्तान्त ही के कारण ध्यान योग्य और ग्राह्य होता है और जब इतना वृत्तान्त सिद्ध और प्रमाणिक ठहरा तो अनुमान है कि शेष वृत्तान्त भी वैसा ही होगा। परन्तु अब मैं बतलाता हूं कि शास्त्र ही पर और उस के कर्त्ताओं पर अन्य ग्रन्थकर्त्ताओं की कैसी साक्षी मिलती है ॥

मैं तो बतला चुका हूं कि ख्रिष्टीय शास्त्र के दूसरे भाग अर्थात नवीन वाचापत्र और मंगलसमाचार नाम पुस्तक में सत्ताईस लिखावटें संयुक्त हैं और वे सब की सब भिन्न २ समय में और भिन्न २ नगरों में लिखी थीं। उस काल में सारे ग्रन्थ हाथ से लिखे जाते थे और उनका मोल भारी था इस कारण प्रत्येक नया ग्रन्थ विलंब करके चारों ओर फैल गया। फिर जब लों यिसू ख्रिष्ट के प्रेरित जीते थे तब लों वे अपने मुख के बचनों से शिष्यों का उपदेश करते थे और युहन्ना प्रेरित ईसवी सम्वत के एक सौ बरस लों जीता था। इतने में ख्रिष्टीय मण्डलियां चारों ओर के बहुतेरे नगरों में स्थापित हो गई थीं और ये नगर भिन्न २ देशों में थे और उन के निवासी भिन्न २ भाषा बोलते थे। अब आप ध्यान कीजिये कि इन समस्त मण्डलियों में इन सारी सत्ताईस लिखावटों का सम्पूर्ण रूप से पहुंचना एक बड़ा कठिन काम था। उदाहरण की रीति मैं एक लिखावट अर्थात रूमी शिष्यों के नाम पर पुलूस प्रेरित के पत्र का थोड़ा वर्णन करता हूं। यह पत्र ईसवी सम्वत के अठावन बरस के लगभग लिखा था और पहिले एक ही पत्र रूमी ख्रिष्टीय मण्डली के नाम पर निवेदित हुआ। अब यह पत्र दूसरे नगर के शिष्यों के पास क्योंकर पहुंच जाता जब लों पुलूस प्रेरित आप नगर २ में यात्रा करके शिष्यों का उपदेश करता था तो अन्य देशों के शिष्य उस के एक पत्र से क्या बड़ी चिन्ता करते। परन्तु जब वह प्रेरित मर गया था और दूसरे नगर का कोई शिष्य रूमी मण्डली में आके पुलूस के पत्र के अभिप्राय

से ज्ञान पाता तो संभव है कि उस पत्र को उतारके अपनी मण्डली के पास ले जाने का अभिलाषी होता इस रीति से होते २ वह पत्र बहुधा ख्रिष्टीय मण्डलियों में फैल जाता। परन्तु प्रेरितों के अन्य पत्र ऐसी मण्डलियों के नाम पर लिखे थे जो रूमी मण्डली से अत्यन्त छोटी और अप्रसिद्ध थीं और कई एक पत्र तो मनुष्यों ही के नाम पर लिखे थे। सो उन का फैल जाना और भी कठिन होता और सारी सत्ताईस लिखावटों का समस्त ख्रिष्टीय मण्डलियों में सम्पूर्ण रूप से उपस्थित हो जाना बहुतेरे बरसों का काम देख पड़ता है। फिर इन सभों की संहिता करके एक ग्रन्थ बन जाना और सारी मण्डलियों में इस का ग्रहण होना उस्से भी अत्यन्त कठिन और विलंबी काम दृष्टि आता है॥

वेदविद्वान का बचन॥ फिर इन सारी लिखावटों के समस्त मण्डलियों से ग्रहण होने में कितनी देर हुई॥

सत्यार्थी का बचन॥ पण्डितजी एक वृत्तान्त से सिद्ध होता है कि ईसवी सम्बत के एक सौ और डेढ़ सौ के बीच सत्ताईस लिखावटों में से चार छोटे पत्र और प्रकाशित नाम पुस्तक को छोड़ अर्थात बाईस लिखावटें साधारण ख्रिष्टीय शिष्यों से ग्रहण हुईं क्योंकि उस काल में उन बाईसों का उलथा यवनी भाषा से सुरयानी भाषा में किया गया और वह उलथा आज लों उपस्थित है। सम्भव है कि ईसवी सम्बत के एक सौ दस अथवा एक सौ बीस बरस में यह उलथा किया गया। यूहन्ना के दूसरे और तीसरे पत्र और पतरस का दूसरा पत्र और यहूदा का पत्र जो सब के सब छोटे हैं और प्रकाशित नाम पुस्तक उस उलथे में संयुक्त नहीं हैं। और इस से निश्चय है कि उलथा करनेवाले उन पांच लिखावटों को नहीं जानते थे अथवा उन पर सन्देह करते थे। इन को छोड़ सारी बाईस लिखावटें यवनी भाषा की लिखावटों

के ठीक समान मिलती हैं। इस्से निश्चय है कि सारे सुरयानी शिष्य उन लिखावटों को अन्य शिष्यों की साक्षी से ग्रहण करते थे कि ये सब की सब सत्य और प्रमाणिक और प्रेरितों की लिखी हुई हैं॥

वेदविद्वान का वचन॥ यह सुरयानी भाषा किन लोगों की भाषा थी॥

सत्यार्थी का वचन॥ पण्डितजी वही भाषा थी जिस को उन दिनों के साधारण यहूदी लोग बोलते थे। यहूदिया देश एक दूसरे देश का जिस का नाम सुरिया था एक भाग हो गया था और यहूदी लोगों की भाषा प्राचीन इबरानी भाषा से कुछ अन्तर हो सुरयानी नाम से प्रसिद्ध हो गई। श्री यिशू ख्रिष्ट और उस के प्रेरित यही भाषा बोलते थे और सम्भव है कि मंगलसमाचार पुस्तक की अनेक लिखावटों का उलथा एक सौ ईसवी सम्वत से पहिले सुरयानी भाषा में किया गया होगा। और परम्परा की बात है कि मती रचित मंगलसमाचार पहिले उसी भाषा में लिखा था और पीछे यवनी भाषा में उलथा किया गया। परन्तु बाईस लिखावटों की संहिता और सुरयानी भाषा में उन का उलथा उसी काल में जो मैं ने कहा किया गया होगा॥

वेदविद्वान का वचन॥ आप इस बात को किस प्रकार से जानते हैं॥

सत्यार्थी का वचन॥ पण्डितजी जो मैं इस बात का सम्पूर्ण उत्तर देऊं तो बड़े विस्तार से वर्णन करना होगा और फिर भी कदाचित मेरा वर्णन आप की समझ में भली भान्ति नहीं आ सके इस लिये इस का थोड़ा सा वर्णन मैं करता हूं आप सुनिये॥

जानना चाहिये कि तीन सौ ईसवी सम्वत के लगभग यहूदिया देश में कैसरिया नाम नगर की ख्रिष्टीय मंडली का प्रधान शिक्षक एक मनुष्य युसीवियूस नाम था। यह मनुष्य एक बड़ा पण्डित और ज्ञानी था

और उस ने अनेक ग्रन्थों को जिन में से कितने आज लों उपस्थित हैं यवनी भाषा में लिखा। उस के पश्चातगामी ग्रन्थकर्त्ता उस का इतना वर्णन करते हैं कि कोई विद्यावान उस के इन ग्रन्थों पर सन्देह नहीं करता है। इस पण्डित ने अपने काल से पहिले के जितने ग्रन्थ मिल सके थे इकट्ठा कर और ख्रिष्टीय मण्डली का वृत्तान्त आरम्भ ही से निर्णय कर उस का वर्णन एक ग्रन्थ में जो आज लों उपस्थित है विस्तार के साथ लिखा। इस ग्रन्थ में उस ने अनेक मनुष्यों का जो प्रेरितों के काल में और उस के पीछे ख्रिष्टीय मण्डली में प्रसिद्ध थे और ख्रिष्टीय धर्म्म के स्थापनार्थ ग्रन्थकर्त्ता भी थे और दूसरे मनुष्यों का जो उस धर्म्म के खण्डनार्थ ग्रन्थकर्त्ता थे वृत्तान्त लिखा है और उन के ग्रन्थों का कुछ तात्पर्य्य भी उतारके अपने ग्रन्थ में मिला लिया। उन ग्रन्थों में से कितने आज लों उपस्थित हैं और उन के तात्पर्य्य से निश्चय देख पड़ता है कि युसीबियूस का वर्णन ठीक और यथार्थ है पीछे मैं उन का कुछ वर्णन करूंगा॥

फिर युसीबियूस ने उन सत्ताईस लिखावटों का जो ख्रिष्टीय शास्त्र के दूसरे भाग में संयुक्त हैं वर्णन किया और उन के कर्त्ताओं का वृत्तान्त भी अपने पूर्व्वगामी ग्रन्थकर्त्ताओं से निर्णय करके लिखा है। उस के ग्रन्थ का कुछ वर्णन उतारके मैं बतलाता हूं आप सुनिये॥

युसीबियूस प्रधानशिक्षक का वचन॥ परन्तु अब इस विषय पर पहुंचके उचित है कि नवीन धर्म्मपत्र की उन लिखावटों का जिन का वर्णन मैं ने ऊपर किया है एक सूचीपत्र लिखूं। निदान पहिले चार मंगलसमाचारों का चौगुना स्वरूप रखना चाहिये। इन के पीछे प्रेरितों की क्रियाओं का वृत्तान्त आता है। फिर पुलूस प्रेरित के चौदह पत्र आते हैं। इस के उपरान्त यूहन्ना प्रेरित का एक पत्र और पतरस प्रेरित का एक पत्र ग्राह्य है। इन से अधिक यदि उचित देख पड़े तो यूहन्ना

रचित प्रकाशित नाम पुस्तक रक्खेंगे इस का जो विचार किया जाता है पीछे बतलाऊंगा। ये सब के सब सारे शिष्यों से गृहीत होते हैं॥

उन लिखावटों में जिन पर कुछ विवाद तो होता है पर तौ भी वे बहुधा शिष्यों से भली भान्ति पहिचानी जाती और गृहीत भी होती हैं सो ये हैं अर्थात यअकूब प्रेरित का पत्र और यहूदा का पत्र और पतरस का दूसरा पत्र और यूहन्ना का दूसरा और तीसरा पत्र। वे पत्र यूहन्ना प्रेरित के अथवा उसी नाम के किसी दूसरे मनुष्य के लिखे हुए होवें॥

सत्यार्थी का वचन॥ अब आप ध्यान कीजिये कि युसीबियूस दो सौ सत्तर ईसवी सम्वत में उत्पन्न हुआ और वह बड़ा विद्यावान होके अपनी काल की दशा से भली भान्ति सज्ञान था और अपने काल से पहिले की दशा अन्य ग्रन्थों से निर्णय कर उस का वर्णन करता है। और उस की साची के अनुसार उस के काल में मंगलसमाचार पुस्तक की सत्ताईस लिखावटें बहुधा खिष्टीय शिष्यों से प्रेरितों की प्रामाणिक लिखावटों के समान भली भान्ति पहिचानी जाती और ग्रहण होती थीं और साधारण खिष्टीय मण्डलियों में पढ़ी जाती थीं। उस के काल से लेके आज लों के ग्रन्थकर्त्ताओं का वर्णन करना अवश्य नहीं है क्योंकि वे इतनी अधिकाई से मिलते हैं और उन की साची ऐसी स्पष्ट और निश्चित है कि उस मध्य काल के विषय में कोई सन्देह नहीं करता है। फिर ऐसा वर्णन इतना विस्तारपूर्वक भी होता कि इस समय हम से नहीं हो सक्ता है यदि आप इस का सारा वृत्तान्त जाने चाहें तो दूसरे ग्रन्थों में देखिये। परन्तु युसीबियूस के काल से प्रेरितों के काल लों लौट जाके थोड़ा वर्णन करना चाहिये। उस के वचन से ऐसा देख पड़ता है कि उस के काल में ये लिखावटें कुछ देर से खिष्टीय मण्डलियों में गृहीत और स्थापित हो गई थीं। फिर भी प्रेरितों के

काल से एक सौ अस्सी एक बरस शेष रहे जिन का थोड़ा वर्णन करना चाहिये ॥

वेदविद्वान का वचन ॥ पण्डितजी युसीबियूस के बचनों से यह भी देख पड़ता है कि उस काल में कितने ख्रिष्टीय शिष्य मंगलसमाचार पुस्तक कि कई एक लिखावटों पर सन्देह करते थे। इस दशा में ख्रिष्टीय शास्त्र उस की साक्षी से सिद्ध और प्रामाणिक क्योंकर ठहर सक्ता है ॥

सत्यार्थी का वचन ॥ सच है मेरे मित्र कि कितने शिष्य पांच चार छोटी लिखावटों पर सन्देह करते थे परन्तु कितने उन को ग्रहण भी करते थे। और यद्यपि वे लिखावटें त्यागित भी होतीं तथापि इस्से ख्रिष्टीय शास्त्र के वृत्तान्त को और ख्रिष्टीय धर्म्म के मूल तात्पर्य्य को कुछ हानि नहीं पहुंचती क्योंकि इन को छोड़ शेष लिखावटों में सारी मूल बातें संयुक्त हैं। उस सन्देह से केवल यह जाना जाता है कि उन लिखावटों के प्रमाण जिन पर सन्देह था उन लोगों पर भली भान्ति प्रगट नहीं हुए। और यह भी उस्से निश्चय होता है कि प्राचीन ख्रिष्टीय शिष्य बिना ध्यान और परीक्षा किये ख्रिष्टीय शास्त्र को ग्रहण नहीं करते थे क्योंकि यदि बिना विचार और निर्णय किये उस को ग्रहण करते तो उन लिखावटों पर क्योंकर सन्देह करते। उस के पीछे जब उन लिखावटों की दशा अधिक स्पष्टता से प्रगट हुई तो वह भी सन्देह बहुधा मिट गया ॥

वेदविद्वान का वचन ॥ भला अब इस बात को छोड़ आप युसीबियूस से पहिले काल का थोड़ा वर्णन कीजिये ॥

सत्यार्थी का वचन ॥ पण्डितजी इस काल के लिये इतनी बहुरूपी साक्षी मिलती है कि मैं इस का वर्णन केवल संक्षेप से कर सक्ता हूं सुलभता के निमित्त विद्वान लोग इस काल को तीन भागों में कर देते हैं। ईसवी सम्वत के सत्तर बरस से लेके एक सौ बीस बरस लों पहिला भाग

है। फिर एक सौ बीस बरस से लेके एक सौ सत्तर बरस लों दूसरा भाग है। और एक सौ सत्तर से लेके तीन सौ तीन बरस लों तीसरा भाग है। तीसरा भाग भिन्न २ देशों और अनेक मण्डलियों की साची का काल कहलाता है और उस काल में बहुतेरी मण्डलियों के इतने मनुष्य खिष्टीय शास्त्र पर साची देते हैं कि उन का विस्तारपूर्वक वर्णन करना अनहोना है। ऐसा तो नहीं कि वे सब के सब मंगलसमाचार ग्रन्थ की सारी लिखावटों पर स्पष्ट साची देते हैं परन्तु यह कि एक ग्रन्थकर्त्ता दो तीन वा अधिक लिखावटों पर और दूसरा दो तीन और लिखावटों पर साची देता है। इन में से कितने तो खिष्टीय धर्म्म के स्थापनार्थ और कितने उस के खण्डनार्थ ग्रन्थकर्त्ता थे परन्तु वे सब के सब खिष्टीय शास्त्र के किसी तात्पर्य्य का ऐसा वर्णन करते हैं अथवा उस को उतारके अपने ग्रन्थों में लिखते हैं जिस्से निश्चय है कि वे खिष्टीय शास्त्र की किसी २ लिखावट को पहिचानते और ग्रहण भी करते थे कि ये खिष्टीय धर्म्म के प्रामाणिक ग्रन्थ हैं और इन सभों की सम्पूर्ण साची से मंगलसमाचार ग्रन्थ की सत्ताईस लिखावटें उस काल के लिये सिद्ध ठहरती हैं॥

फिर दूसरा भाग खिष्टीय धर्म्म के स्थापनार्थ यवनी ग्रन्थकर्त्ताओं का काल कहलाता है और उस के लिये युसीबियूस पूर्वोक्त इतिहासवेत्ता इत्यादि मनुष्यों के द्वारा से बहुतेरे ग्रन्थकर्त्ताओं का वर्णन मिलता है। और उन के ग्रन्थों का जो उस काल में उपस्थित थे कुछ तात्पर्य्य भी अन्य ग्रन्थों में उतारा गया है और ये सब के सब खिष्टीय शास्त्र पर उसी रीति से साची देते थे परन्तु उन के निज ग्रन्थ आज लों बच नहीं रहे हैं। उस काल के ऐसे ग्रन्थकर्त्ता जिन के ग्रन्थ आज लों उपस्थित हैं सो केवल चार हैं परन्तु पचास बरस के लिये चार साची बहुत हैं। और वे सब के सब खिष्टीय शास्त्र पर ऐसी साची देते हैं कि जिस्से उस की

कितनी २ लिखावटों का उस काल में प्रसिद्ध ग्रहण होना सिद्ध होता है। और अन्य भी ग्रन्थकर्त्ताओं के विषय में युसीबियूस इत्यादि की साक्षी पर सन्देह करने का कोई उचित कारण देख नहीं पड़ता है क्योंकि जहां लों उन की साक्षी निर्णीत हो सक्ती है तहां लों वह यथार्थ ठहरती है॥

फिर पहिला भाग प्रेरित संगी प्राचीनों का काल कहलाता है और इन पचास बरसों के लिये भी चार ऐसे ग्रन्थकर्त्ता हैं जो प्रेरितों के संगी शिष्य थे और जिन के ग्रन्थ आज लों उपस्थित हैं और जो खिष्टीय शास्त्र की कितनी २ लिखावटों पर और उस के मूल वृत्तान्त पर साक्षी देते हैं और उस के अनेक तात्पर्य्य को उतारके अपने ग्रन्थों में लिखते हैं। इस रीति से प्रेरितों ही के काल लों खिष्टीय शास्त्र पर साक्षियों की एक निरन्तर श्रेणी मिलती है। ऐसा तो नहीं कि युसीबियूस से पहिले कोई एक ग्रन्थकर्त्ता उस शास्त्र की सारी सत्ताईस लिखावटों पर साक्षी देता है परन्तु उन सभों की साक्षी मिलाने से वे सारी लिखावटें सिद्ध और प्रामाणिक ठहरती हैं॥

वेदविद्वान का वचन॥ आप के वर्णन के अनुसार इस प्रकरण में किसी प्रकार का दोष नहीं देख पड़ता है। परन्तु यदि आप उदाहरण की रीति इन साक्षियों में से दो एक मनुष्यों का वृत्तान्त और वचन संक्षेप से बतलाइये तो मैं उस प्रमाण के बल को निर्णय कर सकूंगा॥

सत्यार्थी का वचन॥ पण्डितजी मैं भी ऐसा ही करने चाहता था सो पहिले मैं एक मनुष्य का जिस का नाम कुप्रीआनस था वृत्तान्त कहूंगा। यह मनुष्य पहिले देवपूजक और न्याय का पाठक था फिर वह खिष्टीय धर्म्म का समाचार सुन और उस के प्रमाणों को जांच दो सौ पैंतालीस ईसवी सम्वत में खिष्टीय शिष्य हो गया। थोड़े बरस के पीछे वह कार्थेगो नाम नगर के खिष्टीय मण्डली का प्रधान शिक्षक

ठहरा। वह नगर भूमध्यस्थ सागर के दक्षिणीय तट पर अफ्रिका नाम महाखण्ड में उपस्थित था। उस नगर के साधारण लोग देवपूजक हो कुप्रीआनुस से वैर करके चाहते थे कि उस को क्रीड़ागृह में सिंह से फाड़े जाने के लिये फेंक देवें। उस जोखिम से बचके जब उस नगर के निवासियों पर एक महा मरी आई और बहुधा मनुष्य भय से अपने कुटुम्ब को छोड़ भाग निकलते थे तब कुप्रीआनूस ने खिष्टीय शिष्यों को बुलाके उन की सहायता से रोगियों की सुध लिई और मृतकों को गाड़ दिया। यों परमेश्वर के अनुग्रह से और कुप्रीआनूस और उस के शिष्यों के उद्योग से महा मरी थम गई और नगर के बहुतेरे निवासी बचे। निदान ईसवी दो सौ अठावन सम्वत में वह फिर रूमी प्रधान के विचारस्थान पर खींचा गया। तब प्रधान ने जिस का नाम गिलेरीयूस था उस्से कहा क्या तू कुप्रीआनूस है उस ने उत्तर दिया हां मैं हूं। प्रधान ने कहा महाराजा की आज्ञा है कि तू देवताओं की पूजा कर कुप्रीआनूस ने उत्तर दिया कि मैं ऐसा नहीं करता हूं। फिर प्रधान ने उस बुड्ढे पर दया कर कहा कि तू अपनी कुशल की चिन्ता कर। इस पर कुप्रीआनूस ने उत्तर दिया कि जो कुछ करना आप को उचित है सो कीजिये क्योंकि इस प्रकरण में क्या विचार करना है। तब प्रधान ने आज्ञापत्र को पढ़के कहा कि कुप्रीआनूस खड्ग से मारा जावे इस पर कुप्रीआनूस ने कहा कि ईश्वर धन्य हो तब वह खड्ग से मारा गया॥

इस कुप्रीआनूस ने खिष्टीय धर्म के संबन्ध में कई एक ग्रन्थ बनाये और अपने मित्रों के पास पत्र भी लिख भेजे इन में से कितने पत्र आज लों उपस्थित हैं जिन के दो एक वचन उतारके मैं बतलाता हूं॥

कुप्रीआनूस का वचन॥ खिष्टीय मण्डली एक वाटिका के समान फलदायक वृक्षों को अपने घेरे के अन्दर रखती है और उन को जो फलदायक नहीं हैं काट डालती है। इन वृक्षों को वह चार धाराओं

से सींचती है अर्थात चार मंगलसमाचारों से जिन के द्वारा वह अनुग्रह देती है इति॥

तुम अपने स्वामी नहीं होते हो जैसे पुलूस प्रेरित अपने पत्रों में जो चाल चलन के विषय में हमारा उपदेश करते हैं आज्ञा देता हुआ कहता है इति॥

पुलूस प्रेरित एक उचित और यथार्थ संख्या पर ध्यान कर सात मण्डलियों के पास पत्र लिख भेजता है और प्रभु भी प्रकाशित नाम ग्रन्थ में सात मण्डलियों और उन के अध्यक्षों के पास अपनी दैव्य आज्ञा और स्वर्गीय उपदेश लिखता है इति॥

सत्यार्थी का बचन॥ आप देखिये कि वे सात मण्डलियां जिन का वर्णन कुप्रीआनूस करता है कि पुलूस प्रेरित ने उन के नाम पर पत्र लिख भेजे सो इन नगरों और इन देशों में स्थापित हुई थी अर्थात छोटा आशिया में गलतिया और कलसी और अफसूस यवन देश में तसलोनीकी और फिलपी और कोरिंत और इटले देश में रूम। सो इन्हीं मण्डलियों के नाम पर पुलूस प्रेरित के पत्र मंगलसमाचार ग्रन्थ में उपस्थित हैं। परन्तु दो मण्डलियों के पास उस ने दो २ पत्र भेजे इस रीति से नौ पत्र हुए और पांच पत्र तीन मनुष्यों के नाम पर भेजे। निदान कुप्रीआनूस मंगलसमाचार की चौदह लिखावटों का वर्णन करता है और सम्भव है कि यदि उस के अन्य ग्रन्थ आज लों उपस्थित होते तो दूसरे ग्रन्थकर्त्ताओं के समान वह शेष लिखावटों का भी वर्णन करता परन्तु अब मैं एक दूसरे साक्षी का संक्षेप वर्णन करता हूं॥

एक सौ ईसवी सम्वत के लगभग एक मनुष्य जिस का नाम युसटिनीयूस था उत्पन्न हुआ उस के माता पिता यवन थे परन्तु उस ने यहूदिया देश में जन्म पाया। उस ने युवावस्था में यवनी पण्डितों से शिक्षा पाके उन के मुनियों के सारे प्रसिद्ध विद्यारूपी दर्शनों को प्राप्त किया।

परन्तु उन की शिक्षा से सन्तोष न पाके और ख्रिष्टीय धर्म का समाचार सुनके उस के प्रमाणों को जांच लिया और ख्रिष्टीय शिष्य हो गया। इस के उपरान्त यवनी पण्डित का स्वरूप बनके वह चारों ओर मंगल-समाचार का उपदेश करने को घूमता फिरा। अन्त को एक सौ पैंसठ ईसवी सम्वत के लगभग अपने विश्वास के कारण दंड पाके रूम नगर में उस का शिर कट गया। इस युसटिनीयूस ने ख्रिष्टीय धर्म के स्थापनार्थ अनेक ग्रन्थ बनाये जिन में से तीन बड़े ग्रन्थ आज लों उपस्थित हैं। उन में उस ने मंगलसमाचार पुस्तक की दश लिखावटों का स्पष्ट वर्णन किया और उन का बहुत तात्पर्य्य उतारके लिखा है। अधिक बिस्तार के भय से मैं इस समय उस के ग्रन्थ का केवल एक वर्णन उतारके कहता हूं इस में वह ख्रिष्टीय शिष्यों के भजन की रीति जो रबिवार को होता था बतलाता है॥

युसटिनीयूस का बचन॥ वे ग्रन्थ जिन को यिसू के प्रेरितों ने लिखा और यहूदी भविष्यद्वक्ताओं के ग्रन्थ सदा मण्डलियों में समय के अनुसार सुनाये जाते हैं और जब उन का पढ़ना हो चुका तब प्रधान शिक्षक उन लिखावटों की आज्ञा के समान पवित्र चाल चलने का उपदेश करता है॥

सत्यार्थी का बचन॥ इस वर्णन से पण्डितजी जाना जाता है कि आरम्भ ही से ख्रिष्टीय शिष्यों की रीति थी कि रबिवार को जब भजन करने के लिये एकट्ठे होते थे तो प्रेरितों की जो २ लिखावटें उन के पास उपस्थित थीं सो मण्डली में शिष्यों के उपदेश के निमित्त पढ़के सुनाते थे क्योंकि यहूदी लोगों की मण्डलियों में पूर्वकाल ही से प्राचीन वाचापत्र की लिखावटें इस रीति से सुनाई जाती थीं और पहिले ख्रिष्टीय शिष्य ऐसा करके केवल अपनी पूर्वी रीति पर चलते थे। यों प्रेरितों की लिखावटों का तात्पर्य्य सारे शिष्यों को विदित हुआ और उस में

कुछ अन्तर डालने की यदि किसी की इच्छा भी होती तथापि उस की तनिक भी सामर्थ न थी ॥

वेदविद्वान का वचन ॥ आप इन मनुष्यों का वृत्तान्त कहां से जानके बतलाते हैं ॥

सत्यार्थी का वचन ॥ पण्डितजी मैं कह चुका कि युसीबियूस इतिहासवेत्ता के वर्णन से मैं उन का वृत्तान्त जानता हूं और उस को छोड़ और भी ग्रन्थकर्त्ता हैं जो उन का कुछ वृत्तान्त लिखते हैं परन्तु इन मनुष्यों के निज वचनों को मैं उन्हीं के ग्रन्थों से जो आज लों उपस्थित हैं उतारके बतलाता हूं। अब युसीबियूस से लेके प्रेरितों के काल लों ग्रन्थकर्त्ताओं की एक सीधी श्रेणी संक्षेप से बतलाऊंगा। इन सभों के ग्रन्थ आज लों उपस्थित हैं और वे सब के सब मंगलसमाचार की कई एक लिखावटों पर साक्षी देते हैं और प्रत्येक ग्रन्थकर्त्ता अपने पूर्वगामी पर भी साक्षी देते हैं ॥

१ युसीबियूस एक मनुष्य के वृत्तान्त लिखता है जो ईसवी सम्वत दो सौ बीस के लगभग मर गया उस का नाम टर्टुलियानूस था। उस ने सब समेत सैंतीस ग्रन्थ छोटे बड़े बनाये जिन में से कितने आज लों उपस्थित हैं इन ग्रन्थों में वह ख्रिष्टीय शास्त्र की बाईस लिखावटों पर साक्षी देता है ॥

२ टर्टुलियानूस युसीबियूस दोनों एक मनुष्य का वृत्तान्त लिखते हैं जो बुड्ढा होके ईसवी सम्वत दो सौ के लगभग मर गया उस का नाम ऐरेनायूस था और वह तीस एक बरस से लुगदून नगर की मण्डली का प्रधान शिक्षक था। मिथ्या मतों के खण्डनार्थ उस का एक बड़ा ग्रन्थ आज लों उपस्थित है जिस में वह मंगलसमाचार की बहुधा लिखावटों पर साक्षी देता है ॥

३ ऐरेनायूस और युसीबियूस दोनों एक मनुष्य का वृत्तान्त लिखते

हैं जो ईसवी सम्वत एक सौ साठ में अपने विश्वास के कारण इस्मरना नगर में आग से जलाया जाके मारा गया। उस का नाम पलोकारपूस था और वह युवावस्था में यूहन्ना प्रेरित का शिष्य था। उस का लिखा हुआ एक पत्र फिलपी नगर के शिष्यों के नाम पर आज लों उपस्थित है और उस पत्र में उस ने मंगलसमाचार के अनेक तात्पर्य्य और वचन उतारके लिखे हैं॥

४ उसी पलोकारपूस के नाम पर एक दूसरे मनुष्य का लिखा हुआ पत्र आज लों उपस्थित है। उस मनुष्य का नाम इग्नातीयूस था और वह एक सौ छः ईसवी सम्वत के लगभग रूम नगर के क्रीड़ाग्टह में वन्य पशुओं से फाड़े जाने के लिये डाला गया। यह मनुष्य कई एक प्रेरितों का संगी और शिष्य था और उस ने सात पत्र लिख छोड़े जो आज लों उपस्थित हैं इन पत्रों में मंगलसमाचार के अनेक तात्पर्य्य लिखे हैं॥

५ बहुतेरे प्राचीनों की साक्षी से जाना जाता है कि ईसवी सम्वत इक्कानवे के लगभग रूमी शिष्यों का प्रधान शिक्षक एक मनुष्य था जो क्लेमनस रूमी के नाम से प्रसिद्ध है। वह भी प्रेरितों का संगी था और कितने विद्यावान जानते हैं कि फिलपियों के नाम पर पुलूस प्रेरित के पत्र में जो मंगलसमाचार ग्रन्थ में उपस्थित है क्लेमनस नाम जो आता है सो उसी मनुष्य का नाम है। क्लेमनस रूमी ने एक पत्र जो आज लों उपस्थित है कोरिंत नगर के शिष्यों के पास लिख भेजा उस पत्र में वह खिष्टीय शास्त्र के तात्पर्य्य का ऐसा वर्णन करता है जिस्से अनुमान सिद्ध होता है कि वह प्रेरितों की बहुधा लिखावटों को भली भान्ति जानता था॥

पण्डितजी इन मनुष्यों को छोड़ जिन का संक्षेप वर्णन मैं ने अभी किया इसी प्रकार के कितने और भी साक्षी हैं जो प्रेरितों के काल लों

उन की लिखावटों पर साक्षी देते हैं। श्रार उन की साक्षी श्रकस्मातीय श्रार निराभिप्राय है इसी हेतु से अति ग्राह्य है क्योंकि उन्हों ने अपना वर्णन प्रेरितों की लिखावटों को प्रमाणिक करने की इच्छा से नहीं लिखा। इस के विरुद्ध प्रत्यक्ष देख पड़ता है कि उन की समझ में इन लिखावटों पर कोई सन्देह नहीं करता है उन का अभिप्राय केवल यह था कि प्रेरितों की शिक्षा प्रकाश करके खिष्टीय शिष्यों के मन को उभारें॥

वेदविद्वान का वचन॥ पण्डितजी इतनी साक्षी के विरुद्ध सन्देह करना कि प्रेरितों की लिखावटें उन मनुष्यों के काल में उपस्थित श्रार प्रचलित नहीं थीं एक निर्बुद्धि का काम देख पड़ता है। परन्तु एक श्रार सन्देह मेरे मन में रहा जिस को दूर करना चाहिये सो यह है कि आप किस प्रकार से जानते हैं कि जो लिखावटें इन दिनों में प्रेरितों के नाम से प्रचलित होती हैं सो सच मुच वे ही लिखावटें हैं जो पहिले काल में प्रचलित थीं क्योंकि उस काल से आज लों प्रायः अठारह सौ बरस बीत गये हैं। क्या प्रेरितों के निज हाथ के लिखे हुए पत्र आज लों उपस्थित हैं अथवा किस रीति से जाना जाता है कि उन का ठीक उतारा हुआ कदाचित किसी ने उन के तात्पर्य्य में अन्तर डाला हो॥

सत्यार्थी का वचन॥ हे मित्र आप के प्रश्न से मैं अति प्रसन्न हूं क्योंकि उस से जाना जाता है कि परीक्षा करने में आप की बुद्धि निपट प्रवीण श्रार आप का मन अत्यन्त तत्पर है जो कोई बुद्धिमान इसी प्रकार से खिष्टीय शास्त्र की परीक्षा करेगा सो अवश्य अन्त को उस के विषय में भली भान्ति सन्तुष्ट होगा। सच है कि इन दिनों में प्रेरितों के निज हाथ का लिखा हुआ कोई पत्र उपस्थित नहीं है क्योंकि इतने बरस लों प्रतिदिन अभ्यास करने से कोई पत्र बच नहीं सका। पर तौ भी उन के ठीक उतारा के विषय में किसी प्रकार का सन्देह नहीं है

क्योंकि मैं बतला चुका आरम्भ ही से उन का उतारा किया जाता था और होते २ वे सर्वत्र पश्चिमीय देशों के ऊपर फैल गये और उन का उलथा भी कितनी भिन्न २ भाषाओं में हो गया। अब जान्ना चाहिये कि ईसवी सम्वत चार सौ के लगभग रूमी महाराज का एक बड़ा उलटाव हो गया। उस काल में कितनी उत्तरीय जातें चढ़ाव करके उस पर प्रबल हुईं और ये मनुष्य अति असभ्य हो विद्या को तुच्छ जान सामर्थ भर सारे ग्रन्थों को भस्म करते गये। इस दशा में ख्रिष्टीय शिष्य अपने शास्त्र बचाने के निमित्त उन ग्रन्थों को गुप्तस्थानों में छिपाने लगे। इस उलटाव के हेतु उन सारे देशों में ज्ञान का सूर्ज सैकड़ों बरस लों उदय नहीं हुआ और अज्ञानता का अन्धकार छाया रहा था इस कारण से साधारण ख्रिष्टीय शिष्यों का स्वभाव और चाल भी बहुत बिगड़ गई। अन्त को जब छापने की विद्या निर्मित हुई तब उस रात का अन्धकार छूटने और विद्या और धर्म का अभ्यास बड़े यत्न से होने लगा। इस पर बहुतेरे विद्यावान उन छिपे हुए ग्रन्थों को बड़े उद्योग से खोजके परीक्षा करने लगे और आज लों भी यह उद्यम होता जाता है। इस रीति से ख्रिष्टीय शास्त्र के एक सहस्र से अधिक हाथ के लिखे हुए पत्र इकट्ठे हुए और इन सभों की एक अति घोर परीक्षा हो गई। इन में से कितने सात सौ आठ सौ बरस के और कितने चौदह सौ बरस के प्राचीन हैं और ये उन सारे देशों के गुप्तस्थानों से मिल गये हैं। इन को छोड़ भिन्न २ भाषाओं के उलथा के लिखे हुए पत्र भी उपस्थित हैं और इन सभों की परीक्षा और तुल्यता करने से निश्चय हुआ कि लेखकों के छोटे भ्रमों को छोड़ इन सभों का तात्पर्य्य और बचन भी एक ही समान हैं। इस दशा में सन्देह का स्थान कहां रहा निश्चय है कि ख्रिष्टीय शास्त्र की जो लिखावटें इन दिनों में प्रचलित हैं सो प्रेरितों के निज हाथ के लिखे हुए पत्रों के ठीक उतारा है॥

वेदविद्वान का वचन॥ हे पण्डित ऐसा देख पड़ता है कि आप प्रेरितों के वचन को श्री यिसू ख्रिष्ट के वचन के समान सारे अन्य मनुष्यों के वचन से अधिक श्रेष्ठ और ग्राह्य जानते हैं इस का क्या कारण है॥

सत्यार्थी का वचन॥ इस का यह कारण है कि जो हम यिसू ख्रिष्ट का जो वृत्तान्त मंगलसमाचार में लिखा है सत्य और यथार्थ मानें तो उस्से यह जाना जाता है कि यिसू ने प्रेरितों को धर्मोपदेश और मूल सत्य को निर्मलता और निर्दोषता के संग प्रगट करने की एक आश्चर्य्य दैव्य शक्ति दिई। इस दशा में उन का वचन अवश्य सारे अन्य मनुष्यों के वचन से भिन्न और अत्यन्त श्रेष्ठ और ग्राह्य है निदान वह परमेश्वर के वचन के समान होगा। इस बात को प्रकाश करने के निमित्त मैं ख्रिष्टीय शास्त्र के दो एक बचन उतारके बतलाता हूं इन में कितने तो श्री यिसू ख्रिष्ट के वचन हैं जिन को उस ने अपने प्रेरितों से कहा और प्रेरितों के निज वचन भी हैं जिन को उन्हों ने अपने उपदेश के दैव्य मूल के विषय में कहा॥

श्री यिसू ख्रिष्ट का वचन॥ स्वर्ग और पृथिवी पर समस्त पराक्रम मुझे दिया गया है इस कारण तुम जाओ और समस्त लोगों को पिता पुत्र और पवित्र आत्मा के नाम से बपतिस्मा अर्थात जलसंस्कार देके शिष्य करो और उन्हें उपदेश करो कि जो कुछ मैं ने तुम्हें आज्ञा किई है वे उन सभों को पालना करें और देखो मैं सर्वदा जगत की समाप्ति लों तुम्हारे संग हूं इति॥

मैं ने ये बातें तुम्हारे संग होते हुए तुम से कहीं परन्तु वह सहायक अर्थात पवित्र आत्मा जिसे पिता मेरे नाम से भेजेगा वह तुम्हें सब बातें सिखावेगा और सब बातें जो कुछ कि मैं ने तुम से कही हैं तुम्हें चिताय देगा इति॥

तुम से कहने को अब भी मुझे बहुत सी बातें हैं परन्तु अब तुम उन्हें सह नहीं सक्ते पर जब वह सत्य का आत्मा आवे वह तुम्हें सारी सचाई में चलावेगा क्योंकि वह अपनी न कहेगा परन्तु जो कुछ वह सुनेगा सो कहेगा और वह तुम्हें आगे का भेद बतलावेगा इति॥

पलूस प्रेरित का वचन॥ पर हे भाइयो मैं तुम्हें चिता देता हूं कि वह मंगलसमाचार जिस का उपदेश मैं ने किया सो मनुष्य की ओर से नहीं है क्योंकि मैं ने उस को न तो मनुष्य से पाया न सीखा परन्तु यिसू ख्रिष्ट के प्रकाशित से इति॥

तुम ने तो सुना होगा कि परमेश्वरीय अनुग्रह का भण्डारपन तुम्हारे लिये मुझे दिया गया कि उस ने प्रकाशित से भेद को मुझे जताया जैसे मैं संक्षेप से आगे लिख चुका उसे पढ़के तुम जान सक्ते हो कि मैं ने ख्रिष्ट के भेद को क्या समझा जो अगिले समयों में मनुष्यों के सन्तानों को इस भान्ति जताया नहीं गया जिस रीति से उस के पवित्र प्रेरितों और भविष्यद्वक्ताओं पर आत्मा से प्रकाश किया गया है इति॥

जो कोई अपने को आश्चर्य अथवा आत्मिक जाने तो वह इन बातों को जो मैं तुम्हें लिखता हूं मान लेवे कि प्रभु ही की आज्ञा हैं इति॥

पतरस प्रेरित का वचन॥ इन बातों का सन्देश अब तुम को उन की ओर से दिया गया जिन्हों ने पवित्र आत्मा की सहायता से जो स्वर्ग से उतरा मंगलसमाचार का सन्देश तुम को दिया इति॥

युहन्ना प्रेरित का बचन॥ हम जानते हैं कि परमेश्वर का पुत्र आया है और हमें ऐसी बुद्धि दिई है कि हम उस को जो सत्य है पहिचानें और हम उस में हैं जो सत्य है अर्थात उस के पुत्र यिसू ख्रिष्ट में वही सत्य परमेश्वर और अनन्त जीवन है इति॥

हम परमेश्वर के हैं वह जो परमेश्वर को पहिचानता है हमारी

सुनता है जो परमेश्वर से नहीं है से हमारी नहीं सुनता है इसी हम सचाई के आत्मा और भ्रम के आत्मा को जान लेते हैं इति॥

वेदविद्वान का बचन॥ प्रेरितों के ये बचन निःसन्देह अति भारी अभिप्राय के होते हैं और यदि वे सत्य हैं तो इन की शिक्षा परमेश्वरीय बचन के समान ग्रहण करनी चाहिये। परन्तु हम को किस प्रकार से निश्चय हो सक्ता है कि ये वचन सत्य हैं क्योंकि सारे धर्म के प्रचारक अपने मत के स्थापनार्थ इसी प्रकार का बाद करते हैं परन्तु आप ने पहिले सत्सङ्गों में कहा कि ये धर्मप्रचारक सब के सब सत्य नहीं हो सक्ते हैं क्योंकि वे आपस में विरुद्ध होते हैं इस दशा में हम क्योंकर जान सक्ते हैं कि प्रेरितों के बचन अन्य धर्म प्रचारकों के बचन से श्रेष्ठ और ग्राह्य हैं॥

सत्यार्थी का बचन॥ पण्डितजी इस प्रकरण का निपटारा प्रेरितों के लिखे हुए वृत्तान्त की परीक्षा से हो सक्ती है। यदि यिसू ख्रिष्ट का जो वृत्तान्त उन्हों ने लिखा सत्य और प्रामाणिक है तो निःसन्देह उन का यह वाद भी सत्य और प्रामाणिक है। यदि यिसु ख्रिष्ट सच मुच मृतकों में से जो उठा तो जो कुछ उस ने अपने विषय में और अपने प्रेरितों के विषय में कहा निःसन्देह सत्य होगा। अब लों हम ने निरकेवल इतना सिद्ध किया कि उस के वृत्तान्त के प्रचारकर्त्ता समकालिक मनुष्य और सच मुच साक्षी अर्थात अपनी आंखों से उस वृत्तान्त के देखनेवाले थे। अब निर्णय किया चाहिये कि क्या वे साक्षी होके बिश्वस्त और समर्थ भी थे अर्थात वे आप ऐसे सत्य परुष और बिश्वासी थे जो किसी अभिप्राय के लिये जान बूझके दूसरों को धोखा न खिलावें। और उस वृत्तान्त के निर्णय करने का औसर सम्पूर्ण रूप से उन को मिला जिस्तें वे आप धोखा न खावें। परन्तु आप की इच्छा हो तो हम इस बात की चर्चा इस समय छोड़ देवें॥

ग्रन्थकर्त्ता का बचन ॥ इस पर हम तीनों मनुष्य अपने २ स्थानों को प्रस्थित हुए ॥

इति मतपरीक्षा के द्वितीय खण्ड का तीसरा सत्सङ्ग

समाप्त हुआ ॥

चौथा सत्सङ्ग ।

पहिले साक्षियों के विश्वस्त और समर्थ होने की चर्चा ।

ग्रन्थकर्त्ता का वचन ॥ स्थापित समय पर हम तीनों मनुष्य फिर उसी स्थान पर इकट्ठे हुए और वेदविद्वान के मुख को देखके मैं ने जाना कि यह अब लों भी सन्देह के सागर में पड़ा है और अपने पांव धरने के लिये स्थिर भूमि को नहीं पाया है और उस के बचनों से भी उस की यही दशा झट प्रगट हो गई क्योंकि वह सत्यार्थी से यों कहने लगा ॥

वेदविद्वान का वचन ॥ आप के वर्णन पर ध्यान करने से मेरे मन को अब लों शान्ति नहीं हुई । पण्डितजी मुझ को ऐसा देख पड़ता है कि आप का जो वर्णन पिछले सत्सङ्ग में हुआ सो बहुधा केवल मनुष्यों की भावनामात्र से संयुक्त था क्योंकि इस को छोड़ कि कितने मनुष्य ख्रिष्टीय शास्त्र की लिखावटों को मानते थे आप ने और कुछ नहीं बतलाया । परन्तु ईश्वरीय धर्म और ईश्वरीय शास्त्र के प्रकरण में मन की शान्ति के लिये मनुष्य की भावनामात्र से कुछ अधिक अवश्य है इस के बिना कि कोई बचन सीधे उचित प्रमाणों से ईश्वर ही का बचन ठहरे तो मुक्ति का आसरा किसी को क्योंकर निश्चय हो सक्ता है ॥

सत्यार्थी का वचन॥ आप का कहना ठीक है कि मुक्ति के प्रकरण में केवल ईश्वर का सिद्ध वचन निश्चय विश्वासयोग्य हो सक्ता है। परन्तु आप स्मरण कीजिये कि हम को ख्रिष्टीय शास्त्र का बुद्धिरूपी प्रमाण पहिले जांचना था और यह शब्द प्रमाण होके मनुष्यों की साक्षी से संबन्ध रखता है। इस से भिन्न अन्तःकरणरूपी प्रमाण एक रीति से प्रत्यक्ष होके ईश्वर के निज वचन से संबन्ध रखता है और पीछे से इस की परीक्षा करनी होगी। परन्तु आप ध्यान कीजिये कि ख्रिष्टीय शास्त्र के विषय में हम ने क्या २ सिद्ध किया है तो आप देखेंगे कि आनेवाली चर्चाओं के लिये एक ऐसी नेव डाली गई है जो अति स्थिर और अटल है। क्योंकि पहिले सत्सङ्गों में ये बातें सिद्ध हो चुकी हैं अर्थात

१ ख्रिष्टीय शास्त्र की उन लिखावटों में जो इन दिनों में प्रचलित होती हैं निःसन्देह श्री यिसू ख्रिष्ट के प्रेरितों का लिखा हुआ वृत्तान्त संयुक्त और समाप्त है॥

२ उस वृत्तान्त के कर्त्ता आप उस के समकालिक मनुष्य और साक्षी थे अर्थात उन्हों ने उस वृत्तान्त को अपनी आंखों से देखके अथवा उन लोगों से जिन्हों ने देखा था निर्णय करके उस का वर्णन लिखा है॥

३ उस काल के अन्य मनुष्य यद्यपि उस वृत्तान्त को ग्रहण भी नहीं करते थे तथापि उस को झुठला नहीं सक्ते थे इस कारण उस को बन्द करने के निमित्त उन्हों ने उस के साक्षियों को सताया और बहुतेरों को मार भी डाला॥

४ बहुतेरे मनुष्य जिन्हों ने उस वृत्तान्त को अपनी आंखों से देखा था यद्यपि इस रीति से बड़ा दुःख सहते थे तथापि प्रेरितों का यह लिखा हुआ वर्णन ग्रहण करते थे और इस प्रकार से उस वर्णन के सिद्ध और यथार्थ होने पर ये सब के सब साक्षी ठहरते हैं॥

वेदविद्वान का वचन॥ हे पण्डितजी ये बातें तो सिद्ध होती हैं

परन्तु मैं किस प्रकार से जान सक्ता हूं कि ये मनुष्य सच बोलते थे अथवा जो सच भी बोलते तो भ्रम नहीं करते थे॥

सत्यार्थी का बचन॥ इन बातों के निर्णय करने के लिये उन के वृत्तान्त की परीक्षा करनी चाहिये क्योंकि कई एक प्रकार हैं जिन से किसी का विश्वस्त होना सिद्ध हो सक्ता है जब कोई मनुष्य मिथ्या वृत्तान्त की कल्पना करके उस का प्रचार करता है तो किसी लौकिक अभिप्राय के लिये करता है पारलौकिक चिन्ता से कोई मनुष्य जान बूझके ऐसा नहीं करेगा क्योंकि सब कोई जानता है कि परलोक में कठिन दंड को छोड़ मिथ्या का कुछ और फल नहीं हो सक्ता है। अब ध्यान करना चाहिये कि श्री यिसू ख्रिष्ट का वृत्तान्त प्रचार करने में उस के प्रेरितों और शिष्यों का क्या लौकिक अभिप्राय हो सक्ता था। ऊपर के वर्णन से तो सिद्ध हुआ कि ऐसा करने से संसारिक क्लेश और लौकिक अपनिन्दा को छोड़ उन्हों ने और कुछ फल प्राप्त नहीं किया इस दशा में उन का क्या लौकिक अभिप्राय हो सक्ता था। उस वृत्तान्त पर बिश्वास लाने में जो वे मूरख हुए तो हुए परन्तु उन के विश्वस्त होने में सन्देह नहीं हो सक्ता है। पण्डितजी पुलूस प्रेरित के वृत्तान्त पर ध्यान करने से यह दशा प्रत्यक्ष देख पड़ती है उस का वृत्तान्त मंगलसमाचार पुस्तक की एक लिखावट में जो प्रेरितों की क्रिया कहलाती है लिखा है। और एक दूसरे ग्रन्थ में भी जिस का नाम श्री पाऊल चरित्र है उस का वर्णन संस्कृत और भाषा में शुद्ध रूप से लिखा है। इन दोनों ग्रन्थों को ध्यान के साथ पढ़िये तो आप को विदित होगा॥

वेदविद्वान का बचन॥ आप कृपा करके उस का वृत्तान्त संक्षेप से बतलाइये तो मैं उस को तनिक समझ सकूंगा॥

सत्यार्थी का बचन॥ पण्डितजी पहिले पुलूस प्रेरित का नाम साऊल था उस के माता पिता यहूदी थे और वह युवावस्था में यहूदियों का

शास्त्र अर्थात प्राचीन वाचापत्र का अभ्यास करके उस में एक बड़ा निपुण पण्डित हो गया। अपने पितरों के धर्म में दृढ़ विश्वासी हो उस के सारे नियमों पर चलता रहा परन्तु सामान्य यहूदियों के सदृश उस शास्त्र का अभिप्राय संसारिक रीति से समझके उस ने जाना कि यिसू ख्रिष्ट का मत शास्त्र के विरुद्ध है इस कारण उस पर विरोध कर युवावस्था में भी वह ख्रिष्टीय शिष्यों का एक बड़ा सतानेवाला हो गया। उस ने उस मत को नाश करने के लिये बड़ा बल कर उस के शिष्यों को अति कठिन दंडों से सताया और प्रधान पुरोहितों से आज्ञा पाय शिष्यों को पकड़ लेने के लिये अन्यदेशों में भी यात्रा किई। इतने में उस को एक वृत्तान्त उपस्थित हुआ जिस के कारण से वह आप ख्रिष्टीय शिष्य हो गया और तीस एक बरस लों मंगलसमाचार का प्रचारक हो नगर २ और देश २ में यात्रा करता रहा अन्त को रूमी महाराजा की आज्ञा से रूम नगर में अपने विश्वास के कारण मारा गया। उस वृत्तान्त का वर्णन जिस के कारण से वह ख्रिष्टीय शिष्य हो गया मैं उसी के बचन उतारके कहता हूं उस ने ये बचन यहूदी देश के कैसरिया नगर में एक रूमी प्रधान फसतूस नामे और एक यहूदी राजा अग्रिपा नामे के सन्मुख फसतूस के विचारस्थान में अपने शत्रुओं की एक बड़ी सभा के बीच अपराधी के समान उत्तर दे बेधड़क कहे जैसे प्रेरितों की क्रिया नाम लूका रचित पुस्तक के छब्बीसवें पर्ब्ब में लिखा है॥

पुलूस प्रेरित के बचन॥ हे राजा अग्रिपा मैं अपने को इस कारण भाग्यवान जानता हूं कि आज के दिन उन सब दोषों से जो यहूदी मुझ पर देते हैं अपने बचाव की बात तेरे आगे करूं विशेष करके इस कारण कि तू यहूदियों के समस्त व्यवहारों और विवादों में निपुण है सो मैं तेरी बिनती करता हूं कि धीरज से मेरी सुन कि मेरी चाल को तरुणाई से सब यहूदी जानते हैं कि मैं जिस भान्ति आरम्भ से अपने

लोगों के साथ यिरूशलीम में निबाहता रहा। से वे जो मुझे आरम्भ से जानते हैं यदि चाहें तो साक्षी देवें कि मैं उन के मत के अत्यन्त आचार के समान अपना समय व्यतीत करता था अर्थात फरीसी था। और अब मैं उस प्रतिज्ञा की आशा के प्रकरण में जो परमेश्वर ने हमारे पितरों को दिई विचारस्थान में खड़ा किया गया हूं और हमारे बारह घराने रात दिन बड़े अभिलाष से प्रार्थना करके उसी प्रतिज्ञा को प्राप्त होने की आशा रखते हैं हे राजा अग्रिपा इसी आशा के कारण से यहूदियों ने मुझ पर दोष दिया है। क्या यह तुम से विश्वास के अयोग्य जाना जाता है कि परमेश्वर मृतकों को जिलावे मैं भी निश्चय समझता था कि यिसू नासरी के विरोध में बहुत कुछ करना मुझ को अवश्य है सो मैं ने यिरूशलीम में यही किया और प्रधान याजकों से पराक्रम पाके बहुतेरे साधुओं को बन्दिगृह में डाला और जब वे मारे जाते थे तो मैं हुंकारी भरता था और मैं ने बारम्बार हर एक मण्डली में मार २ के बरबस उन से पाखण्ड बकवाया बरण उन्मदता से बिराने नगरों में भी जाके उन्हें सतावता था। इसी बात के लिये जब मैं प्रधान याजकों से पराक्रम और आज्ञा पाके दमिश्क नगर को चला जाता था तो दो पहर दिन के समय में हे राजा मैं ने एक ज्योति जो सूर्ज से भी अत्यन्त तेजोमय थी मेरी और मेरे संगियों की चारों ओर स्वर्ग से चमकी हुई देखी और जब हम सब भूमि पर गिर पड़े तो मैं ने एक शब्द सुना जो इबरानी भाषा में मुझ से कहता था कि साऊल हे साऊल तू मुझे क्यों सतावता है आरों पर लात मारना तेरे लिये कठिन है। तब मैं ने कहा हे प्रभु तू कौन है वह बोला कि मैं यिसू हूं जिसे तू सतावता है अब उठ और अपने पावों पर खड़ा हो कि मैं इस लिये तुझ पर प्रगट हुआ कि तुझे इन बस्तुओं का जिन को तू ने देखा और जो मैं तुझ पर प्रगट करूंगा एक सेवक

और साक्षी ठहराऊं और मैं तुझे इन लोगों और अन्यदेशियों से जिन के पास अब मैं तुझे भेजता हूं बचाऊंगा कि तू उन की आंखें खोल दे जिस्तें अन्धियारे से उजाले की ओर शैतान के वश से परमेश्वर की ओर फिरें कि उन के पाप क्षमा किये जायें और वे उन में जो मेरे विश्वासी होके पवित्र हुए अधिकार पावें इति। सो हे राजा अग्रिपा मैं ने स्वर्गीय दर्शन के विरुद्ध न किया परन्तु पहिले दमिशक और और-शलीम और समस्त यहूदिया देश के रहनेहारे अन्यदेशियों को भी जता दिया कि पश्चात्ताप करो और परमेश्वर की ओर फिरो और पश्चात्ताप के योग्य कार्य्य करो। इन्हीं बातों के कारण यहूदियों ने मुझे मन्दिर में पकड़के मार डालने की युक्ति किई। सो परमेश्वर की सहायता से आज लों छोटे बड़ों के आगे खड़ा हो साक्षी देता हूं और इन बातों को छोड़ जो भविष्यद्वक्ताओं और मूसा ने कहा कि होगा कुछ नहीं कहता हूं अर्थात कि ख्रिष्ट दुःख उठावेगा और मृतकों में से जी उठे हुओं का पहिला होके इन लोगों और अन्यदेशियों पर ज्योत प्रकाश करेगा इति॥

सत्यार्थी का बचन॥ अब आप ध्यान कीजिये कि पुलूस प्रेरित ने इन बचनों को अपने शत्रुओं की एक सभा में कहा सो यदि वह उन को निश्चय सत्य नहीं जानता तो ऐसा बेधड़क हो इस प्रकार से क्योंकर बोल सक्ता। बरन इस्से अधिक उस ने रूमी प्रधान फसतूस से कहा कि राजा आप जिन के सन्मुख मैं ऐसा बेधड़क बोलता हूं इन बातों को जानता है क्योंकि मुझ को निश्चय है कि इन में से कोई बात उस्से छिपी नहीं है क्योंकि यह वृत्तान्त एक कोने में उपस्थित नहीं हुआ इति। फिर इसी वृत्तान्त पर साक्षी देने के कारण वह उस समय एक अपराधी के समान उस विचारस्थान में खड़ा था सो यदि वह सच्चा विश्वास नहीं लाता तो क्योंकर ऐसी अपनिन्दा को सह लेता और इस

का अन्त यह था कि वह रूम नगर में अपने विश्वास के हेतु मारा गया। बरन जब से शिष्य हो गया मरने के दिन लों इसी प्रकार की अपनिन्दा और दुःख को सहता रहा और अपने एक पत्र में उस ने इस का तनिक वर्णन भी किया है क्योंकि जब कोरिंत नगर के शिष्य मिथ्या शिक्षकों से बहक जाके उस के दैव्य पराक्रम पर सन्देह करते थे तो उन शिक्षकों का पराक्रम घटाने के निमित्त उस ने अपने दुःखों का कुछ वर्णन किया परन्तु इतना वर्णन करने से भी अपने को एक मूरख कहा। जैसे कोरिंतियों के नाम पर दूसरे पत्र के ग्यारहवें पर्व्व में लिखा है॥

पुलूस प्रेरित के वचन॥ जो कुछ कि मैं बड़ाई के भरोसे से कहता हूं सो प्रभु की रीति पर नहीं परन्तु मूरख के समान कहता हूं। जब कि बहुतेरे शरीर की रीति पर बड़ाई करते हैं तो मैं भी बड़ाई करूंगा। * * * क्या वे इबरानी हैं मैं भी हूं। क्या वे इसराएली हैं मैं भी हूं। क्या वे अबिरहाम के वंश से हैं मैं भी हूं। क्या वे ख्रिष्ट के सेवक हैं मैं मूरखता से कहता हूं कि मैं अधिक हूं। परिश्रमों में अधिक और कोड़े खाने में परिमाण से बाहर बन्दिगृहों में बहुत २ और मृत्यु में बारंबार यहूदियों से मैं ने पांच बार एक कम चालीस २ कोड़े खाये तीन बार मैं छड़ियों से मारा गया एक बार मैं पथराव किया गया तीन बार नौतोड़ में पड़ा एक रात दिन समुद्र में काटा। यात्रा करने में बहुत नदियों के भय में चोरों के भय में अपने देशियों के भय में अन्यदेशियों के भय में नगर के भय में बन के भय में समुद्र के भय में झूठे भाइयों के भय में थकाहट और क्लेश में जागने में बारंबार भूख में और प्यास में उपवास में बारंबार शीत और नंगा रहा हूं। बाहर की वस्तुओं से अधिक समस्त मण्डलियों का शोच मुझ को प्रति- दिन दबाता है कौन निर्बल है कि मैं निर्बल नहीं हूं कौन ठोकर खाता

है कि मैं नहीं जलता। जो मुझे बड़ाई करनी अवश्य है तो मैं अपनी दुर्बलताओं पर बड़ाई करूंगा ईश्वर हमारे प्रभु यिसू ख्रिष्ट का पिता जो नित्यानन्द है जानता है कि झूठ मैं नहीं बोलता। इति॥

सत्यार्थी का वचन॥ पण्डितजी पुलूस प्रेरित के इस वृत्तान्त पर ध्यान करने से निश्चय होता है कि वह एक विश्वस्त मनुष्य था नहीं तो जब पहिले ख्रिष्टीय मत का निन्दक था पीछे से काहेको उस का शिष्य हो गया। जब पहिले अपने सजातीय यहूदियों में जो मूसा के मत पर चलते थे बड़ी प्रतिष्ठा पाता था तो पीछे से उन की दृष्टि में निन्दा के योग्य होना किस लिये ग्रहण किया। जब पहिले ख्रिष्टीय शिष्यों को कठिन दण्डों से सताता था तो काहे को उन के समान यिसू ख्रिष्ट के कारण सताये जाने पर प्रसन्न हो गया। यदि वह सच्चा विश्वास न लाता तो वह कभी शिष्य न हो जाता जिस ने इस रीति से ख्रिष्टीय मत को ग्रहण किया और उस के कारण इतना दुःख सहा अवश्य वह एक विश्वस्त मनुष्य था। जब मिथ्या वृत्तान्त की कल्पना करने का कोई स्वार्थिक लाभ अथवा लौकिक अभिप्राय किंवा स्वाभाविक पक्ष न था तो काहे को वह मिथ्या कहके मनुष्यों को धोखा देवे॥

वेदविद्वान का वचन॥ क्या श्री यिसू ख्रिष्ट के सारे अन्य प्रेरित पुलूस के समान थे॥

सत्यार्थी का वचन॥ ज्ञान और विद्या में कोई अन्य प्रेरित पुलूस के समान न था क्योंकि वे सब के सब अनपढ़े मनुष्य थे। परन्तु वे सब के सब उस के समान सत्य पुरुष और विश्वस्त थे और अपने विश्वास और सत्यता के वैसे ही लक्षण दिखाते थे। क्योंकि वे सब के सब उस की रीति पर अपने विश्वास के कारण दुःख सहते थे और जितना उन का समाचार मिलता है उस्से सम्भव है कि वे सब के सब उसीके समान मारे भी गये। फिर जितना वृत्तान्त अन्य प्रेरितों ने लिख छोड़ा है

और जो मंगलसमाचार ग्रन्थ में संयुक्त है उस में एक आश्चर्य भोलापन जो केवल विश्वस्त मनुष्यों में हो सक्ता प्रत्यक्ष देख पड़ता है। क्योंकि वे अपने पक्षपातियों की और अपनी भी बड़ाई नहीं करते हैं बरन अनोखी सीधाई से अपने और अपने लोगों के भी दोषों और अपराधों का वर्णन करते हैं। एक बार पतरस प्रेरित भय के वश में हो श्री यिसू ख्रिष्ट से मुकर बड़ा दोषी ठहरा और बारम्बार यिसू ख्रिष्ट ने उन के अल्प विश्वास मूर्खता असावधानी सांसारिक स्वभाव और अन्य दोषों के कारण उन को समझाया और इन भोले और सीधे अन्तःकरण के मनुष्यों ने इस का सारा वर्णन लिखा है। कई एक बार अभिमानी हो परस्पर विवाद करने लगे और यिसू ने उन को डांटा इस का भी वर्णन लिखा है। फिर उन के भिन्न २ वर्णनों में कभी २ ऐसा कुछ भेद देख पड़ता है कि जिस्से निश्चय है कि इन्हों ने योग्य संयोग से नहीं बरन एक दूसरे से स्वाधीन और निराभिप्राय हो उन वर्णनों को लिखा। परन्तु इस बात की सम्पूर्ण दशा भली भान्ति जान्ने के लिये चारों मंगलसमाचारों को ध्यान के साथ पढ़ना चाहिये॥

वेदविद्वान का बचन॥ यदि उन के भिन्न २ वर्णनों में कुछ भेद देख पड़ता है तो उन का लिखा हुआ वृत्तान्त किस प्रकार से सिद्ध और प्रामाणिक ठहर सक्ता है॥

सत्यार्थी का बचन॥ पण्डितजी उन के वर्णनों में जो भेद देख पड़ता है उस्से वृत्तान्त की विरुद्धता सिद्ध नहीं होती है। क्योंकि किसी एक वृत्तान्त के वर्णन में यदि उस के भिन्न २ साक्षी हों तो प्रत्येक साक्षी दूसरों से वृत्तान्त की कुछ भिन्न दशा को देखके उस का भिन्न वर्णन करेगा। परन्तु यह केवल उस समय होगा जब कि साक्षी केवल अपनी आंखों के देखे हुए वृत्तान्त का वर्णन करते हैं क्योंकि जब कितने मनुष्य एक मिथ्या वृत्तान्त की कल्पना करते हैं तो बड़ी चिन्ता से ऐसे प्रत्यक्ष

भेद से सावधान रहते हैं और उन के वर्णन का स्वरूप छोटी २ बातों में ठीक समान देख पड़ता है परन्तु परीक्षा होने से मूल वृत्तान्त की विरुद्धता जानी जाती है। अब प्रेरितों के वर्णन के स्वरूप में छोटी २ बातों का कुछ भेद देख पड़ता है परन्तु परीक्षा होने से मूल वृत्तान्त की समानता सिद्ध होती है सो यह साक्षियों के विश्वस्त होने और वृत्तान्त के सत्य होने का एक प्रत्यक्ष प्रमाण देख पड़ता है। फिर आप उस वर्णन पर जो मैं ने पहिले कहा तनिक ध्यान कीजिये अर्थात कि पहिले शिष्यों में कभी २ कुछ विवाद और फूट पड़ी क्योंकि जिस रीति से कि कोरिंत नगर की मण्डली में मिथ्या शिक्षक पुलूस प्रेरित से विवाद करते थे उसी रीति से एक प्राचीन व्यवहार के विषय में पुलूस प्रेरित और पतरस प्रेरित के बीच एक बार कुछ विवाद हुआ उस विवाद में पतरस प्रेरित दोषी था और पुलूस ने उस दोष के कारण उस का साम्हना किया। अब यदि वे सत्य पुरुष और विश्वस्त न होते पर जान बूझके मिथ्या के पक्षपाती होते तो अवश्य ऐसी दशा में यह बात प्रगट हो जाती क्योंकि जब किसी कुयुक्ति के साझियों में फूट पड़ती है तब उन की मिथ्यता प्रकाशित हो जाती है। परन्तु प्रेरितों और पहिले शिष्यों में ऐसे २ विवाद होते हो उन के अविश्वस्त होने का कोई पता कभी देख नहीं पड़ा॥

वेदविद्वान का बचन॥ आप का कहना तो ठीक होता है पण्डितजी कि जब झूठे मनुष्यों में फूट पड़ती है तो एक दूसरे की झूठाई को प्रकाशित करता है। परन्तु प्रेरितों के वर्णन का तात्पर्य्य इस संसार के व्यवहार से अति विपरीत है और वह ऐसा आश्चर्य्य और निपट असम्भव देख पड़ता है कि उस पर विश्वास लाना बहुत कठिन है क्योंकि किसी मृतक का जी उठना और अन्य मनुष्यों पर प्रगट होना और अन्त को उन के देखते ही स्वर्गारूढ़ होना फिर इस के उपरान्त पुलूस

प्रेरित के वचन के अनुसार अति तेजोमय स्वर्गीय ज्योति के समान उस को दर्शन देना और उस को वचन भी सुनाना यह तो ऐसा वृत्तान्त है कि जितना विश्वस्त और सत्य पुरुष कोई हो पर जब इस प्रकार की साक्षी देता तो अवश्य मन में सन्देह आता कि ऐसा वृत्तान्त क्योंकर उपस्थित हो सका। मैं नहीं कहता हूं कि प्रेरित अविश्वस्त और मिथ्या थे परन्तु क्योंकर निश्चय हो सका है कि वे भ्रम नहीं करते थे। कदाचित पुलुस प्रेरित को एक प्रकार का स्वप्न हुआ होगा अथवा किसी रोग के कारण अबोध हो उस ने समझा होगा कि मैं ने यह सब कुछ देखा और सुना है॥

सत्यार्थी का वचन॥ आप का प्रश्न पहिले साक्षियों के समर्थ होने के संबन्ध में है और इस की परीक्षा हम पीछे से करेंगे परन्तु अब उन के विश्वस्त होने की चर्चा होती है और यद्यपि उन का वर्णन निःसन्देह अति आश्चर्यजनक तो है तथापि आप भी मान लेते हैं कि इस कारण से उन के विश्वास पर सन्देह करना उचित नहीं है। वस्तुतः कोई वृत्तान्त यदि उस के योग्य साक्षी और उचित कारण और अभिप्राय भी हो तो जितना आश्चर्यजनक होवे फिर भी केवल आश्चर्य-जनक होने से वह असम्भव नहीं होता है। जब कवीश्वर अपनी कविता में वर्णन करता है कि किसी देवता ने लीला क्रीड़ा के लिये एक पर्वत को उखाड़ के अपनी अंगुली पर संभाला तो बुद्धिमान विचारी पुरुष के मन में नाना प्रकार के सन्देह आते हैं अर्थात १ इस का वर्णन-कर्त्ता कौन सा मनुष्य था २ उस की सिद्धता में विश्वासयोग्य साक्षी का क्या प्रमाण है ३ ऐसे आश्चर्य कर्म का कौन सा उचित कारण और योग्य अभिप्राय था ४ उस के कारण से कैसे धार्मिक फल कभी किसी को प्राप्त हुए इत्यादि। इन बातों पर ध्यान करके विचारी पुरुष जानते हैं कि ऐसा वृत्तान्त केवल कवीश्वर का कल्पितमात्र है। परन्तु ख्रिष्टीय

शास्त्र के आश्चर्य वृत्तान्त पर यह सन्देह नहीं लगता है क्योंकि पहिले इस के वर्णनकर्त्ता समकालिक मनुष्य और आप उस के देखनेवाले थे २ ये मनुष्य विश्वस्त और समर्थ साक्षी थे ३ इस आश्चर्य वृत्तान्त का एक अति योग्य अभिप्राय और उचित कारण था अर्थात पाप को नाश करके मनुष्य जाति को पाप से और उस के फल से बचाना ४ उस के कारण से नाना प्रकार के धार्मिक फल विश्वासी को प्राप्त होते हैं। जिस वृत्तान्त में ऐसी बातें सिद्ध होती हैं तो जितना आश्चर्यजनक हो पर तनिक भी असम्भव नहीं होता है। अब लों तो हम ने इन में से केवल दो एक बातें सिद्ध किई हैं अर्थात कि पहिले साक्षी जिन का वर्णन इन दिनों प्रचलित होता है सो समकालिक मनुष्य और वृत्तान्त के देखनेवाले और विश्वस्त थे परन्तु शेष बातें भी इसी प्रकार से सिद्ध हो जायेंगी और अब उन के समर्थ होने पर ध्यान किया चाहिये॥

वेदविद्वान का वचन॥ आप किस प्रकार से सिद्ध कर सके हैं कि पहिले साक्षी ऐसे आश्चर्य वृत्तान्त को देख विस्मित हो धोखा नहीं खाते थे॥

सत्यार्थी का वचन॥ आप मेरा वर्णन सुन लीजिये तो आसरा है कि यह सन्देह दूर हो जायगा क्योंकि खिष्टीय शास्त्र का आश्चर्य वृत्तान्त उस प्रकार का था कि जिस के विषय में धोखा खाना अति असम्भव देख पड़ता है और उस के यथार्थ निर्णय करने के लिये सामान्य से अधिक विद्या अथवा बुद्धि कुछ अवश्य नहीं थी केवल यह प्रयोजन था कि उस के देखनेवाले अपनी इन्द्रियों को शुद्ध और सावधान रक्खें। आप जानते हैं कि यिशू खिष्ट का दर्शन जो पुलूस प्रेरित को हुआ वह ऐसा वृत्तान्त था जिस के विषय में धोखा खाना सम्भव देख पड़ता है और मैं मान लेता हूं कि यदि वह वृत्तान्त केवल इतना होता जितना मैं ने कहा तो उस के विषय में धोखा खाना असम्भव नहीं होता।

परन्तु लूका रचित प्रेरितों की क्रिया नाम पुस्तक में इस का कुछ और वर्णन मिलता है। लूका पुलूस प्रेरित की यात्रा में उस का संगी था और पुलूस ही के बतलाने से उस ने यह वर्णन लिखा होगा। मैं उस के वचन जैसे उस पुस्तक के नवें पर्ब्ब में लिखे हैं उतारके कहता हूं॥

लूका प्रेरितसंगी का वचन॥ और साऊल भूमि पर से उठा और जब आंखें खोलीं तो किसी को नहीं देखा तब वे उस का हाथ पकड़के दमिशक् में लाये और वह तीन दिन लों अन्धा रहा और न खाता न पीता था और दमिशक् में हननिया नाम एक शिष्य था उसे प्रभु ने दर्शन में कहा कि हे हननिया वह बोला कि देख प्रभु मैं हूं। प्रभु ने उसे कहा कि उठकर उस मार्ग को जा जो सीधा कहलाता है और साऊल नाम एक तरसुस नगर के मनुष्य को यहूदा के घर में ढूंढ क्योंकि देख वह प्रार्थना करता है और उस ने दर्शन देखा है कि हननिया नाम एक मनुष्य ने प्रवेश करके उस पर हाथ रक्खा कि वह अपनी दृष्टि पावे। तब हननिया ने उत्तर दिया कि हे प्रभु मैं ने बहुतेरों से उस मनुष्य के विषय में सुना है कि उस ने यरूशलीम में तेरे साधुओं के संग बहुत बुराई किई है और उस ने यहां भी प्रधान याजकों की ओर से सामर्थ पाई है कि सब को जो तेरा नाम लेते हैं बांधे। परन्तु प्रभु ने उसे कहा कि चला जा क्योंकि वह अन्यदेशियों और राजाओं और इसराएलियों के आगे मेरे नाम प्रचारने का एक मुख्य कारण है क्योंकि मैं उस को दिखाऊंगा कि उस को मेरे नाम के लिये कैसा बड़ा दुःख उठाना अवश्य है। और हननिया ने जाके उस घर में प्रवेश किया और अपना हाथ उस पर रखके कहा कि हे भाई साऊल प्रभु अर्थात यिसू ने जो तुझे उस मार्ग में जिस से तू आया दर्शन दिया मुझ को भेजा है कि तू फिर देखे और पवित्र आत्मा से भर

जावे। और तुरन्त उस की आंखों से कुछ छिलके से गिरे और वह तत्काल देखने लगा और उठके बपतिस्मा पाया और कुछ खाके बल पाया। फिर साऊल कई एक दिन दमिश्क में शिष्यों के संग रहा और उस ने तुरन्त मण्डलियों में खिष्ट का मंगलसमाचार प्रचारा कि वह परमेश्वर का पुत्र है। और सब जो सुनते थे विस्मित हो गये और बोले क्या यह वह नहीं जिस ने औरशलीम में उन्हें जो इस नाम को लेते थे सत्यानाश किया और यहां इस इच्छा से आया कि उन्हें बांधके प्रधान याजकों के पास ले जावे। परन्तु साऊल और भी दृढ़ हो गया और दमिश्क के निवासी यहूदियों को प्रमाण ला लाके निश्चय दिलाया कि यह वही खिष्ट है। और जब बहुत दिन बीते तब यहूदियों ने उस के मार डालने के निमित्त परामर्श किया परन्तु उन का घात में रहना साऊल को जान पड़ा और वे रात दिन फाटकों पर लगे रहे कि उस को मार डालें। तब शिष्यों ने रात को उसे एक टोकरी में बिठलाके नगर की भीत से तले लटकाय दिया इति॥

सत्यार्थी का बचन॥ इस वर्णन से जाना जाता है कि यिसू खिष्ट का दर्शन उस समय केवल साऊल ही को नहीं हुआ बरन एक दूसरे मनुष्य को भी जो खिष्टीय शिष्य हो दमिश्क में रहता था ऐसे प्रकार से हुआ कि उस के कारण वह आज्ञानुसार साऊल को ढूंढके उस के पास गया। और इन दोनों स्वर्गीय दर्शनों का कारण अभिप्राय के योग्य था अर्थात ऐसे पराक्रमी और प्रसिद्ध बैरी को एक शिष्य और मुख्य प्रेरित कर देना था। फिर उस के संग कुछ लौकिक वृत्तान्त भी उपस्थित था जिस के विषय में धोखा खाना अनहोना था अर्थात उस दर्शन के कारण से साऊल अन्धा हो गया और तीन दिन लों अन्धा रहा और तीसरे दिन हननिया के हाथ रखने से दो बारा अपनी दृष्टि पाई। क्या आप की समझ में तीन दिन लों अन्धा रहना और अन्त को इस आश्चर्य रीति

से दृष्टि पानी ऐसा वृत्तान्त है जिस के बिषय में कोई मनुष्य धोखा खा सक्ता है। फिर इस से अधिक ख्रिष्टीय शिष्यों का वह प्रसिद्ध कठिन बैरी तुरन्त मंगलसमाचार प्रचारने लगा इस दशा में उस का सत्य वृत्तान्त किस प्रकार से छिप सक्ता। परन्तु उस के शत्रु इस वर्णन को झुठला नहीं सक्ते थे और इस कारण उन्हों ने उस को मार डालने की युक्ति किई फिर भी तीस एक बरस लों वह प्रभु के बचन के अनुसार उन के हाथ से बचा रहा और विशेष करके उसी के श्रमों और उद्योगों से ख्रिष्टीय धर्म्म सारे पश्चिमीय देशों में स्थापित हो गया॥

वेदविद्वान का बचन॥ आप के वर्णन के अनुसार कुछ सन्देह नहीं हो सक्ता है कि पलस प्रेरित को कोई ऐसा वृत्तान्त उपस्थित भया होगा जिस को उस ने श्री यिशू ख्रिष्ट का दर्शन समझा और यदि यिशू ख्रिष्ट के आश्चर्य कर्म्म और जी उठना इत्यादि वृत्तान्त जिन का वर्णन आप ने पहिले किया इस के समान सिद्ध हो सक्ते तो उस के इस दर्शन पर भी सन्देह करना एक व्यर्थ काम देख पड़ता। परन्तु क्या ख्रिष्टीय शास्त्र के सारे आश्चर्य वृत्तान्त में क्या स्वर्गीय क्या लौकिक इसी प्रकार से परीक्षा और निर्णय करने का औसर मिलता था॥

सत्यार्थी का बचन॥ पण्डितजी मंगलसमाचार के उस आश्चर्य वृत्तान्त में जो विशेष करके स्वर्गीय दर्शन की रीति पर था बहुधा कुछ ऐसा लौकिक वृत्तान्त भी संयुक्त था जिस का निर्णय भली भान्ति हो सक्ता था। जैसे मैं ने यिशू ख्रिष्ट के आश्चर्य जन्म के वर्णन में कुछ थोड़ा सा बतलाया उस में भी स्वर्गीय दूत का दर्शन हुआ परन्तु उस के संग मरियम कुमारी का गर्भिणी होना और पुत्र जना ऐसा लौकिक वृत्तान्त संयुक्त था जिस में धोखा खाना अनहोना था। फिर यिशू के जन्म पाने के समय कितने गड़रियों को स्वर्गीय दूतों का एक दर्शन हुआ और उन्हों ने लक्षण बतलाके उस धन्यवाद जन्म का समाचार दिया इस पर

गड़रियों ने लक्षण का निर्णय करके उस समाचार को ठीक और यथार्थ पाया। फिर जो आश्चर्य कर्म यिसू ख्रिष्ट ने दिखाये वे सब के सब ऐसे प्रकार के थे जिन का निर्णय भली भान्ति हो सक्ता था। क्योंकि वे मित्रों और शत्रुओं के सन्मुख साधारण लोगों के बीच प्रकाशित रूप से उपस्थित हुए और बहुधा ऐसे भी थे जो क्षण मात्र के लिये प्रकाश नहीं हुए वरन कुछ विलम्ब लों उन का निर्णय हो सका। क्योंकि जब कोढ़ी पावन हुए रोगी चंगे हो गये अन्धे देखने लगे मृतक जी उठे तो ये सारे मनुष्य अपने जीवन भर के लिये उन आश्चर्य कर्मों के साक्षी ठहरे और सब किसी को औसर मिला कि भली भान्ति उन की परीक्षा करके उन की यथार्थ दशा निर्णय करें जैसे मैं ने एक पहिले सत्सङ्ग में लब्धदृष्टि का कुछ वर्णन किया॥

वेदविद्वान का वचन॥ क्या ख्रिष्टीय शास्त्र को छोड़ किसी दूसरे ग्रन्थ में भी ऐसे मनुष्यों का कुछ वर्णन मिलता है॥

सत्यार्थी का वचन॥ हां पण्डितजी युसिबीयूस पूर्वोक्त इतिहासवेत्ता एक मनुष्य का वर्णन करता है जिस का नाम काद्रातूस था। वह असीनी नगर का निवासी था और ईसवी संवत एक सौ तीस में उस ने रूमी महाराजा हाद्रीयानूस के नाम पर ख्रिष्टीय धर्म स्थापनार्थ एक ग्रन्थ बनाया। वह ग्रन्थ आज लों उपस्थित नहीं है परन्तु युसिबीयूस के काल में प्रचलित था और उस ने उस का वर्णन करके उस के कई एक वचन उतारके अपने इतिहास में मिला लिये सो ये हैं॥

काद्रातूस के वचन॥ हमारे मुक्तिदाता के कर्म सदा प्रकाशित थे क्योंकि वे सत्य थे। वे जो चंगे हुए वे जो मृतकों में से जी उठे सो केवल उस क्षण में जब आश्चर्य कर्म किये जाते थे देखे नहीं गये परन्तु अन्य मनुष्यों के समान सदा दृष्टि में आते थे क्योंकि वे सदा सन्मुख थे और ये केवल मुक्तिदाता के संसार में रहते ही नहीं परन्तु कुछ विलम्ब

लों उस के अन्तर्ध्यान होने के पीछे ऐसे कि कितने हमारे दिनों तक भी जीते रहे हैं इति ॥

वेदविद्वान का वचन ॥ पण्डितजी इस वर्णन से सिद्ध होता है कि उस काल कितने ऐसे मनुष्य उपस्थित थे जो अपने विषय में इस प्रकार का वाद करते थे अर्थात कि हम अन्धे थे और यिसू ख्रिष्ट की आश्चर्य शक्ति से हम ने दृष्टि पाई इत्यादि। परन्तु किस रीति से सिद्ध हो सक्ता है कि ये मनुष्य सचमुच अन्धे थे और जो जी उठे वे सचमुच मृतक थे। कदाचित यिसू ख्रिष्ट के ये कर्म सचमुच दैव्य आश्चर्य नहीं थे परन्तु उस ने केवल अपनी विद्या और बुद्धि के बल से रोगियों की औषध करके उन को चंगा किया ॥

सत्यार्थी का वचन ॥ यद्यपि श्री यिसू ख्रिष्ट के सारे आश्चर्य कर्मों का ऐसा विस्तारपूर्वक वर्णन नहीं मिलता है कि एक २ की परीक्षा और निर्णय इस रीति से हो सके तथापि उस वर्णन से जाना जाता है कि वे सब के सब प्रकाशित रूप से और कठिन बैरियों के सन्मुख उपस्थित थे और भली भान्ति उन की परीक्षा और निर्णय करना उन बैरियों की सामर्थ्य थी। परन्त उन्हों ने निर्णय करके नहीं कहा कि ये आश्चर्य कर्म नहीं हैं इस के संती उन्हों ने कहा कि यह मनुष्य शैतान की सहायता से आश्चर्य कर्म करता है। फिर बहुतेरे आश्चर्यों का ऐसा वर्णन मिलता है कि उस के द्वारा भी उन का निर्णय इसी रीति से हो सक्ता है जब एक जन्मान्ध किसी की आज्ञा से जल में नहाके दृष्टि पाता है तो उस के विषय में कौन धोखा खा सक्ता है। प्रधान पुरोहितों ने तो अत्यन्त उद्योग किया कि उस कर्म को झुटलावें जैसा मैं ने पहिले बतलाया परन्त वे झुठला न सके क्योंकि सब कोई जानता था कि यह सचमुच जन्मान्ध था और सचमुच अब देखता है। फिर कौन निर्णय

नहीं कर सक्ता है कि कोई मनुष्य तीन चार दिन से सचमुच मृतक था कि नहीं और सचमुच जीता है कि नहीं ॥

वेदविद्वान का बचन ॥ क्या श्री यिसू ख्रिष्ट ने सचमुच किसी मनुष्य को जो तीन दिन से मृतक था जिलाया और यदि उस का वर्णन लिखा है तो क्या उस का निर्णय हो सक्ता है ॥

सत्यार्थी का बचन ॥ हां पण्डितजी तीन मृतकों का वर्णन है जिन को यिसू ख्रिष्ट ने जिलाया इन में से जिस का वर्णन अधिक विस्तारपूर्वक है हम उस का विचार करेंगे। यह वर्णन यूहन्ना प्रेरित का लिखा हुआ उस के मंगलसमाचार के ग्यारहवें पर्व्व में मिलता है आप उस का संक्षेप वर्णन सुनिये ॥

औरशलीम से कोश एक के दूर पर एक छोटा नगर था जिस का नाम बैतअनिया था उस में एक मनुष्य लाज़र नामे अपनी दो बहिनों के साथ जिन के नाम मर्था और मरियम थे रहता था। भाई और दोनों बहिन यिसू ख्रिष्ट के प्रिय शिष्य और परम मित्र थे और जब यिसू औरशलीम में आता था तो बहुधा उन के संग रहता था। अब ऐसा हुआ कि यिसू के मारे जाने से दो एक मास पहिले लाज़र एक बड़े कठिन रोग से रोगी हो गया उस समय यिसू एक स्थान पर था जो बैतअनिया: से पन्द्रह एक कोश दूर था। लाज़र की बहिनों ने यिसू के पास कहलाय भेजा कि देख प्रभु वह जिसे तू प्यार करता है रोगी है। इस पर यिसू ने अपने शिष्यों से कहा कि यह मृत्यु का रोग नहीं है परन्तु इस कारण से है कि परमेश्वर की महिमा हो और उस का पुत्र भी उस्से महिमा पावे। फिर वह जहां था दो दिन वहीं रहा जब दो दिन बीत गये यिसू ने अपने शिष्यों से कहा कि हमारा मित्र लाज़र सो गया है और मैं जाता हूं कि उस को जगाऊं। शिष्यों ने ऐसा समझा कि यह नींद के चैन की कहता है और कहा हे प्रभु यदि वह नींद में

है तो चंगा हो जायगा। तब यिसू ने खोलके कहा कि लाज़र मर गया और मैं तुम्हारे लिये आनन्दित हूं कि मैं वहां न था जिसतें तुम विश्वास लाओ आओ उस के पास चलें इति। ऐसा देख पड़ता है कि लाज़र जिस दिन उस की बहिनों ने यिसू के पास कहलाय भेजा उसी दिन मर गया क्योंकि जब यिसू और उस के शिष्य बैतअनियः में पहुंचे तो उस को चार दिन हुए और बहुतेरे यहूदी उस की बहिनों को शान्ति देने के लिये औरशलीम से बैतअनियः में आये थे। जब मर्था नाम बहिन ने सुना कि प्रभु आता है तो यिसू की भेंट के लिये निकली और उस्से कहा कि हे प्रभु यदि तू यहां होता तो मेरा भाई नहीं मरता यिसू ने कहा कि तेरा भाई फिर जी उठेगा मर्था ने उत्तर दिया कि मैं जानती हूं अन्त के दिन पुनरुत्थान में वह फिर जी उठेगा। यिसू ने कहा॥

श्री यिसू ख्रिष्ट का वचन॥ पुनरुत्थान और जीवन मैं हूं वह जो मुझ पर विश्वास रखता है यद्यपि वह मर जाय तथापि जीयेगा और जो कोई जीता है और मुझ पर विश्वास रखता है कभी न मरेगा इति॥

सत्यार्थी का वचन॥ इस के पीछे दूसरी बहिन मरियम ने भी इसी रीति पर यिसू से भेंट किई और यिसू ने उस को और यहूदियों को रोते देखके मन में हाय किया फिर समाधि के पास जाके वह रोया। कदाचित उस ने अपने मन में ध्यान किया होगा कि यदि पाप के इसी एक फल से इतना शोक होता है तो सर्वत्र संसार में पाप के कारण से कितना अनगणित दुःख और शोक होगा फिर पापी मनुष्य की दुर्दशा पर ध्यान करके वह रोया। तब वह अपने मन में फिर हाय करता हुआ समाधि पर आया वह एक गुफा थी और उस पर एक पत्थर धरा था। यिसू ने कहा कि पत्थर को उठाओ तब मर्था नाम बहिन ने कहा हे प्रभु उस्से तो अब दुर्गन्ध आती है क्योंकि उसे चार दिन हुए। यिसू

ने उत्तर दिया क्या मैं ने तुझ से नहीं कहा कि यदि तू विश्वास लावे तो परमेश्वर की महिमा देखेगी। तब उन्हों ने पत्थर को सरकाया और यिसू ने आंखें ऊपर करके कहा ॥

श्री यिसू खिष्ट का वचन॥ हे पिता मैं तेरी स्तुति करता हूं कि तू ने मेरी सुनी है और मैं ने जाना कि तू मेरी नित्य सुनता है पर इन लोगों के कारण जो आस पास खड़े हैं मैं ने यह कहा जिस्तें ये विश्वास लावें कि तू ने मुझे भेजा है इति ॥

सत्यार्थी का वचन॥ यहूदियों की रीति थी कि अपने मृतकों को वस्त्र में लपेटके गुफा में धरते थे और गुफा की भीत में चारों ओर एक २ लोथ के लिये अलग २ छोटी कोठरी बनाते थे और गुफा के द्वार पर एक बड़ा चतुष्कोण पत्थर धरके बन्द करते थे। जब गुफा का द्वार खुल गया था तब यिसू निकट खड़ा हो यह कहके बड़े शब्द से चिल्लाया कि हे लाज़र निकल आ इस पर वह जो मरा था समाधि के वस्त्र समेत हाथ पांव बंधे हुए अपनी अलग कोठरी में से निकल गुफा में उतर आया और उस का मुख अंगोछे से लपेटा था तब यिसू ने लोगों से कहा कि उसे खोलो और जाने दो। इस अति आश्चर्य कर्म को देख बहुतेरे यहूदी जो मरियम के पास आये थे यिसू पर विश्वास लाये परन्तु कितनों ने बैरी हो प्रधानों के पास जाके उस का समाचार दिया और वे केवल यिसू खिष्ट को नहीं बरन लाज़र को भी मार डालने की युक्ति करने लगे क्योंकि उस के कारण बहुतेरे यहूदी यिसू पर विश्वास लाते थे इस के दो एक मास पीछे यिसू खिष्ट मारा गया ॥

वेदविद्वान का वचन॥ हे मेरे मित्र यह तो निःसन्देह एक अति आश्चर्य वृत्तान्त है इस के सुने से भी मैं विस्मित होता हूं इस्से पहिले मैं ने किसी के विषय में ऐसा वर्णन कभी नहीं सुना है जो ऐसा आश्चर्य

कर्म कर सक्ता है वह अवश्य मनुष्य से बढ़के होगा क्योंकि जीवन और मृत्यु केवल परमेश्वर ही के वश में रहते हैं परन्तु अब आप कृपा करके बतलाइये कि किस रीति से निश्चय हो सक्ता है कि वह वर्णन सत्य और प्रामाणिक और विश्वास योग्य है॥

सत्यार्थी का वचन॥ पण्डितजी पहिले सिद्ध हो चुका कि यह वर्णन यूहन्ना प्रेरित का लिखा हुआ है और यूहन्ना प्रेरित इस वृत्तान्त का देखनेवाला और एक विश्वस्त मनुष्य भी था ये बातें ऊपर की चर्चाओं में सिद्ध हो चुकी हैं। अब आप देखिये कि इस वर्णन के अनुसार इस आश्चर्य्य कर्म के विषय में धोखा खाने का स्थान कहां रहा। निश्चय है कि लाज़र सचमुच मर गया था नहीं तो उस की बहिन किस लिये रोती थीं और यहूदी लोग उन को शान्ति देने के लिये काहे को और-शलीम से उन के पास आये थे और किस कारण लाज़र को चार दिन से समाधि में रक्खा था और उस को वस्त्र में क्यों लपेटा था और मर्था ने किस लिये कहा कि हे प्रभु अब उस्से दुर्गन्ध आती है। फिर निश्चय है कि इस के पीछे वह सचमुच जीता था नहीं तो बहुतेरे यहूदी किस लिये यिसू पर उसी के कारण विश्वास लाते थे और प्रधान याजक क्यों उस को भी मार डालने की युक्ति करते थे और यह भी निश्चय है कि उस का जी उठना यिसू ख्रिष्ट की सामर्थ से हुआ नहीं तो प्रधान याजक लाज़र के जी उठने के कारण काहे को यिसू ख्रिष्ट को मार डालना चाहते थे और बहुतेरे यहूदी लाज़र के हेतु से क्यों यिसू पर विश्वास लाते थे। निदान निश्चय है कि इस आश्चर्य्य में किसी प्रकार का धोखा नहीं था नहीं तो ऐसी दशा में सब कोई उस धोखा को क्योंकर जान नहीं सक्ते और यिसू के कठिन बैरी जो उपस्थित थे किस लिये उस को प्रकाश नहीं करते॥

वेदविद्वान का वचन॥ क्या आप ने नहीं कहा कि यूहन्ना प्रेरित ने

अपना मंगलसमाचार दूसरों से कई एक बरस पीछे लिखा था। यदि मैं भूल नहीं करता तो आप ने कहा कि यूहन्ना का मंगलसमाचार वृत्तान्त से पचास साठ बरस पीछे लिखा गया था क्या इस दशा में बड़ा सन्देह नहीं होता है कि इतने बरसों के पीछे कदाचित प्रेरित ने उस का ठीक वर्णन नहीं लिखा होगा। क्या वृत्तान्त के स्मरण करने में प्रेरितों को कुछ दोष नहीं हो सका अथवा किस प्रकार से निश्चय हो सक्ता है कि उन्हों ने पक्ष के मारे अपने आचार्य्य की दैव्यशक्ति का बढ़ाव के संग बखान नहीं किया। आप ने तो पहिले प्रसंगों में कहा कि मनुष्य कभी २ ऐसे कारणों से महात्माओं का बखान बढ़ाव के संग करते हैं विशेष करके आप ने कहा कि राम और कृष्ण देवताओं की कथा इसी रीति से कल्पित हुई तो यिसू ख्रिष्ट का बखान भी क्यों इसी रीति से कल्पित न हो सका॥

सत्यार्थी का वचन॥ पण्डितजी आप के प्रश्न का कुछ उत्तर ऊपर हो चुका क्योंकि भारतीयशास्त्रनिरूपण में वर्णन हुआ कि राम और कृष्ण की कथा सिद्ध करने के लिये किसी विश्वासयोग्य साक्षी का प्रमाण कहीं नहीं मिलता है और पुराण जिन में देवता की रीति उन का विशेष वर्णन लिखा है उन के काल से कई सौ बरस पीछे वरन सम्भव है कि सब से प्राचीन पुराण भी डेढ़ सहस्र बरस पीछे लिखा गया था परन्तु यूहन्ना प्रेरित का मंगलसमाचार वृत्तान्त के पीछे सत्तर बरस से अधिक नहीं लिखा गया था और यूहन्ना उस वृत्तान्त का देखनेवाला और विश्वस्त मनुष्य भी था इस रीति से इन दो विषयों में एक बड़ा भेद देख पड़ता। फिर तीन अन्य मंगलसमाचार जिन में यिसू ख्रिष्ट का मृतकों को जिलाना वर्णित है यूहन्ना के वर्णन से पचीस तीस बरस पहिले लिखे थे और ऊपर के प्रमाणों से सिद्ध हुआ कि उन का वृत्तान्त सत्य और यथार्थ है। इस रीति से यिसू ख्रिष्ट की प्रतिज्ञा भी कि पवित्र

आत्मा की सामर्थ से प्रेरितों को समस्त बातों का स्मरण दिलावे यूहन्ना के विषय में उचित आती है। इस बात को छोड़ लूका रचित मंगल-समाचार की भूमिका से जाना जाता है कि प्रेरितों के वर्णन लिखे जाने से पहिले यिशू ख्रिष्ट के वृत्तान्त के देखनेवालों ने उस के आश्चर्य कर्मों के अनेक वर्णन लिखे थे और प्रेरितों ने परिश्रम करके उन सभों को प्रथम ही से बूझ और निर्णय कर विधि से लिखा फिर जब प्रेरितों के वर्णन लिखे गये तो पहिली लिखावटों का क्या काम रहा। परन्तु मैं आप से एक बात पूछता हूं कि यदि आप कभी ऐसा वृत्तान्त देखते जैसे लाज़र का जी उठना था तो क्या आप कभी उस को सैकड़ों बरस लों भी भूल सके मेरी समझ में ऐसे वृत्तान्त की किसी बात से भूल जाना अनहोना होता है। इस दशा में सत्य वर्णन लिखने के लिये केवल विश्वस्त होना प्रयोजन था और यूहन्ना का विश्वस्त होना सिद्ध हो चुका। और देखिये कि यूहन्ना के वर्णन में किसी प्रकार का बढ़ाव देख नहीं पड़ता है वह बड़ी गम्भीरता और मध्यमता के संग वृत्तान्त ही का वर्णनमात्र लिखता है और यिसू ख्रिष्ट की स्तुति अथवा यश तनिक भी बखान नहीं करता है। और सारे मंगलसमाचारों का वृत्तान्त इसी प्रकार से लिखा है और यह भी उन की सत्यता का वहां लों प्रमाण है जहां लों कि पुराणों की रचना से भेद है॥

वेदविद्वान का बचन॥ आप का कहना तो कुछ प्रमाण के समान देख पड़ता है और कदाचित ख्रिष्टीय शिष्य को उस में किसी प्रकार का दोष नहीं देख पड़ेगा। परन्तु मैं ख्रिष्टीय शिष्य नहीं हूं और लाज़र के जी उठने के वृत्तान्त पर मेरे मन में कुछ सन्देह अब लों भी है आप धीरज करके सुनिये। ऐसा देख पड़ता है कि केवल एक मनुष्य अर्थात यूहन्ना प्रेरित ने उस का वर्णन लिखा है और वह वर्णन वृत्तान्त के साठ सत्तर बरस पीछे लिखा गया। उस समय यूहन्ना प्रेरित एक

बड़ा बूढ़ा कदाचित एक सौ बरस का हो गया होगा तो ऐसा बूढ़ा यद्यपि देखनेवाला भी था तथापि इतने बरस के पीछे किसी वृत्तान्त का ठीक और यथार्थ स्मरण क्योंकर कर सक्ता। आप तो कहते हैं कि श्री यिसू खिष्ट ने अपने प्रेरितों को पवित्र आत्मा की सहायता की प्रतिज्ञा दिई और इस रीति से निःसन्देह वह जितना बूढ़ा हो तौ भी ठीक और यथार्थ वर्णन लिख सक्ता परन्तु मैं क्योंकर जान सक्ता हूं कि अपनी प्रतिज्ञा के समान पवित्र आत्मा की सहायता देनी यिसू खिष्ट की सामर्थ थी। यदि वह सचमुच लाज़र को जिस रीति से आप ने बतलाया उस रीति से जिला सक्ता तो निःसन्देह पवित्र आत्मा को भी दे सक्ता परन्तु जब लों लाज़र के वृत्तान्त पर सन्देह रहता तो उस प्रतिज्ञा का प्रमाण उस वृत्तान्त से क्योंकर सिद्ध हो सक्ता। क्या यिसू खिष्ट का कोई ऐसा प्रसिद्ध वृत्तान्त है जिस पर इस प्रकार का सन्देह नहीं रहता है॥

सत्यार्थी का वचन॥ हां पण्डितजी एक ऐसा वृत्तान्त है जिस पर इस प्रकार का सन्देह केवल खिष्टीय शिष्य को नहीं बरन आप को भी जो सत्यार्थी हैं नहीं हो सक्ता है और यह एक ऐसा वृत्तान्त है कि जब यह सिद्ध हुआ तो खिष्टीय शास्त्र और खिष्टीय धर्म सिद्ध हो चुके। क्योंकि यह खिष्टीय धर्म की मूल नेव है और इस के द्वारा पवित्र आत्मा की प्रतिज्ञा जो यिसू खिष्ट ने अपने प्रेरितों को दिई और लाज़र का जी उठना इत्यादि सब के सब सिद्ध होते हैं। सो यह वह वृत्तान्त है जिस का थोड़ा सा वर्णन मैं ने पहिले किया अर्थात श्री यिसू खिष्ट का जी उठना। यह भी एक ऐसा वृत्तान्त था जिस के विषय में धोखा खाना अनहोना था और उस की सिद्धता में अनेक विश्वस्त और समर्थ साची मिलते हैं और उन की साची वृत्तान्त के उपस्थित होने के दिन ही से आरम्भ होती है और उस वृत्तान्त की सत्यता के कारण

से ख्रिष्टीय मण्डली स्थापित हो गई और आज लों उपस्थित और प्रचलित है ॥

वेदविद्वान का वचन ॥ पण्डितजी मैं मान लेता हूं कि यदि यिसू ख्रिष्ट सचमुच मर गया और सचमुच तीसरे दिन जी उठा और ये दोनों बातें सिद्ध और प्रमाणिक हो सक्ती हैं तो और सन्देह करना नहीं चाहिये क्योंकि इस्से कोई और दृढ़ और प्रत्यक्ष प्रमाण नहीं हो सक्ता है परन्तु क्योंकर जाना जाता है कि यिसू ख्रिष्ट सचमुच मर गया था ॥

सत्यार्थी का वचन ॥ श्री यिसू ख्रिष्ट का सचमुच मर जाना सैकड़ों मनुष्यों की साक्षी से जो देखनेवाले थे सिद्ध होता है और ये मनुष्य बहुधा उस के शिष्य अथवा मित्र नहीं थे बरन उस के शत्रु थे क्योंकि वह एक राजाज्ञाभञ्जक के समान पंतूस पिलातूस रूमी प्रधान की आज्ञा से वध किया गया आप इस का सारा वर्णन चारों मंगलसमाचारों में देखिये। रूमियों का व्यवहार था कि अपराधियों को क्रूश अर्थात सलीब पर कीलों से टांकके लटकाते थे जब लों मर नहीं गये। क्रूश काष्ठ की दो कड़ियों से बनता था एक सीधी और इस के नीच भाग की ओर अपराधी के पावों को कीलों से लगाते थे और एक टेढ़ी पहिली कड़ी के वार पार लगी थी इस के एक २ शिरे पर अपराधी के एक २ हाथ फैलाके उसी रीति से टांकते थे तब सीधा काष्ठ खड़ा कर और उस का नीच शिरा भूमि में गाड़ अपराधी को ऊपर लटकाया जब तक मर नहीं गया। कभी २ अपराधी बहुत बिलंब लों अति कठिन दुःख सह घण्टों के पीछे मर गये और कभी २ शीघ्रता के निमित्त रूमी योधा उन की टांगें तोड़ते थे। यिसू के संग दो अपराधी इसी रीति से मारे गये जब एक पहर बीत गया था तो रूमी योधाओं ने दो अपराधियों की टांगें तोड़ीं परन्तु यिसू के पास आके देखा कि मर चुका

है। तब एक ने भाले से उस का पांजर छेदा और तुरन्त उस्से लोहू और पानी निकला इस्से जाना जाता है कि भाले का अग्रभाग हृदय तक पहुंच गया था नहीं तो पानी नहीं निकलता। निदान यदि वह पहिले न मरा होता तो इस्से वह अवश्य मर जाता परन्तु रूमी योधा क्योंकर ऐसा धोखा खा सक्ते कि जीवते को मृतक जानें वे तो मृतक का स्वरूप भली भान्ति जानते थे। इस के उपरान्त रूमी प्रधान की आज्ञा से यिसू की लोथ एक यहूदी के हाथ में जो ख्रिष्टीय शिष्य न था सौंपी गई और उस ने उस को अपनी एक नई समाधि में जिस में कोई मृतक पहिले नहीं धरा था धर दिया। मैं ने जो पहिले वर्णन किया कदाचित आप को स्मरण होगा कि यिसू ख्रिष्ट के बैरी प्रधान याजकों ने किस प्रकार का उपाय किया जिसतें उस के शिष्य उस की लोथ को चुराके कहने न पावें कि वह अपने बचन के समान तीसरे दिन जी उठा है॥

वेदविद्वान का वचन॥ हां पण्डितजी मुझे स्मरण आता है आप ने कहा कि रूमी प्रधान की आज्ञा से रूमी योधाओं का एक जथा जिस में साठ मनुष्य थे पहरे की रीति उस की समाधि के पास बैठाया गया। इस्से तो निःसन्देह जाना जाता है कि उन लोगों की समझ में यिसू ख्रिष्ट सचमुच मर गया था और उस के बैरी इस के विषय में क्योंकर धोखा खा सक्ते। परन्तु इस के पीछे कदाचित उस के शिष्यों ने उस के बचन का चेत करके कि मैं तीसरे दिन जी उठूंगा इसी वृत्तान्त का एक निष्प्रमाण प्रवाद साधारण लोगों के बीच फैलाया हो॥

सत्यार्थी का वचन॥ आप ध्यान कीजिये कि प्रेरितों का विश्वस्त होना सिद्ध हो चुका है तो विश्वस्त मनुष्य जान बूझके मिथ्या वृत्तान्त का समाचार क्योंकर दे सके फिर यदि वे मिथ्या मनुष्य भी होते तो किस अभिप्राय से ऐसा समाचार सुनाते फिर यदि समाचार मिथ्या था तो प्रधान यहूदी यिसू की लोथ को सब लोगों के सम्मुख क्यों नहीं कर देते।

नहीं पण्डितजी कुछ सन्देह नहीं हो सक्ता है कि यह समाचार सत्य था और इस के दो एक और प्रमाण मैं बतलाता हूं आप सुनिये ॥

१ जब शिष्यों ने पहिले यह समाचार सुना कि यिशू जी उठा है तो अविश्वासी थे और उस को सत्य नहीं माना क्योंकि यद्यपि यिशू ने पहिले से कई एक बार भविष्यद्वाणी की रीति उन से कहा था कि मैं तीसरे दिन जी उठूंगा तथापि उन्हों ने उस का वचन किसी आत्मिक अथवा दृष्टान्तपूर्वक प्रकार से समझा था। बरन उन्हों ने समझा कि यह कभी मारा नहीं जायगा क्योंकि अपनी दैव्य शक्ति से अपने को अपने शत्रुओं के हाथ से बचावेगा। फिर जब यह सचमुच मारा गया तो वे अति उदास और निराश हो गये और उस के जी उठने का समाचार पहिले ग्रहण नहीं कर सक्ते थे। और प्रेरितों में से एक ने जिस का नाम तूमा था जब अपने गुरु भाइयों से सुना कि वह सचमुच जी उठा है तो कहा जब लों मैं उस के हाथों में कीलों के चिन्ह न देखूं और कीलों के चिन्हों में अपनी अंगुली न करूं और अपना हाथ उस के पांजर में न डालूं मैं प्रतीति न करूंगा ॥

२ जी उठने के पीछे यिशू ने अपने शिष्यों को केवल एक बार दर्शन नहीं दिया बरन उन दर्शनों को छोड़ जो उस के स्वर्गारोहण के उपरान्त थे अपने शिष्यों को उस के चौदह दर्शनों का वर्णन मंगलसमाचार ग्रन्थ में लिखा है। और ये दर्शन चालीस दिन के समय में होते रहे और एक २ के बीच कुछ समय बीत गया जिसतें शिष्यों के मन भली भान्ति सुस्थित होवें और बारम्बार देखने से उन को पूरा निश्चय होवे ॥

३ सारे प्रेरित उस का स्वरूप भली भान्ति जानते थे क्योंकि वे तीन बरस से रात दिन उस की संगत में रहे थे ॥

४ उस ने अपने शरीर में कीलों और भाले से जो घाव हुए दिखाये और तूमा के सन्देहपूर्वक वचन से सज्ञान हो उस के हाथ और अंगुली

को उन घावों में कर दिया और सभों के संग संवाद करके बचन सुनाया और आज्ञा भी दिई और उन के सन्मुख भोजन भी खाया ॥

५ इस वृत्तान्त के साक्षी बड़त हैं यद्यपि केवल बारह ही प्रेरित होते तथापि जब वे विश्वस्त और समर्थ थे तो वेही बड़त होते परन्तु इन से अधिक और भी थे क्योंकि एक समय वह पांच सौ शिष्यों पर जो इकट्ठे थे प्रगट ड़आ और सारे शिष्य पुरुष और स्त्री एक ही प्रकार की साक्षी देते थे ॥

६ इस का वर्णन नहीं लिखा है कि उस ने शिष्यों को छोड़ किसी दूसरे मनुष्य को दर्शन दिया सो यदि यह वृत्तान्त कल्पित मात्र होता और सत्य न होता तो अवश्य उस के कल्पनेहारे इस प्रकार का वर्णन न करते। इस के सन्ती निःसन्देह वे कल्पना करते कि उसने बड़तेरे लोगों को भी जो शिष्य न थे दर्शन दिया और इस रीति से वे सब के सब शिष्य हो गये। परन्तु ध्यान करने से ऐसा वर्णन सत्य वृत्तान्त के समान संभव और विश्वासयोग्य और प्रामाणिक नहीं ठहर सक्ता ॥

७ प्रेरित और शिष्य यह साक्षी उसी समय और उसी स्थान पर जिस में वृत्तान्त उपस्थित था प्रकाशित रूप से साधारण लोगों के बीच और अपने कठिन बैरियों के सन्मुख देने लगे और कोई उन को झुठला न सका ॥

८ यद्यपि आरम्भ में वे अविश्वासी थे तथापि पीछे से मृत्यु लों भी इस की साक्षी देने में उन्हों ने किसी प्रकार का तनिक भी सन्देह अथवा दुबधा कभी नहीं दिखाई और इसी न हटने के कारण वे अन्त को मारे भी गये ॥

९ यद्यपि इस साक्षी पर विश्वास लाने के हेतु क्लेश और दुःख को छोड़ और कोई सांसारिक फल प्राप्त न हो सका तथापि सैकड़ों मनुष्य तुरन्त उसी स्थान पर यिसू के दर्शन बिन पाये भी विश्वास लाये यहां

लों कि पहिले दिन जिस पर यह समाचार प्रकाशित रूप से प्रचारा गया तीन सहस्र मनुष्य एक ही संग शिष्य हो गये ॥

१० इसी प्रकार से यह विश्वास कठिन विरुद्धता के सन्मुख बिना किसी लौकिक सामर्थ्य अथवा चतुराई से और केवल सत्यता और प्रमाण के बल से चारों ओर सर्वत्र फैल गया ॥

निदान पण्डितजी जो मैं ने एक पहिले सत्संग में कहा सो ठीक है कि यद्यपि यह वृत्तान्त निःसन्देह अति आश्चर्य्यजनक तो है तथापि कोई प्राचीन वृत्तान्त इतने विश्वस्त और समर्थ साक्षियों के दृढ़ बचन से इस के समान सिद्ध और प्रमाणिक ठहर नहीं सक्ता है। क्या आप किसी वृत्तान्त को जानते हैं जो इस के तुल्य देख पड़ता है ॥

वेदविद्वान का बचन॥ मैं ने सुना है कि महम्मदीय धर्म का स्थापन होना और फैल जाना आरम्भ में ख्रिष्टीय धर्म के समान था फिर इसी देश में बौद्ध मत भी इसी प्रकार से फैल गया सो यदि ख्रिष्टीय धर्म सर्वत्र फैल जाने से एक ईश्वरीय दैव्य धर्म ठहरता तो ये दोनों मत भी किस कारण ईश्वरीय और दैव्य नहीं ठहरते हैं॥

सत्यार्थी का बचन॥ मैं ने नहीं कहा पण्डितजी कि निरे सर्वत्र फैल जाने से ख्रिष्टीय धर्म एक ईश्वरीय दैव्य धर्म सिद्ध होता है परन्तु यह कि ऐसी दशा में और उस रीति पर उस के विश्वास सर्वत्र फैल जाने से वह वृत्तान्त ही जिस पर उस के शिष्य साक्षी देते थे निःसन्देह सत्य और प्रामाणिक ठहरता है। परन्तु यद्यपि महम्मदीय धर्म का वृत्तान्त ग्रहण भी हो तथापि वह उस्से दैव्य धर्म नहीं ठहर सक्ता है क्योंकि महम्मद ने बार २ कहा कि मैं कोई आस्चर्य्य कर्म नहीं कर सक्ता हूं तो वह किस प्रकार से एक दैव्य आचार्य्य ठहर सक्ता है। फिर उस के धर्म फैल जाने की रीति ख्रिष्टीय धर्म से बहुत भिन्न थी क्योंकि सांसारिक अभिप्राय और शारीरिक अभिलाषा उस के संग अत्यन्त संयुक्त थीं।

मुहम्मद ने अपने धर्म को खड्ग के बल से फैलाया परन्तु ख्रिष्टीय धर्म विना खड्ग चलाये वरन अपने शत्रुओं के खड्ग के सन्मुख आप ही आप फैल गया। फिर बौद्ध मत का फैल जाना भी अनेक विषयों में ख्रिष्टीय धर्म से अत्यन्त भिन्न था क्योंकि पहिले उस के विश्वासयोग्य वृत्तान्त बहुत थोड़ा मिलता है फिर जितना मिलता उस्से जाना जाता है कि शाक्यसिंह ने कई एक बातें जैसे आवागमन तपस्या इत्यादि जो हिन्दुओं में प्रचलित और प्रतिष्ठित थीं ग्रहण कर उन के संग कितनी नई २ बातें मिलाईं। ऐसा कि वह मत केवल हिन्दू धर्म का एक नया संप्रदाय अथवा दर्शन के समान था जैसे उस धर्म में अधिकाई के संग सदा होते रहे इस कारण आरम्भ में ब्राह्मण लोगों ने उस का सामा भी न किया। पीछे से जब उन्हों ने देखा कि इस के कारण हमारा पराक्रम साधारण लोगों के ऊपर से मिट जाता है तब निःसन्देह उन्हों ने उस की कठिन विरुद्धता किई। परन्तु उस समय वह बहुत फैल गया था और मगध का राजा विन्दुसार उस का रक्षक हो गया था और ब्राह्मण लोग कुछ बिलंब लों उस के शिष्यों को सताके उस मत को नाश नहीं कर सके थे परन्तु अन्त में उन्हों ने उस को क्षत्रियों की सहायता से इस देश से निकाल दिया। पर ख्रिष्टीय धर्म से इन दो मतों का विशेष भेद यह था कि वे दोनों मनुष्य जात की कितनी शारीरिक अभिलाषाओं को पालन करते थे और पाप की जड़ उखाड़ने के बदले केवल उस के दो एक पत्ते अथवा टहनियां काट डालते थे और मनुष्य के अभिमानी शारीरिक और स्वार्थिक स्वभाव को नाना प्रकार से मार्ग देते थे इस रीति से मनुष्यों के लौकिक अभिप्रायों की विरुद्धता न कर उन मतों का फैल जाना अनेक लौकिक कारणों से विवरण हो सका है। परन्तु ख्रिष्टीय धर्म की शिक्षा उस प्रकार की है कि शारीरिक मनुष्य जब लों कि पवित्र आत्मा की शक्ति से उस का एक नया मन न होवे

तो उस पर सत्य विश्वास लाके उस को ग्रहण नहीं कर सक्ता है। इस दशा में किसी का उस पर सत्य विश्वास लाके उस को ग्रहण करना एक दैव्य शक्ति का और उस धर्म की सत्यता का एक प्रत्यक्ष प्रमाण है पर किसी का उस को ग्रहण न करना केवल उस मनुष्य के सांसारिक स्वभाव का प्रमाण है। परन्तु ख्रिष्टीय शास्त्र की मूल शिक्षा की चर्चा में यह बात अधिक स्पष्ट हो जायगी इस समय तो हम केवल बुद्धिरूपी प्रमाणों की चर्चा करते हैं और आसरा है कि इस प्रकरण में आप का मन सन्तुष्ट हुआ नहीं तो जो कोई सन्देह रहा तो क्षमा करके बतलाइये क्योंकि ख्रिष्टीय धर्म में प्रमाणों की परीक्षा करनी वर्जित नहीं होती है॥

वेदविद्वान का बचन॥ आपने बड़े धीरज से मेरे दो एक सन्देहों का वर्णन सुन लिया और अपनी बुद्धि के अनुसार उन का उत्तर भी दिया है मैं मान लेता हूं कि आप के प्रमाण अति दृढ़ और यथार्थ देख पड़ते हैं और इस समय मैं उन में कोई दोष बतलाने नहीं चाहता हूं फिर भी मेरा मन ख्रिष्टीय धर्म के विषय में सम्पूर्ण रूप से सन्तुष्ट नहीं हुआ और मैं जानता हूं कि कदाचित इस प्रकार के प्रमाणों से सन्तुष्ट नहीं हो जायगा क्योंकि जब मन चाहता है तो ऐसे प्रमाणों पर दोषापत्ति लगाना कुछ बड़ा कठिन काम नहीं है। परन्तु इस समय मैं ऐसा नहीं करूंगा आगे के सत्सङ्ग में आप का कुछ और वर्णन सुनके जो २ बिचार मेरे मन में आवें मैं आप को बतलाऊंगा॥

ग्रन्थकर्त्ता का वचन॥ इतने में वेदविद्वान और सत्यार्थी परस्पर प्रणाम कर बिदा हुए और मैं भी अपने गृह को चला॥

इति मतपरीक्षा के द्वितीय खण्ड का चौथा सत्सङ्ग समाप्त हुआ॥

पांचवां सत्सङ्ग।

ख्रिष्टीय शास्त्र की मूल समानता और भविष्यद्वाणियों की चर्चा।

ग्रन्थकर्त्ता का वचन॥ वेदविद्वान और सत्यार्थी के जिन सत्सङ्गों का वर्णन मैं ने ऊपर लिखा है उन में बहुधा ख्रिष्टीय शास्त्र और धर्म के प्रकरण में ऐसी चर्चा होती रही जो सामान्य लोगों को आनन्ददायक नहीं होती है क्योंकि प्रमाणों की परीक्षा इस प्रकार से करनी विशेष करके हिन्दुओं की व्यवहारिक रीति नहीं है और यही कारण है कि साधारण हिन्दू और बहुतेरे पण्डित भी इतनी निष्प्रमाण कथाओं पर विश्वास रखते हैं। फिर जब प्रामाणिक विद्या प्राप्त करने से उन को विदित होता है कि ये सारी कथा निष्प्रमाण और कल्पितमात्र हैं तो बहुधा वे तुरन्त इस प्रकार की भावना करते हैं अर्थात कि किसी धर्म का प्रामाणिक और विश्वासयोग्य वृत्तान्त नहीं मिल सक्ता है इस रीति से वे ख्रिष्टीय धर्म के वृत्तान्त की परीक्षा नहीं करते और करनी भी नहीं चाहते हैं। परन्तु बिना परीक्षा किये उस धर्म की सत्य दशा क्योंकर निर्णय हो सक्ती है कदाचित वह धर्म अपने वाद के समान सारे जातिगणों के लिये परमेश्वर का अकेला ठहराया हुआ धर्म हो। यदि ऐसा नहीं है तो उस के प्रमाणों को जांच उस को खण्डन करना चाहिये यदि ऐसा है तो उस से निश्चिन्त और असावधान रहना केवल मूर्खता का काम हो सक्ता है। इस के अनुसार वेदविद्वान ने यद्यपि इस प्रकार के प्रमाणों से कुछ आनन्दित तो नहीं था तथापि सत्यार्थी के सारे प्रमाणों को धीरज के साथ सुन लिया और जब हम तीनों मनुष्य

स्थापित समय पर फिर इकट्ठे हुए तो सत्यार्थी से संवाद करके वह यों कहने लगा ॥

वेदविद्वान का वचन ॥ हे मेरे मित्र मैं ने आप के बहुत से प्रमाणों को सुन लिया है और उन के कारण मेरे मन में नाना प्रकार के सोच उत्पन्न हुए । जो कुछ आप ने हिन्दू शास्त्रों के प्रकरण में कहा सो मैं ने पहिले मान लिया कि उस के कारण से मेरा विश्वास जो उन शास्त्रों पर था सो बहुत मिट गया है मैं अब उन शास्त्रों में और उन के धर्म में बहुतेरे बड़े २ दोषों को देखता हूं जो पहिले मैं नहीं देखता था । सो जब आप के प्रमाणों से मेरा पुरातन विश्वास मिट गया है तो मुझ को आसरा था कि आप के अन्य प्रमाणों से मैं एक नवीन दैव्य ईश्वरीय विश्वास को प्राप्त हो जाऊंगा । परन्तु अब लों यह आसरा सुफल नहीं हुआ क्योंकि आप के सारे प्रमाण उस प्रकार के हो रहे हैं जिन के विचार करने से दैव्य विश्वास के प्रकरण में मन सन्तुष्ट नहीं हो सक्ता है । क्योंकि वह वृत्तान्त जो खिष्टीय शास्त्र में लिखा है सो अन्य देश और प्राचीन काल में उपस्थित था इस कारण मैं यद्यपि आप के प्रमाणों का उत्तर नहीं दे सक्ता और उन में किसी प्रकार का दोष भी नहीं बतला सक्ता तथापि उस वृत्तान्त को विश्वास के नेत्र से सत्य वृत्तान्त के समान देख लेना और निश्चय करना कि यह सचमुच इस जगत में उपस्थित हुआ मुझ को एक अति कठिन काम देख पड़ता है । क्या खिष्टीय शास्त्र का कोई ऐसा प्रसिद्ध और प्रत्यक्ष लक्षण नहीं है जिस को मैं अपने नेत्रों से देखके निर्णय कर सक्ता हूं कि यह सचमुच एक दैव्य लक्षण है ॥

सत्यार्थी का वचन ॥ आप के कहने से जान पड़ता है कि जब से आप ने मेरे सङ्ग संवाद किया तब से आप के मन के विचारों में एक बड़ा अन्तर हो गया है । क्योंकि हमारे सत्सङ्गों के आरम्भ में आप

विश्वासयोग्य साक्षी के किसी प्रमाण के विना भी देवताओं की अति असम्भव और असंगत कथाओं को सब के सब सत्य मानते थे और अब आप अनेक विश्वस्त और समर्थ साक्षियों के निर्दोषी प्रमाणों पर भी एक सत्य और योग्य वृत्तान्त को सत्य नहीं मान सक्ते हैं। परन्तु मैं जानता हूं कि मनुष्य के मन का व्यवहार बहुधा ऐसा ही है कि जब निष्प्रमाण और उचित से अधिक विश्वास करके उस विश्वास को वृथा पाता तो तुरन्त उस अधिक विश्वास से हटके अविश्वास की अधिकाई तक बरन उस की सीमा से परे भी दौड़ जाता है। और मैं यह भी जानता हूं कि किसी वृत्तान्त के नवीन समाचार को विशेष करके जो आश्चर्यजनक हो निश्चय के संग सत्य मानना अकस्मात नहीं हो सक्ता है। परन्तु जितना आप ख्रिष्टीय शास्त्र के वृत्तान्त पर और उस के प्रमाणों पर भी ध्यान करेंगे इतनी ही आप निश्चय विश्वास के संग मन की शान्ति भी पावेंगे। क्योंकि वह वृत्तान्त निःसन्देह सत्य और प्रामाणिक है और सत्य पुरुष के संशय दूर करने और उस के मन को शान्ति देने में अति योग्य और गुणदायक है॥

परन्तु अब मैं एक दूसरे विषय की चर्चा करने चाहता हूं और आसरा है कि जब आप इस का तात्पर्य भली भान्ति समझ लेंगे तो इस को एक ऐसा ही प्रसिद्ध और प्रत्यक्ष दैव्य लक्षण जानेंगे जैसे आप ने अभी वर्णन किया है। क्योंकि इस में मनुष्य का कर्टत्व न्यून दृष्ट आता है और परमेश्वर का कर्टत्व प्रत्यक्ष देख पड़ता है सो इस के ठीक विचार करने के लिये पहिले ख्रिष्टीय शास्त्र के प्रथम भाग अर्थात प्राचीन वाचापत्र का तनिक वर्णन करूंगा आप सुनिये॥

वह ग्रन्थ जिस को ख्रिष्टीय शिष्य अपने शास्त्र का पहिला भाग और प्राचीन वाचापत्र भी कहते हैं सो यिसू ख्रिष्ट के काल में और उससे पहिले भी यहूदी लोगों का शास्त्र था और आज लों भी यहूदी लोग

उस को ईश्वर का वचन मानते हैं। उस में मनुष्य जाति की उत्पत्ति से लेके श्री यिसू ख्रिष्ट के तीन सौ बरस पहिले तक जगत का ईश्वरीय धर्मसंयुक्त इतिहास लिखा है। उस के वर्णन का सार यह है कि परमेश्वर ने आरम्भ में मनुष्य जाति के पहिले माता पिता को शुद्ध और निष्पाप उत्पन्न किया परन्तु उन्हों ने मन के स्वतंत्र और इच्छारूपी सृष्टि हो अपनी इच्छा से परमेश्वर की आज्ञा भंग करके अपने स्वभाव को भ्रष्ट और पापमय कर डाला। इस कारण से उन का समस्त सन्तान पापमय उत्पन्न होता है और जगत में दुःख और मृत्यु सारे जातिगणन के ऊपर प्रबल हो रहा है। परन्तु आदि से दयासागर परमेश्वर ने प्रसन्न हो मनुष्य जाति की मुक्ति करने का उपाय रचा सो इसी उपाय के निर्वाह करने के निमित्त जो २ नियम श्री यिसू ख्रिष्ट के आगमन लों परमेश्वर ने जगत में ठहराये उन का वर्णन उस शास्त्र में लिखा है। इस रीति से वह शास्त्र खिष्टीय शास्त्र के दूसरे भाग अर्थात नवीन वाचापत्र के लिये एक प्रकार की भूमिका ठहरता है और उस की सम्पूर्णता और समाप्तता मंगलसमाचार ग्रन्थ में होती है॥

वेदविद्वान का वचन॥ क्या उस ग्रन्थ का कर्त्ता एक ही मनुष्य था अथवा मंगलसमाचार के समान उस के भिन्न २ कर्त्ता थे॥

सत्यार्थी का वचन॥ पण्डितजी उस का एक ही कर्त्ता नहीं था भिन्न २ कर्त्ता थे उस में सब समेत उनतालीस लिखावटें संयुक्त हैं और ये सब छब्बीस एक मनुष्यों के हाथ से ग्यारह सौ बरस के समय में लिखी गईं। पहिली पांच लिखावटों का कर्त्ता मूसा नाम वही आचार्य्य और भविष्यद्वक्ता था जिस का थोड़ा सा वर्णन मैं ने पहिले किया। यह मनुष्य यिसू ख्रिष्ट से पन्द्रह सौ बरस पहिले जीता था और उस ने अपनी पांच लिखावटों में मनुष्य जाति की उत्पत्ति से लेके अपने काल तक अर्थात पचीस सौ बरस का कुछ वर्णन लिखा है। उस बर्णन में ये विशेष

बातें संयुक्त हैं अर्थात पहिले पुरुष और स्त्री का उत्पन्न होना उन का पाप में पतित होना स्त्री के वंश से मुक्तिदाता की उत्पत्ति की प्रतिज्ञा बलिदान का स्थापन होना पहिले पुरुष के सन्तान का बिगड़ जाना आठ मनुष्यों को छोड़ मनुष्य जाति का जलीय प्रलय से विनाश होना मनुष्य जाति का दो बारा भूमि पर फैल जाना और बिगड़ जाना और देव पूजा में फंस जाना परमेश्वर का अबिरहाम नाम सत्य पुरुष को स्थापन करना कि उस के सन्तान में परमेश्वर का सत्य ज्ञान अटल रहे और उस वंश में से मुक्तिदाता उत्पन्न होवे। अबिरहाम के वंश से यहूदी नाम कुल का निकलना उस कुल का मिस्र देश में दास हो जाना मूसा आचार्य का उत्पन्न होना और यहूदी कुल को मिस्र देश से छुड़ाना और उस के लिये परमेश्वर के बतलाने से धार्मिक नियम और राजनीति ठहराना इन विषयों का वर्णन इन लिखावटों में है। इस के पीछे बारह लिखावटें आती हैं जो अनुमान से पांच एक मनुष्यों की लिखी हुई थीं इन में यहूदी कुल का वृत्तान्त मूसा की मृत्यु से लेके यिशू खिष्ट से पहिले के चार सौ तीस बरस तक अर्थात एक सहस्र बरस का वर्णन लिखा है। फिर पांच और लिखावटें आती हैं जो तीन मनुष्यों के नाम से प्रचलित हैं इन में परमेश्वर के सत्य ज्ञान और भजन और स्तुति इत्यादि का वर्णन लिखा है। और शेष सत्रह लिखावटें इबरानी अर्थात यहूदी भविष्यद्वक्ताओं की पुस्तकें कहलाती हैं क्योंकि उन के कर्त्ता वे मनुष्य थे जो परमेश्वर की ओर से दैव्य आचार्य और भविष्यद्वक्ता स्थापित हो यिशू खिष्ट के आठ सौ बरस पहिले से लेके चार सौ बरस तक यहूदी कुल का धर्मोपदेश करते और अपने उपदेश के स्थापन में भविष्यद्वाणी भी कहते थे ये सारी लिखावटें प्राचीन वाचापत्र नाम यहूदियों के शास्त्र में संयुक्त हैं॥

वेदविद्वान का वचन॥ आप के वर्णन के अनुसार इन लिखावटों का

वृत्तान्त नाना प्रकार का है और इन के भिन्न २ कर्त्ता प्राचीन काल में जीते थे। आप किस प्रकार से जानते हैं कि ये सत्य और प्रामाणिक हैं क्या उन के लिये भी मंगलसमाचार के समान अन्य ग्रन्थकर्त्ताओं की साक्षी मिलती है॥

सत्यार्थी का बचन॥ प्राचीन वाचापत्र की लिखावटों पर अन्य ग्रन्थकर्त्ताओं की तो साक्षी मिलती है परन्तु प्राचीनता के कारण मंगलसमाचार ग्रन्थ के समान नहीं हैं। और खिष्टीय शिष्य को इस प्रकार की साक्षी अवश्य भी नहीं है क्योंकि निश्चय है कि ये लिखावटें यिसू खिष्ट के काल में प्रचलित थीं और यहूदी लोग दैव्य लिखावटों के नाम से उन की प्रतिष्ठा करते और उन को ईश्वरीय शास्त्र मानते थे और यिसू खिष्ट और उस के प्रेरितों ने भी इसी प्रकार से उन का वर्णन किया। इस के अनुसार यिसू ने एक बार इस के विषय में यहूदियों से कहा॥

श्री यिसू खिष्ट का बचन॥ तुम दैव्य लिखावटों में ढूंढते हो क्योंकि तुम समझते हो कि उन में तुम्हारे लिये अनन्त जीवन है और ये वेही हैं जो मुझ पर साक्षी देते हैं पर तुम जीवन के लिये मेरे पास आने पर प्रसन्न नहीं होते हो इति॥

सत्यार्थी का बचन॥ इस दशा में यद्यपि अन्य ग्रन्थ कर्त्ताओं की कुछ साक्षी तो है तथापि खिष्टीय शिष्य को कुछ प्रयोजन नहीं है। फिर यह भी निश्चय है कि प्राचीन वाचापत्र के नाम से जो लिखावटें इन दिनों प्रचलित होती हैं सो वेही हैं जो यिसू खिष्ट के काल में प्रचलित थीं। क्योंकि उस काल से तीन सौ बरस पहिले मिस्र देश के राजा तालामी नामे की आज्ञा से उन का उलथा यवनी भाषा में किया गया और वह उलथा आज लों उपस्थित है और इन दोनों की तुल्यता करने से जाना जाता है कि दोनों का वृत्तान्त एक ही है। परन्तु आप कहते हैं कि इस प्रकार के प्रमाण से मन सन्तुष्ट नहीं होता है और मेरी भी

इच्छा है कि इस विषय में एक दूसरे प्रकार का वर्णन करूं। से आप ने अभी कहा कि इन लिखावटों का वृत्तान्त नाना प्रकार का देख पड़ता है और उन के भिन्न २ कर्त्ता थे और आप की यह बात ख्रिष्टीय शास्त्र के दोनों भागों के प्रकरण में ठीक है। क्योंकि दोनों भागों में सब समेत छियासठ भिन्न २ लिखावटें संयुक्त हैं और उन की रचना में दो भाषा के अर्थात इबरानी और यवनी शब्द लिखे थे और उन के कर्त्ता पैंतीस एक भिन्न २ मनुष्य थे और उन के लिखे जाने में सोलह सौ बरस बीत गये। इस को छोड़ उन का वृत्तान्त और रचना सचमुच समस्त प्रकार की हैं क्योंकि उन में मनुष्यों का वृत्तान्त है राजाओं का वृत्तान्त है राजव्यवस्था है धर्मव्यवस्था है धर्मोपदेश है नीतिविद्या है तत्वज्ञान की चर्चा है दृष्टान्त है गद्य है काव्य है पत्र है भविष्यद्वाणी है निदान रचना की कोई ऐसी रीति नहीं है जो इन लिखावटों में नहीं मिलती है। फिर जैसे उन के कर्त्ताओं के भिन्न २ काल थे तैसी उन की भिन्न २ दशा भी थी कोई बड़ा कोई छोटा कोई धनी कोई दरिद्र कोई विद्वान कोई अविद्वान कोई राजा कोई सेनापति कोई याजक कोई विचारकर्त्ता कोई वैद्य कोई गृहस्थ कोई ग्वाला कोई मछुवा कोई करग्राहक कोई आचार्य था इत्यादि। सो अब मैं आप से पूछता हूं कि ये सारी लिखावटें जो ऐसी भिन्न २ दशा और काल में और ऐसे अनेक प्रकार की और इतने बहुतेरे मनुष्यों के हाथ से लिखी थीं यदि एक ही ग्रन्थ में संयुक्त हों और वह ग्रन्थ स्वरूप की भिन्नता के संग एक मूल समानता प्रगट करे तो क्या यह एक प्रसिद्ध और प्रत्यक्ष दैव्य लक्षण नहीं ठहरेगा॥

वेदविद्वान का वचन॥ निःसन्देह पण्डितजी छियासठ भिन्न लिखावटों का एक ही ग्रन्थ बन जाना अति असम्भव बात देख पड़ती है वह तो बहुत बड़ा ग्रन्थ होगा और यदि वह ऐसी मूल समानता प्रगट

करता है तो बड़ा आश्चर्य है। परन्तु ऐसे बड़े ग्रन्थ को आदि से अन्त लों कौन पढ़ सक्ता है कि जिस्तें उस की इस मूल समानता को भली भान्ति समझ लेवे॥

सत्यार्थी का बचन॥ पण्डितजी यह तो ऐसा बहुत बड़ा ग्रन्थ नहीं है जैसी आप भावना करते हैं क्योंकि अंगरेज़ी भाषा के छोटे अक्षरों में उस के केवल आठ सौ पृष्ठ हैं। हिन्दी भाषा के बड़े अक्षरों में तो निःसन्देह इस्से अधिक हैं कदाचित बीस पचीस सौ पृष्ठ तक होंगे अर्थात महाभारत के चौथे भाग के समान होगा सो यदि कोई इस को नहीं पढ़ सक्ता तो हिन्दू शास्त्रों को कौन पढ़ सकेगा। परन्तु इस का तात्पर्य्य साधारण रीति से जान्ने के लिये इस का प्रत्येक पद पढ़ लेना प्रयोजन नहीं है और इस की मूल समानता भी देखने के निमित्त इस के प्रत्येक बचन पर ध्यान करना कुछ अवश्य नहीं है। इस की दशा कई एक बातों में सृष्टि की दशा के समान है क्योंकि सृष्टि में नाना प्रकार के स्वरूप देख पड़ते हैं परन्तु उस की ऐसी साधारण समानता प्रत्यक्ष है जिस्से सब किसी को निश्चय है कि यह एक ही कर्त्ता का रचित है इसी प्रकार से ख्रिष्टीय शास्त्र में भी एक ही कर्त्ता के लक्षण देख पड़ते हैं॥

वेदविद्वान का बचन॥ आप कृपा करके तनिक बतला दीजिये कि यह मूल समानता कैसी २ बातों में दृष्टि आती है॥

सत्यार्थी का बचन॥ पण्डितजी इस बात को सम्पूर्ण रूप से जान्ने के लिये ख्रिष्टीय शास्त्र को भली भान्ति ध्यान करके पढ़ना चाहिये परन्तु मैं दो एक बातों का वर्णन करूंगा॥

१ बात यह है कि इन सारी लिखावटों में परमेश्वर का वर्णन एक ही प्रकार का है अर्थात कि वह एक है आत्मस्वरूप अनादि अनन्त असीम सर्वसामर्थी सर्वज्ञानी सर्वदर्शी निर्विकार निराधीन निराकार निर्दोषी पवित्र प्रेमी सच्चा सत्यसन्ध सभों का सृष्टिकर्त्ता पालनकर्त्ता न्याय-

कर्त्ता और अपनी सारी सृष्टि में व्याप्त परन्तु उस्से पृथक भी है इन बातों में से किसी एक के विरुद्ध कोई शिक्षा इन सारी लिखावटों में कहीं नहीं पाई जाती है ॥

१ इन सब लिखावटों के अनुसार परमेश्वर जगत और मनुष्यजाति का सृष्टिकर्त्ता होके उन का अकेला स्वामी और अति महान महाराजा है और इस का राज सारे जातिगणों और सारे पदार्थों के ऊपर प्रबल है और केवल इस राज की आज्ञा पालन करने में उन का कल्याण हो सक्ता है। क्योंकि जो कोई इच्छारूपी सृष्टि इस राज की किसी एक आज्ञा को भंग करता है तो अपराधी दंडित ठहरता है और अपनी इच्छा से आज्ञा पालन न करके अपनी इच्छा के विरुद्ध अपने अपराध का दण्ड भोगता है और परमेश्वर को छोड़ किसी दूसरे को ईश्वर और भगवान ठहराना सब से बड़ा अपराध है ॥

२ इस राज की आज्ञा जो परमेश्वर की व्यवस्था है सम्पूर्ण रूप से आज्ञाकर्त्ता के समान निर्दोषी पवित्र और भली है। इन सारी लिखावटों में इस व्यवस्था की भिन्न २ बातें बतलाई जाती हैं परन्तु सभों में इन बातों का मूल समान है और आज्ञाकर्त्ता के योग्य भी है और उन में किसी प्रकार की विरुद्धता देख नहीं पड़ती है। उन का मूल यह है कि परमेश्वर को अपने सारे अन्तःकरण और आत्मा और बल और मन से प्यार करना और सारे मनुष्यों से अपने समान प्रेम रखके उन से ऐसा व्यवहार करना जैसे हम चाहते हैं कि वे हम से करें ॥

४ इन सारी लिखावटों में मनुष्य की स्वाभाविक प्रकृति का वर्णन भी समान है अर्थात कि उस की प्रकृति में देह और आत्मा संयुक्त है और उस की आत्मा बुद्धिरूपी और इच्छारूपी भी है और इस प्रकृति का कल्याण यह है कि उस की आत्मा अपनी इच्छा से परमेश्वर का आधीन हो और उस्से मेल रख बुद्धिद्वारा अपने देह को और उस

की अभिलाषा के वश में रक्खे और परमेश्वर की सारी आज्ञाओं का पालन करे। परन्तु यह प्रकृति तो मन की स्वतंत्र है अर्थात परमेश्वर की आज्ञा पालन करना वा न करना उस की इच्छा के आधीन है इस कारण उस को पाप और पुण्य गिना जाता है और यदि आज्ञा पालन न करे तो पापी ठहरता है॥

५ मनुष्यों की आत्मिक दशा का वर्णन भी इन सब लिखावटों में समान है अर्थात कि सारे जातिगण अपनी इच्छा से परमेश्वर की आज्ञा भंग करके सब के सब पापी ठहरते हैं इन की शिक्षा की रीति से कोई ऐसा मनुष्य नहीं है जो पाप नहीं करता है॥

६ इस कारण इन सारी लिखावटों के अनुसार मनुष्य जाति की आत्मिक दशा अति बुरी है क्योंकि पाप के कारण से उस की उत्तम मूल प्रकृति बिगड़ गई है और वह अपने को इस दुर्दशा से बचाने के निमित्त कोई यथायोग्य उपाय रच नहीं सक्ता है। क्योंकि जितना सुकर्म वा पुण्य वह करे तथापि उचित से अधिक वह नहीं कर सक्ता है फिर उस का किया हुआ पाप बना रहता है। इस कारण कोई ऐसा प्रायश्चित्त जिस्से उस का पाप कट जावे उस के लिये अवश्य है परन्तु यह उस्से नहीं हो सक्ता है और इस को छोड़ उस का मन सचमुच सुकर्म करने नहीं चाहता है॥

७ फिर इन सारी लिखावटों की शिक्षा यह है कि इस बुरी दशा में किसी मनुष्य की मुक्ति केवल उस के एक नया मन और नया स्वभाव उत्पन्न होने से हो सक्ती है और यह नवीन आत्मिक उत्पत्ति केवल परमेश्वर के अनुग्रह और शक्ति से हो सक्ती है। और इस कारण से यह आत्मिक उत्पत्ति सारे मनुष्यों को अवश्य है कि इस के बिना कोई मनुष्य पाप को त्याग धर्म का शुद्ध काम नहीं कर सक्ता है और परमेश्वर

धर्म के किसी काम को जो मन की इच्छा से न होवे ग्रहण नहीं करता है ॥

इस रीति से पण्डितजी मैं अनेक बातों का वर्णन कर सक्ता हूं कि जिन के विषय में इन सारी लिखावटों की शिक्षा समान है मैं ने तो केवल उदाहरण की रीति दो एक का वर्णन किया है। अब आप ध्यान कीजिये कि ये ऐसी बातें हैं जिन पर मनुष्य अपनी बुद्धिमात्र से नाना प्रकार की भिन्न और बिरुद्ध भावना कल्पते हैं और इन सभों के विषय में हिन्दू शास्त्रों की शिक्षा इसी प्रकार से भिन्न और बिरुद्ध है। फिर जब इन गूढ़ विषयों में इन सारी भिन्न २ लिखावटों की शिक्षा ऐसे आश्चर्य रूप से सदा समान और एक सा है तो क्या उन के मूल कर्त्ता के एक ही और दैव्य होने के लक्षण प्रत्यक्ष नहीं देख पड़ते हैं। यदि परमात्मा इन पैंतीस एक भिन्न २ मनुष्यों की अगुवाई और सहायता न करता तो वे सोलह सौ बरस के समय में भिन्न २ वृत्तान्त लिखके ऐसे गूढ़ विषयों का सदा समान वर्णन जिस में किसी प्रकार की परस्पर विरुद्धता देख नहीं पड़ती है क्योंकर लिख सक्ते ॥

वेदविद्वान का बचन॥ निःसन्देह आप के वर्णन के अनुसार स्वरूप की ऐसी भिन्नता के संग इस आश्चर्य मूल समानता का प्रगट होना एक प्रसिद्ध लक्षण देख पड़ता है परन्तु सम्पूर्ण ख्रिष्टीय शास्त्र को बिन देखे और ध्यान किये मैं उस की सत्य दशा भली भान्ति नहीं जान सक्ता हूं। इस समय आप के वर्णन के कारण से एक विचार मेरे मन में आता है जो मैं बतलाऊंगा सो यह है कि ख्रिष्टीय शास्त्र की शिक्षा की रीति मनुष्यजाति की आत्मिक दशा अत्यन्त शोकयुक्त भयानक है। क्योंकि आप कहते हैं कि जो दुःख इत्यादि बुराइयां उस को इस जीवन में होती हैं सो उसी के पाप के कारण से होती हैं। फिर वह अपने को इस पापी दशा से बचा नहीं सक्ता है और ऐसी दशा में परमेश्वर के संग उस का

कुछ मेल क्योंकर होवे और इस के बिना परमेश्वर उस की मुक्ति करने पर क्योंकर प्रसन्न होवे ॥

सत्यार्थी का बचन॥ आप का प्रश्न ऐसा है कि खिष्टीय शास्त्र के बिना कोई मनुष्य इस का उत्तर नहीं दे सक्ता है और खिष्टीय शास्त्र में इस का वही उत्तर लिखा है जो परमेश्वर आप ही देता है क्योंकि उस शास्त्र में वह उपाय जिस को परमेश्वर ने दया करके मनुष्य की मुक्ति के लिये ठहराया है वर्णित होता है। शास्त्र के बचनों में यह उपाय परमेश्वर की शक्ति और परमेश्वर का ज्ञान कहलाता है क्योंकि उस में सारी सृष्टि से अधिक परमेश्वर की शक्ति और ज्ञान विशेष करके प्रगट होते हैं। और यह एक और विषय है जिस में खिष्टीय शास्त्र की सारी लिखावटों की समानता देख पड़ती है क्योंकि यद्यपि इस उपाय का सम्पूर्ण वृत्तान्त केवल मंगलसमाचार ग्रन्थ में लिखा है तथापि प्राचीन वाचापत्र में भी इस का समाचार आरम्भ ही से भविष्यद्वाणी की रीति मिलता है। एक प्रकार से यह भी कहना ठीक है कि खिष्टीय शास्त्र के दोनों भागों का सार श्री यिसू खिष्ट है क्योंकि पहिले भाग में उस के आगमन की प्रस्थापना और भविष्यद्वाणी है और दूसरे भाग में उस के वृत्तान्त लिखे हैं ॥

वेदविद्वान का बचन॥ यह भविष्यद्वाणी जिस का वर्णन आप करते हैं किस प्रकार की है क्या वह सचमुच वृत्तान्त से पहिले दिई गई और उस का अर्थ ऐसा स्पष्ट था और उत्तरवर्ती वृत्तान्त से उस रीति पर मिलता था कि किसी प्रकार का भ्रम नहीं हो सक्ता है॥

सत्यार्थी का बचन॥ मैं वर्णन कर चुका हूं कि निश्चय करके वृत्तान्त से तीन सौ बरस पहिले भविष्यद्वाणी लिखी गई थी क्योंकि उस समय उस का उलथा यवनी भाषा में किया गया और मनुष्य की सामर्थ से बाहर है कि तीन सौ बरस पहिले से किसी वृत्तान्त की भविष्यद्वाणी

करें। परन्तु कुछ सन्देह नहीं है कि कितनी भविष्यद्वाणियां मूसा के काल में अर्थात ईसी संवत से पन्द्रह सौ बरस पहिले लिखी गईं और कितनी उस्से भी बहुत बरस पहिले दी गईं। उन का अर्थ बहुधा उस प्रकार का था जो वृत्तान्त के उपस्थित होने से पहिले सम्पूर्ण रूप से समझ में नहीं आ सक्ता था परन्तु जब वृत्तान्त उपस्थित हुआ तब भविष्यद्वाणी का अर्थ स्पष्ट देख पड़ा। श्री यिसू ख्रिष्ट के विषय में भविष्यद्वाणियों की एक श्रेणी है जो क्रम २ से दी गई और ऐसी भिन्न २ प्रकार की हैं कि उन के विषय में भ्रम करना सम्भव नहीं है मैं आप के लिये दो एक का वर्णन करूंगा॥

पहिली भविष्यद्वाणी उस समय दी गई जब कि पहिला पुरुष और स्त्री पाप में पतित हुए इस का वर्णन मूसा आचार्य की प्रथम लिखावट के आरम्भ में लिखा है। इस वर्णन से जाना जाता है कि शैतान अर्थात दुष्टात्मा ने डाह से ज्वलित हो सर्प्प का स्वरूप बन पहिले पुरुष और स्त्री को बहकाया कि परमेश्वर की आज्ञा का उल्लंघन करें। इस पर परमेश्वर ने सर्प्प को श्राप देके कहा कि मैं तुझ में और स्त्री में तेरे वंश और उस के वंश में बैर डालूंगा वह तेरे सिर को कुचलेगा और तू उस की एड़ी को काटेगा इति। सो यह पहिली भविष्यद्वाणी थी॥

वेदविद्वान का बचन॥ पण्डितजी इस का अर्थ मेरी समझ में नहीं आता है आप मेरे लिये खोलिये॥

सत्यार्थी का बचन॥ इस भविष्यद्वाणी से यह अर्थ निकलता है कि स्त्री के वंश से कोई उत्पन्न होगा जो मनुष्य के कठिन बैरी शैतान के सिर को कुचलेगा अर्थात नाश करेगा और ऐसे करने में वह आप भी अपनी कुछ हानि उठावेगा। इतना अर्थ पहिले पुरुष और स्त्री को प्रगट हो सक्ता था और इतने पर विश्वास लाके वे मन का कुछ ढाढ़स बांध सक्ते थे। परन्तु मैं ने अभी कहा है कि भविष्यद्वाणी का सम्पूर्ण अर्थ

केवल वृत्तान्त के साथ मिलने से प्रगट हो सक्ता है। यह बात तो निश्चय है कि इस प्रतिज्ञाबोधक भविष्यद्वाणी के कारण सत्य पुरुष और धर्मी मनुष्य आरम्भ ही से यिसू खिष्ट के आगमन लों किसी महानुभाव निस्तार करनेहारे की बाट जोहते थे। परन्तु जब श्री यिसू खिष्ट का वृत्तान्त उपस्थित हो चुका था तब उस भविष्यद्वाणी का अर्थ स्पष्ट रूप से खुल गया क्योंकि यिसू खिष्ट की उत्पत्ति व्यावहारिक रीति से नहीं पर कुमारी कन्या से थी और इस रीति से वह स्त्री ही का वंश ठहरा पुरुष का नहीं। फिर शैतान को जीतकर और मृत्युञ्जय हो उस ने उस का सिर कुचला और जब ऐसे करने में उस ने अत्यन्त दुःख सह लिया और निष्पाप हो मर भी गया तब शैतान ने उस की एड़ी को काटा अर्थात उस की मनुष्यता को हानि पहुंचाई क्योंकि जिस प्रकार से मनुष्य अपनी एड़ी पर स्थिर रहता है उसी रीति से श्री यिसू खिष्ट की ईश्वरता उस की एड़ीरूपी मनुष्यता पर स्थापित थी सो प्रथम भविष्यद्वाणी का अर्थ यही है॥

इस के पीछे कई एक भविष्यद्वाणियां मिलीं जिन का वर्णन विस्तार के भय से मैं नहीं कर सक्ता हूं परन्तु जब परमेश्वर ने अबिरहाम सत्य पुरुष को स्थापित किया कि उस के वंश में से मुक्तिदाता उत्पन्न हो तब उस ने उस को एक प्रसिद्ध भविष्यद्वाणी दिई जिस की तनिक चर्चा करूंगा यह वृत्तान्त ईस्वी संवत से उन्तीस सौ इक्कीस बरस पहिले उपस्थित था। उस समय बहुधा मनुष्य मूर्तिपूजा में फंस जाते थे परन्तु अबिरहाम पचहत्तर बरस का हो एक देश में जो यहूदिया देश के उत्तर ओर को था बास कर सच्चे परमेश्वर का भजन करता था। तब परमेश्वर ने उस को आज्ञा दिई कि अपने देश को त्याग अपनी स्त्री और कुटुम्ब को साथ ले एक देश को जो मैं तुझे बतलाऊंगा चल। और उस को यह प्रतिज्ञा दिई कि मैं तेरी पत्नी से तेरे वंश को बहुत बढ़ाऊंगा परन्तु वे

उस समय निर्वंश थे और परमेश्वर ने उस्से यह भी कहा कि मैं यह देश तेरे वंश को टूंगा और तेरा वंश एक अन्य देश में दास हो जायगा और चार सौ बरस पीछे मैं उस को छुड़ाऊंगा और इस देश में बसाऊंगा और तुझ से और तेरे वंश से पृथिवी के सारे घराने आशीष पावेंगे इति। सो पृथिवी के सारे घराने अबिरहाम के वंश से क्योंकर आशीष पावें। एक रीति है जिस्से यह होवे अर्थात कि जगत का मुक्तिदाता जिस की प्रतिज्ञा आरम्भ ही से हुई उस के वंश से उत्पन्न होवे और अन्य लक्षणों से जिन का वर्णन विस्तार के कारण मैं नहीं करता हूं जाना जाता है कि उस का अर्थ यही था इस के अनुसार श्री यिसू ख्रिष्ट अबिरहाम के वंश से उत्पन्न हुआ॥

वेदविद्वान का वचन॥ क्या वे दूसरी बातें भी जिन का वर्णन इस भविष्यद्वाणी में है इसी प्रकार से सम्पूर्ण हुईं॥

सत्यार्थी का वचन॥ हां पण्डितजी वे सब की सब कुछ विलम्ब के पीछे पूरी हुईं क्योंकि जब पचीस बरस बीत गये थे अर्थात जब अबिरहाम एक सौ बरस का हो गया था तब उस की पत्नी ने एक पुत्र जना जिस का नाम उन्हों ने इज़हाक़ रक्खा और इज़हाक़ का पुत्र यअ़कूब था और यअ़कूब के बारह पुत्र थे जो यहूदी कुल के बारह घरानों के अध्यक्ष ठहरे। वे सब कुटुम्ब समेत मिस्र देश में गये और वहां उन के सन्तान दास हो गये और प्रतिज्ञा से चार सौ बरस पीछे मूसा आचार्य्य ने उन को उस देश से छुड़ाके यहूदिया देश की सीमा पर पहुंचाया। वे उस के निवासियों को जीतके उस देश में बसे और बहुत बढ़ गये और उन का राज स्थापित हुआ। इस रीति से जब निकटवर्ती भविष्यद्वाणियां पूरी होती गईं तो धर्मियों का विश्वास प्राचीन बड़ी प्रतिज्ञा पर अधिक दृढ़ हो गया कि यह भी ठीक समय पर पूरी हो जायगी॥

अबिरहाम के पीछे अर्थात ईसवी संवत से सोलह सौ नब्बे बरस पहिले

जब यअकूब मरने पर था तब उस ने अपने बारह पुत्र पास बुलाये एक २ के विषय में भविष्यद्वाणी कही और उन के सन्तान का आनेवाला वृत्तान्त संक्षेप से बतलाया। उस समय उसने यहूदा नाम एक पुत्र का वृत्तान्त इस रीति से कहा कि यहूदी से राजदण्ड अलग न होगा और न व्यवस्थादायक उस के बंश में से जायगा जब लों शैला न आवे और जातिगण उस के पास इकट्ठे होवेंगे इति। सो इस भविष्यद्वाणी में शैला शब्द का अर्थ है प्रेरित और यह यिसू ख्रिष्ट का एक पदवीवाचक नाम है क्योंकि परमेश्वर ने उस को स्वर्ग से जगत में प्रेरित किया। और इस समाचार से जाना जाता है कि अबिरहाम के बंश के अन्य ग्यारह घरानों को छोड़ आनेहारा मुक्तिदाता यहूदा ही के घराने में उत्पन्न होगा और जब लों वह उत्पन्न न होगा तब लों यहूदियों का राज उसी घराने में स्थिर रहेगा। और यह भी अनुमान होता है कि जब वह आवेगा तब वह राज जाता रहेगा सो ये सारी बातें यिसू ख्रिष्ट के वृत्तान्त में पूरी हुईं॥

वेदविद्वान का बचन॥ उस भविष्यद्वाणी में यह भी वर्णित होता है कि जातिगण उस के पास इकट्ठे होवेंगे सो पण्डितजी इस का क्या अर्थ है॥

सत्यार्थी का बचन॥ इस का वही अर्थ है जो अबिरहाम के विषय में कहा गया अर्थात कि पृथिवी के सारे घराने उस्से आशीष पावेंगे क्योंकि यिसू ख्रिष्ट परमेश्वर का ठहराया हुआ जगत ही का मुक्तिदाता है और जो स्वर्गीय आशीष उस्से प्राप्त होती हैं सो केवल एक कुल के लिये नहीं बरन सारे जातिगणों के लिये उपस्थित हैं और पहिले सत्संग में मैं ने बतलाया कि इसी बात में ख्रिष्टीय धर्म सारे मनुष्य रचित धर्मों से भिन्न और अत्यन्त उत्तम और प्रत्यक्ष दैव्य देख पड़ता है॥

फिर ईस्वी संवत से पन्द्रह सौ बरस पहिले पूर्वोक्त आचार्य्य मूसा ने आनेहारे मुक्तिदाता की एक प्रसिद्ध भविष्यद्वाणी कही और इस का वर्णन

उस की पिछली लिखावट के अठारहवें पर्व्व में लिखा है। उस समय मूसा मरने के निकट था और उस ने समस्त यहूदियों को दोहराके बतलाया कि परमेश्वर ने उस के द्वारा उन के लिये क्या २ धर्म नियम और राजनीति ठहराई थी और कैसे बड़े २ आश्चर्य कर्म दिखाये थे। और यह भी उन को स्मरण दिलाया कि जब परमेश्वर ने सीना पर्वत की चोटी पर से बड़े बादल और गरज बिजली के साथ दश आज्ञा सुनाई थीं तो उन्हों ने बिनती किई और कहा कि ऐसा न हो कि हम परमेश्वर अपने ईश्वर का शब्द सुनें और ऐसी बड़ी आग फिर देखें जिसतें हम मर न जायें। और परमेश्वर ने मूसा को कहा कि उन्हों ने जो कुछ कहा सो अच्छा कहा मैं उन के लिये उन के भाइयों में से तेरे तुल्य एक आचार्य्य को उदय करूंगा और अपना बचन उस के मुख में डालूंगा और जो कुछ मैं उस्से कहूंगा वह उन से कहेगा और ऐसा होगा कि जो कोई मेरी बातों को जिन्हें वह मेरे नाम से कहेगा न सुनेगा मैं उस्से लेखा लूंगा इति। सो यह एक और स्पष्ट भविष्यद्वाणी है जो केवल यिसू ख्रिष्ट के वृत्तान्त से मिल सक्ती है और उस के कारण सारे विश्वासी यहूदी अधिक अभिलाषा के संग पहिली प्रतिज्ञा के सम्पूर्ण होने को ताकते थे॥

वेदविद्वान का वचन॥ क्या आप ने नहीं कहा कि मूसा के पीछे बहुतेरे आचार्य्य यहूदी लोगों के पास भेजे गये तो यह भविष्यद्वाणी काहे को केवल यिसू ख्रिष्ट के विषय में ठीक हो सक्ती है॥

सत्यार्थी का वचन॥ सच है पण्डितजी कि बहुतेरे आचार्य्य थे परन्तु उन में से कोई मूसा के तुल्य न था क्योंकि किसी ने उस के समान बड़े आश्चर्य कर्म नहीं दिखाये और नया धर्म नियम भी नहीं ठहराया। फिर और एक बात यह है कि आनेहारे आचार्य्य की यह प्रतिज्ञा यहूदियों की बिनती के कारण जब वे सीना पर्वत की भयानक दशा से

डरते थे दी गई और जिस प्रकार से मूसा परमेश्वर के और उन के बीच मध्यस्थ था उसी प्रकार से यह नया आचार्य्य भी होनेहार था परन्तु यिसू खिष्ट को छोड़ कोई ऐसा मध्यस्थ न था और इस भविष्यद्वाणी से यह भी सम्भव था कि आनेहारा आचार्य्य कोमलता और दया के संग आवेगा जिसतें पापी मनुष्य की डर मिट जाय और उस का भयभीत मन शान्ति पावे सो यह भी केवल यिसू खिष्ट के विषय में ठीक आता है परन्तु अब मैं एक दूसरे वृत्तान्त की चर्चा करता हूं॥

ईस्वी संवत से पहिले दस सौ छप्पन बरस से लेके दस सौ सोलह तक यहूदियों का राजा दाऊद नाम था। वह एक बड़ा धार्मिक साधु मनुष्य था और उस की इच्छा थी कि औरशलीम नगर में परमेश्वर के नाम पर एक अत्यन्त बड़ा सुन्दर भजनघर बनावें। परन्तु जब वह अपने मन में यह सोच करता था तो परमेश्वर ने एक आचार्य्य के द्वारा से उस के पास यह कहलाय भेजा कि तू ने पृथिवी में बहुत संग्राम किये और बहुत लोहू बहाया है तू मेरे नाम पर मन्दिर न बनाना देख तुझ से एक पुत्र उत्पन्न होगा वह सन्धिकर्त्ता मनुष्य होगा वही मेरे लिये एक मन्दिर बनावेगा वह मेरा पुत्र होगा मैं उस का पिता हूंगा और मैं इसराएल पर उस के राज का सिंहासन सदा लों अटल रक्खूंगा इति। सो यह एक भविष्यद्वाणी है जिस्से दो अर्थ निकलते हैं पहिला अर्थ एक सांसारिक वृत्तान्त से संयुक्त है और इस प्रकार से संपूर्ण हुआ कि दाऊद का एक पुत्र सुलेमान नाम उत्पन्न हुआ जो उस की मृत्यु के पीछे चालीस बरस लों कुशल और चैन का राज करता था और उस ने औरशलीम नगर में परमेश्वर का प्रसिद्ध मन्दिर बनाया। परन्तु सुलेमान के वृत्तान्त में इस भविष्यद्वाणी का अर्थ सम्पूर्ण रूप से समाप्त नहीं हुआ क्योंकि उस का सिंहासन सदा लों अटल नहीं रहा। सो इस का कारण यह है कि सुलेमान का वृत्तान्त भी एक प्रकार की

भविष्यद्वाणी ठहरता है अर्थात उस के सांसारिक वृत्तान्त में एक दृष्टान्तपूर्वक धार्मिक अर्थ था जो पहिली भविष्यद्वाणी का दूसरा आत्मिक और धार्मिक अर्थ ठहरता है और इस की सम्पूर्णता यिसू ख्रिष्ट के वृत्तान्त में मिलती है॥

वेदविद्वान का वचन॥ यह तो पण्डितजी एक बड़ी असम्भव और आश्चर्य की बात देख पड़ती है आप इस को किस प्रकार से सिद्ध कर सक्ते हैं॥

सत्यार्थी का वचन॥ मैं ने पहिले बतलाया कि ख्रिष्टीय शास्त्र की भविष्यद्वाणियां बहुधा उस प्रकार की हैं जिन का अर्थ वृत्तान्त ही के साथ मिलने से जाना जाता है। यहूदी लोग तो मानते थे कि यह भविष्यद्वाणी केवल सुलेमान के विषय में नहीं है परन्तु आनेहारे मुक्तिदाता का समाचार भी देती है और इस कारण वे उस आनेहारे को दाऊद का पुत्र कहते थे क्योंकि इसी भविष्यद्वाणी के कारण वे जानते थे कि वह दाऊद के वंश से उत्पन्न होगा। परन्तु वे इस का आत्मिक अर्थ भली भान्ति नहीं समझते थे क्योंकि वे जानते थे कि मुक्तिदाता जब आवेगा तो दाऊद राजा के वंश से उत्पन्न हो वह बड़ा पराक्रमी सांसारिक महाराजा होगा। पर यिसू ख्रिष्ट के वृत्तान्त से जाना जाता है कि उस का राज आत्मिक और धार्मिक है और सदा लों अटल रहनेहारा है और वह आप उस रीति से परमेश्वर का पुत्र भी है जिस रीति से कोई दूसरा नहीं हो सक्ता है और उस ने परमेश्वर के लिये एक आत्मिक मन्दिर अर्थात ख्रिष्टीय मण्डली जिस में परमेश्वर का भजन आत्मिक रीति से नित्य किया जाता है बनाया। इसी प्रकार से यिसू ख्रिष्ट ने अपने विषय में और उस के प्रेरितों ने उस के विषय में यह भविष्यद्वाणी बतलाई॥

वेदविद्वान का वचन॥ जब दाऊद को यह भविष्यद्वाणी मिली तो

क्या उस ने उस का यह आत्मिक मूल अर्थ जिस को आप बतलाते हैं समझ लिया कि नहीं॥

सत्यार्थी का बचन॥ पण्डितजी मैं ठीक नहीं बतला सक्ता हूं कि दाऊद ने इसका पूरा अर्थ समझ लिया कि नहीं परन्तु उस ने आप अपने भजन के गीतों में यिसू ख्रिष्ट की कई एक प्रसिद्ध भविष्यद्वाणियां कहीं जिन से अनुमान सिद्ध होता है कि उस ने इस का भी आत्मिक अर्थ कुछ समझा होगा। क्योंकि उस ने आगमज्ञानी की रीति अपने गीतों में आनेहारे मुक्तिदाता का यह वर्णन किया है अर्थात कि वह विशेष रूप से परमेश्वर का पुत्र होगा और प्रभु होगा और बड़ा महाराजा भी होगा और उस का राज धार्मिक होगा और सारे संसार के ऊपर फैल जायगा और सदा लों अटल रहेगा और इस के संग वह सदा लों एक याजक भी होगा। फिर दाऊद ने उस के दुःखों और मृत्यु और पुनरुत्थान की भी भविष्यद्वाणी कही और यह भी कहा कि उस के हाथ और पांव छेदे जायेंगे और मनुष्य उस पर ठट्ठा करेंगे और उस के वस्त्र बांटने में चिट्ठी डालेंगे इत्यादि। ऐसी २ बातों का समाचार उस ने दिया जो यिसू ख्रिष्ट के वृत्तान्त में सब की सब सम्पूर्ण हुई और किसी दूसरे के विषय में ठीक नहीं होती हैं॥

वेदविद्वान का बचन॥ ये मनुष्य भविष्य की ऐसी २ बातें किस प्रकार से जान सक्ते थे॥

सत्यार्थी का बचन॥ पण्डितजी इस प्रकरण में मैं श्री यिसू ख्रिष्ट के एक प्रेरित पतरस नामे का बचन कहूंगा जो उस के दूसरे पत्र के पहिले पर्व्व के बीसवें पद में लिखा है॥

पतरस प्रेरित का बचन॥ यह जान कि भविष्यद्वाणी की लिखी हुई किसी बात का अर्थ उस के बचन मात्र से नहीं खुलता है क्योंकि भविष्य

की बात प्राचीन समय में मनुष्य की इच्छा से नहीं आई परन्तु परमेश्वर के पवित्र लोग पवित्र आत्मा के बुलवाये बोलते थे इति॥

सत्यार्थी का वचन॥ इस से जाना जाता है कि पवित्र आत्मा ने उन मनुष्यों को किसी आत्मिक रीति से भविष्य का वृत्तान्त दिखाया और उन्हों ने उस को देखके अपनी भविष्यद्वाणी कही। परन्तु जब एक ने एक विषय का वर्णन किया और दूसरे ने दूसरे विषय का वृत्तान्त लिखा तो उन सभों का वर्णन वृत्तान्त ही के साथ मिलाने से सभों का परस्पर सम्बन्धी अर्थ खुल जाता है। इस के अनुसार ईस्वी संवत से पहिले आठ सौ चालीस बरस से लेके चार सौ बरस लों सोलह मनुष्य थे जो इसी प्रकार से भविष्य की बात बोलते थे और उन का वर्णन प्राचीन वाचापत्र में संयुक्त है। इन में से कितनों ने यहूदी कुल का और आसपास के देशों और राजाओं और जातियों का वृत्तान्त जो यिसू ख्रिष्ट के आगमन के पहिले होनेहार था और कितनों ने उस काल से पीछे का भी ऐसा ही वृत्तान्त लिखा है परन्तु उन का सारा वर्णन यिसू ख्रिष्ट के आगमन से कुछ सम्बन्ध रखता है और यही विषय अर्थात मुक्तिदाता का आगमन इन सब भविष्यद्वक्ताओं के वर्णन का विशेष अभिप्राय है। जैसे यूहन्ना प्रेरित ने कहा कि भविष्यद्वाणी का मूल अभिप्राय यिसू पर साक्षी देना है। परन्तु इन बातों की ठीक परीक्षा करने के निमित्त जगत के प्राचीन इतिहास से भली भान्ति सज्ञान होना अवश्य है और इन का संक्षेप वर्णन भी इस समय नहीं हो सक्ता है। मैं केवल इतना कहता हूं कि यहूदी कुल के सांसारिक वृत्तान्त को छोड़ दस बड़े २ देशों और नगरों का होनेहार वृत्तान्त कभी पचास बरस कभी एक सौ बरस कभी डेढ़ सौ बरस पहिले लिखा था और इन सारी बातों का सम्पूर्ण समाप्त होना अन्य देशियों और अन्य धर्मियों के लिखे हुए वर्णन से जाना जाता है॥

वेदविद्वान का वचन॥ यद्यपि आप निःसन्देह इन सभों का विस्तारपूर्वक वर्णन इस समय नहीं कर सक्ते हैं तथापि जो भविष्यद्वाणियां यिसू ख्रिष्ट के विषय में मिलीं कदाचित उन का संक्षेप वर्णन हो सक्ता है॥

सत्यार्थी का बचन॥ पण्डितजी मैं उन की तनिक चर्चा करूंगा परन्तु आप को भी चाहिये कि ऊपर की वर्णित भविष्यद्वाणियों को जांचके उन का आश्चर्य्य वृत्तान्त समझ लेना क्योंकि अद्भुत दैव्य आगमज्ञान के लक्षण उन में प्रत्यक्ष देख पड़ते हैं। अब आनेहारे मुक्तिदाता के कई एक लक्षण जिन को पूर्वोक्त भविष्यद्वक्ताओं ने ठहराया मैं बतलाता हूं उन बातों को छोड़ कि जिन पर सन्देह हो सक्ता है ये बातें स्पष्ट और निश्चित हैं॥

१ ईस्वी संवत से पहिले सात सौ पैंसठ बरस से लेके ६९८ बरस लों अशाया नामे एक प्रसिद्ध आचार्य्य और भविष्यद्वक्ता यहूदी कुल का धर्मोपदेश किया करता था आनेहारे मुक्तिदाता के विषय में उस ने यह समाचार दिया॥

अशाया आचार्य्य का बचन॥ परमेश्वर तुम को एक लक्षण देगा देखो एक कुमारी गर्भिणी होगी और बेटा जनेगी और उस का नाम इम्मानूयेल जिस का अर्थ है हमारे संग परमेश्वर रक्खेगी इति॥

हमारे लिये एक बालक उत्पन्न हुआ और हमें एक पुत्र दिया गया जिस के कन्धे पर प्रभुता होगी और वह इस नाम से कहा जायगा अर्थात आश्चर्य्यमय मंत्री शक्तिमान ईश्वर सनातन का पिता कुशल का राजपुत्र। उस की प्रभुता और उस की कुशल की अधिकाई का कुछ अन्त न होगा वह दाऊद के सिंहासन पर और उस के राज पर आज से सनातन लों न्याय और धर्म से बिचार स्थापन और स्थिर करने को बैठेगा। सेनाओं के ईश्वर परमेश्वर का तेज यही करेगा इति॥

सत्यार्थी का बचन ॥ इन दो भविष्यद्वाणियों को छोड़ उस आचार्य्य की लिखावट के चालीस पर्व्व से लेके अन्त लों अर्थात छब्बीस पर्व्वों में एक विस्तारपूर्व्वक भविष्यद्वाणी लिखी है जिस में उस ने यहूदी कुल के आनेहारे लौकिक वृत्तान्त के संग मंगलसमाचार का वृत्तान्त उस प्रकार से मिलाया है कि उस का संक्षेप वर्णन अनहोना है। परन्तु आनेहारे मुक्तिदाता के विषय में यह समाचार लिखा है कि वह बड़ी दीनता के संग आवेगा और मनुष्यों से त्याग किया जायगा और सताया जायगा और अपराधियों के संग मारा जायगा और उस की समाधि धनी के संग होगी और उस की मृत्यु प्रायश्चित्त की रीति होगी और वह उस का पूरा प्रतिफल पावेगा क्योंकि उस का राज स्थापित हो जायगा और धर्म और कुशल का राज होगा और सारी पृथिवी में फैल जायगा और सदा लों अटल रहेगा इति। निदान मंगलसमाचार के वृत्तान्त का ऐसा विस्तारपूर्व्वक वर्णन मिलता है कि यह आचार्य्य मंगलसमाचारक भविष्यद्वक्ता के नाम से प्रसिद्ध होता है ॥

वेदविद्वान का बचन ॥ क्या ये सारी बातें श्री यिसू ख्रिष्ट के वृत्तान्त में सम्पूर्ण समाप्त हुई ॥

सत्यार्थी का बचन ॥ पण्डितजी जितनी बातें आज लों सम्पूर्ण होनेवाली थीं सो सम्पूर्ण हो गईं परन्तु कितनी बातें जिन का समय अब लों नहीं आया शेष रही हैं सो भी आज कल सम्पूर्ण होती जाती हैं और इस का एक लक्षण यह है कि मैं आप के पास इन का वर्णन करता हूं। क्योंकि इसी प्रकार से इन दिनों इन का समाचार सर्व्वत्र संसार में प्रचारा जाता है और सारी जातियों के मनुष्य इन को ग्रहण भी करते हैं और यिसू ख्रिष्ट पर विश्वास लाके मुक्ति पाते हैं परन्तु अब मैं दो एक अन्य मनुष्यों का वर्णन करता हूं ॥

२ ईस्वी संवत से पहिले ७५८ बरस से लेके ६९८ बरस लों मीका नामे

आचार्य्य ने भविष्यद्वाणी कही। उस की लिखावट में यहूदियों के और आस पास के देशों के आनेहारे लौकिक वृत्तान्त के संग अंगीकृत मुक्तिदाता का यह समाचार मिलता है कि उस का राज यिरूशलीम से निकलेगा और सारे जातिगणन के ऊपर प्रबल होगा और कुशल का राज होगा और मुक्तिदाता के उत्पन्न होने का स्थान इस रीति से बतलाया जाता है॥

मीका आचार्य्य का बचन॥ तू हे बैतलहम अफराता क्या तू यहूदा के अगुवाओं में छोटा है तुझ में से मेरे लिये वह निकलेगा जो इसराएल में प्रभुता करेगा जिस का निकलना पुरातन से सनातन दिनों से हुआ है इति॥

सत्यार्थी का बचन॥ बैतलहम नगर यिरूशलीम से चार एक कोस दूर दक्षिण ओर को है और उस में श्री यिसू खिष्ट ने जन्म पाया। और इस के सम्बन्ध में एक आश्चर्य्य की बात यह है कि यिसू की माता मरियम कुमारी का गृह एक दूसरे नगर में पचास एक कोस दूर था। परन्तु उन दिनों में रूमी महाराजा ने आज्ञा किई कि समस्त प्रजाओं के नाम लिखे जायेंगे इस कारण से मरियम को बैतलहम में जाना पड़ा क्योंकि वह दाऊद के घराने की थी और वह नगर उसी घराने का नगर था। फिर जब वह इस के लिये वहां रहती थी तब श्री यिसू खिष्ट का जन्म हुआ॥

२ ईसवी संवत से ६०६ बरस पहिले पूर्वी भविष्यद्वाणियों के अनुसार बाबुल नगर के महाराजा ने यिरूशलीम को घेरा करके ले लिया और देश के बहुतेरे निवासियों को दास करके अपने देश में ले गया और वे सत्तर बरस लों भविष्यद्वाणी के अनुसार दासता में बंधे रहे। अन्त को अशाया के बचन के समान जो डेढ़ सौ बरस पहिले कहा गया था फ़ारस के महाराजा ख़ोरस नामे ने उन को छुड़ाया और वे फिर अपने देश में लौट आये। उस सारे समय लों दानिएल

नामे एक आचार्य्य बंधुवे यहूदी लोगों को धर्मोपदेश किया करता था और उसने उपस्थित बाबूली महाराज्य के विनाश होने का समाचार दिया और यह भी भविष्यद्वाणी कही कि उस राज के पीछे तीन बड़े २ राज अर्थात फ़ारसी यवनी और रूमी क्रम २ से प्रबल हो जायेंगे सो उस की ये सारी बातें सम्पूर्ण समाप्त हुईं। परन्तु इस के सम्बन्ध में उस ने यह समाचार दिया कि चौथे महाराजा के दिनों में स्वर्ग का ईश्वर एक राज स्थापित करेगा जो कभी नष्ट न होगा और मनुष्य की सामर्थ बिना स्थापित हो सारे जातिगणन के ऊपर प्रबल हो जायगा। इस को छोड़ उस ने अपनी लिखावट के नवें पर्व्व के चौबीसवें पद में पांच भिन्न २ लौकिक वृत्तान्तों से आरम्भ करके पांच गणना किई हैं जिन से ख्रिष्ट राजपुत्र के जन्म पाने और मनुष्यों के सच्चे प्रायश्चित्त की रीति मारे जाने और अन्त को औरशलीम नगर के विनाश होने इत्यादि वृत्तान्त का काल ही निर्णय होवे। सो इन वृत्तान्तों के उपस्थित होने का काल उस के इस वर्णन से ठीक मिलता है॥

वेदविद्वान का बचन॥ पण्डितजी यह एक अत्यन्त आश्चर्य्य की बात देख पड़ती है कि जब अंगीकृत मुक्तिदाता के प्रगट होने का काल भी बतलाया गया तो यहूदी लोगों ने जिन के पास यह समाचार था जब वह प्रगट हुआ तो उस को ग्रहण नहीं किया॥

सत्यार्थी का बचन॥ मैं ने पहिले बतलाया कि किन २ कारणों से यहूदी लोगों ने यिसू ख्रिष्ट को अंगीकृत मुक्तिदाता की रीति ग्रहण नहीं किया। विशेष कारण यह था कि वे सांसारिक मनुष्य थे और एक आत्मिक धार्मिक राजा को नहीं चाहते थे और उन के इस अविश्वास की भविष्यद्वाणी भी मूसा आचार्य्य ने १५०० बरस पहिले कही थी और यह भी बतलाया था कि इस अविश्वास के कारण से वे सैकड़ों बरस लों जगत के सारे देशों में तितर बितर होके उन के निवासियों के बीच

वास कर नष्ट न होवेंगे परन्तु उन से अलग रहके सब लोगों में निन्दित होवेंगे। सो आज लों भी उन की यही दशा प्रत्यक्ष है और उन की यह दशा जो अठारह सौ बरस से हो रही है सर्वत्र संसार में किसी अन्य जात के समान नहीं है और सचमुच एक सनातन का आश्चर्य देख पड़ता है। परन्तु इस का एक विशेष निमित्त भी है क्योंकि अन्त को वे फिर इकट्ठे होके अपने देश में लौट आवेंगे और यिशू ख्रिष्ट पर विश्वास लावेंगे सो यह भी ख्रिष्टीय शास्त्र की एक प्रसिद्ध भविष्यद्वाणी है जिस के सम्पूर्ण होने के लक्षण इन दिनों दृष्टि में आने लगते हैं। परन्तु निश्चय है कि दानिऐल की और अन्य भविष्यद्वाणियों के कारण यहूदी लोग उस काल में अंगीकृत मुक्तिदाता का आगमन बड़ी अभिलाषा से ताकते थे और जानते थे कि उस का समय अब समीप आया है। यदि मैं इन सारी भविष्यद्वाणियों का संक्षेप वर्णन भी करता तो बड़ा विस्तार होता जो कुछ मैं ने कहा सो उदाहरण की रीति कहा है। अब केवल इतना अधिक कहूंगा कि ऊपर के वर्णनों को छोड़ दूसरे भविष्यद्वक्ताओं ने आनेहारे मुक्तिदाता के विषय में इन बातों का समाचार दिया। अर्थात कि उस का मार्ग उस के सन्मुख सिद्ध करने के निमित्त इलिया नाम आचार्य्य के समान परमेश्वर का एक दूत आवेगा। और मुक्तिदाता लंगड़ों अंधों गूंगों इत्यादिकों को चंगा कर बड़े दयासंयुक्त आश्चर्य कर्म दिखलावेगा। और दीन लोगों को मंगलसमाचार सुनावेगा। और गदहे पर चढ़के यिरूशलीम नगर में प्रवेश करेगा। और अपने एक विश्वासघातक शिष्य से पकड़वाया जायगा। और तीस टुकड़े चांदी अर्थात दास का मोल उस के लिये ठहराया जायगा। और उस मोल से कुम्हार का खेत लिया जायगा। और जब वह मारा जायगा तब उस के शिष्य उस को छोड़ भाग जायेंगे। और वह छेदा जायगा और उस के हाथों में घाव किये जायेंगे इत्यादि। निदान उस का

ऐसा विस्तारपूर्वक वर्णन भविष्यद्वाणी की रीति मिलता है कि इन सारी बातों का किसी एक में मिलके सम्पूर्ण होना एक अत्यन्त आश्चर्य देख पड़ता है और यह सब की सब यिसू ख्रिष्ट के वृत्तान्त में सम्पूर्ण समाप्त हुईं॥

वेदविद्वान का बचन॥ इस दशा में मैं समझ नहीं सक्ता हूं कि यहूदी लोग उस को किस प्रकार से त्याग कर सक्ते थे॥

सत्यार्थी का बचन॥ पण्डितजी वे अपने शास्त्र का अर्थ भली भान्ति नहीं जानते थे क्योंकि वे उस के बचन अपने सांसारिक स्वभाव के अनुसार समझते थे। फिर मैं ने बतलाया कि भविष्यद्वाणी का स्वरूप बहुधा ऐसा है कि केवल वृत्तान्त के साथ मिलने पर उस का ठीक अर्थ सम्पूर्ण रूप से खुल जाता है। सच यह है कि मंगलसमाचार का वृत्तान्त प्राचीन वाचापत्र के लिये एक प्रकार की कुंजी है जिस्से उस का छिपा हुआ अभिप्राय खुल जाता है। क्योंकि इन विशेष भविष्यद्वाणियों को छोड़ यहूदियों के सारे धार्मिक नियम और राजनीति और इतिहास और बहुतेरे प्रसिद्ध मनुष्यों के वृत्तान्त मंगलसमाचार के दृष्टान्तपूर्वक भविष्यद्वाणी ठहरते हैं। जो पर्व्व यहूदी लोग मानते थे जो बलिदान चढ़ाते थे मन्दिर में जो भजन करते थे अपनी राजनीति में अनेक व्यवहार जो रखते थे इन सभों का मूल अभिप्राय श्री यिसू ख्रिष्ट से सम्बन्ध रखता था। इस के बिना उन का अर्थ भली भान्ति समझ में नहीं आता है परन्तु उस के द्वारा से स्पष्ट और प्रत्यक्ष देख पड़ता है क्योंकि प्राचीन वाचापत्र का बहुधा वृत्तान्त आनेहारे ख्रिष्टीय पदार्थों की परछाईं के समान था और उस का विशेष अभिप्राय यह था कि यहूदी विश्वासी के मन में उन पदार्थों का आसरा पालन करें। इस रीति से सम्पूर्ण ख्रिष्टीय शास्त्र यद्यपि उस के स्वरूप में भिन्नता तो है तथापि वह एक ही कर्त्ता का एक ही ग्रन्थ प्रत्यक्ष देख पड़ता है॥

वेदविद्वान का बचन॥ क्या ये भविष्यद्वाणियां केवल प्राचीन वाचापत्र में मिलती हैं अथवा मंगलसमाचार में भी कुछ हैं कि नहीं॥

सत्यार्थी का बचन॥ हां पण्डितजी मैं ने बतलाया कि श्री यिशू ख्रिष्ट ने अपने विषय और श्रोरशलीम के विनाश होने के विषय में भविष्यद्वाणी कही। फिर उस के प्रेरितों ने यहूदियों का तितर बितर होना और अन्त को फिर उन का एकट्ठा होना और ख्रिष्टीय शिष्यों का विश्वास बिगड़ जाना और ख्रिष्टीय मण्डली का बहुत बेर लों अविश्वासी रहना और अन्त को मंगलसमाचार का सर्वत्र संसार में प्रचारा जाना और यिशू ख्रिष्ट का दोबारा प्रगट होना इत्यादि बहुत से भविष्य वृत्तान्त का समाचार दिया। विशेष करके यूहन्ना प्रेरित ने प्रकाशित नामे लिखावट में अपने काल से लेके जगत के अन्त लों ख्रिष्टीय मण्डली की एक दृष्टान्तपूर्वक भविष्यद्वाणी लिखी है और उस मण्डली का वृत्तान्त जो आज लों बीत गया उस के संग पूरा मेल रखता है। परन्तु मेरी समझ में इस बात की चर्चा करने से पहिले ख्रिष्टीय शास्त्र के दो एक और वृत्तान्तों पर तनिक ध्यान करना आप को चाहिये सो यदि इच्छा हो तो किसी दूसरे समय मैं उन का वर्णन करूंगा॥

वेदविद्वान का बचन॥ आप ने जो वर्णन इस सत्संग में किया सो निःसन्देह अति आश्चर्यजनक है मैं मान लेता हूं कि जो लक्षण आप ने बतलाये सो ईश्वरीय दैव्य शास्त्र के योग्य लक्षण ठहरते हैं। क्योंकि यदि वे लक्षण सत्य थे तो उन की कल्पना करनी मनुष्य की बुद्धि और ज्ञान के बल से अति दूर थी और वे केवल बुद्धिरूपी नहीं बरन कुछ अन्तःकरणरूपी प्रमाण भी ठहरते हैं। सो मैं आप के इस वर्णन पर भली भान्ति ध्यान करूंगा और दूसरे समय फिर जब हमारी भेंट होगी तो आप के अधिक वर्णन सुनने में मैं अति प्रसन्न हूंगा॥

ग्रन्थकर्त्ता का वचन ॥ इस पर हम सब के सब प्रणाम कर बिदा हो अपने २ भवनों को सिधारे ॥

इति मतपरीक्षा के द्वितीय खण्ड का पांचवां सत्सङ्ग

समाप्त हुआ ॥

छठा सत्सङ्ग ।

श्री यिसू ख्रिष्ट के स्वाभाविक और व्यावहारिक गुणों की चर्चा ।

ग्रन्थकर्त्ता का वचन ॥ पिछले सत्सङ्ग के दूसरे दिन पर मैं वेदविद्वान के पास नहीं गया क्योंकि वह दिन रविवार था और उस दिन मैं ख्रिष्टीय शिष्यों के संग परमेश्वर के भजनघर में जाया करता हूं और उस का भजन करके ख्रिष्टीय शास्त्र का धर्मोपदेश सुनता हूं। उस रविवार को मैं ने ख्रिष्टीय मण्डली में सत्यार्थी को भी देखा और जब भजन से अवकाश हुआ तो उस धर्मिष्ठ पुरुष के पास जाके मैं ने पूछा कि वेदविद्वान से भेंट कब होगी। और जब सुन लिया कि कल को होगी तो आगे के समान मैं भी उस दिन उस के यहां गया और उन दो भले मनुष्यों को प्रणाम कर उन के संवाद सुन्ने को बैठ गया। क्योंकि जब दो धर्मी बुद्धिमान धैर्यवान पुरुष निर्मल सत के खोज करने को सत्संग करते हैं तो उन के संवाद सुन्ने में मैं अति प्रसन्न होता हूं। तब वेदविद्वान यों कहने लगा ॥

वेदविद्वान का वचन ॥ कल के दिन आप के न आने से मुझ को

चिन्ता थी कि कदाचित आप को दुर्बलता भई हो अब आसरा है कि आप भले चंगे हैं॥

सत्यार्थी का बचन॥ हां पण्डितजी ईश्वर का धन्य हो मैं कुशल से हूं परन्तु कल रविवार था इस कारण मैं नहीं आ सका। क्योंकि उस दिन पर सारे ख्रिष्टीय भाई यिसू ख्रिष्ट के पुनरुत्थान के स्मरण करके भजनघर में एकट्ठे होते हैं और ईश्वर का भजन और स्तुति कर ख्रिष्टीय धर्मोपदेश सुनते हैं। सो कल के दिन मैं भी अपने व्यवहार के समान उन के संग गया और मैं ने ऐसा धर्मोपदेश सुना जो हम दोनों की चर्चा के लिये बहुत ही योग्य और यथार्थ था क्योंकि वह उस विषय पर था जो इबरानियों के पत्र के आरम्भ में लिखा है अर्थात।

यिसू ख्रिष्ट के प्रेरित का बचन॥ परमेश्वर जिस ने पूर्वकाल में भविष्यद्वक्ताओं के द्वारा पितरों से बारंबार और नाना प्रकार की बार्त्ता किई इन्हीं पिछले दिनों में हम से पुत्र के द्वारा बोला है जिसे उस ने समस्त बस्तुओं का अधिकारी स्थापन किया और उस के द्वारा उस ने जगतों को भी बनाया। वह उस के प्रताप की उज्ज्वलता और उस के भाव का प्रकाश हो और अपने पराक्रम के बल से समस्त बस्तुओं को संभाल आप ही से हमारे पापों का प्रायश्चित्त कर महिमा की दहिनी ओर ऊपर जा बैठा इति॥

सत्यार्थी का बचन॥ इन बचनों पर ध्यान कर और उन का अर्थ खोल शिक्षक ने बतलाया कि प्राचीन भविष्यद्वक्ताओं ने यिसू ख्रिष्ट के आगमन का समाचार पहिले से दिया था जैसे मैं ने पिछले सत्संग में आप को बतलाया। फिर उस ने वर्णन किया कि जब ईश्वर का पुत्र आया तो वह समस्त प्रकार से ऐसी बड़ी प्रस्थापना के योग्य ठहरा क्योंकि वह अपनी सारी चाल चलन और बचनों और कार्यों में ईश्वर के प्रताप की उज्ज्वलता और उस के भाव का प्रकाश था और यद्यपि ईश्वर

के तुल्य पराक्रम प्रगट करता था तथापि वह अपने किसी लाभ के लिये तो नहीं बरन ईश्वर की महिमा और मनुष्य के उपकार के लिये उस पराक्रम को व्यवहार करता था और आप सर्वत्र निष्पाप हो प्रायश्चित्त की रीति अपना प्राण अर्पण करके बलिदान किया गया फिर अन्त को सारी सृष्टि का महाराजा बनके स्वर्ग के सिंहासन पर बैठ गया। सो यदि आप की इच्छा हो तो इस सत्सङ्ग में हम इस बात की चर्चा करेंगे अर्थात श्री यिसू ख्रिष्ट के कैसे स्वाभाविक और व्यवहारिक गुण थे जिस कारण से परमेश्वर ने आदि से उस के आगमन की ऐसी बड़ी सिद्धता किई॥

वेदविद्वान का वचन॥ यह तो पण्डितजी हमारी चर्चा के लिये एक बहुत उचित विषय है क्योंकि उन सारी भविष्यद्वाणियों के कारण जिन का वर्णन आप ने किया है निःसन्देह मन में बड़ी अपेक्षा उत्पन्न होती है सो श्री यिसू ख्रिष्ट किन २ बातों में सारे अन्य महात्माओं से ऐसा श्रेष्ठ और उत्तम था इस बात के जान्ने का मैं निपट अभिलाषी हूं॥

सत्यार्थी का वचन॥ पण्डितजी श्री यिसू ख्रिष्ट की उत्तमता विशेष करके इस में देख पड़ती है कि जो २ सद्गुण मनुष्य की भावना में आ सक्ते हैं सो सब के सब उस में उपस्थित होते हैं और उन सद्गुणों की अधिकाई से जो दोष बहुधा भले मनुष्यों में भी देख पड़ते हैं सो एक भी उस में दृष्टि नहीं आता है। क्योंकि निर्बल और दोषी मनुष्य का यही व्यवहार है कि जब एक सद्गुण सामान्य से अधिक उस में उपस्थित हो तो बहुधा उस सद्गुण की अधिकाई के कारण अथवा अन्य सद्गुणों की न्यूनता के हेतु नाना प्रकार के दोष भी उस्से संयुक्त रहते हैं। इस रीति से जिस पुरुष की बड़ी वीरता हो कदाचित उस का मन कुछ कठोर होवे अथवा जो बड़ा दयावान होवे तो उस की पवित्रता और सत्यता

न्यून होवे किंवा जब मन का गौरव हो तो उस में कुछ अभिमान संयुक्त होवे। परन्तु श्री यिसू ख्रिष्ट में सारे सद्गुण ऐसे ठीक परिमाण के संग उपस्थित होते हैं कि एक की अधिकाई से अथवा दूसरे की न्यूनता से किसी प्रकार का दोष उस में नहीं लगता है। परन्तु इस बात को भली भान्ति जान्ने के लिये उस का सारा वृत्तान्त जो मंगलसमाचार ग्रन्थ में लिखा है ध्यान के साथ पढ़ना अवश्य है॥

वेदविद्वान का बचन॥ यिसू ख्रिष्ट का जो वर्णन आप ने पहिले सत्सङ्ग में किया उस्से तो निःसन्देह उस का अति आश्चर्य पराक्रम और सामर्थ देख पड़ती है क्योंकि अन्धे को दृष्टि देनी पिशाचों को दूर करना और मृतकों को जिलाना परमेश्वर के कार्य के समान सामर्थपूर्वक हैं और उन में दया भी संयुक्त होती है परन्तु उस के किसी दूसरे सद्गुण का वर्णन आप ने खोलके नहीं किया है॥

सत्यार्थी का बचन॥ हां पण्डितजी मैं ने अब लों उस के आश्चर्य सद्गुणों का वर्णन नहीं किया है और उन का योग्य वर्णन करना सुलभ नहीं है परन्तु सामर्थ भर मैं दो एक बात बतलाऊंगा। आप जानिये कि उस के आश्चर्य कर्म जो मैं ने बतलाये सो केवल उदाहरण की रीति पर थे उस के ऐसे ही कर्म सचमुच अनगणित थे। वह समस्त प्रकार के रोगियों को उसी भान्ति से नित्य चंगा किया करता था दो बार उस ने कई एक सहस्र मनुष्यों को पांच एक रोटियों से खिलाके तृप्त किया दो एक बार उस ने आंधियों को आज्ञामात्र से शान्ति किया निदान कोई ऐसा काम नहीं था जो उस की सामर्थ से परे हो। अब आप ध्यान कीजिये कि बड़े २ पराक्रमी और सामर्थवान बहुधा अपने यश और महिमा का बड़ा शोच करते हैं और अन्य मनुष्यों को अपने सेवक जान लेते हैं और जो कोई उन की निन्दा करे तो उस को दण्ड देके अपनी सामर्थ प्रगट करते हैं। परन्तु श्री यिसू ख्रिष्ट का स्वभाव इस्से

अति भिन्न था क्योंकि उस ने आप एकबार कहा कि मैं सेवा लेने को नहीं वरन सेवा करने को और बहुतेरों के निमित्त अपना प्राण प्रायश्चित्त में देने को आया हूं इति। और सचमुच उस ने वैसाही किया॥

वेदविद्वान का वचन॥ यिसू ख्रिष्ट ने अपने विषय में ऐसा तो कहा और अन्त को वह मर भी गया परन्तु क्या उस के साधारण व्यवहार और चाल चलन में इस प्रकार की आधीनता देख पड़ती थी॥

सत्यार्थी का बचन॥ हां पण्डितजी सदा यह अद्भुत आधीनता उस के वचनों और व्यवहारों में प्रगट थी मैं दो एक वृत्तान्त कहूंगा। एक दिन ऐसा हुआ कि उस के शिष्य उस के लिये प्रयोजनिक वस्तु सिद्ध करने को उस्से आगे जाके एक नगर में पहुंचे जिस के निवासी उस के ग्रहण करने पर प्रसन्न न थे। तब दो शिष्यों ने कहा कि हे प्रभु तेरी इच्छा हो तो हम आज्ञा करें कि स्वर्ग से आग बरसे उन्हें भस्म करे। परन्तु यिसू ने फिरके उन को धमकाके कहा कि तुम नहीं जानते कि तुम्हारा किस भ्रान्ति का मन है क्योंकि मैं लोगों के प्राण नाश करने को नहीं वरन बचाने को आया। यह कहके वह महात्मा यात्रा करके दूसरे नगर को गया॥

फिर जब वह बध होने के लिये पकड़ा जाता था तो पतरस प्रेरित ने उस की रक्षा करने के निमित्त खड्ग खींच एक शत्रु पर चलाके उस का कान उड़ा दिया। तब यिसू ने शत्रु के कान को छूके चंगा किया और पतरस से कहा कि अपना खड्ग कटि में कर क्या वह कटोरा जो मेरे पिता ने मुझे दिया है मैं न पीऊं इति॥

फिर अपने शिष्यों को इसी आधीनता की शिक्षा देने के निमित्त उस सांझ को जिस के दूसरे दिन पर वह मारा गया जब वह उन को यह दशा बतलाके शान्ति देता था तो उस ने अपने बस्त्रों को उतारा और एक अंगोछा लेके अपनी कटि में बांधा। इस के पीछे उस ने एक पात्र

में जल डाला और शिष्यों के पांव धोने लगा और उस अंगोछे से जो बंधा था पोंछने लगा। जब यह हो चुका और उस ने अपने वस्त्रों को ले लिया था फिर बैठके उन से कहा। क्या तुम जानते हो कि मैं ने तुम से क्या किया है तुम मुझे गुरु और प्रभु कहते हो तो ठीक कहते हो क्योंकि मैं हूं सो जब गुरु प्रभु ने तुम्हारे पांव धोये तुम्हें भी उचित है कि एक दूसरे के पांव धोओ इति। निदान उस की सारी चाल चलन में वैसी ही आधीनता नित्य प्रत्यक्ष थी॥

वेदविद्वान का बचन॥ ऐसा हो सक्ता है पण्डितजी कि बड़े पराक्रमी का भी मन कुछ भयभीत हो और कभी २ असाहस के कारण इस प्रकार की आधीनता देखने में आती है॥

सत्यार्थी का बचन॥ सच ऐसा हो सक्ता है परन्तु श्री यिसू ख्रिष्ट के विषय में यह बचन ठीक नहीं आता है क्योंकि यद्यपि अपने शत्रुओं के कठिन बैर के कारण वह जीवन भर बड़ी जोखिम में था तथापि उस के डौल में किसी प्रकार की व्याकुलता अथवा भय का चिन्ह एक बार भी दृष्टि नहीं पड़ा और बहुतेरे वृत्तान्तों में उस ने ऐसी सुस्थिरता और वीरता दिखलाई जो सूरमाओं में भी बिरल होती है। उस की माता का पति बढ़ई था और उस का प्रत्यक्ष स्वरूप केवल एक दरिद्र गंवार युवा का था और देश के सारे प्रधान उस के कठिन बैरी थे फिर भी उन का साम्हना करने से वह भय के मारे कभी हट नहीं गया। बारम्बार उस ने सब लोगों के सन्मुख उन का कपट और दुष्टता और अन्धेर उन पर प्रमाणिक किया और उन से बेधड़क कहा कि ऐसे कुकर्मियों का कठिन दण्ड होनेहार है। जब तीसबरस का हो अपना प्रकाशित कर्म करने लगा तब ईश्वर के मन्दिर में जाके उस ने देखा कि इस की बड़ी अपनिन्दा हो रही है क्योंकि लोगों ने व्योपार करते २ इस के चौकों को एक पेंठ के समान बना डाला है भेंट बलिदान के लिये पशु

पक्षियों को बेचते हैं और खुरदिये लोग भी रोकड़ भुनाने के लिये बैठे हैं और इस व्योपार से मन्दिर के याजक और पुरोहित बड़ा लाभ पाते हैं। तब यिसू ख्रिष्ट ने छोटी रस्सियों का कोड़ा बनाके अकेला उन सभों को पशुओं समेत मन्दिर से बाहर निकाला और खुरदियों की रोकड़ बिथराय दिई और मंचों को उलट दिया और कहा कि इन वस्तुओं को यहां से ले जाओ मेरे पिता के घर को व्योपार के घर मत बनाओ इति। फिर जब वह मन्दिर में उपदेश करता था प्रधानों ने इकट्ठे हो उस के पास आके उस्से पूछा कि तू किस पराक्रम से इस कर्म को करता है तो उस ने उन से एक प्रश्न किया जिस का उत्तर अपना दोष बिना प्रगट किये वे दे नहीं सक्ते थे तब उस ने उन से कहा कि मैं भी नहीं बतलाता हूं कि किस पराक्रम से यह कर्म करता हूं इति। इसी प्रकार के साहसपूर्वक वचनों से जब उस के बैरी क्रोध से जल गये थे और सारे प्रधान जो यिरूशलीम में रहते थे लाज़र के जी उठने के कारण यिसु को बध करने की युक्ति करते थे तब वह यह दशा भली भान्ति जाने यिरूशलीम में अपने शत्रुओं के बीच बेधड़क गया और मन्दिर में सब लोगों के सन्मुख उन की अधर्मता और कपट प्रकाश रूप से बतलाके उन को दोषी करने लगा और यद्यपि उस ने कई एक बार कहा था कि इस का अन्त मेरी अति दुःखदायक मृत्यु होगी तथापि उस के डौल में किसी प्रकार की व्याकुलता अथवा भय कभी देखने में नहीं आया॥

वेदविद्वान का वचन॥ यिसू ख्रिष्ट के ऐसे व्यवहार में निःसन्देह उस का साहस सिद्ध होता है परन्तु जब उस ने अपने शत्रुओं को सब लोगों के सन्मुख उस रीति से डांटा तो क्या इस में उस के मन की कुछ कठोरता सूझ नहीं पड़ती है॥

सत्यार्थी का वचन॥ कदाचित उस के शत्रुओं ने तो ऐसा समझा

होगा पण्डितजी क्योंकि दुष्ट जन बहुधा उन को जो उन के दोष बतलाते हैं बड़े कठोर मन जानते हैं। परन्तु यद्यपि यिसू ख्रिष्ट ने उन पापियों के दोषों पर बड़ा कठिन आक्षेप तो किया तथापि पापियों ही पर किसी प्रकार की कठोरता वा निर्दयता नहीं दिखलाई। इस के विरुद्ध उस का मन उन पर ऐसा कोमल था कि उन के दोषों पर आक्षेप करने में वह आप अति दुःखित था और केवल इस इच्छा से उन के दोष बतलाता था कि उन के मन बदल जावें और वे पाप से और उस के दण्ड से मुक्ति पावें। आप को स्मरण होगा कि जब लाज़र मर गया था तो यिसू यद्यपि जानता था कि वह फिर जी उठेगा तथापि जब उस की बहिनों का और यहूदियों का दुःख देखा तो रोने लगा। अब उस मनुष्य को कोमल मन कहते हैं जो पराये दुःख से दुःखित होता है और इस प्रकार से श्री यिसू ख्रिष्ट की बड़ी मन की कोमलता ठहरती है क्योंकि सन्देह नहीं हो सक्ता है कि जीवन भर वह पापी मनुष्य की दुर्दशा से दुःखित रहा। और दो एक वृत्तान्तों में यह बात प्रत्यक्ष देख पड़ती है क्योंकि जब अपनी मृत्यु से चार एक दिन पहिले वह यिरुशलीम में प्रवेश करता था तो एक पर्वत पर से उस नगर को थोड़ी दूर से देख और उस के आनेहारे कष्ट को जान वह यह कहके उस पर रोने लगा। हाय कि तू अपने इसी दिन में उन बातों को जानता जो तेरी कुशल की हैं परन्तु अब वे तेरी आंखों से गुप्त हैं इति। अब आप ध्यान कीजिये कि उस समय यिरुशलीम उस के क्रूर और कठिन वैरियों से परिपूर्ण था और वे उस के घात करने का उपाय करते थे और वह भली भान्ति जानता था कि वे सचमुच मुझ को वध करेंगे फिर भी अपनी भयानक दशा की चिन्ता न कर वह अपने शत्रुओं ही की दुर्दशा और आनेहारी विपत्तों पर रोता था। इस के समान जब वह क्रूश पर टांका गया था और उस के वैरी चारों ओर खड़ा

हो उस पर घुड़कके ठट्ठा करते थे तो उन के विषय में उस के मुख से केवल यह बचन निकला कि हे पिता इन को क्षमा कर क्योंकि ये नहीं जानते हैं कि क्या करते हैं इति॥

वेदविद्वान का बचन॥ इस प्रकार से निश्चय है कि यिसू ख्रिष्ट का मन अति कोमल और प्रेमी था यह बात मैं मान लेता हूं परन्तु यदि वह ऐसा पराक्रमी और सामर्थी और महानुभाव था और सचमुच ईश्वर का पुत्र भी था और उस के बैरी जो केवल अधम मनुष्य थे उस की ऐसी बड़ी अपनिन्दा करते थे तो उन दुष्ट जनों से यह अत्यन्त कोमलता करनी किस प्रकार से उचित हो सक्की थी क्या ऐसे डौल में मन की कुछ निर्बलता और नीचता देख नहीं पड़ती है॥

सत्यार्थी का बचन॥ पण्डितजी जो सांसारिक स्वभाव का मनुष्य ऐसा विचार करे तो कुछ आश्चर्य नहीं होता है क्योंकि ऐसे लोगों की समझ में बैरियों से पलटा लेना और निन्दकों को दण्ड देना बड़े गौरव और प्रताप की बात है। परन्तु यिसू ख्रिष्ट का स्वभाव तनिक भी सांसारिक न था स्वर्गीय और ईश्वरीय था इस कारण वह केवल सत्य और आत्मिक गौरव और प्रताप को मानता था और इस भान्ति का प्रताप विशेष करके निर्बल शत्रुओं पर दया करने में प्रकाशित होता है। फिर यद्यपि यिसू ख्रिष्ट अपने दुर्भागी शत्रुओं पर ऐसी कोमलता नित्य किया करता था तथापि अपने सत्य गौरव और प्रताप का अपमान कभी नहीं करता था। वह सदा अपने स्वर्गीय गौरव का वर्णन स्पष्ट रूप से करता था और उस के योग्य कार्य भी दिखाता रहा बारम्बार उस ने अपने शत्रुओं के सन्मुख दैव्य आश्चर्य कर्म प्रगट कर इस प्रकार का बचन कहा अर्थात मार्ग और सत्यता और जीवन मैं ही हूं। पुनरुत्थान और जीवन मैं ही हूं जिस ने मुझे देखा है पिता को भी देखा है वह जो मुझ पर विश्वास लाता है अनन्त जीवन उसी

का है। मैं और पिता अर्थात ईश्वर एक हूं इति। इस के समान जब प्रधान याजक के और रूमी प्रधान के विचारस्थानों पर खड़ा किया गया और उस के शत्रु चारों ओर क्रोध से उस पर घुड़कते थे तो मन का सुस्थिर और अटल हो अति बड़े गौरव के संग उस ने ग्रहण किया कि हां मैं एक सत्य राजा और ईश्वर का पुत्र हूं परन्तु मेरा राज सांसारिक नहीं है आत्मिक और स्वर्गीय है इति। निदान उस के सारे वचनों में यह अद्भुत प्रताप चमकता था क्योंकि वह सदा धीरज और अध्यमता और सुस्थिरता के संग वचन कहता था। फिर भी उस में कुछ अभिमान देख नहीं पड़ा क्योंकि वह यह गौरवपूर्वक वचन कुछ दर्प और अहंकार की रीति नहीं कहता था केवल अपना सत्य वर्णन करता था और उस की आधीनता और कोमलता तो ऊपर के वृत्तान्तों से सिद्ध हो चुकी है सो उस का निराभिमान होना भी इस में समाप्त है॥

वेदविद्वान का वचन॥ यही तो बात है पण्डितजी कि जो वर्णन यिसू ख्रिष्ट ने अपने विषय में किया सो क्या सत्य था कि नहीं। यदि सत्य था तो उस में अभिमान सिद्ध नहीं हो सक्ता है परन्तु यदि सत्य नहीं था तो उस को क्या कहिये। मैं नहीं कहता हूं कि यिसू ख्रिष्ट ने जान बूझके अपने विषय में मिथ्या वर्णन किया परन्तु कभी २ धर्मिष्ट पुरुष भी एक प्रकार की धार्मिक ज्वलन से उन्मत्त के समान बन जाते हैं और इस दशा में अपने विषय में और दूसरों के विषय में भी ऐसे वचन कहते हैं जो बुद्धिरूपी विचार से ठीक नहीं हो सक्ते हैं कदाचित यिसू ख्रिष्ट ने भी ऐसा किया होगा॥

सत्यार्थी का वचन॥ पण्डितजी यिसू ख्रिष्ट के विषय में आप का यह सन्देह ध्यान करने से उचित नहीं देख पड़ता है क्योंकि किसी एक बात में उस का डौल उन्मत्त के समान तनिक भी न था। आप देखिये कि जिन लोगों में उन्मत्तता सिद्ध होती है क्या वे कभी यिसू

ख्रिष्ट के समान कोमलता आधीनता सुस्थिरता मध्यमता इत्यादि प्रगट करते हैं। इस को छोड़ यिसू ख्रिष्ट ऐसी अति महान बुद्धि और ज्ञान को नित्य दिखाता था कि उस में उन्मत्तता का सन्देह करना सर्वथा व्यर्थ और अनुचित है। जो बुद्धि और ज्ञान यिसू ख्रिष्ट ने अपनी सारी शिक्षा में दिखलाया सो ख्रिष्टीय शास्त्र की मूल शिक्षा की चर्चा में बतलाया जायगा। इस समय मैं केवल इतना कहूंगा कि तत्त्वज्ञानसंबन्धि और व्यवहारसंबन्धि शिक्षा करके उसी ने पहिले अनेक निगूढ़ विषयों की ऐसी ठीक निष्पत्ति और समाप्ति ठहराई जो सदा सर्वदा के लिये अटल रहती है। इसी प्रकार का एक दैव्य सूत्र जो उस ने मनुष्य के परस्पर संबन्धि व्यवहार के विषय में कहा सो यह है अर्थात जो कुछ तुम चाहते हो कि मनुष्य तुम से करें तुम उन से वैसाही करो इति। आप इस सूत्र पर भली भान्ति ध्यान कीजिये तो देखोगे कि मनुष्य के परस्पर संबन्धि सारे कर्त्तव्य कर्म इस में समाप्त हैं और इस के समान उस के अनेक और भी सूत्र हैं। इस को छोड़ जब उस के बैरी उस्से विवाद करने को उस के पास आये और उस के कोई वचन पकड़ने को घात में लगे थे तो उस ने ऐसी अतिमहान बुद्धि से उन को उत्तर दिया कि यद्यपि वे भी तीक्षण बुद्धि रखते थे तथापि वे उस के किसी वचन को पकड़ नहीं सके थे और अन्त को प्रश्न करने से डर गये। इस प्रकरण में मैं केवल एक वृत्तान्त कहूंगा आप सुनिये॥

मैं ने पहिले बतलाया कि यहूदी लोग उस काल रूमी महाराजा के आधीन थे परन्तु साधारण यहूदी जानते थे कि एक मूर्त्तिपूजक महाराजा को कर देना ईश्वरीय व्यवस्था के विरुद्ध और अधर्म का काम है। कितने तो देते भी न थे परन्तु रूमी लोग बरबस्ती कर उन से लेते थे। इस दशा में यिसू ख्रिष्ट के बैरियों ने समझा कि अब हम उस के लिये एक जाल फैलावें हम इस्से पूछेंगे कि क्या कैसर को अर्थात

रूमी महाराजा को कर देना उचित है कि नहीं। यदि वह कहे कि उचित है तो साधारण लोग उस को अधर्मी जानके उससे अति अप्रसन्न होंगे और उस का पराक्रम उन के ऊपर से घट जायगा यदि वह कहे कि उचित नहीं है तो हम रूमी प्रधान को सन्देसा देके कि यह दंगैत है इस को पकड़ावेंगे। इस इच्छा से उन्हों ने यिसू के पास आके उससे पूछा कि क्या कैसर को कर देना उचित है कि नहीं। यिसू ने उन का कपट जानके उन से कहा कि एक मुद्रा मेरे पास लाय दिखाओ तब वे लाये उस ने उन से कहा कि इस पर यह किस की मूर्त्ति और छाप है उन्हों ने उसे कहा कि कैसर की तब यिसू ने कहा जो वस्तु कैसर की है कैसर को दो जो परमेश्वर की है परमेश्वर को दो इति। इस पर उस के तीक्ष्णबुद्धि बैरी निरुत्तर और विस्मित हुए॥

वेदविद्वान का बचन॥ यिसू ख्रिष्ट के इस उत्तर में उस की बड़ी बुद्धि किस रीति से सिद्ध होती है॥

सत्यार्थी का बचन॥ इस रीति से पण्डितजी कि उस ने उस प्रकरण की एक योग्य और यथार्थ समाप्ति बतलाई और फिर भी अपने चतुर शत्रुओं के दुष्ट अभिप्राय को वृथा कर डाला उस उत्तर से न तो साधारण लोग उस पर अधर्म का दोष लगा सक्ते थे न उस के शत्रु प्रधान के पास उस को दंगैत वा राजआज्ञाभंजक ठहरा सक्ते थे। और इस प्रकरण में यह समाप्ति एक दैव्य सूच के समान सदा सर्वदा के लिये योग्य और यथार्थ ठहरती है क्योंकि इस के अनुसार सांसारिक राजव्यवस्था और ईश्वरीय राजव्यवस्था भिन्न ठहरती हैं और प्रजा को अपनी सांसारिक राजव्यवस्था पालन करनी उचित ठहरती है परन्तु इस रीति से कि ईश्वरीय राजव्यवस्था को भंग न करें। फिर इस वृत्तान्त में उस की केवल बड़ी बुद्धि देख नहीं पड़ती है क्योंकि जब वह उन कपटियों के दुष्ट अभिप्राय से सज्ञान था तो इससे प्रभाव होता है कि वह उन

का अन्तर्गत जानता था और अन्य वृत्तान्तों से निश्चय है कि वह ऐसा अद्भुत ज्ञान रखता तो था निदान वह सचमुच अन्तर्यामी था और यह बात उस के अनेक वृत्तान्तों से प्रत्यक्ष देख पड़ती है। और केवल इतना भी नहीं बरन सर्वज्ञानी भी था क्योंकि भूत भविष्यत वर्तमान का अदृश्य दृश्यमान लोकों का वृत्तान्त बतलाता था सो ऐसे महात्मा के विषय में उन्मत्तता का सन्देह किस प्रकार से योग्य हो सक्ता है॥

वेदविद्वान का बचन॥ यद्यपि ऐसे बुद्धिमान और ज्ञानी में उन्मत्तता का सन्देह करना निःसन्देह अनुचित देख पड़ता है तथापि उस्से जो वर्णन उस ने अपने विषय में और ईश्वर और परलोक के विषय में किया सो निश्चय सत्य नहीं ठहरता है। क्योंकि ऐसे विषयों का ठीक और सत्य वर्णन करने के लिये ईश्वरीय ज्ञान अवश्य है और किस रीति से निश्चय हो सक्ता है कि यिसू ख्रिष्ट का ज्ञान सत्य और ईश्वरीय था॥

सत्यार्थी का बचन॥ इस प्रकरण में उस के दैव्य आश्चर्य कर्मों का स्मरण करना चाहिये तो आप का यह भी सन्देह दूर हो जायगा जिस ने सचमुच मृतकों को जिलाया और जो आप सचमुच मृतकों में से जी उठा सन्देह नहीं हो सक्ता है कि उस के पास ईश्वरीय सामर्थ्य थी और ऊपर सिद्ध हो चुका है कि वह सामर्थ्य ईश्वर की योग्य रीति से नित्य साधन हुई इस दशा में उस का ज्ञान क्योंकर सत्य न होवे और ईश्वरीय ज्ञान का भी उस के पास होना क्या असम्भव हो सक्ता है। परन्तु इस के संबन्ध में श्री यिसू ख्रिष्ट के एक दूसरे गुण का वर्णन करता हूं अर्थात यद्यपि वह ऐसे दैव्य आश्चर्य कर्म नित्य करता था और ऐसा पराक्रमी और सामर्थी था तथापि उस ने इस अद्भुत सामर्थ को ईश्वरीय व्यवस्था भंग करने के लिये एक आड़ के समान कभी नहीं ठहराया। कितनों का तो ऐसा वर्णन होता है कि उन्हों ने बड़े २

चरित्र दिखाये और बड़े२ अपवित्र कर्म भी किये फिर जब उन के अपवित्र कर्मों के कारण उन के आश्चर्यों पर सन्देह होता है तो उन के पक्षपाती कहते हैं कि सामर्थी को दोष नहीं लगता है। सो इस भ्रमरूपी आड़ की चर्चा भारतीयशास्त्रनिरूपण में हो चुकी है परन्तु श्री यिसू ख्रिष्ट के किसी कर्म के लिये यह आड़ लगाना कुछ प्रयोजन नहीं है क्योंकि यद्यपि वह अपने दैव्य आश्चर्य कर्मों से अपने को सत्य स्वामी प्रगट करता था तथापि ईश्वरीय व्यवस्था की सारी आज्ञाओं को अपनी इच्छा से पालन करके उसने अपने को मनुष्य के समान ईश्वर का सेवक ठहराया। और केवल इतना भी नहीं बरन मनुष्य का उपकार अपनी अद्भुत सामर्थ से करके उस ने अपने को मनुष्यों का भी सेवक बनाया आप उस के सारे वृत्तान्त में देखिये कि उसी के वचन के अनुसार जो मैं ने ऊपर कहा उस का ठीक वर्णन यही है॥

वेदविद्वान का बचन॥ यिसू ख्रिष्ट के विषय में आप का वर्णन अधिक अद्भुत होता जाता है मनुष्य का सत्य स्वामी होना और उस का सेवक भी होना यह तो एक बड़ा अचम्भा देख पड़ता है फिर यदि वह सर्व प्रकार से ईश्वर का आज्ञापालक और सेवक था तो पापी मनुष्य का सेवक क्योंकर हो सके॥

सत्यार्थी का बचन॥ यिसू ख्रिष्ट का वर्णन अति अद्भुत तो है पण्डितजी इस में कुछ सन्देह नहीं है क्योंकि नाना प्रकार की बातें जो बहुधा अनमेल और विपरीत देख पड़ती हैं सो उस की अद्भुत स्वाभाविक प्रकृति में मिलके परस्पर मिलाप करती हैं। वह सर्व प्रकार से ईश्वर का आज्ञापालक और सेवक था और फिर भी पापी मनुष्य का सत्य उपकारी सेवक था। मनुष्य होके उस ने परमेश्वर की सारी आज्ञाओं को सम्पूर्ण रूप से पालन किया जन्म से लेके मृत्यु लों किसी एक छोटी सी बात में भी वह दोषी न ठहरा न उस के किसी बचन में न कर्म में न

इच्छा में तनिक भी कलंक लगा। निदान उस की ऐसी पवित्रता थी कि पापी मनुष्य की बुद्धि में भली भान्ति नहीं आ सक्ती है और उस की यह भक्ति योगी अथवा बनवासी की रीति पर न थी क्योंकि संसार का व्यवहार करके और मनुष्यों के बीच रहके उस ने यह भक्तता किई। पापी लोगों को धर्म के सत्य मार्ग बतलाने में उस ने अपना जीवन बिताया प्रतिदिन और दिन भर उन की संगत में रहके उन का धर्मोपदेश और अपनी दैव्य शक्ति से उन का उपकार करता रहा। सांझ को ऐसे परिश्रमों से अवकाश पाके बहुधा पहाड़ों पर वा एकान्त में जाके रात भर ईश्वर के भजन और प्रार्थना में तत्पर रहा फिर प्रातःकाल को दुर्भागी मनुष्य के कुशल के लिये उद्योग करने लगा॥

वेदविद्वान का वचन॥ इस दशा में बड़े आश्चर्य की बात है कि सारे मनुष्य उस के शिष्य नहीं हुए जब वह दैव्य शक्ति भी रखता था और ऐसी कोमलता और दया और बुद्धि और ज्ञान और भक्तता प्रगट करता था और सर्व प्रकार से मनुष्य के उपकार के लिये अपनी दैव्य शक्ति का अभ्यास करता था तो क्या कारण था पण्डितजी कि सब के सब उस पर विश्वास नहीं लाये॥

सत्यार्थी का वचन॥ हाय पण्डितजी इस का एक निपट भारी और शोकजनक कारण था जो मैं ने पहिले बतलाया अर्थात कि मनुष्य जाति की स्वाभाविक प्रकृति पाप के कारण से यहां लों भ्रष्ट हो गई कि ऐसी निष्कलंक पवित्रता का तेज वह सह नहीं सक्ता है। यदि यिसू खिष्ट में कुछ कलंक होता तो पापी मनुष्य उस को अपने समान जानके उस्से ऐसा द्वेष न करते अथवा यदि वह अपनी शिक्षा से और अपनी चाल से पाप का आक्षेप न करता और उस की दुष्टता प्रगट न करता तब भी वे उस्से ऐसे अप्रसन्न न होते। परन्तु यिसू खिष्ट ने पाप के और उस की दुष्टता और दण्ड के विषय में कुछ सन्देहपूर्वक वचन नहीं कहा

और मनुष्य की भयानक पापी दशा को अस्पष्ट रूप से नहीं बतलाया। वरन सब लोगों से कहा कि बिना पछतावा किये और बिना पाप छोड़े और बिना नया मन उत्पन्न हुए मुक्ति नहीं हो सक्ती है और अपने शिष्यों को आज्ञा दिई कि यद्यपि किसी पाप को अन्तःकरण से उखाड़ना हाथ काटने अथवा आंख उखाड़ने के समान कठिन और दुःखदायक होवे तथापि समस्त प्रकार का पाप त्याग करना अवश्य है नहीं तो निश्चय नरक का भोग करना होगा तो क्या आश्चर्य है कि बहुतेरे मनुष्य उस के शिष्य होने नहीं चाहते थे॥

वेदविद्वान का वचन॥ यद्यपि मनुष्य का स्वभाव बहुत बिगड़ तो गया है तथापि वह अपने मन ही मन में जानता है कि सत्यता भली और उत्तम है और यद्यपि साधारण मनुष्य अपना मन सांसारिक विषय पर लगा तो देते हैं तथापि सब कोई जानता है कि कोई धर्म अवश्य चाहिये और बहुतेरे मनुष्य अपने धर्म के कारण दुःख उठाने पर भी प्रसन्न होते हैं। सो यदि यिसू ख्रिष्ट सचमुच ऐसा महात्मा था और ऐसा सत्य धर्मोपदेश करता था और इन बातों के ऐसे प्रत्यक्ष प्रमाण भी थे जैसे आप बतलाते हैं तो अवश्य कोई दूसरा कारण भी होगा कि जिस्से उस काल के सारे मनुष्य उस को ग्रहण नहीं करते थे॥

सत्यार्थी का वचन॥ मूल कारण तो वही था पण्डितजी जो मैं ने बतलाया परन्तु उस का प्रत्यक्ष स्वरूप नाना प्रकार का हो सक्ता है। मैं जानता हूं कि मनुष्य का मन सत्यता के लिये साक्षी देता है और यह साक्षी मनुष्य के मन में परमेश्वर के शब्द के समान ठहरती है परन्तु जब सत्यता की ज्योति के कारण से मनुष्य के दोष और पाप प्रकाशित होते हैं तो वह ऐसी सत्यता को मन से नहीं चाहता है वरन उस्से द्वेष भी करता है। अब जो सत्यता यिसू ख्रिष्ट की चाल और स्वभाव और शिक्षा में चमकती थी सो सूरज की ज्योति के समान निर्मल थी और

उस के कारण से मनुष्य की पापी दशा प्रत्यक्ष देख पड़ती है और पाप की दुष्टता और उस का भयानक फल भी स्पष्ट सूझ पड़ते हैं इस कारण से बहुतेरे मनुष्य उससे प्रसन्न नहीं होते हैं। फिर यद्यपि साधारण मनुष्य जानते हैं कि कोई धर्म अवश्य चाहिये तथापि वे बहुधा ऐसा धर्म चाहते हैं जो सांसारिक और शारीरिक और व्यवहारिक हो क्योंकि ऐसे धर्म में पाप की जड़ अन्तःकरण से उखड़ने के बदले नाना प्रकार की शारीरिक सेवा ठहराई जाती है। परन्तु यिसू ख्रिष्ट का धर्म विशेष रूप से आत्मिक है उस ने आप कहा कि परमेश्वर आत्मा है और जो उस की सेवा करें अवश्य है कि आत्मा से और सत्यता से करें इति फिर ऐसा धर्म शारीरिक स्वभाव के मनुष्य को कैसा भावे। इस को छोड़ बहुधा मनुष्य ऐसा धर्म अच्छा जानते हैं कि जो अपने ही कुल और देश और जाति के पक्ष पर हो परन्तु यिसू ख्रिष्ट इस प्रकार से किसी की पक्षता नहीं करता था उस की दृष्टि में सारे मनुष्य छोटे बड़े ज्ञानी अज्ञानी धनी दरिद्र यहूदी अन्यदेशी सब के सब निरे पापी जन थे और सभों के लिये एक ही प्रकार की औषध अवश्य थी अर्थात ऐसी औषध जिस्से उन के पाप कट जायें और उन के मन शुद्ध होयें। और जो कोई ऐसी औषध की लालसा करता था यद्यपि पहिले से वह बड़ा ही कुकर्मी हुआ हो अथवा बड़ा अज्ञानी और अधम मनुष्य हो तथापि उस सीधे अन्तःकरण के कारण से वह ऐसे मनुष्य को श्रेष्ठ उत्तम और मुक्ति के योग्य जानता था परन्तु इस प्रकार का विचार स्वधर्मपक्षपातियों को अति बुरा लगता है और उस काल के मनुष्य बहुधा ऐसे ही थे जैसे इन दिनों में भी होते हैं। इस रीति से सारे मनुष्यों का यिसू ख्रिष्ट को ग्रहण न करना उन्हीं के दोषों का प्रमाण होता है और इसी प्रमाण से यिसू ख्रिष्ट की निर्मल सत्यता और आत्मत्व और निरपक्षता सिद्ध होती है॥

वेदविद्वान का वचन॥ यदि यिशू ख्रिष्ट ऐसा था और इस प्रकार का धर्म भी प्रचारता था और इस कारण से बहुतेरे मनुष्य उस को ग्रहण नहीं करते थे तो उस के आगमन और प्रकाश से संसार को क्या धार्मिक फल सम्भव हो सक्ता है॥

सत्यार्थी का वचन॥ इस के उत्तर में मैं उस के बालकपन का एक वृत्तान्त कहूंगा। जब उस की माता मूसा की व्यवस्था के अनुसार पहिले बार उस को ईश्वर के मन्दिर में ले गई तब एक साधु ने उस के विषय में यह भविष्यद्वाणी कही कि देख यह बालक बहुतेरों के गिरने और फिर उठने का कारण और एक लक्षण जिस का विरोध कहा जावे ठहराया गया जिसतें बहुतेरों के मन की चिन्ता प्रगट हो जाय इति। इस के समान यिशू ख्रिष्ट ने अपने विषय में कहा कि मैं संसार में विचार के लिये आया हूं जिसतें वे जो नहीं देखते हैं देखें और जो देखते हैं अन्धे हो जायें इति। इस रीति से यिशू ख्रिष्ट अपनी चाल और शिक्षा से मनुष्यों के परीक्षायुक्त विवेक करता है कि किस का अन्तःकरण सीधा है और किस का कपटी है क्योंकि यद्यपि सारे मनुष्यों का स्वभाव बहुत बिगड़ तो गया है तथापि सत्य और मिथ्या का बोध सर्वथा नष्ट नहीं हुआ। परन्तु बहुतेरे मनुष्यों का प्रत्यक्ष स्वरूप उन के अन्तर्गत से बहुत भिन्न है कितने बड़े धर्मभेषी पुरुष सचमुच मन के कपटी हैं और कितने भ्रान्ति और अधम जन अन्तःकरण के सीधे भी हो सक्ते हैं। अब यिशू ख्रिष्ट अपने स्वाभाविक और व्यावहारिक गुणों से और अपनी शिक्षा से इन सभों की परीक्षा करके उन का अन्तर्गत प्रकाश करता है। मन के कपटी स्वधर्मपक्षपाती शारीरिक मनुष्य और वे जो अपने को ज्ञानी जानते हैं अर्थात अपनी समझ में देखते हैं सो उस्से अप्रसन्न हो अपनी आंख बन्द कर उस का त्याग करते हैं परन्तु जो अन्तःकरण के सीधे और सत्यार्थी निरपक्ष और निराभिमान होते हैं अर्थात अपने को

अज्ञान जानते हैं वे उस में निर्मल सत्य का लक्षण देखके उस की ओर आकर्षित होते हैं जैसे यिसू खिष्ट ने आप कहा कि जो कोई सत्यता का है वह मेरा शब्द सुनता है इति। फिर ऐसे मनुष्यों को इस प्रकार से अपनी ओर आकर्षण करके यिसू खिष्ट अपने अद्भुत प्रेम और कोमलता इत्यादि सद्गुणों से उन को अपने आधीन कर लेता है और अन्त को उन्हें अपने समान बनाय डालता है। इसी भान्ति की दैव्य आत्मिक शक्ति से यिसू खिष्ट का पराक्रम सारे जातिगणन के ऊपर फैलता जाता है और इस आत्मिक शक्ति को छोड़ उस का सत्य पराक्रम किसी दूसरे द्वारा से फैल नहीं सक्ता है॥

वेदविद्वान का वचन॥ यिसू ख्रिष्ट की कोमलता और प्रेम इत्यादि सद्गुण जिन का वर्णन आप ने किया है सो उन मनुष्यों की कुशल के लिये जो अठारह सौ बरस पहिले जीते थे प्रगट और साधित हुए। इन दिनों के मनुष्यों के सन्मुख ऐसे दयापूर्वक आश्चर्य कर्म उपस्थित नहीं होते हैं और ये सद्गुण भी प्रगट और साधित नहीं होते हैं। फिर इस प्राचीन वृत्तान्त के द्वारा वर्त्तमान के मनुष्य जो उन सद्गुणों का फल प्राप्त नहीं कर सक्ते और देख भी नहीं सक्ते तो उन के कारण से यिसू ख्रिष्ट के आधीन क्योंकर हो जाते हैं॥

सत्यार्थी का वचन॥ जो २ दया पूर्वक आश्चर्य कर्म यिसू ख्रिष्ट ने प्राचीनों के लिये किये और जो २ सद्गुण उन के सन्मुख प्रगट किये सो सब के सब उस के मूल स्वभाव के लक्षण थे और इन से जाना जाता है कि यिसू खिष्ट इन दिनों में भी अपने विश्वासियों की कुशल के लिये क्या २ करने पर समर्थ और सिद्ध है क्योंकि यद्यपि वह शारीरिक रीति से अदृश्य तो है तथापि वह सचमुच अपने विश्वासियों के संग उपस्थित है। पण्डितजी यिसू खिष्ट पर ऐसा विचार करना नहीं चाहिये कि जैसे किसी मृतक महात्मा का स्मरण किया जाता है कि जब वह जीता था

तब तो बड़ाही उपकारी था परन्तु हाय कि अब वह चला गया है क्योंकि यिसू ख्रिष्ट तो मृतक नहीं है वह जी उठा है। आत्मिक अदृश्य रीति से अपने विश्वासियों के संग सचमुच उपस्थित है और उन के मन में बास करता है और अपनी दैव्य शक्ति और अनन्त ज्ञान और असीम प्रेम इत्यादि सद्गुणों को उन की रक्षा और कुशल के लिये नित्य साधन किया करता है। सच्चे ख्रिष्टीय शिष्य का आत्मिक जीवन और यिसू ख्रिष्ट के संग उस की आत्मिक संगत कुछ भूत वृत्तान्त तो नहीं है वर्त्तमान वृत्तान्त है जिस के विषय में सन्देह होना कुछ प्रयोजन नहीं है क्योंकि यिसू ख्रिष्ट अब भी वही शक्तिमान ज्ञानी प्रेमी कोमल उपकारक है जो प्राचीन काल में था और अपने सच्चे शिष्यों के लिये आत्मिक रीति से वही दैव्य दयापूर्वक कर्म करता है जो प्राचीनों के लिये शारीरिक रीति से करता था॥

वेदविद्वान का वचन॥ यिसू ख्रिष्ट के वृत्तान्त में आप ने उस के नाना प्रकार के दुःखों का बहुत सा वर्णन किया सो अब मैं आप से पूछता हूं कि एक पराक्रमी तेजस्वी मुक्तिदाता को इतना दुःख सहना किस कारण से प्रयोजन था अथवा ऐसी दुर्दशा उस के योग्य क्योंकर हो सके क्योंकि सांसारिक व्यवहार के विपरीत देख पड़ता है कि परोपकारी आप दुर्बल और निन्दित दुःखी और शोक से परिचित होवे॥

सत्यार्थी का बचन॥ यिसू ख्रिष्ट के वृत्तान्त का यह विषय पण्डितजी निःसन्देह अति अद्भुत और ध्यान के योग्य है और इस का विचार ख्रिष्टीय शास्त्र की मूल शिक्षा की चर्चा में किया जायगा क्योंकि सचमुच यह विषय मूल शिक्षा की मूल बात ठहरता है परन्तु अब मैं इतना कहता हूं और मेरे इस संक्षेप वर्णन पर आप भली भान्ति ध्यान कीजिये। बहुधा ऐसा होता है कि मनुष्यों की दुर्दशा उस प्रकार की होती है जिस में से उस को छुड़ाना केवल उपकारक की उसी दुर्दशा में साझी

होने से हो सक्ता है। जब कोई मनुष्य संस्पर्श रोग से रोगी है तो यद्यपि उस के पास जाने से कदाचित उपकारक उसी रोग से रोगी हो जावे तथापि उस का उपकार करने के लिये उस के पास जाना अवश्य है और प्रेम के बल से बहुतेरे ऐसा करते हैं। अब मनुष्य जाति की दुर्दशा पाप के कारण से होती है और उस का छुटकारा केवल उस का पाप नाश करने से हो सक्ता है और इस के निमित्त सच्ची शुद्धता का डौल उस पर प्रगट करना अवश्य देख पड़ता है जिसतें वह अपने पाप से सज्ञान होवे और सच्ची शुद्धता की लालसा करे इसी हेतु से ईश्वर के पुत्र को मनुष्य रूप धारण करके जगत में आना अवश्य था। परन्तु बड़े दुःख और कष्ट सहने के बिना यह नहीं हो सका क्योंकि पवित्र को अपवित्रता से प्रेमी को स्वार्थ से धर्मी को अधर्मता से अति कठिन दुःख अवश्य होता है और यिसू ख्रिष्ट जीवन भर यही दुःख सहता था और इस दशा की भविष्यद्वाणी यशाया आचार्य्य ने आठ सौ बरस पहिले से कही थी जैसे उस की लिखावट के तिरपनवें पर्व्व में लिखा है॥

यशाया आचार्य्य का वचन॥ वह निन्दित है और मनुष्यन से त्यक्त दुःखों का मनुष्य और शोक से परिचित और वह हम से मुंहछिपाऊ की नाईं निन्दित है और हम ने उसे कुछ न समझा निश्चय उस ने हमारे रोगों को उठाया और हमारे दुःखों को ले गया तथापि हम ने उसे प्रहारित ईश्वर का मारा हुआ और दुखाया हुआ समझा और वह हमारे अपराधों के लिये घायल किया गया हमारी बुराइयों के लिये कुचला गया ताड़ना हमारी कुशल के लिये उस पर धरी गई और उस की चोटों से हम चंगे हुए हम सब भेड़ों की नाईं भटक गये हम में से हर एक अपने २ मार्ग पर फिर गया और परमेश्वर ने हम सब का कुकर्म उस पर धरा उपद्रव उस्से किया गया और उस ने आप को

दीन किया और वह अपना मुंह न खोलेगा वह मेम्ना की नाईं घात के लिये लाया गया और जैसे भेड़ अपने रोम कटवैये के आगे चुपचाप है तैसे वह अपना मुंह न खोलेगा वह संकट और विचार से ले लिया गया और उस की पीढ़ी में कौन समझेगा कि वह मेरे लोगों के अपराध के कारण उन के लिये स्थापित होके जीवतों की भूमि से काटा गया और दुष्टों के साथ उस की समाधि ठहराई गई पर वह अपनी मृत्यु में धनवान के संग था यद्यपि उस ने कुछ अनुचित न किया और उस के मुंह में कुछ छल न था तथापि परमेश्वर को अच्छा लगा कि उसे कुचले उस ने उसे कष्टित किया जब उस का प्राण प्रायश्चित्त का बलि करेगा तो वह अपने वंश को देखेगा वह अपनी आयुर्दा को बढ़ावेगा और परमेश्वर का मनोरथ उस के हाथ में फलेगा॥

सत्यार्थी का बचन॥ इसी रीति पर दुःखी मनुष्य के संग समदुःखी होके यिसू ख्रिष्ट उस का सत्य उपकार कर सक्ता है और कई एक ऐसे सद्गुण भी हैं जो केवल दुःख की दशा में प्रगट हो सक्ते हैं। जब यिसू ख्रिष्ट कठिन दरिद्रता में भी प्रसन्न रहा तो दरिद्र लोगों के संग समदुःखी होकर उन का उपकार कर सक्ता है जब सांसारिक सुख और शारीरिक अभिलाषा को सम्पूर्ण रूप से त्याग किया तो प्रगट किया कि आत्मिक स्वर्गीय आनन्द से सन्तुष्ट होना यही सत कल्याण और भाग्यवानी है। जब अति कठिन शारीरिक पीड़ा धीरज के साथ सह लिया तो सारे दुःखी और पीड़ित जनों के लिये दैव्य धीरज का उदाहरण ठहरा। निदान सभों का सुखदायक और आप ही दुःखग्राहक हो वह मनुष्य जाति के लिये सम्पूर्ण समाप्त सिद्धता का एक निष्कलंक उदाहरण और उस की प्राप्ति करने में एक प्रेमी समदुःखी उपकारक ठहरता है॥

वेदविद्वान का बचन॥ पण्डितजी मैं मान लेता हूं कि यिसू ख्रिष्ट

का वृत्तान्त जैसा आप उस का वर्णन करते हैं सो अति अतुल्य है उस के समान किसी का वृत्तान्त मैं ने कभी नहीं सुना हिन्दू शास्त्रों में देवताओं का जो वर्णन लिखा है सो निश्चय करके यिसू खिष्ट के वृत्तान्त से बहुत भिन्न है। आप कहते हैं कि उन के वृत्तान्त के सचमुच उपस्थित होने का कोई यथायोग्य प्रमाण नहीं मिलता है मैं अंगीकार करता हूं कि कोई ऐसा प्रमाण मैं तो नहीं जानता हूं परन्तु यदि उपस्थित भी हुआ था फिर भी यिसू खिष्ट के वृत्तान्त की अपेक्षा वे सब के सब सांसारिक और शारीरिक और रागी और स्वार्थी देख पड़ते हैं और वह कोमल और पवित्र स्वर्गीय तेज जो यिसू खिष्ट में प्रकाशित होता है उन में से किसी में दृष्टि नहीं आता है। क्या आप का वर्णन सचमुच खिष्टीय शास्त्र के वर्णन के समान है अथवा आप ने अपनी ही बुद्धि से खिष्टीय शास्त्र के वर्णन को कुछ संवारा है॥

सत्यार्थी का बचन॥ यिसू खिष्ट का जो वर्णन मंगलसमाचार ग्रन्थ में लिखा है उस प्रकार का है कि कोई मनुष्य जितना बुद्धिमान हो उस को संवार नहीं सक्ता है इस से अधिक मेरी समझ में कोई मनुष्य जितना बुद्धिमान हो फिर भी अपनी बुद्धिमानी से उस वर्णन की कल्पना नहीं कर सक्ता। मैं ने पहिले बतलाया कि वह वर्णन चार मनुष्यों का लिखा हुआ है और उन के भिन्न वर्णनों में कितनी बातों की भिन्नता देख पड़ती है परन्तु सभों का सार एक ही है। मत्ती का वर्णन विशेष करके यहूदी लोगों के लिये लिखा था मरकुस का रूमियों के निमित्त लूका का यवन इत्यादि अन्यदेशियों के लिये लिखा था और इन तीनों वर्णनों में यिसू खिष्ट का लौकिक वृत्तान्त अधिक विस्तार से लिखा है। यूहन्ना का वर्णन इन से कुछ भिन्न है क्योंकि उस में यिसू खिष्ट का स्वर्गीय और दैव्य वृत्तान्त अधिक लिखा है और इन चारों की संहिता से यिसू खिष्ट के वे अद्भुत स्वाभाविक और व्यावहारिक गुण जाने जाते

हैं जिन का थोड़ा सा वर्णन मैं ने किया है। अब आप ध्यान कीजिये कि यदि यह वृत्तान्त सचमुच इस जगत में उपस्थित नहीं हुआ था तो यह चार अनपढ़े अज्ञान विद्याहीन दोषवान यहूदी उस का वर्णन क्योंकर लिख सके। निश्चय है कि उन्हों ने केवल वह वृत्तान्त जिस को आप देखा और सुना था अपने ग्रन्थों में लिखा इसी कारण से चारों वर्णनों का सार एक ही है। फिर इस अद्भुत सार से केवल एक परिणाम सिद्ध हो सक्ता है अर्थात कि श्री यिसू ख्रिष्ट अनादि अनन्त परमेश्वर का अकेला सत्य अवतार था त्रिलोक का सृष्टिकर्त्ता पाप के नाश के लिये और पापी मनुष्य की मुक्ति के निमित्त मनुष्य रूप धारण करके यिसू ख्रिष्ट के नाम से इस जगत में प्रगट हुआ। आप इस सिद्धान्त को ग्रहण कीजिये तो यह सारा वृत्तान्त एकसा योग्य और बुद्धि के अनुसार और मनुष्य के सत्य कल्याण के अनुकूल ठहरता है परन्तु इस को त्याग करने से केवल विरुद्धता और अनर्थकता और निराशता होती है॥

वेदविद्वान का बचन॥ यदि यिसू ख्रिष्ट का सत्य वृत्तान्त आप के वर्णन से भी आगे बढ़के उत्तम और श्रेष्ठ था तो उस को कल्पित करना किसी मनुष्य की बुद्धिमात्र से निःसन्देह अनहोना था क्योंकि उस का योग्य और यथार्थ बोध भी मन में लेना पापी मनुष्य के लिये मुझ को एक अतिकठिन काम देख पड़ता है जब कि सारे मनुष्य अपने स्वाभाविक गुणों के आधीन तो हैं तो ऐसे अनोखे गुणों का ठीक विचार क्योंकर कर सकें और स्वार्थी मनुष्य अस्वार्थी की उत्तमता क्योंकर जानें॥

सत्यार्थी का बचन॥ पण्डितजी सम्पूर्ण रूप से ऐसे गुणों का योग्य विचार करना कदाचित पापी निर्बल मनुष्य को अनहोना है परन्तु अवश्य सब किसी का मन इतनी साची देगा अर्थात कि निश्चय करके ये सारे गुण अत्यन्त श्रेष्ठ उत्तम और दैव्य देख पड़ते हैं। फिर जो कोई इतना ग्रहण कर और सीधे अन्तःकरण से प्रार्थना कर पवित्र आत्मा की सहाय-

ता मांगेगा से उस के अनुग्रह से एक दैव्य आत्मिक शक्ति प्राप्त करेगा जिस्से यिसू ख्रिष्ट के वृत्तान्त का उत्तम अभिप्राय अधिक स्पष्ट रूप से समझ सकेगा। फिर पवित्र आत्मा की सहायता से यिसू ख्रिष्ट पर मन का विश्वास लाके अति आत्मीय प्रेम से उस को प्यार करेगा और होते २ उस के समान भी बनता जायगा तब उस का कोमल स्वर्गीय प्रताप अधिक तेज से मन पर चमकता जायगा और प्रतिदिन परीक्षायुक्त साधन के कारण विश्वास दृढ़ होता जायगा कि मुझ पापी का सत्य मुक्तिदाता जिस की सामर्थ से मेरा पाप नष्ट होता जाता है और मैं मुक्ति पाता जाता हूं यही है। परन्तु अब मैं इस विषय का अधिक वर्णन नहीं कर सक्ता हूं आसरा है कि आप का मन उस दैव्य जगद्गुरु की ओर आकर्षित होने लगा है। आप ईश्वर से प्रार्थना करते रहिये कि उस की निर्मल सत्यता आप पर प्रकाशमान होती जावे और जब हमारी भेंट फिरके होवे आप की इच्छा हो तो हम उस जगद्गुरु की मूल शिक्षा की जो ख्रिष्टीय शास्त्र में लिखी है तनिक चर्चा करेंगे॥

ग्रन्थकर्त्ता का बचन॥ इस पर हम तीनों मनुष्य प्रणाम कर बिदा हो अपने २ घर को चले गये॥

इति मतपरीक्षा के द्वितीय खण्ड का छठा सत्सङ्ग समाप्त हुआ॥



सातवां सत्सङ्ग ।

खिष्टीय शास्त्र की मूल शिक्षा की चर्चा ।

ग्रन्थकर्त्ता का वचन ॥ जब कि मैं दूसरे दिन अपने व्यवहार के समान वेदविद्वान के पास जाता था तो मार्ग में सत्यार्थी से मेरी भेंट हुई मैं उस पण्डित से पूछने लगा कि क्या आप की समझ में वेदविद्वान का मन खिष्टीय विश्वास की ओर कुछ आकर्षित होता है । इस पर सत्यार्थी ने उत्तर दिया कि मैं उस के मन की दशा क्योंकर जान सकूं उस का अन्तर्गत परमेश्वर ही पर खुला है देखने में तो वह एक सत्य पुरुष है और निर्मल मत के खोज में तत्पर है परन्तु मैं ने बहुतेरे ऐसों को देखा है जो कि कुछ समय लों सत्य के खोज में तत्पर देख पड़े और सदा कहते थे कि यदि खिष्टीय विश्वास सत्य और प्रामाणिक ठहरे तो हम खिष्टीय शिष्य हो जायेंगे परन्तु अन्त को जब उन्हों ने देखा कि इस के प्रमाण खण्डित नहीं हो सके हैं तो एक आश्चर्य का परिवर्त्त उन के मन पर बीत गया । क्योंकि यद्यपि पहिले वे सत्य के खोज में ऐसे उद्योगी थे तथापि जब सत्य प्रकाश हुआ तो उस पर चलने में वे अति निराभिलाष और निश्चिन्त थे। परन्तु हम अपने मित्र वेदविद्वान के विषय में आसरा रखेंगे और उस के लिये प्रार्थना भी करेंगे कि परमेश्वर के अनुग्रह से वह दृढ़ विश्वासी हो सत्य मार्ग पर चले क्योंकि जो कोई सत्य को जानके उस पर नहीं चलता है तो केवल उस का अन्तःकरण नहीं बरन उस का विवेक भी बिगड़ जाता है और उस की दशा पहिले से बुरी होती है ॥

इतने में हम वेदविद्वान के भवन पर पहुंचे और मैं ने देखा कि

वह भला मनुष्य अंगली पर बैठके ख्रिष्टीय शास्त्र को पढ़ता है। यह दशा देख मैं ने मन में ईश्वर का धन्य मान उस्से बिनती किई कि उस का अति गुणदायक अनुग्रह वेदविद्वान को प्राप्त हो जिसतें वह केवल सत्य को न देखे बरन उस को देखके उस के समान चले तब सत्यार्थी उस को प्रणाम कर उस के पास बैठ उस्से यों संवाद करने लगा॥

सत्यार्थी का बचन॥ हे मेरे मित्र आप एक भले काम में प्रवृत्त हैं यही तो मेरी इच्छा है कि जो कुछ वर्णन मैं करूं आप उस को ईश्वरीय शास्त्र से तुल्यता करके भली भान्ति जांचिये कि सत्य और यथार्थ है कि नहीं कृपा करके बतलाइये कि किस २ विषय का विचार आप इस समय करते हैं॥

वेदविद्वान का बचन॥ पण्डितजी यिसू ख्रिष्ट के वृत्तान्त का जो वर्णन आप ने किया मैं उस पर ध्यान करके अब देखता हूं कि वह ख्रिष्टीय शास्त्र के वर्णन के समान था कि नहीं और मैं मान लेता हूं कि आप ने उस का बखान कुछ बढ़ाव के संग नहीं किया। क्योंकि इस शास्त्र में आप के वर्णन को छोड़ यिसू ख्रिष्ट के बहुत से और वृत्तान्त लिखे हैं जो सब के सब अति आश्चर्य और दैव्य हैं परन्तु अब मैं चाहता हूं कि इस विषय को छोड़ आप यिसू ख्रिष्ट की मूल शिक्षा की तनिक चर्चा कीजिये॥

सत्यार्थी का बचन॥ मैं बड़े आनन्द से ऐसा करूंगा और ख्रिष्टीय शास्त्र की मूल शिक्षा एक बात से विशेष सम्बन्ध रखती है जो यिसू ख्रिष्ट के विषय में वर्णित हुई अर्थात जब स्वर्गीय दूत ने यिसू की माता मरियम कुमारी के पति यूसुफ़ को दर्शन देके कहा कि तेरी पत्नी पवित्र आत्मा से गर्भिणी है और एक पुत्र जनेगी तब उस ने यह आज्ञा दिई कि तू उस का नाम यिसू रखना क्योंकि वह अपने लोगों को उन के पापों से बचावेगा इति। सो वर्णन हुआ कि यिसू नाम का अर्थ है

पापों से बचानेवाला और ख्रिष्टीय शास्त्र की मूल शिक्षा इसी बात से सम्बन्ध रखती है। ख्रिष्टीय शास्त्र की रीति से पाप क्या है और उस के क्या गुण क्या मूल क्या फल है और यिसू ख्रिष्ट मनुष्य को पाप से क्योंकर बचाता है और इन बातों के विषय में ख्रिष्टीय शास्त्र की तत्त्वज्ञान संबन्धी और व्यवहारसंबन्धी शिक्षा कैसी है इन बातों की चर्चा करने से उस शास्त्र की मूल शिक्षा जानी जायगी॥

वेदविद्वान का बचन॥ इन बातों का विवरण करना अवश्य चाहिये पण्डितजी परन्तु इन को छोड़ ईश्वरीय शास्त्र में बहुत सी और बातों की शिक्षा प्रयोजक है अर्थात परमेश्वर का कैसा रूप है और उस ने किस रीति से और किस इच्छा से और किस वस्तु से संसार को रचा और किस कारण से उस का वही स्वरूप ठहराया जो देखने में आता है और अन्य लोक कितने और कैसे हैं और उन में किस प्रकार की सृष्टि रहती है और वह सृष्टि कैसा व्यवहार रखती है और इस जगत में नाना प्रकार के जीवधारी किस लिये उत्पन्न हुए और उस के सारे पदार्थों के रचित होने का क्या कारण था और वह किस रीति से हुआ इत्यादि। बहुत सी बातें हैं जिन के खोज करने को मनुष्य की बुद्धि निपट अभिलाषी है सो क्या इन सभों का सम्पूर्ण वर्णन ईश्वरीय शास्त्र में होना नहीं चाहिये॥

सत्यार्थी का बचन॥ मैं जानता हूं पण्डितजी कि ऐसे विषयों के विवेचन करने में मनुष्य की बुद्धि अति प्रवृत्त रहती है परन्तु इस कारण से उन का विवरण ईश्वरीय शास्त्र में होना कुछ अवश्य नहीं देख पड़ता है। क्योंकि ईश्वरीय शास्त्र मनुष्य की अनुसन्धानेच्छा शान्ति करने के निमित्त दिया नहीं जाता है सत्य शास्त्र का अभिप्राय मनुष्य की आत्मिक नीतिसंयुक्त प्रकृति को सुधारना है और यह अभिप्राय ऐसे विषयों से बहुत भिन्न है। निदान ख्रिष्टीय शास्त्र के दैव्य होने का लक्षण केवल

उस की लिखी हुई शिक्षा का तात्पर्य नहीं है वरन जिन बातों का विवेचन उस में नहीं लिखा है यह भी एक लक्षण है। क्योंकि यदि वह शास्त्र मनुष्य रचित मात्र होता तो अवश्य उस में ऐसे २ विषयों का विवेचन लिखा जाता परन्तु जब उस के कर्त्ताओं ने बहुधा उन को छोड़ दिया केवल प्रयोजनिक और उपकारिक वर्णन लिखा तो इस्से अनुमान सिद्ध होता है कि उन का दैव्य अगवा हुआ होगा। परन्तु इन विषयों का भी जितना वर्णन प्रयोजनिक थाँ उन्हों ने उस रीति से तो लिखा है कि शास्त्र के मूल अभिप्राय के आधीन हो और मैं ने पहिले इन का थोड़ा सा वर्णन किया है इस कारण मूल शिक्षा की चर्चा में इस का दो बारा वर्णन करना कुछ प्रयोजन नहीं है। निदान पापी मनुष्य के लिये सब से भारी प्रकरण यही है अर्थात कि वह पापी है और सब से प्रयोजनिक और उपकारिक ज्ञान यह है अर्थात पाप से उस का छुटकारा क्योंकर होवे सो ख्रिष्टीय शास्त्र की मूल शिक्षा इन्हीं विषयों पर है॥

वेदविद्वान का वचन॥ आपने तो ख्रिष्टीय शास्त्र की मूल समानता बतला के कहा कि उस की सारी लिखावटों में परमेश्वर के गुणों और व्यवस्था का और मनुष्य की प्रकृति और आत्मिक दशा का वर्णन एकही प्रकार का है और वह वर्णन किस प्रकार का है सो भी थोड़ा सा बतलाया। फिर मूसा आचार्य्य की लिखावटों के विषय में आप ने कहा कि उन में संसार का रचित होना और मनुष्यजाति के आदि माता पिता का उत्पन्न होना और उन का पाप में पतित होना और आनेहारे मुक्तिदाता की प्रतिज्ञा इत्यादि वृत्तान्त उन में लिखा है सो इन बातों का स्मरण मुझ को रहता है। फिर पहिले सत्संग में आप ने यह भी कहा कि परमेश्वर ने प्रसन्न हो दो प्रकार की सृष्टि उत्पन्न किई है एक इच्छारहित एक इच्छारूपी और इच्छारूपी सृष्टि में दूतगण भी है और उन में से एक जिस का नाम आप ने शैतान बतलाया अपनी इच्छा रूपी

स्वतंत्रता से पाप में पतित हुआ और इस के पीछे मनुष्य के आदि माता पिता को बहकाय के पाप में फंसाया। सो इस वर्णन के अनुसार इस जगत में पाप का प्रवेश इस कारण से हुआ कि परमेश्वर ने मनुष्यजाति को इच्छा रूपी सृष्टि बनाया और जब इस को ऐसा बनाया तो पाप में पतित होने से इस को नहीं बचाया। परन्तु अब मैं आप से पूछता हूं कि पाप को आदि से रोक रखना क्या परमेश्वर की सामर्थ थी कि नहीं यदि सामर्थ थी तो उस ने उस को क्यों नहीं रोका और जब नहीं रोका तो क्या वह सचमुच उस का कर्त्ता नहीं ठहरता है॥

सत्यार्थी का वचन॥ आप के ये प्रश्न एक अति कठिन और निगूढ़ भेद पर होते हैं जिस का सम्पूर्ण ज्ञान मनुष्य की बुद्धि से परे है परन्तु सब कोई जो पाप की दशा से सज्ञान है सो भली भान्ति जान सक्ता है कि उस का कर्त्ता परमेश्वर आप नहीं हो सक्ता है। क्योंकि पाप का अर्थ है परमेश्वर की विरुद्धता और परमेश्वर अपनी विरुद्धता क्योंकर करे यह तो एक विरुद्ध बात होती है इस को छोड़ इस भावना में परमेश्वर की ऐसी अपनिन्दा होती है जिस्से धर्मशील मनुष्य अत्यंत डर मानेगा क्योंकि पवित्र परमेश्वर पाप का कर्त्ता क्योंकर हो सके ऐसा शोच मात्र करने से भी मन कांपने लगता है। परन्तु परमेश्वर ने पाप को आदि से क्यों नहीं रोका जिस के पास परमेश्वर का ज्ञान हो सो ही इस प्रश्न का उत्तर देवे इस का भेद खिष्टीय शास्त्र की शिक्षा से भली भान्ति नहीं खुलता है। कदाचित इस का वर्णन इस कारण से नहीं हुआ कि यद्यपि सम्पूर्ण रूप से किया जावे तथापि मनुष्य की बुद्धि इस के समझने की सामर्थ नहीं रखती है और इस का समझना मन की सुधराव के लिये कुछ अवश्य भी नहीं। एक बात तो निश्चय है कि सारी दशाओं में परमेश्वर पर अटल निष्कपट विश्वास धरना चाहिये कि वह केवल उचित और भला करेगा और यह भी प्रत्यक्ष है कि पाप पदार्थ उपस्थित तो

है और मनुष्यजाति उस में फंस भी गई है इस दशा में ख्रिष्टीय शास्त्र को शिक्षा अति योग्य और उपकारक है क्योंकि उस में पाप के लिये परमेश्वर की ठहराई हुई औषध वर्णित होती है॥

वेदविद्वान का बचन॥ क्या आप की समझ में इस भेद पर अर्थात कि पाप का मूल कहां से हुआ ध्यान करना कुछ अनुचित अथवा अधर्म का काम है॥

सत्यार्थी का बचन॥ आदर और दीनता के संग इस पर ध्यान करना कुछ अनुचित नहीं होता है और इच्छारूपी सृष्टि की दशा जान्ने से इस कठिन भेद की कठिनता कुछ मिट भी जाती है। क्योंकि यदि परमेश्वर ऐसी सृष्टि उत्पन्न न करता तो उस का बुद्धिरूपी भजन और प्रसन्नतापूर्वक सेवा और स्वेच्छित संगत किस सृष्टि से हो सकी और ऐसी सेवा और संगत से जो पवित्र परमानन्द होता है सो किस सृष्टि को प्राप्त हो सका। ऐसे २ कारणों से परमेश्वर ने इच्छारूपी सृष्टि को उत्पन्न करना ठहराया होगा परन्तु इच्छारूपी सृष्टि में यह बात अवश्य संयुक्त है कि अपनी इच्छा के समान भला वा बुरा करने पावे क्योंकि उस का प्रकृति सिद्ध गुण यही है और इस कारण से उस को पाप और पुण्य गिना जाता है इस भेद का अर्थ खोलने के लिये आप ने गृह में अग्नि लगने का दृष्टान्त कहा और अब मैं एक दूसरा दृष्टान्त कहता हूं॥

एक दिन ऐसा हुआ कि किसी पिता ने अपने दो पुत्रों को आज्ञा दिई कि आजके दिन पर्ब है तुम दोनों गृह के अन्दर रहना किसी प्रकार से बाहर न जाना फिर छोटे पुत्र को ऐसी पानीय औषध पिलाई कि जिस का यह गुण था कि जो कोई उस को पीता तो पिलानेवाले की आज्ञा के विरुद्ध इच्छा भी न कर सका परन्तु बड़े पुत्र का स्वभाव परीक्षा करने के निमित्त पिता ने उस को वह औषध नहीं पिलाई पिता की आज्ञानुसार ये दोनों घर के अन्दर रहे परन्तु केवल बड़ा पुत्र इस कारण

से प्रशंसा के योग्य था कि यद्यपि पर्व की क्रीड़ा तो देखने चाहता था तथापि अपनी इच्छा को रोकके और निर्बन्ध स्वतंत्र होके वह घर के बाहर न गया। छोटा पुत्र यद्यपि उस ने पिता की आज्ञा भंग नहीं किई तथापि आज्ञा की विरुद्ध इच्छा भी करने का समर्थ न होके वह कुछ प्रशंसा के योग्य नहीं ठहर सक्ता है। क्योंकि घर के बाहर जाना उस की सामर्थ न थी सो वह अपनी इच्छा से नहीं बरन आवश्यकता से घर के अन्दर रहा इस कारण बड़े पुत्र के समान उस की परीक्षा नहीं ऊई और उस वृत्तान्त से कुछ प्रगट नहीं ऊआ कि उस का स्वभाव आज्ञापालक वा आज्ञाभंजक था। इसी प्रकार से पहिले मनुष्य की सत्य परीक्षा के निमित्त अवश्य था कि बड़े पुत्र के समान वह निर्बन्ध और स्वतंत्र रहे और अपनी इच्छा के अनुसार भला वा बुरा करने पावे और जब वह आज्ञाभंजक और पापी ठहरा तो उस के पाप का मूल ईश्वर से तो नहीं बरन मनुष्य ही की इच्छा से ऊआ और उस पाप का दोष केवल उसी पर लगता है ॥

वेदविद्वान का बचन॥ क्या सर्वज्ञ परमेश्वर पहिले से जानता न था कि इस का क्या अन्त होगा और यदि इच्छारूपी सृष्टि को पाप से रोकना उचित न था तो क्या ऐसी सृष्टि को उत्पन्न न करना उस की उत्पत्ति से भी भला न होता ॥

सत्यार्थी का बचन॥ हे मेरे मित्र ऐसे निगूढ़ विषय का यथार्थ विचार मनुष्य की निर्बल बुद्धि से क्योंकर हो सके इस का अन्त कैसा होगा परमेश्वर को छोड़ कौन जानता है धर्मिष्ठ और ईश्वरभक्त पुरुष केवल यह कह सक्ता है कि त्रिलोक का विचारकर्त्ता क्या उचित न करेगा जब उस ने इच्छारूपी सृष्टि को उत्पन्न तो किया है यद्यपि उस सृष्टि से पाप भी निकला तथापि निश्चय है कि उस सृष्टि को उत्पन्न करना उचित था। इस को छोड़ खिष्टीय शास्त्र से जाना जाता है कि परमेश्वर ने

अपनी अनन्त बुद्धि और सामर्थ और प्रेम से इस बुरी दशा को एक यथा-योग्य औषध भी ठहराई जो मनुष्य की इच्छारूपी प्रकृति के अनुसार है और जिस के गुण से अन्त को परमेश्वर की महिमा और सृष्टि के कल्याण के लिये ऐसे उत्तम फल निकलेंगे जो और किसी द्वारा से न हो सके इस दशा में मनुष्य को यह उचित है कि मन से परमेश्वर का धन्य मान और उस के अति कृतज्ञ हो उस औषध को ग्रहण कर उस के उत्तम फल को प्राप्त होवे॥

वेदविद्वान का वचन॥ यदि मनुष्य के पाप के कारण से अन्त को परमेश्वर की महिमा अधिक प्रगट होती है तो पाप की ऐसी दुष्टता जैसी आप वर्णन करते हैं क्योंकर सिद्ध हो सक्ती है॥

सत्यार्थी का वचन॥ पण्डितजी परमेश्वर की महिमा पाप के नाश करने में प्रगट होती है और इस से पाप की निर्दोषता सिद्ध नहीं होती है उस की कठिन दुष्टता सिद्ध होती है क्योंकि वह ऐसा दुष्ट है कि केवल परमेश्वर ही उस को नाश कर सक्ता है और उस के नाश करने में परमेश्वर की अनन्त सामर्थ और बुद्धि प्रगट होती है। परन्तु इस को छोड़ पाप क्या है इस पर ध्यान करने से उस की दुष्टता जानी जाती है क्योंकि परमेश्वर के विरुद्ध करना यही पाप है अर्थात उस की आज्ञा को भङ्ग करना उस की इच्छा से निश्चिन्त होना उस की सेवा से असावधान रहना। अब ध्यान कीजिये कि परमेश्वर केवल सर्वसामर्थी और सर्वज्ञानी नहीं है वरन अत्यन्त प्रेमी और दयावान भी है और सारे मनुष्यों का पालनकर्त्ता और आशीषदाता वही है और उस की सारी इच्छा भली और उत्तम है तो उस की इच्छा के विरुद्ध करना अति कठिन और अकथनीय दुष्ट क्यों न होवे यह तो मूल दुष्टता है और इस के समान कोई दुष्टता नहीं हो सक्ती है। परन्तु जब मनुष्य आप उस में फंस गया है तो वह निरपक्षता से उस का ठीक और यथार्थ

विचार क्योंकर कर सके कोई अपराधी अपने अपराध के विचार करने में निरपक्ष नहीं होता है। इस के अनुसार साधारण मनुष्य यद्यपि मुख से तो मान लेते हैं कि हम पापी हैं और अपने पाप को नाश करने के लिये नाना प्रकार के उपाय भी रचते हैं तथापि बहुधा उस्से बड़े निश्चिन्त रहते हैं क्योंकि वे उस की कठिन दुष्टता भली भान्ति नहीं जानते हैं परन्तु उन की सारी दुर्दशा का कारण यही पाप है और जब लों यह नाश न होवे उन का कल्याण नहीं हो सक्ता है॥

वेदविद्वान का वचन॥ मनुष्य की सारी दुर्दशा उस के पाप के कारण से क्योंकर होती है॥

सत्यार्थी का वचन॥ इस रीति से पण्डितजी कि परमेश्वर ने अपने सम्पूर्ण राज में एक अति दृढ़ व्यवस्था स्थापित किई है और उस व्यवस्था को आज्ञाभङ्ग के लिये उचित दण्ड भी ठहराया। अब जिस प्रकार से इस राज में नाना प्रकार की सृष्टि होती है उसी रीति से इस व्यवस्था के भी तीन बड़े भाग हैं अर्थात शारीरिक और मानसिक और आत्मिक और एक २ भाग में आज्ञाभङ्ग का उचित दण्ड ठहरा है। परन्तु ये तीनों भाग परस्पर सम्बन्धी भी हैं जो शारीरिक व्यवस्था का आज्ञाभङ्ग करता है तो उस का दण्ड अपने शरीर में पाता है परन्तु इस कारण कि उस का मन उस के शरीर में संयुक्त है तो वह दण्ड उस के मन में भी बहुधा गुण करता है इसी प्रकार से मानसिक और आत्मिक दण्ड भी परस्पर गुण करते हैं। अब मनुष्यजाति परमेश्वर सृष्टिकर्त्ता के राज के आधीन है और यह व्यवस्था उस के ऊपर प्रबल है और उस की एक प्रत्यक्ष बात यह है कि जातिगण के प्रत्येक मनुष्य इस रीति से परस्पर सम्बन्धी हैं कि एक के कर्म का फल दूसरे को लगता है और इस परस्पर सम्बन्ध के कारण मनुष्यजाति एक ही है फिर जब उस के पहिले माता पिता पाप में पतित हुए तो उन्हों ने अपने पाप का

फल केवल अपने में नहीं पाया क्योंकि पहिले उस के कारण से उन का स्वभाव बिगड़ गया फिर जब उन के बिगड़े हुए स्वभाव से सन्तान उत्पन्न हुआ तो वह भी बिगड़ा था और इस रीति से उन के पाप का फल उन के समस्त सन्तान को लग गया॥

वेदविद्वान का वचन॥ क्या वर्त्तमान के सारे मनुष्यों की दुर्दशा पहिले पुरुष स्त्री के पाप के कारण से होती है अथवा प्रत्येक मनुष्य अपने ही पाप का दण्ड भोग करता है॥

सत्यार्थी का वचन॥ पहिले मनुष्य के पाप के कारण से उस के सारे सन्तान पापमय उत्पन्न होते हैं परन्तु इस के पीछे जो पाप वे करते हैं सो अपनी ही इच्छा से करते हैं और उस का दण्ड भी भुगतते हैं और यह बात कि सारे मनुष्य पाप तो करते हैं प्रत्यक्ष है क्योंकि पहिले उचित था कि सारे मनुष्य परमेश्वर को जो सभों का सृष्टिकर्त्ता पालनकर्त्ता और स्वामी है और सर्वप्रकार से अनन्त आदर और प्रेम के योग्य है अपने सारे मन और आत्मा से प्यार करें और दूसरा यह भी उचित था कि सारे मनुष्य परस्पर ऐसा व्यवहार रक्खें कि जैसा वे चाहते हैं कि अन्य मनुष्य हम से रक्खें जब कि सब कोई चाहता है कि पराया मनुष्य हम से न्याय सत्यता दया और प्रेम रक्खे तो उस को भी सारी दशाओं में दूसरों से ऐसा ही करना चाहिये और जो कोई निर्दोषता के सङ्ग निरंतर अपनी सारी चिन्ता और वचन और कर्मों में ऐसा नहीं करता सो धर्मी नहीं है अर्थात पापी है परन्तु सर्व्वत्र संसार में ऐसा धर्मी कहां मिलेगा ऐसा तो कोई कहीं नहीं मिलता है इस से अनुमान सिद्ध होता है कि मनुष्य का आत्मिक स्वभाव बिगड़ गया है क्योंकि यद्यपि वह मन और बुद्धि की रीति से इस धार्मिक व्यवहार को उचित जानता है तथापि ऐसा व्यवहार नहीं करता है वरन आप स्वार्थ के कारण उस के विरुद्ध नित्य किया करता है और यह दुष्ट स्वभाव लड़कपन ही से

देख पड़ता है। परन्तु इस के कारण से किसी की इच्छारूपी स्वतंत्रता नष्ट नहीं होती है क्योंकि जो कुछ मनुष्य करते सो अपनी ही इच्छा से करते यही तो उन का दोष है कि उन की इच्छा भी दुष्टता की ओर आकर्षित होती है और प्रत्येक मनुष्य का मन इस इच्छारूपी स्वतंत्रता पर साक्षी भी देता है नहीं तो जब कुकर्म करते तो अपने को दोषी और पापी क्यों जानते हैं और किस कारण से अपने देवताओं को क्रोधित जानके उन को प्रसन्न करने के लिये बलिदान चढ़ाते हैं और तीर्थ और तपस्या करते हैं और अपना पाप नाश करने के निमित्त नाना प्रकार का उपाय रचते हैं। इन सारी बातों से निश्चय सिद्ध है कि सारे मनुष्य यद्यपि सांसारिक विषयों में प्रवृत्त तो रहते हैं तथापि अपने मन ही मन में अपने को पापी जानते हैं॥

वेदविद्वान का बचन॥ इस रीति से पण्डितजी पहिले पुरुष के पाप के कारण सारे मनुष्य पापमय उत्पन्न होते हैं और पापमय उत्पन्न होके वे सब के सब पाप करते चले जाते हैं और यह तो निःसन्देह एक अति दुर्दशा होती है। परन्तु मेरा अभिप्राय इससे कुछ भिन्न था अर्थात किस रीति से सिद्ध हो सक्ता है कि जो शारीरिक दुःख और सांसारिक क्लेश और अज्ञानता और भय और मृत्यु इत्यादि बिपत्तें मनुष्य को इस संसार में लगती हैं सो उन के पापों का दण्ड है और यदि दण्ड है तो उस से पाप के विषय में क्या जाना जाता है॥

सत्यार्थी का बचन॥ पण्डितजी इस प्रकरण में मैं ख्रिष्टीय शास्त्र की मूल शिक्षा बतलाता हूं उससे जाना जाता है कि मनुष्य आत्मारूपी सृष्टि होके परमेश्वर की आत्मिक व्यवस्था के आधीन हैं और वह व्यवस्था यह है कि आत्मारूपी सृष्टि अपनी इच्छा से ईश्वर की आज्ञा पालन करके उससे मिली रहे और इस प्रकार से सत्य आत्मिक जीवन भोग करें। इस के अनुसार जब परमेश्वर ने पहिले पुरुष को परीक्षा की

आज्ञा दिई तो उस्से कहा कि जिस दिन तू इस आज्ञा को भङ्ग करेगा तू मरेगा इति। फिर जब उस ने भङ्ग किया तो आत्मिक रीति से वह उसी दिन मर गया अर्थात उस की आत्मा परमेश्वर से भिन्न और विरुद्ध हो गई और इस कारण परमेश्वर की ओर से आत्मिक सहायता न पाय के उस की सारी प्रकृति उलट पुलट हो गई। उस का मन अन्धकार और अज्ञान हो गया और शारीरिक अभिलाषा को अपने बश में नहीं रख सक्ता था इस रीति से परमेश्वरीय व्यवस्था की आत्मिक और मानसिक और शारीरिक आज्ञाओं को भङ्ग करके उस ने इन तीनों का दण्ड अपनी प्रकृति में पाया क्योंकि बिना दण्ड ठहराये और आज्ञाभङ्ग का दण्ड बिना दिये व्यवस्था का सन्मान क्योंकर हो सक्ता है। परन्तु परमेश्वर की व्यवस्था आत्मशक्ति और आत्मकार्य है अर्थात उस के भंजक अपनी प्रकृति ही के गुण से अपने पाप का दण्ड अपने में पाते हैं। इस के अनुसार प्रथम पाप के कारण मनुष्य की आत्मा आप ही आप परमेश्वर से भिन्न और विरुद्ध हो गई फिर उस का मन आप ही आप अन्धकार और अज्ञान और निर्बल हो गया और उस की शारीरिक अभिलाषा आप ही आप प्रबल और अवश हो गई। और जब कि मनुष्य इस रीति से अधिकतर आज्ञाभंजक और अपराधी होता गया तो अपने पापों का फल पहिले अपनी प्रकृति में पाके पीछे अपने समजातियों में भी फैलाया और अन्त को जीवन भर नाना प्रकार का दुःख भोग कर आत्मिक और मानसिक और शारीरिक मृत्यु का अधिकारी ठहरा। सो खिष्टीय शास्त्र के अनुसार इस जगत में मनुष्य की सारी दुर्दशा उस के पाप का फल ही होता है॥

वेदविद्वान का बचन॥ क्या मनुष्य अपने पापों का सारा फल इसी जगत में भोग करते हैं अथवा परलोक में भी कुछ भोग करना होगा॥

सत्यार्थी का वचन॥ पण्डितजी खिष्टीय शास्त्र के अनुसार पाप का दण्ड जो इस जगत में होता है सो उस का ठीक सम्पूर्ण प्रतिफल नहीं होता है क्योंकि यह जगत ठीक न्याय प्रतिफल का नहीं परीक्षा और सुधराव का स्थान है और प्रत्येक मनुष्य के विषय में परमेश्वर की इच्छा यह है कि इस सांसारिक जीवन में पाप का कुछ दण्ड भोगके और उस की दुष्टता को इस रीति से चीन्हके उस्से पछतावा कर अलग हो जावे जिसतें परलोक में उस का सम्पूर्ण दण्ड भोगना न होवे। अब इस प्रकार की परीक्षा और मानसिक और आत्मिक सुधराव के लिये शारीरिक दुःख और सांसारिक क्लेश एक अति योग्य और गुणदायक उपाय है इस कारण परमेश्वर अपनी अनन्त बुद्धि और पवित्र प्रेम के समान प्रत्येक मनुष्य के लिये इस जगत में दुःख और सुःख ठहराता है। ठीक न्याय की रीति पर तो नहीं क्योंकि बहुधा धर्मी को दुःख और अधर्मी को सुःख इस जीवन में होता है फिर भी इस में किसी पर कुछ अन्धेर नहीं होता है क्योंकि किसी का दुःख उस के पाप के दण्ड से अधिक नहीं है और इस को छोड़ परमेश्वर परीक्षा की रीति पर और सुधराव के निमित्त एक २ के लिये उस की सांसारिक दशा ठहराता है सो मनुष्यों की भिन्न २ दशा इसी कारण से होती है और कुछ आवागमन से जो केवल भावनामात्र है नहीं होती है। फिर जो कुछ परमेश्वर इस विषय में करता है सो अपनी ठहराई हुई व्यवस्था के अनुसार और उस के द्वारा भी करता है केवल यह है कि उस व्यवस्था की सम्पूर्ण यथार्थता इस जगत में देखी नहीं जाती है और इस का अभिप्राय यह है कि परलोक का आसरा मनुष्य के मन में बना रहे। इस रीति से मनुष्य का प्रत्येक शारीरिक दुःख और सांसारिक क्लेश जो होता है सो उसी मनुष्य के अथवा किसी दूसरे मनुष्य के ईश्वरीय व्यवस्था की किसी आज्ञा भंग करने के कारण से होता है। फिर जब किसी एक छोटी सी बात में

भी ईश्वरीय व्यवस्था की कोई आज्ञा भङ्ग होती है तो अवश्य निश्चय इस आज्ञा भङ्ग का दण्ड किसी को लगता है। क्योंकि परमेश्वर की व्यवस्था छोटे से विषय में भी टल नहीं सक्ती और पाप का कठिन दण्ड जो बहुधा इसी जगत में भी देख पड़ता उस्से निश्चय जाना जाता है कि पाप की प्रकृति अति दुष्ट है और परलोक में परमेश्वर ने उस का अकथनीय और असह्य दण्ड ठहराया होगा॥

वेदविद्वान का बचन॥ क्या आप का यह वर्णन ख्रिष्टीय शास्त्र की शिक्षा के समान है॥

सत्यार्थी का वचन॥ हां पण्डितजी मेरी समझ में यह सारा वर्णन ख्रिष्टीय शास्त्र की शिक्षा के ठीक समान है परन्तु मैं उस के दो एक वचन कहूंगा तो आप विचार कीजिये कि ऐसा है कि नहीं॥

ख्रिष्टीय शास्त्र का बचन॥ जैसा कि एक मनुष्य के कारण से पाप ने और पाप के कारण से मृत्यु ने जगत में प्रवेश किया इसी रीति से मृत्यु समस्त मनुष्यों पर फैल गई क्योंकि सभों ने पाप किया इति॥

शारीरिक स्वभाव मृत्यु है परन्तु आत्मिक स्वभाव जीवन और कुशल है इस कारण कि शारीरिक स्वभाव परमेश्वर की शत्रुता है क्योंकि वह परमेश्वर की व्यवस्था के वश में नहीं है न हो सक्ता है सो जो शारीरिक हैं परमेश्वर को प्रसन्न नहीं आ सक्ते इति॥

परमेश्वर के विषय में जो कुछ जाना जा सक्ता है मनुष्यों पर प्रगट है क्योंकि परमेश्वर ने उन पर प्रगट किया है इस लिये कि उस के गुण जो अदृश्य हैं अर्थात उस का अनन्त पराक्रम और ईश्वरत्व जगत की उत्पत्ति से सृष्टि पर दृष्टि करने से जाना जाता है यहां लों कि वे निरुत्तर हैं क्योंकि उन्हों ने परमेश्वर को चीन्हके उस के ईश्वरत्व को योग्य उस की महिमा नहीं किई अथवा उस का धन्य न माना परन्तु अपनी भावना से बहक गये और उन के अन्तःकरण अज्ञानता से अन्धि-

यारे हुए। वे अपने को ज्ञानी ठहराके मूरख बन गये और उन्हों ने अविनाशी परमेश्वर की महिमा को विनाशमान मनुष्य के और पक्षियों और पशुओं और कीड़े मकोड़ों के स्वरूप से बदल डाला और जैसा कि उन्हों ने न चाहा कि परमेश्वर का ज्ञान रक्खें परमेश्वर ने भी उन्हें मूढ़ बुद्धि में छोड़ दिया कि वे अयोग्य कर्म करें। और यद्यपि वे परमेश्वर की आज्ञा को जानते हैं कि ऐसे कार्य करनेहार मार डालने के योग्य हैं तथापि केवल आपही नहीं करते परन्तु करनेहारों से भी प्रसन्न होते हैं इति॥

छल न खाओ परमेश्वर छिराया नहीं जाता क्योंकि जो कुछ मनुष्य बोता है सोही लवेगा क्योंकि जो कोई अपने देह के लिये बोता है सो देह से नष्टता लवेगा परन्तु जो आत्मा के लिये बोता है सो अनन्त जीवन लवेगा इति॥

सत्यार्थी का बचन॥ इन बचनों के समान ख्रिष्टीय शास्त्र के अनेक बचन मैं कह सक्ता हूं जिन से मेरा ऊपर का वर्णन सिद्ध होता है और उन से पाप की कठिन दुष्टता और उस का कड़ुवा नाशिक फल और मनुष्य की पापी दशा और उस के अनन्त दण्ड की योग्यता स्पष्ट रूप से प्रकाशित होती है। क्योंकि जब लों मनुष्य अपनी पापसंयुक्त दुर्दशा से भली भान्ति सज्ञान न होवे तो उस्से छुटकारा पाने की इच्छा क्योंकर करे। इस कारण ख्रिष्टीय शास्त्र के विशेष अभिप्राय और उस की मूल शिक्षा की एक मूल बात यह है कि परमेश्वर की दृष्टि में सारे जातिगण अधम और पापी और नरक के योग्य हैं॥

वेदविद्वान का बचन॥ यदि ख्रिष्टीय शास्त्र की मूल शिक्षा ऐसी है और उस में मनुष्यजाति की आत्मिक दशा का ऐसा शोकजनक वर्णन लिखा है तो आप उस शास्त्र को मंगलसमाचार क्योंकर कह सक्ते हैं॥

सत्यार्थी का बचन॥ पण्डितजी इस कारण से ख्रिष्टीय शास्त्र का ठीक

नाम मंगलसमाचार है कि उस में मनुष्यजाति की इस अति दुर्दशा की यथायोग्य औषध वर्णित होती है और उस शास्त्र में इस दुर्दशा का ऐसा स्पष्ट वर्णन इस लिये लिखा है कि जिसतें मनुष्य अपनी सत्य दशा का यथार्थ ज्ञान पाके उस औषध के ग्रहण करने पर प्रसन्न और सिद्ध होवें। सो अब मैं खिष्टीय शास्त्र की तत्त्वज्ञानसम्बन्धी मूल शिक्षा की एक दूसरी बात बतलाता हूं अर्थात यिशू खिष्ट पापी मनुष्य को इस दुर्दशा से क्योंकर बचाता है॥

सो इस भारी और कठिन उद्योग को सफलता के संग निर्वाह करने के निमित्त दो बात अवश्य थीं अर्थात पहिले मनुष्य के पाप को किसी प्रकार से नाश करना अथवा उस के दण्ड का एक योग्य तुल्यबल बदला पाना जिसतें मनुष्य उस दण्ड से बचें। दूसरा मनुष्य के पापी मन को उस रीति से सुधारना जिसतें वह आत्मिक स्वभाव होके अपनी इच्छा से ईश्वरीय सारी व्यवस्था को सदा सर्वदा पालन किया करे। सो श्री यिशू खिष्ट ने अपने जीवन और मृत्यु और पुनरुत्थान से इन दो बड़े उद्योगों को सम्पूर्ण समाप्त किया॥

वेदविद्वान का बचन॥ इसी प्रकार से प्रसिद्ध भगवद्गीता में उस के कर्त्ता ने कृष्ण को अपने बिषय में यह कहते हुए बखाना है॥

> यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानि र्भवति
> भारत अभ्युत्थान मधर्मस्य तदा
> त्मानं सृजाम्यहम परित्राणाय
> साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम
> धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे।

अर्थात हे अर्जुन जब २ धर्म की घटती और अधर्म की उत्पत्ति होती है तब मैं अपने को उत्पन्न करता हूं साधुओं की रक्षा के लिये और

दुष्टों के नाश के निमित्त मैं युग २ में धर्म के स्थापन के अभिप्राय से जन्म पाता हूं इति॥

सत्यार्थी का बचन॥ इन बचनों से पण्डितजी उन के कर्त्ता का बोध निःसन्देह प्रगट होता है कि मनुष्य को उस की दुर्दशा से बचाने के लिये एक तारणकर्त्ता अवश्य चाहिये और यद्यपि कृष्ण इत्यादि देवताओं के वृत्तान्त में जैसे भारतीयशास्त्रनिरूपण में चर्चा हो चुकी कोई ऐसा यथायोग्य उपाय जिस से पापी मनुष्य का उद्धार होवे वर्णित नहीं होता है बरन केवल पापियों का बिनाश अभिप्रेत है तथापि मनुष्यों की दुर्दशा का बोध इन बचनों से प्रत्यक्ष देख पड़ता है और यह बोध कुछ न कुछ सारे जातिगणों में है और परमेश्वर ने उस को उन के मन में इस इच्छा से उत्पन्न किया होगा कि वे पाप से उस का जो क्रोध है सो भली भान्ति जान लेवें और उस के ठहराय हुए मुक्तिदाता के शरण में आवें। क्योंकि इस में सन्देह नहीं है कि परमेश्वर की व्यवस्था अति दृढ़ और अटल है परमेश्वर को छोड़ किसी को सामर्थ नहीं है कि उस को तनिक भी अटकावे और इस प्रकरण में उस व्यवस्था के तीनों भाग अर्थात आत्मिक और मानसिक और शारीरिक समान हैं। शारीरिक व्यवस्था की एक बात यह है कि जलनशील वस्तु अग्नि से जल जाती हैं और अग्नि के लगने से मनुष्य का शरीर अति कठिन पीड़ा पाता है और परमेश्वर को छोड़ किसी की सामर्थ नहीं है कि इस व्यवस्था को अटकावे इसी प्रकार से आत्मिक व्यवस्था यह है कि पाप से आत्मिक और मानसिक और शारीरिक मृत्यु होती है और परमेश्वर को छोड़ किसी की सामर्थ नहीं है कि इस व्यवस्था को अटकावे इस दशा में पापियों का उद्धार करना ऐसा काम ठहरता है जैसे सृष्टि के व्यवहार उलटाय देना जो केवल परमेश्वर से हो सक्ता है परन्तु परमेश्वर अपनी व्यवस्था को क्योंकर उलटावे जब व्यवस्था आप भली और

यथार्थ है और उस के पालन करने से सारे लोकों का कल्याण और सुःख होता है तो उस के भंजकों के सुःख के निमित्त उस को उलटाय देना किस प्रकार से उचित हो सक्ता है क्योंकि जब व्यवस्था इस रीति से उलटाई गई तो उस के पालकों का आसरा कहां रहा॥

वेदविद्वान का वचन॥ बहुधा मनुष्यों के मन में यह शोच है कि प्रायश्चित्त के द्वारा से पाप नष्ट होता है क्या आप के विचार में यह ठीक और यथार्थ है कि नहीं॥

सत्यार्थी का वचन॥ यदि प्रायश्चित्त योग्य और तुल्यबल हो तो यह विचार ठीक और यथार्थ है परन्तु पशुओं के बलिदान करने से किसी का पाप क्योंकर कट सक्ता है। यह बात कि सारे जातिगणों के बीच बलिदान की रीति प्रचलित हो गई है निःसन्देह एक बड़े आश्चर्य्य की बात है क्योंकि ध्यान करने से कुछ सम्भव देख नहीं पड़ता है कि पशुओं के जीव मारने से परमेश्वर प्रसन्न होके पाप को क्षमा करेगा और जो मनुष्य बलिदान करते हैं सो बहुधा उस के विषय में अति अयोग्य विचार करते हैं क्योंकि वे बहुधा ऐसी भावना करते हैं कि देवता अथवा देवी उस का मांस खाने से और उस का रुधिर पीने से सन्तुष्ट होवेगी। परन्तु बलिदान का ठीक अर्थ और उस के स्थापन होने का मूल अभिप्राय इस्से बहुत भिन्न है यह रीति उस समय स्थापित हुई जब कि पहिला पुरुष और स्त्री पाप में पतित हुए तब परमेश्वर ने आज्ञा दिई कि पापी मनुष्य बलिदान करके उस का भजन करे और उस का यह अर्थ था कि मनुष्य पापी होके मृत्यु के योग्य है परन्तु एक बदला ठहराके जो उस के पाप का दण्ड उस के सन्ती भोग करे उस को बलि करके अपना पाप मान लेता है। सो यह रीति भी जो आदि में स्थापित हुई सारे जातिगणों में प्रचलित हो रही है परन्तु इस का मूल अभिप्राय यह था कि परमेश्वर संसार के पाप के प्रायश्चित्त के लिये

एक योग्य तुल्यबल बलिदान ठहरावेगा और पशुओं के जो बलिदान थे सो इस योग्य बलिदान के चिन्ह और दृष्टान्तपूर्वक लक्षण ठहरे। सो वह योग्य तुल्यबल बलिदान यिसू ख्रिष्ट आपही है और प्रायश्चित्त की रीति अपना प्राण बलि करके वह संसार का पाप नाश करता है। और अब वह विषय जिस पर आप ने प्रश्न किया आप की समझ में भली भान्ति आवेगा अर्थात यिसू ख्रिष्ट को इतना दुःख सहना किस कारण से अवश्य था इसी कारण से यह अवश्य था कि वह संसार के पाप का प्रायश्चित्त करने को जगत में आया और ऐसे निष्पाप महानुभाव का दुःख सहना और मर जाना संसार के पाप के दण्ड के लिये एक योग्य तुल्यबल बदला ठहरता है॥

वेदविद्वान का बचन॥ आप का अभिप्राय क्या यह है कि यिसू ख्रिष्ट की प्रायश्चित्तरूपी मृत्यु और पुण्य प्रताप के कारण से परमेश्वर पापी मनुष्य का पाप क्षमा कर सक्ता है॥

सत्यार्थी का बचन॥ हां पण्डितजी जब पापी मनुष्य सीधे अन्तःकरण से अपना पाप ग्रहण कर और उस्से पछतावा कर यिसू ख्रिष्ट पर विश्वास लाता है तो यिसू ख्रिष्ट का पुण्य और उस की मृत्यु उस पापी के दण्ड के सन्ती प्रायश्चित्त की रीति ग्रहण होती है और विश्वासी का पाप इस रीति से नष्ट होता है अर्थात परमेश्वर अपनी सामर्थ से उस विश्वासी के लिये उस के पाप का स्थापित फल नष्ट करता है। क्योंकि यद्यपि परमेश्वर ऐसा करके अपनी व्यवस्था का बचन उलटाय तो देता है तथापि उस का मूल तात्पर्य स्थापित करता है इस कारण कि यिसू ख्रिष्ट ने आप उस के सम्पूर्ण दण्ड का तुल्यबल दुःख अपनी दैव्य प्रकृति में सहके भोग किया है॥

वेदविद्वान का बचन॥ यदि यिसू ख्रिष्ट ने अपने दुःख और मृत्यु से प्रायश्चित्त की रीति संसार के पाप का दण्ड भोग किया तो किस कारण

मनुष्यों को इस संसार में इतना दुःख होता है। क्या आप ने नहीं कहा कि उन की सारी दुर्दशा उन के पाप ही के कारण से होती है॥

सत्यार्थी का बचन॥ हां पण्डितजी मैं ने कहा कि मनुष्यों का पाप उन की दुर्दशा का कारण तो होता है। परन्तु मैं ने यह भी बतलाया कि मनुष्यों का दुःख जो इस संसार में होता है केवल उन के पाप का दण्ड अथवा बदला लेने की रीति पर नहीं बरन उन के मानसिक आत्मिक सुधराव के लिये शास्ति की रीति एक अति योग्य उपाय जान्ना चाहिये। क्योंकि पाप का दुःखदायक फल नाश करने को छोड़ मनुष्य की मुक्ति के लिये एक दूसरी बात अति अवश्य है अर्थात उस का एक नवीन स्वभाव जो पाप से घिन करके अलग रहेगा उत्पन्न करना अवश्य है। क्योंकि यद्यपि किये हुए पाप क्षमा भी हुए तथापि जो मनुष्य का मन पाप पर लगा रहता तो यिसू ख्रिष्ट के प्रायश्चित्त से यह अति दुष्ट फल निकलता अर्थात कि पापी पाप करते २ उस के दण्ड से बचा रहता और इस रीति से पाप क्योंकर नष्ट हो सक्ता सो यह दूसरा विषय भी अर्थात मनुष्य का एक नवीन आत्मिक स्वभाव उत्पन्न होना सो यिसू ख्रिष्ट के प्रायश्चित्त के द्वारा से होता है॥

वेदविद्वान का बचन॥ आप कृपा करके बतलाइये इस भारी प्रकरण में ख्रिष्टीय शास्त्र की मूल शिक्षा कैसी है॥

सत्यार्थी का बचन॥ इस प्रकरण में ख्रिष्टीय शास्त्र की मूल शिक्षा यह है कि मनुष्य का यह नवीन आत्मिक स्वभाव केवल पवित्र आत्मा की सामर्थ से हो सक्ता है क्योंकि सचमुच यह एक नवीन आत्मिक जन्म और उत्पत्ति के समान ठहरता है। अब यिसू ख्रिष्ट के प्रायश्चित्त के द्वारा से पवित्र आत्मा का सहायक अनुग्रह मनुष्य के लिये प्राप्त होता है। यदि उस प्रायश्चित्त के कारण से ईश्वरीय व्यवस्था की सम्पूर्ण प्रतिष्ठा और महिमा हुई न होती तो उस व्यवस्था के भंजकों को

पवित्र आत्मा का अनुग्रह देने के सन्ती केवल उन के पाप का दण्ड देना उचित होता। परन्तु अब यिसू ख्रिष्ट ने अपने प्रतापी प्रायश्चित्त से मेल कराया है और मनुष्य उस के द्वारा परमेश्वर से ग्राह्य रीति पर प्रार्थना कर सक्ता है और परमेश्वर भी उस के सुनने पर सिद्ध होता है इस के अनुसार यिसू ख्रिष्ट ने कहा॥

श्री यिसू ख्रिष्ट का वचन॥ सो मैं भी तुम्हें कहता हूं कि मांगो तो तुम्हें दिया जायगा ढूंढ़ो तो पाओगे खटखटाओ तो तुम्हारे लिये खोला जायगा क्योंकि हर एक जो मांगता है लेता है और जो ढूंढता है सो पाता है और जो खटखटाता है उस के लिये खोला जायगा। तुम्में कौन ऐसा पिता है यदि उस का पुत्र रोटी मांगे वह उस को पत्थर दे अथवा मछली मांगे मछली की सन्ती उसे सर्प दे अथवा अंडा मांगे वह उसे बिच्छू दे। सो यदि तुम बुरे होके अच्छे दान अपने बालकों को देने जानते हो तो कितना अधिक तुम्हारा स्वर्गीय पिता उन्हें जो उस्से मांगते हैं पवित्र आत्मा देगा॥

वेदविद्वान का बचन॥ पवित्र आत्मा किस रीति से मनुष्य के मन में इस नवीन स्वभाव को उत्पन्न करता है॥

सत्यार्थी का बचन॥ पण्डितजी इस प्रकरण की तत्वज्ञानसम्बन्धी शिक्षा विस्तार के साथ ख्रिष्टीय शास्त्र में नहीं मिलती है क्योंकि उस के विषय में यिसू ख्रिष्ट ने आप कहा॥

श्री यिसू ख्रिष्ट का बचन॥ पवन जिधर चाहती है चलती है और तू उस का शब्द सुनता है परन्तु नहीं जानता कि वह कहां से आती और किधर को जाती है ऐसाही हर एक है जो आत्मा से उत्पन्न हुआ इति॥

सत्यार्थी का बचन॥ सच यह है पण्डितजी कि आत्मा का विषय अति निगूढ़ है और भली भान्ति कोई नहीं बतला सक्ता है कि मनुष्य

की आत्मा उस के देह में किस रीति से संयुक्त रहती है तो क्या आश्चर्य कि पवित्र आत्मा मनुष्य की आत्मा पर किस रीति से गुण करता है यह भी एक अति निगूढ़ बात होवे। परन्तु इस प्रकरण की व्यवहार-सम्बन्धी शिक्षा ख्रिष्टीय शास्त्र में तो लिखी है और इस्से जाना जाता है कि पवित्र आत्मा मनुष्य के मन में भले बुरे का जो स्वाभाविक विवेक होता है उस को अधिक बल और स्पष्टता देता है। तब मनुष्य अपनी दुर्दशा पर ध्यान करके सोचने लगता है कि इस का क्या कारण है और पवित्र आत्मा की शिक्षा से उस को ज्ञान होता है कि इस का मूल कारण पाप है इस रीति से पवित्र आत्मा बहुधा मनुष्य को उस के पाप के फलों के द्वारा उस की पापी दशा से सचेत और सज्ञान कर देता है। फिर जब वह बड़ी चिन्ता करने लगता है कि इस का क्या अन्त होगा तो पवित्र आत्मा यिसू ख्रिष्ट की प्रायश्चित्तरूपी मृत्यु का वृत्तान्त उस पर प्रगट करके पाप की कठिन दुष्टता उस को भली भान्ति दिखाता है और यों पाप से मन का सच्चा पछतावा उस्से कराता है इस के अनुसार ख्रिष्टीय शास्त्र की व्यवहार सम्बन्धी मूल शिक्षा की पहिली बात यह है कि प्रत्येक मनुष्य को अपने पापों का मन से पछतावा करना अवश्य है॥

वेदविद्वान का बचन॥ यिसू ख्रिष्ट के वृत्तान्त से मनुष्य के मन में यह सच्चा पछतावा क्योंकर उत्पन्न होता है॥

सत्यार्थी का बचन॥ पण्डितजी ख्रिष्टीय शास्त्र की व्यवहारसम्बन्धी शिक्षा सारी और धार्मिक शिक्षा से इस बात में भिन्न है कि जिन २ कर्त्तव्य कर्मों की आज्ञा वह शास्त्र करता है सो केवल कर्त्तव्य और उचित कर्मों की रीति पर तो नहीं वरन यिसू ख्रिष्ट से संयुक्त करके बतलाता है ऐसा कि विश्वासी की इच्छा उन कर्मों की ओर आकर्षित होती है। अब देखिये कि पाप से पछतावा करना सारे पापियों के लिये एक

प्रत्यक्ष कर्त्तव्य कर्म है परन्तु केवल इस बात के जानने से पापी का मन पछतावा करने पर सिद्ध नहीं होता है क्योंकि जब अपने पाप से सज्ञान होने के कारण मन में चिन्ता होने लगती है तो बहुधा इस के संग आनेवाले दण्ड के विषय में अत्यन्त बड़ा भय भी उत्पन्न होता है और इस कारण से मन कुछ कठोर हो जाता है। इस दशा में सच्चा पछतावा करना बड़ा कठिन है क्योंकि सच्चा पछतावा भविष्यत के दण्ड की ओर तो नहीं पर भूत के पाप की दुष्टता की ओर विशेष करके दृष्टि करता है और उस के कारण शोक करता है। परन्तु जब यिसू खिष्ट की प्रायश्चित्तरूपी मृत्यु का वृत्तान्त जाना जाता है तो पाप की कठिन दुष्टता एक नवीन प्रकार से मन पर प्रगट होती है क्योंकि यिसू खिष्ट का प्राणघातक सचमुच मनुष्य का पाप ही था और जब पापी मनुष्य ध्यान करता है कि मेरे ही पापों के कारण से उस कोमल प्रेमी महानुभाव को इतना कठिन दुःख सहना अवश्य था और वह भी मेरी मुक्ति के निमित्त उस के सहने पर प्रसन्न था तो उस के अद्भुत प्रेम के कारण पापी का मन कोमल हो जाता और वह अपने पाप का मन से बड़ा ही पछतावा और घिन भी करता है॥

वेदविद्वान का वचन॥ क्या खिष्टीय शास्त्र की सारी व्यवहारसम्बन्धी शिक्षा इस प्रकार से यिसू खिष्ट के संग संयुक्त होती है॥

सत्यार्थी का वचन॥ हां पण्डितजी समस्त पापी मनुष्यों के लिये उस सारी शिक्षा का मूल तात्पर्य और खिष्टीय शास्त्र की विशेष आज्ञा यह है कि तुम श्री यिसू खिष्ट पर विश्वास लाओ तो तुम मुक्ति पाओगे इति। सो मैं ने अभी बतलाया कि जो कोई इस रीति से उस पर सच्चा विश्वास लाता है तो अवश्य निश्चय अपने पापों के कारण बड़ा शोक और पछतावा करता है। फिर खिष्टीय शास्त्र यिसू खिष्ट का सारा अद्भुत वृत्तान्त प्रगट करके उस पर विश्वास लाने के लिये एक उचित योग्य कारण

बतलाता है क्योंकि उस वृत्तान्त के अनुसार यिसू ख्रिष्ट पाप का सत्य प्रायश्चित्त और नाश कर्त्ता है और सर्व प्रकार से पापी के उद्धार करने पर समर्थ और सिद्ध भी है। फिर जब पश्चात्तापी मुमुक्षु पवित्र आत्मा का सहायक अनुग्रह से यिसू ख्रिष्ट की अद्भुत सामर्थ और पुण्य प्रताप को और उस के स्वाभाविक और व्यावहारिक गुणों को देखता है तो उस के मन में दृढ़ आसरा उत्पन्न होता कि इसी के द्वारा से मेरी मुक्ति हो सक्ती है फिर उस पर मन का विश्वास धरके वह उस का शिष्य हो जाता है॥

वेदविद्वान का बचन॥ जब मनुष्य इस प्रकार से यिसू ख्रिष्ट का शिष्य हो गया हो तो उस का आत्मिक सुधराव और धार्मिक चाल और व्यावहारिक पवित्रता के लिये ख्रिष्टीय शास्त्र कैसी शिक्षा करता है॥

सत्यार्थी का बचन॥ उस शिक्षा का मूल तात्पर्य वही है जो मैं ने अभी बतलाया अर्थात यिसू ख्रिष्ट पर नित्य विश्वास लाते रहना और उस में मिले रहना। और देखिये पण्डितजी कि इस में सारा धर्म और भलाई और पवित्र चाल इत्यादि कर्त्तव्य कर्म सबके सब समाप्त हैं और यिसू ख्रिष्ट के संग संयुक्त होने से यह धर्मोपदेश अति गुणकारी और फलदायी है। क्योंकि जो कोई यिसू पर सच्चा विश्वास लाता है तो वह उस के अद्भुत प्रेम के कारण अवश्य निश्चय अपने सारे अन्तःकरण से उस को भी प्यार करता है ऐसे प्रेमी समदुःखी उपकारक को क्योंकर प्यार न करे। फिर जिस को हम प्यार करते हैं उस को प्रसन्न करने चाहते हैं अर्थात शक्य भर उस की इच्छा पर चलते हैं और यिसू ख्रिष्ट का बचन अपने शिष्यों से यह है कि यदि तुम मुझ को प्यार करते हो तो मेरी आज्ञाओं को पालन करो इति और उस की आज्ञा कैसी हैं सो उस के स्वाभाविक और व्यावहारिक गुणों से अनुमान करके सब कोई जान सक्ता है विस्तार के भय से मैं इस समय नहीं बतला सक्ता

हूं। इस रीति से सच्चा शिष्य सारे कर्त्तव्य कर्मों को केवल आज्ञा मिलने के कारण अथवा दण्ड के भय से तो नहीं बरन प्रेम के आकर्षण से सम्पूर्ण करने चाहता है। इस को छोड़ शिष्य यिसू ख्रिष्ट को अपना सब से आत्मीय मित्र जानके उस की आत्मिक सङ्गत में सदा रहता है और जिस की सङ्गत में जो कोई रहता है सो होते २ उस के समान बनता जाता है॥

वेदविद्वान का वचन॥ हे मेरे मित्र निर्बल पापी स्वभाव का मनुष्य ऐसे शुद्ध निषकलंक उदाहरण के समान क्योंकर बन सक्ता है॥

सत्यार्थी का वचन॥ मैं ने बतलाया पण्डितजी कि पवित्र आत्मा के अनुग्रह से शिष्य को एक नवीन स्वभाव प्राप्त होता है सो वही पवित्र आत्मा निरन्तर अन्त लों उस की सहायाता किया करता है और शिष्य का प्रेमी समदुःखी उपकारक यिसू ख्रिष्ट भी आत्मिक रीति से उस के सङ्ग रहता है। क्योंकि यद्यपि परमेश्वर का पुत्र पापी मनुष्य के उपकार के लिये मनुष्य रूप धारण कर इस जगत में मनुष्य की रीति दुःखी रहा और मर भी गया जिसतें कुभागी मनुष्य से समदुःखी हो सके और उस के पाप का प्रायश्चित्त करे तथापि सचमुच अपनी दैव्य प्रकृति की रीति से वह परमेश्वर ही है और परमात्मा होके सर्वव्यापी है। इस कारण से अपने सारे शिष्यों के सङ्ग सर्व स्थानों में आत्मिक रीति से उपस्थित होता है इस के अनुसार उस ने अपने शिष्यों से कहा कि जहां दो अथवा तीन मेरे नाम पर इकट्ठे हों वहां मैं उन के मध्य में हूं इति। फिर जब उस ने अपने शिष्यों को अन्तवाली आज्ञा दिई कि समस्त जगत में जाके सारे जातिगणों में मंगलसमाचार प्रचारो तो उन की शान्ति के लिये यह भी कहा कि देखो मैं सर्वदा जगत की समाप्ति लों तुम्हारे सङ्ग हूं इति॥

वेदविद्वान का वचन॥ आप के इस वर्णन में पण्डितजी एक बड़ा

कठिन भेद देख पड़ता है क्योंकि आप यिसू खिष्ट को भी ईश्वर कहते हैं और पवित्र आत्मा का वर्णन भी ईश्वर की रीति करते हैं और पहिले आप ने किसी तीसरे का वर्णन जिस को आप ने पिता कहा ईश्वर के समान किया और फिर भी आप कहते हैं कि परमेश्वर एकही है क्या आप के इस वर्णन में एक प्रकार की विरुद्धता देख नहीं पड़ती है और खिष्टीय शास्त्र की शिक्षा क्या ऐसी ही है॥

सत्यार्थी का बचन॥ यह विषय जिस पर आप प्रश्न करते हैं खिष्टीय शास्त्र की तत्वज्ञानसम्बन्धी शिक्षा की एक निगूढ़ बात है जो परमेश्वर के असीम भाव के समान मनुष्य की सीमाबन्ध बुद्धि में नहीं आ सक्ती है इस प्रकरण में हम केवल इतना ही जान सक्ते हैं जितना परमेश्वर प्रसन्न हो हम पर प्रगट करे सो खिष्टीय शास्त्र के अनुसार परमेश्वर एकही है परन्तु ईश्वरत्व में तीन रूपों के नाम आते हैं अर्थात पिता पुत्र पवित्रआत्मा और ये तीनों एक प्रकार से भिन्न हैं और मनुष्य के उद्धार के लिये भिन्न २ काम भी करते हैं क्योंकि पिता मनुष्य के उद्धार के निमित्त पुत्र को जगत में भेजता है और पुत्र पिता की आज्ञानुसार जगत में आके संसार के पाप का प्रायश्चित्त करता है और पवित्रआत्मा पुत्र की बिनती से और पिता की आज्ञा से मनुष्य के मन में आके उस को प्रकाशित और पवित्र कर देता है। परन्तु दूसरे प्रकार से ये तीनों एकही हैं क्योंकि सामर्थ और महिमा और पवित्रता में समान हैं और उन की इच्छा और भाव भी एकही है इस लिये वे तीनों एकही परमेश्वर ठहरते हैं। सो यह विषय यद्यपि मनुष्य की बुद्धि के अतिरिक्त तो है तथापि उस में कुछ विरुद्धता सिद्ध नहीं होती है क्योंकि जिस प्रकार से वे तीन हैं उस प्रकार से वे एक नहीं हैं और मनुष्य केवल यह समझ नहीं सक्ता है कि वे किस रीति से एक हैं और किस रीति से तीन हैं॥

वेदविद्वान का वचन। आप कृपा करके बतलाइये कि यिशू ख्रिष्ट किस कारण से परमेश्वर का पुत्र कहलाता है क्या ईश्वरत्व में सचमुच पितृता और पुत्रता का सम्बन्ध है॥

सत्यार्थी का वचन॥ ईश्वरत्व में पितृता और पुत्रता का वह सम्बन्ध नहीं है जो मनुष्यों में है क्योंकि पिता और पुत्र दोनों अनादि बखाने जाते हैं परन्तु इन वचनों से ईश्वरत्व में ठीक कैसा सम्बन्ध कहा जाता है कोई मनुष्य नहीं बतला सक्ता है ईश्वर के ऐसे निगूढ़ विषय में मनुष्य की बुद्धि क्या सामर्थ रखती है। कदाचित इन नामों से उन के समभाव और अति आत्मीय प्रेम और परस्पर सम्मति मेल इत्यादि निगूढ़ और अद्भुत आत्मिक सम्बन्ध कहा गया हो परन्तु जब इस विषय का स्पष्ट वर्णन ईश्वरीय शास्त्र में नहीं लिखा है तो बुद्धिमान धर्मशील मनुष्य अपनी बुद्धि के अहंकार को दबाके बड़ी दीनता के संग शास्त्र का लिखा हुआ बचन ग्रहण करेंगे क्योंकि मन की सुधराव और सत्य मुक्ति प्राप्त करने के लिये वही यथेष्ट उपयुक्त है। आप की इच्छा हो तो जितना और मैं कहने चाहता हूं एक और बार सत्सङ्ग करके मैं आप के पास कहूंगा॥

ग्रन्थकर्त्ता का बचन॥ इस पर हम फिर बिदा हुए॥

इति मतपरीक्षा के द्वितीय खण्ड का सातवां सत्सङ्ग

समाप्त हुआ॥



आठवां सत्सङ्ग।

ख्रिष्टीय विश्वास के धार्मिक फलों की चर्चा।

ग्रन्थकर्त्ता का वचन॥ जब वेदविद्वान और सत्यार्थी अपने अन्तवाले सम्वाद करने को इकट्ठे हुए तो वर्षा की ऋतु बीत गई थी और सुखदायक मनभावन शीत काल का आरम्भ हुआ इस कारण हम तीनों मनुष्य ऐक्य करके उस पीपल वृक्ष के पास गये जिस की छाया तले हमारा सब से पहिला सत्सङ्ग हुआ। वह वृक्ष गंगा के ऊंचे एक करारे पर लगा था और उस के पास बैठके हम उस नदी की बड़ी धारा को दूर लों देख सक्ते थे उस धारा के ऊपर बहुतेरी नौका पश्चिम की ओर से आके प्रवाह और पवन के बल से पूर्वी दिशा को बड़ी शीघ्रता से बह जाती थीं। ऊपर आकाश अत्यन्त सुस्पष्ट और फर्का था और सूरज के तेजोमय किरणों से गंगा का जल दर्पण के समान चमका था और चारों ओर की भूमि वनस्पति इत्यादि वर्षा काल के मेघों से सन्तुष्ट और हरयाले हो अत्यन्त सुन्दर और शोभायमान देख पड़ते थे। यह दशा देख और ठंढी विश्रान्तिक पवन से मगन हो हम उसी स्थान पर बैठ गये जहां पहिले बैठे थे और वेदविद्वान इस रीति से वार्त्ता करने लगा॥

वेदविद्वान का वचन॥ हे मेरे मित्र जब से हम ने पहिले इसी स्थान पर सम्वाद किया तब से मैं ने आप का बहुत सा वर्णन सुन लिया है और उस के कारण से मेरे मन पर नाना प्रकार के परिवर्त्त बीत गये हैं। हिन्दू शास्त्रों पर जो २ दोषापत्ति आप ने बतलाई उन के कारण पहिले मेरे मन में एक बड़ी क्लेशपूर्वक तपन हुई परन्तु सुनते २ मैं ने निश्चय जाना कि आप कुछ अधर्मता अथवा द्वेष की रीति से तो नहीं

वरन निर्मल सत्य के खोज में ऐसा वर्णन करते हैं इस के पीछे जब मैं ने देखा कि आप के प्रमाण तो सिद्ध और यथार्थ हैं तब मेरे मन के ऊपर एक अति काला अन्धकार फैल गया मानो कि सारा आकाश काली २ घटा से छिप गया। फिर इस कष्ट को भी कुछ समय लों सहके ऐसा हुआ कि जब आप यिसू ख्रिष्ट का वृत्तान्त सुनाते थे तब आप का वर्णन मेरे मन को ऐसा सुखदायक था जैसी सूखी धरती को जल की वर्षा से सुख होता है। अब आसरा है कि ईश्वर की कृपा से जो बादल मेरे हृदयाकाश में छाय रहे थे सो भी खुल जाते हैं और अन्त को ऊपर के आकाश के समान सब पर्छा हो जायगा। परन्तु अबलों भी दो एक बातें रह गई हैं जिन के विषय मेरा कुछ सन्देह है इन में से एक यह है कि जो कुछ यिसू ख्रिष्ट के सद्गुण और उस की मूल शिक्षा के विषय में आप ने कहा सो क्या उस के समान व्यवहार और चाल चलन उस के शिष्यों में प्रगट होना चाहिये कि नहीं। यदि प्रगट होना चाहिये तो क्या प्रगट होता है कि नहीं क्योंकि मैं ने बहुधा ऐसा सुना है कि जो मनुष्य ख्रिष्टीय शिष्य कहलाते हैं सो इस्से बहुतही भिन्न और विरुद्ध चाल चलते हैं और यदि यिसू ख्रिष्ट के शिष्य अन्य मनुष्यों से कुछ उत्तम और श्रेष्ठ नहीं होते हैं तो उस के विश्वास से क्या धार्मिक फल उत्पन्न होता है॥

सत्यार्थी का वचन॥ इस विषय में पण्डितजी पहिले सच्चे और झूठे शिष्यों का विवेक करना अवश्य है क्योंकि मनुष्य की भ्रष्टता के कारण ख्रिष्टीय धर्म का प्रत्यक्ष स्वरूप जो इस जगत में देख पड़ता है सो उस के मूल तत्व से बहुत भिन्न हो गया है। जिस रीति से यहूदी लोग चाहते थे कि यिसू ख्रिष्ट एक सांसारिक राज स्थापन करे उसी रीति से उस के शिष्यों ने उस के धर्म में नाना प्रकार की सांसारिक रीतों को मिलाके उस का प्रत्यक्ष स्वरूप बदल डाला है। इन में से एक रीति यह

है कि जिस २ मनुष्य को क्या बालक क्या बूढ़ा हो यिसू ख्रिष्ट की आज्ञानुसार ख्रिष्टीय जल संस्कार जो शिष्य होने का लक्षणार्थ नियम है शारीरिक रीति पर भी दिया गया है सो शिष्य कहलाता है परन्तु ख्रिष्टीय शास्त्र के अनुसार केवल वे मनुष्य सच्चे शिष्य होते हैं जिन्हों ने मन से पाप का पछतावा कर यिसू ख्रिष्ट पर विश्वास ला उस की सेवा को ग्रहण किया है। ऐसे मनुष्यों को छोड़ जितने और ख्रिष्टीय शिष्य कहलाते हैं सो केवल सांसारिक ख्रिष्टीय हैं और उन की चाल से ख्रिष्टीय धर्म के विषय में कुछ जाना नहीं जा सक्ता है। फिर जितने सच्चे शिष्य भी होते हैं सो ख्रिष्टीय धर्म की उत्तमता अपनी चाल में निर्दोषता और निर्मलता के संग प्रगट नहीं करते हैं क्योंकि उन के लिये भी यह जगत परीक्षा और सुधराव का स्थान है और वे बड़ी निर्बलता के संग यिसू ख्रिष्ट की आज्ञाओं पर चलते हैं॥

वेदविद्वान का बचन॥ क्या आप का अभिप्राय यह है कि सच्चे शिष्यों के गुण और चाल इस जगत में अन्य मनुष्यों की चाल से कुछ उत्तम नहीं होते हैं॥

सत्यार्थी का बचन॥ पण्डितजी मेरा अभिप्राय यह नहीं है इस के विरुद्ध में कहता हूं कि सच्चे शिष्य अपने स्वाभाविक और व्यावहारिक गुणों की रीति अन्य मनुष्यों से उत्तम होंगे और सच्चे ख्रिष्टीय विश्वास से क्या २ धार्मिक फल उत्पन्न होते हैं मैं इस का थोड़ा सा वर्णन करता हूं। सो जिस रीति से पाप का पहिला फल यह है कि पापी की आत्मा परमेश्वर से भिन्न हो जाती और इस कारण से उस की सारी प्रकृति उलट पुलट हो जाती उसी रीति से सच्चे विश्वास का पहिला फल यह है कि परमेश्वर के संग विश्वासी का मेल फिर स्थापित होता है और इस कारण से उस की प्रकृति का उचित नियम सिद्ध होता है। अब मनुष्य की प्रकृति का उचित और यथार्थ नियम यह है कि शरीर मन के आ-

धीन रहे और मन आत्मा के आधीन रहे और आत्मा परमेश्वर के आधीन रहे जब मनुष्य को प्रकृति का यह नियम सिद्ध होता है तब उस का स्वभाव आत्मिक है क्योंकि परमेश्वर उस की आत्मा को सामर्थ देके उस के द्वारा से मन पर आज्ञा और प्रभुता करता है। परन्तु जब आत्मा पाप के कारण निर्बल हो गई वह मन पर आज्ञा नहीं कर सकी है और मन शरीर के वश में आ जाता है तब मनुष्य का स्वभाव शारीरिक है और इस दशा में काम क्रोध लोभ मोह राग द्वेष इत्यादि मनुष्य पर प्रबल हो प्रभुता करते हैं और वह सत कुशल और कल्याण नहीं पा सक्ता है। परन्तु यिसू ख्रिष्ट पर विश्वास लाने से परमेश्वर के संग आत्मा का संम्बन्ध नवीन रूप से स्थापित होता है क्योंकि पहिले परमेश्वर यिसू ख्रिष्ट के प्रायश्चित्त के कारण से उस के सारे पापों को क्षमा करता है और शिष्य परमेश्वर के आधीन हो उस की सारी आज्ञाओं को ग्रहण करता है और उस पर निरन्तर रक्षा के लिये पूरा भरोसा रखता है इस रीति से मन में जो भय और चिन्ता थी सो शान्ति होती है और मन को पूरा चैन प्राप्त होता है। फिर जब परमेश्वर के संग यह परस्पर मेल स्थापित हुआ तो परमेश्वर प्रसन्न हो उस की आत्मिक सहायता नित्य किया करता है और इस सहायता से मनुष्य की आत्मा बलवन्त हो मन और शरीर को वश में रखने पर समर्थ हो जाती है और सारी प्रकृति के इस क्रमी और विधिवन्त साधन से बड़ी कुशल और आनन्द प्राप्त होता है॥

वेदविद्वान का वचन॥ आप जो कहते हैं कि जबलों काम क्रोध लोभ इत्यादि मन में प्रबल रहते हैं तब लों सत्य कुशल और चैन नहीं हो सक्ता है इस में मेरी सम्पूर्ण सम्मति होती है क्या ख्रिष्टीय विश्वास का फल यह है कि ये सब रागादि नष्ट होते हैं॥

सत्यार्थी का वचन॥ ख्रिष्टीय विश्वास से मनुष्य का कोई प्रकृति

सिद्ध गुण नष्ट नहीं होता है क्योंकि श्री यिसू खिष्ट परमेश्वर के रचित किसी पदार्थ को नष्ट करने के लिये नहीं आया बचाने के लिये आया और केवल पाप को जो परमेश्वर का रचित नहीं है नष्ट करता है सो मनुष्य के सारे प्रकृति सिद्ध गुण परमेश्वर के रचित पदार्थ होते हैं और उन के मूल में किसी प्रकार का दोष भी नहीं है दोष केवल यह है कि मनुष्य अनुचित रीति पर उन का साधन करते हैं और खिष्टीय विश्वास से यह दोष तो नष्ट होता है और विश्वासी अपने प्रकृति सिद्ध गुणों को उचित रीति पर साधन करने लगता है। सो प्रेम इच्छा आदर भय आसरा द्वेष अभिलाषा क्रोध घिन इत्यादि जो राग मनुष्य की प्रकृति में देख पड़ते हैं सो सब के सब अपने मूल के विषय में उस के प्रकृति सिद्ध गुण और परमेश्वर के रचित पदार्थ होते हैं और उन के बिना मनुष्य तो मनुष्य ही नहीं रहता एक दूसरी प्रकार की सृष्टि बन जाता और परमेश्वर ने इन रागों के लिये ठीक और योग्य अर्थों को भी ठहराया है और रागों के और उन के अर्थों के सन्निकर्ष से मनुष्य की कुशल और कल्याण होता है। अब सारे पुरुषार्थ तीन प्रकार के होते हैं अर्थात योग्य अयोग्य और सामान्य इस के अनुसार दूसरे पर अन्धेर करना एक अति अयोग्य पुरुषार्थ होता है और ऐसे कुकर्म से क्रोध द्वेष घिन इत्यादि रागों का साधन करना सर्व प्रकार से उचित है। फिर सामान्य पुरुषार्थ ऐसे हैं जो आप ही आप न तो योग्य हैं न तो अयोग्य हैं। इस के अनुसार मध्यमता के संग अपने लौकिक सुःख की युक्ति करनी एक सामान्य पुरुषार्थ है क्योंकि उस का योग्य होना अथवा अयोग्य होना मन की जिस इच्छा से किया जाता इस के अनुसार है यदि उचित इच्छा से किया जाता तो उचित है नहीं तो नहीं। फिर मन को सुधारना और ईश्वर की सेवा करनी इत्यादि अत्यन्त योग्य और उत्तम पुरुषार्थ हैं और इन के विषय में प्रेम अभिलाषा आदर

आसरा प्रभृति रागों का साधन करना बहुत ही उचित है। अब ख्रिष्टीय विश्वास के द्वारा इन सारे रागों का और उन के ठीक अर्थों का सन्निकर्ष और उन का उचित साधन स्थापित होता है और इस रीति से विश्वासी अपनी प्रकृति की सत कुशल और कल्याण प्राप्त करता है। परन्तु जो इस के विरुद्ध अपने प्रकृति सिद्ध गुण रागादिकों को नष्ट करने चाहता है सो केवल अपने मनुष्यत्व को नष्ट करने चाहता है पर इस को नष्ट नहीं कर सक्ता है केवल बिगाड़ डालता है और अपने इस कुकर्म का फल अवश्य भोग करता है॥

वेदविद्वान का वचन॥ इस प्रकार से रागादिकों का उचित साधन संसार के बीच करना एक अति कठिन काम देख पड़ता है क्या इस के लिये अवश्य नहीं है कि साधु संसार को छोड़ बन में और एकान्त में जा रहें॥

सत्यार्थी का बचन॥ ऐसी ठीक सिद्धता के लिये जगत का अनुचित प्रेम मन से उखाड़ना अवश्य तो होता है परन्तु बनवास करने से यह नहीं हो जाता है क्योंकि बनवासी केवल अपने शरीर को संसार से अलग करता है और बन के बीच भी जगत का प्रेम अन्तःकरण में हो सक्ता है। इस को छोड़ यह ठीक उचित साधन बन में अनहोना है केवल संसार ही में हो सक्ता है और उस के लिये प्रवृत्ति निरन्तर अवश्य है जैसे विद्या में प्रवृत्ति और अभ्यास के बिना सिद्धता प्राप्त नहीं होती है तैसे धार्मिक सिद्धता में भी यह अवश्य है। क्योंकि परमेश्वर ने मनुष्य की प्रकृति को इसी प्रकार से रचित किया है कि आलस उस के लिये निष्फल और हानिजनक है और प्रवृत्ति लाभदायक है इस के अनुसार साधन और अभ्यास के बिना मनुष्य का शरीर भी अति निर्बल हो जाता है और इस रीति से बनवासी की बुद्धि निर्बल हो जाती और उस का मन सूख जाता है। फिर धार्मिक सिद्धता के लिये

परमेश्वर की यही व्यवस्था है और लोभ इत्यादि जो इच्छा के अनुचित साधन होते हैं सो बन में नष्ट नहीं हो सक्ते हैं क्योंकि जब अनुचित अर्थ उपस्थित होता है और इच्छा का आकर्षण भी करता है तब इच्छा को दबाय रखना और उस का केवल उचित साधन करना यही प्रकार है कि जिस्से लोभ इत्यादि अनुचित इच्छा नष्ट होते हैं। इस कारण से परमेश्वर ने मनुष्यों को इन की परीक्षा और सुधराव के लिये संसार के बीच रक्खा और एक २ के लिये उस की सांसारिक दशा ठहराई और उन के परस्पर सम्बन्धों को स्थापित किया और उन सम्बन्धों से जो कर्त्तव्य कर्म होते हैं उन को अपनी व्यवस्था में बतलाया है और रागादिकों के अनुचित साधन त्यागने और उन के उचित साधन करने के लिये उसी दशा में रहना अवश्य है। इस के अनुसार श्री यिसू ख्रिष्ट ने जो निष्कलंक सिद्धता का उदाहरण है संसार का व्यवहार करके अपनी निर्दोष सिद्धता को प्रगट किया और उस पर सत्य विश्वास लाने का एक फल यह है कि उस की सहायता से उस के शिष्य होते २ ऐसा ही करने पाते हैं सो सच्ची सिद्धता केवल इसी प्रकार से प्राप्त हो सक्ती है॥

वेदविद्वान का वचन॥ इस वर्णन के अनुसार ख्रिष्टीय शिष्य मन का चैन और बिश्राम क्योंकर पा सक्ता है। यदि रागादिकों को नष्ट करना नहीं चाहिये बरन उन का उचित साधन निरन्तर करना चाहिये और फिर भी संसार में रहके उस का व्यवहार करना इस के लिये अवश्य है तो ऐसा देख पड़ता है कि विश्राम और चैन के बदले जीवन भर बड़ाही उद्योग और दौड़ धूप करनी पड़ेगी। क्या ऐसी ठीक सिद्धता जैसी आप वर्णन करते हैं क्षण भर में किसी को प्राप्त हो सक्ती है॥

सत्यार्थी का बचन॥ पण्डितजी यह सिद्धता किसी को तुरन्त प्राप्त

नहीं होती है वरन सम्पूर्ण रूप से इस संसार में भी किसी को प्राप्त नहीं होती है केवल परलोक में इस को सम्पूर्णता हो सक्ती है। क्योंकि यह संसार ख्रिष्टीय शिष्य के लिये भी परीक्षा और सुधराव का स्थान होता है और जब पाप के कारण से उस की प्रकृति सर्वथा उलट पुलट हो गई थी और अपने रागादिकों के अनुचित साधन करने का व्यवहार देर से स्थापित हुआ था और पाप का विष उस की सारी प्रकृति में व्याप्त हो गया था तो उस का सुधराव करना एक सुलभ काम नहीं हो सक्ता है। इस के लिये सारे मन से उद्योग और उत्साह करना निःसन्देह अवश्य है और इस में कभी २ कुछ कठिन मानसिक दुःख भी सहना होता है। परन्तु इस प्रकरण में ख्रिष्टीय विश्वास की उत्तमता यह है कि इस अति आवश्यक काम को सफलता के सङ्ग निर्बाह करने में उस्से शिष्यों की यथेष्ट सहायता होती है बरन् केवल उसी के द्वारा से यह काम सम्पूर्ण हो सक्ता है। जिस रीति से यिसू ख्रिष्ट पर शिष्य का विश्वास अति दृढ़ होता जाता है उसी रीति से यह काम उस के लिये अधिक सुलभ और सफल होता जाता है क्योंकि जब विश्वास के कारण यिसू ख्रिष्ट का प्रेम शिष्य के मन में उपजा है तो वह प्रेम अपने बिरोधी सारे प्रेमों को उस के मन से निकालता है। जब यिसू ख्रिष्ट ने शिष्य की मुक्ति के लिये उस के पाप का दण्ड भोग कर अपना प्राण लों भी दे दिया तो यिसू ख्रिष्ट के लिये पाप को छोड़ना उस के प्रेम के बल से ऐसा कठिन नहीं होता है और जो कोई इस रीति से ईश्वर की सेवा में अपने को अर्प्पण करता है सो उन मनुष्यों से जो अपना स्वार्थ ढूंढते और अपनी इच्छा पर चलते हैं अत्यन्त धन्यवान और आनन्दित होता है। सीधे मन से यह कहना कि हे प्रभु मेरी इच्छा तो नहीं तेरी इच्छा पूरी हो इस में मन की सत कुशल और चैन समाप्त है और यद्यपि इस के अनुसार चलने के लिये निरन्तर उद्योग करना

निःसन्देह अवश्य है तथापि ऐसा उद्योग निष्फल तो नहीं है पवित्र आत्मा की सहायता से सफल है और होते २ शिष्य को अधिक सिद्धता प्राप्त होती जाती है। सो इस में मन का एक आत्मिक आनन्द और हर्ष है जो केवल सच्चा शिष्य जान सक्ता है इस के सङ्ग अन्त की सम्पूर्ण सफलता का आसरा भी उस के मन में निश्चय है सो ख्रिष्टीय विश्वास का एक उत्तम फल यह भी है ॥

वेदविद्वान का वचन॥ अन्त की सफलता का जो वर्णन आप करते हैं सो किस प्रकार की है और उस का आसरा शिष्य के मन में क्योंकर निश्चय होता है आप कृपा करके बतलाइये ॥

सत्यार्थी का वचन॥ वह अन्तवाली सफलता जिस का निश्चय आसरा ख्रिष्टीय शिष्य के मन में है सो उस प्रकार की परमगति नहीं है जो हिन्दू शास्त्रों में वर्णित होती है। क्योंकि जीवात्मा का परमात्मा में लीन होना मेरी समझ में यह एक ऐसी बात है जो बुद्धि की विरुद्ध और अनहोनी भी है और केवल इन शब्दों का अर्थ न जान्ने अथवा उस पर भली भान्ति ध्यान न करने के कारण से कोई मनुष्य उन को प्रतीति करके कहता है। और यद्यपि ऐसी दशा हो भी सके तथापि उस को परमगति क्योंकर कह सकें क्योंकि जब आत्मा को अपनी जीवदशा और भाव का भी बोध नहीं रहता तब उस की परमगति तो क्या उस की गति ही क्योंकर हो सक्ती बरन जब लीन हो गया तो उस की गति का अन्त हो चुका इसी अर्थ से उस को अन्तवाली गति कहिये तो आप ठीक कहेंगे। परन्तु ख्रिष्टीय शास्त्र में परमगति का जो वर्णन लिखा है सो इस्से बहुत भिन्न है और उस का अर्थ यह है कि मनुष्य की सारी प्रकृति समस्त प्रकार के दोषों से छुटकारा पाके ऐसी दशा में प्रवेश करती है जो उस के समान सर्व प्रकार से निर्दोष और पवित्र और कल्याणपूर्वक है। इस के अनुसार जो २ मनुष्य उस परमगति को प्राप्त

होवेंगे उन की आत्मा पवित्र आत्मा के समान पवित्र होवेगी ऐसा कि कोई भी इच्छा वा चिन्ता न होगी जो परमेश्वर की इच्छा के समान न हो और उन की बुद्धि की ऐसी शक्ति और तीक्ष्णता होगी कि वे अति निगूढ़ विषयों को सुलभता से समझ सकेंगे। ऐसा तो नहीं कि वे सर्वज्ञानी होवेंगे परन्तु जो कुछ वे जानेंगे सो अति स्पष्ट और निश्चय रूप से जानेंगे और उन के विचारों में तनिक भी भ्रम न होगा इस रीति से नाना प्रकार के नवीन ज्ञान की प्राप्ति से हर्षित हो उन की बुद्धि सदा सर्वदा सन्तुष्ट रहेगी। फिर जो मनुष्य परमगति को प्राप्त होवेंगे सो इस अति शुद्ध आत्मा और निर्दोष बुद्धि के सङ्ग एक नवीन अविनाशी स्वर्गीय शरीर को भी पावेंगे यह शरीर सूक्ष्मता के कारण ख्रिष्टीय शास्त्र में आत्मिक शरीर कहलाता है और वह ऐसा सूक्ष्म होगा कि आत्मा के लिये एक योग्य वासस्थान और करण भी ठहरेगा और आत्मा की इष्ट प्रवृत्ति को नहीं अटकावेगा और उस के संयोग से आत्मा एक अति पवित्र और सम्पूर्ण रूप से तृप्तिकारी हर्ष भोग करेगी॥

वेदविद्वान का वचन॥ आप जो कहते हैं कि आत्मा की परमगति में वह शरीर से संयुक्त रहेगी सो एक बड़े आश्चर्य की बात देख पड़ती है क्योंकि हिन्दू शास्त्रों की रीति से कैवल्य अर्थात आत्मा का शरीर रहित होना परमगति है तब वह सर्व कर्मों और इच्छाओं से छुटकारा पाके श्रेष्ठ और उत्तम शान्ति भोग करेगी। परन्तु यदि आत्मा शरीर से संयुक्त रहे तो उस की परमगति कैसे हो सके॥

सत्यार्थी का वचन॥ मैं जानता हूं पण्डितजी कि हिन्दू शास्त्रों के अनुसार शरीर अशिद्धता का कारण और उस की प्रवृत्ति भी एक दोष है परन्तु ऐसे विचार का क्या प्रमाण है बुद्धि की रीति से तो सम्भव है कि परमात्मा को छोड़ कोई आत्मा शरीर रहित हो सुबोध नहीं हो सक्ती है और परीक्षायुक्त विचार से निश्चय है कि शरीर के बिना जीव-

आत्मा अशक्त और प्रवृत्ति के अयोग्य है। फिर शरीर तो निःसन्देह मनुष्यजाति का एक प्रकृति सिद्ध गुण और मूलतत्व है और शरीर ही में कुछ दोष नहीं है दोष केवल यह है कि वर्तमान में मनुष्यों का सांसारिक शरीर आत्मा के लिये अति स्थूल और निर्बल अधम होता है और उस के द्वारा आत्मा की अभिलाषा सम्पूर्ण नहीं होती है। परन्तु जब यह शरीर सर्वथा पवित्र और सूक्ष्म हो जायगा तो आत्मा का योग्य उपकारी सेवक ठहरेगा और यदि शरीर का भी निस्तार न होता तो मनुष्यजाति का एक मूलतत्व और प्रकृति सिद्ध गुण नष्ट होता ऐसी दशा को मनुष्य की सारी प्रकृति की योग्य मुक्ति क्योंकर जान सके। परन्तु यिसू खिष्ट के द्वारा जो मुक्ति प्राप्त होती है सो इस प्रकार की नहीं है क्योंकि वह सामर्थी मुक्तिदाता मनुष्यजाति की सारी प्रकृति का सम्पूर्ण निस्तार करके उस को परमगति में पहुंचाता है जहां पाप वा अज्ञानता वा शोक वा रोग वा भय वा पीड़ा वा भ्रम का तनिक भी लेश कभी देखने में नहीं आवेगा परन्तु सर्व प्रकार का पवित्र आनन्द और श्रेष्ठ और उत्तम हर्ष प्राप्त होगा॥

वेदविद्वान का बचन॥ यदि उस दशा में सूक्ष्म आत्मिक शरीर के द्वारा से आत्मा की प्रवृति होगी तो वह किस प्रकार के विषयों में किई जायगी और क्या उस के कारण से कुछ थकाहट न होगी॥

सत्यार्थी का वचन॥ पण्डितजो उस प्रवृति से किसी प्रकार की थकाहट कभी न होगी क्योंकि आत्मा की सारी अभिलाषा मध्यम और बुद्धि के अनुसार होगी वह आत्मिक शरीर भी ऐसा सूक्ष्म होगा जिस में थकाहट नहीं हो सकी है और इन दोनों की प्रवृति उस प्रकार के विषयों में होगी जिन से इस जीवन में भी सब से अत्यन्त उत्तम और पवित्र हर्ष प्राप्त होता है। इस संसार में सब से श्रेष्ठ और तृप्तिकारी हर्ष वह नहीं है जो इन्द्रियों के सुःखभोग से होता है बुद्धिमान साधु

धर्मशील पुरुष उस प्रकार के आनन्द को अधम जानते हैं और साधुओं की संगत से और ईश्वरीय ज्ञान की प्राप्ति से और दरिद्र दुःखी लोगों के उपकार से और परमेश्वर के ध्यान और प्रेम से अति पवित्र आत्मिक आनन्द भोग करते हैं। जब साधु लोग इस संसार में इस प्रकार की प्रवृत्ति से ऐसा पवित्र आनन्द पाते हैं तो अनुमान है कि जब वे परमगति को प्राप्त होवेंगे तब ऐसे विषयों में प्रवृत्ति करने की उन की शक्ति बहुत ही अधिक हो जायगी और इस का और उस के आनन्द का जो अटकाव इस संसार में होता है सो वहां तनिक भी न होगा। मुक्ति लोग किसी अद्भुत प्रकार से परमेश्वर का दर्शन पावेंगे और उस दर्शन से अति हर्षित होवेंगे और यिसू खिष्ट के स्वर्गीय स्वरूप को भी देखेंगे और उस की संगत में रहेंगे और परस्पर मित्ररूपी सत्संगों से आनन्दित हुआ करेंगे और इस पवित्र परमानन्द के अटकाव होने के बदले उस की वृद्धि निरन्तर सदा सर्वदा लों होती जायगी॥

वेदविद्वान का वचन॥ परमगति का जो वर्णन आप करते हैं सो निःसन्देह अति योग्य और आनन्दपूर्वक होता है परन्तु इस का निश्चय जाने के लिये ऐसा देख पड़ता है कि परलोक में जाना अवश्य है फिर भविष्यतकाल और परलोक के ऐसे अदृश्य आनन्द से इस जीवन में मनुष्य को क्या लाभ हो सक्ता है क्योंकि ये सारे पदार्थ खिष्टीय विश्वास के फल तब ही होंगे जब कोई इन को प्राप्त कर भोग सके॥

सत्यार्थी का वचन॥ यह तो सच है पण्डितजी परन्तु खिष्टीय विश्वास से इन सारे महिमासंयुक्त पदार्थों का आसरा तो वर्तमान काल में भी निश्चय और सिद्ध होता है और उस विश्वास का एक बहुत ही उत्तम धार्मिक फल यही है। क्योंकि यद्यपि यह आसरा इस जीवन में प्रत्यक्ष ज्ञान की रीति साक्षात निश्चय नहीं हो सक्ता है तथापि वह यिसू खिष्ट के सारे वृत्तान्त के समान बुद्धि के प्रमाण से और अन्तःकरण की साक्षी

से भी निश्चय ठहरता है क्योंकि इन सारी स्वर्गीय आशीषों की स्पष्ट और सीधी प्रतिज्ञा शिष्य की शान्ति के लिये ख्रिष्टीय शास्त्र में लिखी है। फिर जब यिसू ख्रिष्ट आप मृतकों में से जी उठा और स्वर्गारूढ़ हुआ तो वह अपने विश्वासियों का पुनरुत्थान और स्वर्गारोहण क्योंकर न कर सके और जब वह आप स्वर्ग से उतरके इस जगत में आया तो स्वर्ग की ठीक दशा क्योंकर न जाने। यिसू ख्रिष्ट के सारे दैव्य वृत्तान्त के निश्चय होने के कारण परमगति का आसरा भी विश्वासी के लिये निश्चय ठहरता है और ख्रिष्टीय विश्वास का यह कैसा उत्तम धार्मिक फल होता है सो थोड़ा ध्यान करने से प्रगट होगा। क्योंकि मनुष्य का मन ऐसा है कि आसरा के बिना उस्से रहा नहीं जाता है परन्तु एक योग्य और निश्चय आसरा के गुण से वह अति बलवन्त धीरजवान और साहसी हो जाता है। अब परमगति के इस आसरा में सारे इष्ट पदार्थ और अन्तःकरण की सब अभिलाषा समाप्त होती हैं और यह आसरा निश्चय है तो विश्वासी का मन क्योंकर दृढ़ न होवे। जो २ सांसारिक क्लेश और शारीरिक पीड़ा और मानसिक दुःख भी होवे परन्तु अन्त को ऐसे महिमासंयुक्त फल प्राप्त करने के निश्चय आसरा से ये सारी विपत्तें धीरज के साथ सही जाती हैं और मन की कुशल और चैन स्थिर रहता है और एक अद्भुत साहस भी इस्से उत्पन्न होता है। क्योंकि जब ख्रिष्टीय विश्वास के कारण से परमेश्वर की प्रसन्नता का और पारलौकिक सुख का निश्चय आसरा मन में है तो ऐसी दशा में किस्से डरना। स्वर्गीय महिमा और परमगति तो ऐसा परमार्थ है कि उस के लिये लोकापवाद और सांसारिक क्लेश सह लेना कुछ बड़ी बात नहीं है इस को छोड़ इस आसरा के द्वारा से शिष्य का मन ख्रिष्टीय चाल चलने के लिये नित्य उसकाया जाता है॥

वेदविद्वान का वचन॥ क्या आप ने नहीं कहा कि यिसू ख्रिष्ट के

पुण्यप्रताप और प्रायश्चित्तरूपी मृत्यु के कारण और उन पर विश्वास लाने के द्वारा से स्वर्ग का परमसुख शिष्य को प्राप्त होवेगा इस दशा में परमगति का निश्चय आसरा शिष्य के मन को ख्रिष्टीय चाल चलने के लिये क्योंकर उसकावे क्या शिष्य अपनी चाल से भी अपने को स्वर्ग का अधिकारी बना सक्ता है॥

सत्यार्थी का वचन॥ मेरा अभिप्राय यह नहीं है पण्डितजी कि ख्रिष्टीय शिष्य अपनी धार्मिक चाल से अपने को स्वर्ग के परमसुख के योग्य बना सक्ता है अथवा अपनी योग्यता के कारण परमगति को प्राप्त करेगा क्योंकि वह केवल यिशू ख्रिष्ट की योग्यता के कारण सब कुछ प्राप्त करता है। और इस में ख्रिष्टीय विश्वास का एक और उत्तम धार्मिक फल देख पड़ता है क्योंकि उस के द्वारा से अभिमान और घमण्ड की जड़ अन्तःकरण से उखड़ जाती है। ख्रिष्टीय शिष्य जानता है कि जितनी पवित्र और धार्मिक चाल मैं चलूं तथापि इस में कुछ मेरी सत्य योग्यता नहीं हो सक्ती है क्योंकि जो कुछ सुकर्म मैं करता हूं सो केवल ईश्वर के अनुग्रह से और यिशू ख्रिष्ट के उपकार से और पवित्र आत्मा की सहायता से करता हूं सो इस में मेरी क्या बड़ाई है फिर जो कुछ मैं करता भी हूं उस में नाना प्रकार के दोष देख पड़ते हैं। ऐसा बिचार करते २ ख्रिष्टीय शिष्य अपने विश्वास के कारण दीनमन और अभिमानरहित हो जाता है और यह भी एक उत्तम धार्मिक फल होता है। परन्तु परमगति का आसरा इस रीति से विश्वासी के मन को ख्रिष्टीय चाल चलने के लिये उसकाता है कि उस चाल में वैसी ही मानसिक और आत्मिक प्रवृत्ति होती है जैसी परमगति में उस के परमसुख का कारण ठहरेगी इस रीति से वह इस संसार में भी उस परमसुख का कुछ थोड़ा सा स्वाद पा सक्ता है और जितना पाता है उस्से उस की अभिलाषा बहुत बढ़ती जाती है। क्योंकि यद्यपि वह सम्पूर्ण और निर्दोष

खिष्टता को एका एकी प्राप्त नहीं करता है तथापि इस की प्राप्ति के लिये उस का कोई उद्योग निष्फल नहीं होता है और वह क्रम २ से अधिक पवित्रता और आत्मिक स्वभाव और यिसू खिष्ट की समानता और इन के सङ्ग मन की अधिक कुशल और चैन प्राप्त करता जाता है और जितना यिसू खिष्ट का प्रेम उस के मन में बढ़ता है उतना अन्य मनुष्यों से भी उस का प्रेम बढ़ता है और वह उन के सत कल्याण के लिये इच्छा और उद्योग भी करता है और अपने प्रभु यिसू खिष्ट के समान प्रेमी और अस्वार्थी हो सामर्थ भर उन का उपकार करता है। इस रीति से खिष्टीय विश्वास के वे सारे धार्मिक फल उत्पन्न होते हैं जो विशेष करके इसी के लक्षण हैं अर्थात जिन से पराये मनुष्यों को यद्यपि वे शत्रु भी होवें नाना प्रकार के लाभ प्राप्त होते हैं और यों सच्चे खिष्टीय शिष्य यिसू खिष्ट के बचन के अनुसार पृथिवी का लोन और जगत के उजाले ठहरते हैं॥

वेदविद्वान का बचन॥ यिसू खिष्ट के इन बचनों का क्या अर्थ है और खिष्टीय विश्वास के वे कौनसे धार्मिक फल हैं जो पराये मनुष्यों को भी लाभदायक होते हैं॥

सत्यार्थी का बचन॥ यिसू खिष्ट के ये बचन दृष्टान्तपूर्वक हैं और उन का अर्थ यह है कि जिस प्रकार से लोन विनाशमान वस्तुओं की रक्षा करता है उसी प्रकार से यिसू के सच्चे शिष्य अपनी पवित्र चाल से इस सड़नेहार जगत की अर्थात पापी मनुष्यों की सभा की रक्षा करते हैं। और जिस रीति से उजाला अन्धकार का भगानेहार और सारे पदार्थों का प्रकाशक है उसी रीति से सच्चे खिष्टीय शिष्य अपने कर्मों और बचनों से निर्मल मत का सूरज जगत पर उदय करते और उस की ज्योति से मनुष्य की आत्मिक दशा और मुक्ति के मार्ग को प्रगट करते हैं। सो इन बचनों में यिसू खिष्ट अपने शिष्यों के लिये आज्ञा करता है कि

वे ऐसो ही चाल चलें और उन में से जो सच्चे हैं उन का वर्णन भी करता है क्योंकि धर्मशील पवित्र चाल सत पुरुष का उदाहरण अन्य मनुष्यों पर इसी प्रकार का गुण करता है। सत पुरुष के सन्मुख मिथ्या मनुष्य लज्जित होते हैं और अपनी मिथ्या युक्तियों को छिपा लेते हैं। साहसी सत्यार्थी की सीधी चाल और प्रकाशित बुद्धि को देखके भयभीत मनुष्य भी बहुधा निर्भय हो जाते और सत का खोज करते हैं और कभी २ उस साहसी सत्यार्थी के समान सत्य पर चलने भी लगते हैं। इस प्रकार से सत्य और असत्य का विवेक बड़े यतन से होने लगता है और नाना प्रकार के मूढ़ और प्राणनाशक भ्रम नष्ट होते हैं फिर सच्चे शिष्यों की दया और प्रेम अस्वार्थता परोपकार इत्यादि सद्गुणों के साधन से अन्य मनुष्यों को नाना प्रकार के लाभ प्राप्त होते हैं क्योंकि वे केवल उन के सांसारिक फल भोग नहीं करते बरन अपने ही स्वभाव पर भी कुछ न कुछ समान गुण अवश्य पाते हैं। इस रीति से सच्चे शिष्य के विश्वास के उत्तम फल पहिले उस के कुटुम्ब और मित्रों को प्राप्त होते हैं फिर इससे आगे बढ़के अन्य मनुष्यों को भी लाभदायक होते हैं॥

वेदविद्वान का वचन॥ यदि यह दशा है तो किस कारण से बहुतेरे मनुष्य ख्रिष्टीय लोगों की ऐसी कठिन विरुद्धता करते हैं और उन की संगत से अलग रहते हैं और उन से बड़ा द्वेष रखते हैं बरन जो कोई हिन्दू ख्रिष्टीय शिष्य हो जाता है तो उस के भाई भी उस को ग्रहण नहीं करते हैं और उस को बड़ा अपवित्र और निन्द्य भी जानते हैं॥

सत्यार्थी का वचन॥ हिन्दू लोग जिस कारण से ऐसा करते हैं आप तो जानते होंगे मेरी समझ में निःसन्देह उन की बड़ी अज्ञानता इस में सिद्ध होती है। इस का प्रत्यक्ष कारण तो हिन्दुओं का विशेष वर्ण है जिस की कठिन बेड़ियों में उन का शरीर और मन और आत्मा बंधी

हुई है इस मानसिक दासत्व के कारण साधारण हिन्दू निर्मल सत्य का खोज पाखण्ड के समान जान लेते हैं और सच्चे खिष्टीय शिष्य के साक्षी मन से निपट डरते हैं। सम्भव है कि कितने हिन्दू सीधे अन्तःकरण से और केवल अज्ञानता के कारण ऐसा करते हैं परन्तु सब के सब इस कारण से ऐसा नहीं करते हैं क्योंकि जैसे सांसारिक यहूदी यिसू खिष्ट से द्वेष करते थे तैसे सारे सांसारिक मनुष्य उस के सच्चे शिष्यों से भी द्वेष करते हैं और इस का मूल कारण मनुष्य की वही भ्रष्टता है जिस का थोड़ा सा वर्णन मैं ने पहिले किया। पापी मनुष्य सत के उस उजाले को जिस्से उन के पाप प्रगट होते नहीं चाहते हैं स्वार्थी मनुष्य उस शिक्षा और व्यवहार को जिस्से उन के स्वार्थ का अटकाव होता है बुरा मानते हैं मिथ्या के पक्षपाती निर्मल सत से द्वेष करते हैं और कुकर्मी लोग उन मनुष्यों पर जिन की चाल से उन के दोष प्रत्यक्ष देख पड़ते बड़ा दोष लगाते और उन की बड़ी अपनिन्दा और उन से बड़ा दंगा करते हैं। इस रीति से खिष्टीय विश्वास के वृद्धि के कारण कभी २ बड़ा ऊधड़ भी मचता है परन्तु इस का दोष खिष्टीय विश्वास पर तो नहीं लगता है उन लोगों पर लगता है जो ऊधड़ मचाके उस का अटकाव करने चाहते हैं। और यिसू खिष्ट ने अपने शिष्यों को बार बार स्पष्ट समाचार दिया कि यही दशा होगी और उन से कहा कि जब सांसारिक मनुष्यों ने मुझ को सताया है तो तुम को भी सतावेंगे और जब उन्हों ने मुझ को शैतान कहा तो कितना अधिक तुम को भी शैतान न कहेंगे इति। परन्तु जब ऐसी दशा में खिष्टीय शिष्य पवित्र आत्मा की सहायता से खिष्टीय चाल चलने की सामर्थ पाते और अपने विश्वास के उत्तम धार्मिक फल अपने स्वाभाविक और व्यवहारिक गुणों में प्रगट करते हैं तो बहुधा उन के शत्रु भी अचम्भित हो मान लेते हैं कि निःसन्देह ये मनुष्य परमेश्वर के सेवक और उन के वचन सत्य और उन का

विश्वास दैव्य है और इस रीति से अपने शत्रुओं की विरुद्धता के द्वारा भी ख्रिष्टीय विश्वास आगे से अधिक फैलता जाता है ॥

वेदविद्वान का वचन ॥ ऐसी दशा में जैसे आप ने अभी वर्णन किया है ख्रिष्टीय विश्वास के कैसे धार्मिक फल देख पड़ते हैं और सच्चे ख्रिष्टीय शिष्य किस प्रकार की चाल चलते हैं कि जिस्से उन के शत्रु भी उन की निर्दोषता को मान लेते हैं ॥

सत्यार्थी का वचन ॥ सच्चे ख्रिष्टीय शिष्य सारी दशाओं में सामर्थ भर यिसू ख्रिष्ट के निष्कलंक उदाहरण की समान चाल चलते हैं अर्थात वे अपने शत्रुओं को प्यार करते हैं उन के लिये जो उन का धिक्कार करते और उन को सताते हैं वे प्रार्थना करते हैं और उन को आशीष देते और उन का उपकार करते हैं निदान वे अपने शत्रुओं के अन्धेर के बदले उन से प्रेमपूर्वक व्यवहार रखते हैं। ख्रिष्टीय विश्वास के सच्चे धार्मिक फल येही हैं और इन की उत्तमता के देखने से बहुतेरे मनुष्यों के मन में सत्य विश्वास का बीज बोया जाता है और यदि सारे ख्रिष्टीय शिष्य निरन्तर ऐसी चाल चले होते तो इस्से बहुत काल पहिले वह दैव्य विश्वास सर्वत्र संसार में फैल गया होता। परन्तु मैं ने ऊपर वर्णन किया है कि साधारण ख्रिष्टीय शिष्य यद्यपि कदाचित सच्चे भी हों तथापि बड़े दोषी भी होते हैं और अपने दैव्य विश्वास की उत्तमता अपनी चाल में भली भान्ति प्रगट नहीं करते हैं। पर तौभी कितने ऐसे भी होते हैं जो अति शुद्ध और धार्मिक और ख्रिष्टीय चाल चलते हैं और उन के सद्गुणों से साधारण शिष्यों के स्वभाव और चाल पर कुछ गुण तो होता है अर्थात उन का भले बुरे का स्वभाविक विवेक अधिक स्पष्ट और बलवन्त होता जाता है। और इस का एक प्रत्यक्ष प्रमाण यह है कि कितनी बुरी २ रीतें और हानिजनक व्यवहार जो अन्य जातियों में प्रचलित और प्रतिष्ठित होते हैं सो बहुत काल से ख्रिष्टीय लोगों में बन्द

हो गये हैं और सारे खिष्टीय शिष्य यद्यपि सच्चे विश्वासी और धर्मशील मनुष्य न होवें तथापि सब के सब इन रीतों को बड़ा दोष मानते हैं सो इन बुरी रीतों का साधारण खिष्टीय लोगों में से दूर होना यह भी खिष्टीय विश्वास का एक उत्तम धार्मिक फल ठहरता है ॥

वेदविद्वान का वचन ॥ आप कैसी रीतों का वर्णन इस समय करते हैं क्योंकि इस प्रकरण में विचार की बात है कि ये रीतें सचमुच बुरी हैं कि नहीं कदाचित बहुतेरे मनुष्य इन को बुरा नहीं मानेंगे ॥

सत्यार्थी का वचन ॥ मैं तो ऐसाही कहता हूं पण्डितजी कि खिष्टीय लोगों को छोड़ साधारण मनुष्य इन रीतों को बुरा नहीं मानते हैं और मेरी समझ में यही तो उन का दोष है परन्तु मैं ऐसी दो एक रीतों का वर्णन करूंगा तो आप विचार कीजिये कि बुरी हैं कि नहीं ॥

सो एक रीति यह है कि सर्वत्र संसार में जहां कहीं खिष्टीय विश्वास प्रचलित नहीं है साधारण मनुष्य स्त्रियों की स्वाभाविक प्रकृति का बहुत अधम विचार करते हैं और स्त्रियों को एक अति अयोग्य दशा में दबाय रखते हैं क्योंकि आदि में परमेश्वर ने स्त्री को पुरुष के केवल शारीरिक सुख के लिये उत्पन्न नहीं किया बरन उस को पुरुष की एक योग्य और उपकारक संगी ठहराया। इस के अनुसार उस ने नारी को नर के समान बुद्धि और आत्मा दिई जिसतें वह मानसिक और आत्मिक विषयों में भी नर की योग्य उपकारिणी ठहरे। बरन कई एक बातों में नारी की स्वाभाविक प्रकृति नर से कुछ उत्तम देख पड़ती है क्योंकि नारी अपनी स्वाभाविक प्रकृति से नर की अपेक्षा शारीरिक अभिलाषा से निराधीन है और जब उस की योग्य शिक्षा होती है तो उस का मन अधिक शुद्ध धर्ममय पवित्र और आत्मिक है। परन्तु साधारण मनुष्य इस से बहुत भिन्न बिचार करते हैं और नारी के स्वभाव

का अति अयोग्य वर्णन करते हैं और उन को दासी के समान केवल अपने शारीरिक सुख के लिये रखते हैं और विद्या अथवा धर्म की शिक्षा उन को नहीं देते हैं वरन उन की शिक्षा करनी अनुचित जानते हैं और उन को अति घोर अज्ञानता में दबाय रखते हैं तो क्या आश्चर्य है कि ऐसी दशा में स्त्री का स्वभाव बहुत बिगड़ जाता है। कदाचित स्त्रियों की यह दुर्दशा दण्ड की रीति इस कारण से है कि आदि स्त्री आदि पुरुष से पहिले पाप में पतित हुई और उसी के बहकाने से आदि पुरुष ने पाप किया अब स्त्री को अपने पाप का ठीक फल भोगना अर्थात पुरुष का बड़ा अन्धेर सहना होता है क्योंकि पुरुष अधिक शारीरिक बल रखके अपनी इच्छा के समान स्त्री पर अन्धेर करता है और इस का भी योग्य फल अपनी अधिक भ्रष्टता में पाता जाता है। परन्तु ख्रिष्टीय विश्वास के द्वारा यह अन्याय दूर किया जाता है क्योंकि यद्यपि स्त्री ही से पाप का पहिला प्रवेश हुआ तथापि स्त्री ही से भी मुक्ति का आसरा स्थापित होता है क्योंकि मुक्तिदाता स्त्री ही का वंश ठहरा पुरुष का नहीं। फिर ख्रिष्टीय विश्वास की रीति से नारी की योग्य प्रतिष्ठा और आदर होता है क्योंकि उस की शिक्षा से नारी भी नर के समान ज्ञानपूर्वक शिक्षा पाने और धार्मिक चाल चलने और मुक्ति प्राप्त करने के समर्थ है। इस के अनुसार साधारण ख्रिष्टीय लोग अपनी पुत्रियों को शिक्षा देते और उन के मन को सुधारते हैं और उन को अपनी ज्ञानपूर्वक मित्रता के लिये योग्य और गुणवान उपकारिणी बना लेते हैं और इस का उत्तम फल भी इस रीति से भोग करते हैं कि ज्ञानी बुद्धिमान और प्रेमी माता अपने बालकों को शुद्ध मार्ग बतलाती हैं और पवित्रमन दयाशील बहिन अपने भाइयों की योग्य उपकारक रहती हैं और विश्वासी पतिव्रता विवेकी धर्मिष्ठ पत्नियां अपने पतियों के मानसिक और आत्मिक कुशल बढ़ाती हैं और आज्ञापालक शिष्या-

ग्राहक पुत्रियां अपने पितरों के मन के। बहलाती हैं। अब आप इस प्रकरण में अन्य धर्मियों की दशा पर दृष्टि कीजिये ते। यह भी जो मैं ने अभी कहा से। ख़्रिष्टीय विश्वास का एक उत्तम धार्मिक फल ठहरता है॥

वेदविद्वान का वचन॥ कदाचित यही कारण होगा कि इस देश के सरकार ने कई एक रीतों के। जो पूर्वकाल में प्रचलित थीं बन्द करने की युक्ति किई अर्थात विधवा अपने पतियों की लोथ के संग सती की रीति भस्म होती थीं और कितनी जातियों में कुमारीहत्या भी बहुत प्रचलित थी। क्योंकि उन के व्याह करने में जो अटकाव और व्यय लगती है उस के कारण से बहुत मनुष्य जब उन के घर में पुत्री उत्पन्न हुई ते। उन के जन्म पातेही उन के। घात करते थे परन्तु अब मैं सुनता हूं कि सरकार की आज्ञा से यह रीति बन्द हो गई और बन्द होती जाती है॥

सत्यार्थी का वचन॥ हां पण्डितजी इस का मूल कारण यह है कि परमेश्वर की इच्छा से इस देश का राज ख़्रिष्टीय लोगों के हाथ में आया है और उन्हों ने अपने विश्वास की शिक्षा से ज्ञान पाया है कि स्त्री का जीव पुरुष के समान मूलवान है और सारे मनुष्यों का प्राण क्या पुरुष क्या स्त्री क्या बड़ा क्या छोटा क्या ज्ञानी क्या अज्ञानी सब के सब अत्यन्त बहुमुल्य हैं और समस्त प्रकार का आत्मघात वा हत्या करना महा पाप है और ठीक न्याय की दृष्टि में सारे मनुष्य समान हैं अर्थात जो सामर्थी धनी महापुरुष भी अपराध करे ते। उस के। जैसे छोटे मनुष्य के। अपराधी के समान दण्ड देना उचित है और कोई मनुष्य अपने महत्व के कारण अपने योग्य दण्ड से छुटने न पावे और छोटे मनुष्य पर भी अन्धेर करने न पावें क्योंकि ठीक न्याय यही है। परन्तु यह भी अति बुरी रीति संसार में प्रचलित हो रही है कि सामर्थवान

बहुधा निर्बलों को दबाय रखते हैं और उन पर अन्धेर करते हैं और उन को बड़ी अज्ञानता में रख छोड़ते हैं क्योंकि जो साधारण लोग उन के तुल्य विद्यावान हो जाते तो उन के आधीन नहीं रहते। परन्तु ख्रिष्टीय लोग अज्ञानों और दरिद्रों और छोटों का न्याय करते और उन को ज्ञान और विद्या पढ़ाते हैं क्योंकि उन्हों ने अपने विश्वास से ज्ञान पाया है कि सारे मनुष्यों की आत्मा समान रूप से अविनाशी और ज्ञान पाने को समर्थ है और धार्मिक सुधराव की आवश्यकता और मुक्ति की योग्यता भी रखती है। अब ख्रिष्टीय धर्म का विशेष लक्षण यही है कि मंगलसमाचार दरिद्र लोगों को भी सुनाया जाता है और यिसू ख्रिष्ट उन की भी मुक्ति के लिये प्रायश्चित्त की रीति बलि-दान हुआ सो दरिद्रों और निर्बलों और अज्ञानों का न्याय और योग्य उपकार और रक्षा करना और उन को विद्या और ज्ञान पढ़ाना यह भी ख्रिष्टीय विश्वास का एक उत्तम धार्मिक फल ठहरता है॥

वेदविद्वान का बचन॥ क्या आप की समझ में इस देश के जितने प्रभु लोग हैं सो सब के सब सच्चे ख्रिष्टीय शिष्य होते हैं और अपने विश्वास की धार्मिक अभिलाषा से ऐसा करते हैं॥

सत्यार्थी का बचन॥ मैं नहीं कहता हूं पण्डितजी कि इस देश के सारे प्रधान और प्रभु लोग यिसू ख्रिष्ट के सच्चे शिष्य होते हैं क्योंकि मैं यह बात नहीं जानता हूं। परन्तु इस में सन्देह नहीं है कि उन के ख्रिष्टीय जाति में उत्पन्न होने और बालकपन से ख्रिष्टीय शिक्षा पाने के कारण भले बुरे उन का स्वाभाविक विवेक अधिक स्पष्ट और शक्ति-मान हो गया और इस हेतु से क्या वे सच्चे शिष्य होवें कि न होवें फिर भी वे कितनी बातों को जो इस देश में सर्वत्र प्रबल हैं बुरी और घिनो-नी जानते हैं और उन से बहुत भिन्न रीतों में चलते हैं। आप तो जानते होंगे कि इस देश के निवासी साधारण लोगों की अपेक्षा अङ्गरेज

लोग मिथ्या बोलना एक अति भारी दोष मानते हैं और घूस लेना और झूठी साची देना इत्यादि प्रचलित बुरी रीतें महा पाप जानते हैं और वे आप बड़े सत्यवादी और विश्वासपालक होते हैं यहां लों कि बहुधा किसी अङ्गरेज का वचनमाच विश्वास के लिये बहुत है। सचमुच साधारण ख्रिष्टीय शिष्यों में समस्त प्रकार का कपट झूठ और ठगाई और छल इत्यादि महा दुष्टता की रीति अति निन्द्य और अधम और दण्ड के योग्य जाने जाते हैं। अब यह प्रसिद्ध साधारण सत्यता जो ख्रिष्टीय लोगों में देख पड़ती है सो ख्रिष्टीय विश्वास ही का एक उत्तम धार्मिक फल होता है क्योंकि उस विश्वास की रीति से समस्त प्रकार की मिथ्यता अति महा पाप ठहरती है और यद्यपि कोई मनुष्य सच्चा ख्रिष्टीय शिष्य न हो तथापि उन लोगों की संगत में जिन पर ख्रिष्टीय विश्वास प्रबल है रहके अवश्य ऐसी २ बातों में उन के समान बनता जाता है और इस रीति से सच्चे ख्रिष्टीय शिष्य पृथिवी का लोन ठहरते हैं॥

वेदविद्वान का वचन॥ यदि इस देश के राजाधिकारियों ने सती और कुमारीहत्या इत्यादि रीतों को अपनी आज्ञा से बन्द किया और यदि ख्रिष्टीय धर्म से ऐसे उत्तम फल उत्पन्न होते हैं तो क्या कारण है कि इस देश का सरकार सारी प्रजाओं को आज्ञा नहीं देता है कि ख्रिष्टीय शिष्य हो जावें॥

सत्यार्थी का वचन॥ इस का कारण पण्डितजी मैं ने ऊपर बतलाया जब कि यिसू ख्रिष्ट के दो एक बचनों की चर्चा हुई अर्थात जो वस्तु महाराजा की है महाराजा को दो और जो परमेश्वर की है परमेश्वर को दो इति और मैं ने इस का अभिप्राय यों बतलाया कि सांसारिक राज के विषय ईश्वरीय राज से भिन्न है। सांसारिक राज का अभिप्राय और उस के करण भी सब के सब लौकिक और शारीरिक हैं और एक आत्मिक और धार्मिक अर्थ के लिये अयोग्य और निर्बल हैं। यदि ऐसी राज-

आज्ञा भी होती जैसी आप वर्णन करते फिर भी उस के द्वारा से किसी हिन्दू के मन में सच्चा ख्रिष्टीय विश्वास उत्पन्न नहीं हो सक्ता क्योंकि विश्वास आज्ञा से तो नहीं पर यथार्थ प्रमाण और सत्य बचन से उत्पन्न होता है और सच्चे विश्वास के बिना वह क्या शिष्य होता। फिर जो ऐसी आज्ञा होती तो उस के भंग के दण्ड बिना दिये वह क्या बल रखती परन्तु धर्म के विषय में लौकिक दण्ड देना बड़ी अन्धेर की बात है क्योंकि धर्म का स्थापनकर्त्ता और विचारकर्त्ता महाराजा तो नहीं परमेश्वर ही है और सारी प्रजा जिस २ धर्म की हो जब लौकिक विषयों में राजआज्ञा भंग नहीं करती है तो रक्षा और पालन की योग्य ठहरती है न कि दण्ड की योग्य। सरकार का काम निःसन्देह यह है कि विद्या का पालन करके और उस की सहायता से लोहे की सड़क बिजली की डांक इत्यादि विद्यारूपी युक्तियों को निर्माण करके प्रजाओं का लौकिक सुख और कल्याण बढ़ावें। परन्तु सत्य धर्म को बढ़ाना यह तो धर्म उस के पृथक २ शिष्यों के लिये एक विशेष कर्त्तव्य कर्म है और इस प्रकरण में भी ख्रिष्टीय विश्वास से नाना प्रकार के उत्तम धार्मिक फल उत्पन्न होते हैं क्योंकि जब उस विश्वास के कारण यिसू ख्रिष्ट का प्रेम शिष्य के मन में प्रबल हो गया है तो अन्य मनुष्यों का प्रेम भी और उन के उपकार करने की इच्छा उत्पन्न होती है और सच्चा शिष्य यिसू ख्रिष्ट के उदाहरण के समान अपने किसी लाभ के लिये तो नहीं केवल कुभागियों की रक्षा के निमित्त बड़ी प्रसन्नता से परिश्रम और व्यय भी उठाता है। इस के अनुसार विश्वास उन देशों में जहां ख्रिष्टीय विश्वास प्रबल है इसी अभिप्राय के लिये करोड़ों रुपये प्रतिबरस व्यय होते हैं कोढ़ियों और अन्धों और रोगियों के लिये औषधालय अनाथों और कंगालों के लिये धर्मशाला अविद्वानों के लिये ग्रन्थालय और पाठशाला इत्यादि सर्वत्र उन देशों में बन चुकी हैं। जो मैं इस का सम्पूर्ण वर्णन करता तो कदाचित आप मेरे बचन

पर भली भान्ति विश्वास न कर सके और ये सारे दयासंयुक्त उद्योग यिसू ख्रिष्ट के प्रेम के बल से किये जाते हैं और इस रीति से ख्रिष्टीय विश्वास के धार्मिक फल ठहरते हैं॥

वेदविद्वान का बचन॥ क्या ख्रिष्टीय शिष्य केवल अपने समजातियों और समधर्मियों के कल्याण के लिये ऐसा उद्योग करते हैं॥

सत्यार्थी का बचन॥ नहीं पण्डितजी जो वे ऐसा करते तो वे अपने विश्वास के अति अयोग्य ठहरते क्योंकि ख्रिष्टीय विश्वास की रीति से सारे जातिगण एकही घराने के हैं और सच्चा शिष्य सारे मनुष्यों को अपने भाइयों की रीति प्यार करता है और यही कारण है कि इन दिनों इस देश में और सारे अन्य देशों में भी शिष्य के निज व्यय और परिश्रम से यिसू ख्रिष्ट की मुक्ति का मंगलसमाचार प्रचारा जाता है। क्योंकि यिसू ख्रिष्ट की अन्तवाली आज्ञा जो उस ने अपने शिष्यों को दिई अर्थात तुम समस्त जगत में जाके सारे जातिगणों में मंगलसमाचार प्रचारो इति सो इस आज्ञा की पालना करनी उस के शिष्यों को एक कर्तव्य कर्म अब लों भी उपस्थित है। सच तो यह है कि बहुत काल से साधारण ख्रिष्टीय शिष्य इस आज्ञा से निपट असावधान हो रहे और इस में उन का बड़ा दोष हुआ और यही एक कारण है कि ख्रिष्टीय विश्वास अब लों सर्वत्र संसार में स्थापित और प्रबल नहीं हुआ। और इस का एक दूसरा कारण यह भी है कि जब प्रेरितों के काल में इस का समाचार चारों ओर प्रचारा गया तो जातिगण उस के ग्रहण करने पर प्रसन्न न थे और परमेश्वर मनुष्यों से इच्छारूपी सृष्टि के समान व्यवहार रखता है अर्थात उन को बलात्कार से अपने धर्म में नहीं लाता है इस कारण बहुतेरे जातिगण अब लों भी अज्ञानता के अन्धकार में पड़े रहे हैं। परन्तु ख्रिष्टीय शिष्यों को निःसन्देह उचित था कि दो बारा उन के पास मंगलसमाचार प्रचारते क्योंकि यिसू ख्रिष्ट

की आज्ञा स्पष्ट और निश्चय है और अब पचास एक बरसों से इस बात की बड़ी चिन्ता होने लगी है कि हम प्रभु की इस आज्ञा का पालन किस भान्ति से करें। इस रीति से इतने समय में जगत की डेढ़ सौ से अधिक भिन्न २ भाषाओं में ख्रिष्टीय शास्त्र का उलथा हो चुका है और जो थोड़ी भाषा शेष रही हैं उन में भी होता जाता है और मंगलसमाचार के प्रचारक अर्थात ख्रिष्टीय पादरी सारे देशों में फैल गये हैं और उन के निवासियों की भिन्न २ भाषाओं को प्राप्त कर और उन के भिन्न २ धर्मों का वृत्तान्त निर्णय कर इसी प्रकरण में ग्रन्थ बनाते हैं और पाठशालाओं को भी स्थापित करते हैं और सब लोगों के पास ख्रिष्टीय मुक्ति का मंगलसमाचार प्रचारते हैं॥

वेदद्विान का बचन॥ यदि ख्रिष्टीय विश्वास आप के कहने के अनुसार सर्वत्र संसार में स्थापित और प्रबल हो जाता तो आप की समझ में इस्से मनुष्य जाति को किस प्रकार के लाभदायक फल प्राप्त होते॥

सत्यार्थी का बचन॥ पण्डितजी इस प्रकरण का योग्य वर्णन मैं दो एक बचनों से क्योंकर कर सकूं सच यह है कि ऐसी दशा में यह एक नवीन संसार बन जाता क्योंकि यह ऐसा परिवर्त्त होता जो सम्पूर्ण मनुष्य जाति के सत्य धार्मिक पुनर्जन्म के समान होता। आप तनिक ध्यान कीजिये कि जो प्रत्येक मनुष्य सारे अन्य मनुष्यों को अपने समान प्यार करता तो केवल इसी कारण से उन की दुर्दशा बहुधा तुरन्त दूर हो जाती। क्योंकि ऐसी दशा में स्वार्थ डाह द्वेष काम लोभ कपट झूठ इत्यादि अनुचित राग के नष्ट होने से समस्त प्रकार का अन्धेर निर्दयता मिथ्या बचन चौर्य्य अविश्वास परस्त्रीगमन हत्या कुबचन दंगा संग्राम इत्यादि दुःखदायक विपत्ति रात्रि के अन्धकार के समान सत्य धर्म सूरज के उदय के साम्ने से भाग जाते और केवल इतना नहीं बरन उन के सन्ती प्रेम दया विश्वास परोपकार मेल नम्रता इत्यादि सद्गुण सारे मनुष्यों

के मन और व्यवहार में प्रबल हो जाते। फिर जब प्रत्येक मनुष्य पाप से पछतावा कर यिसू ख्रिष्ट पर विश्वास ला अपना पापमोचण प्राप्त कर परमेश्वर के आधीन हो उस की आज्ञाओं की पालना कर सामर्थ भर यिसू ख्रिष्ट की समान चाल चलता और उस के स्वाभाविक और व्यावहारिक गुणों को अपनी चाल में प्रगट करता तो अकाल और महामरी और भूकम्प इत्यादि विपत्तों के सन्ती परमेश्वर की ओर से क्या ही बड़ी २ स्वर्गीय आशीषें मूसलधारा बर्षा के नाईं पृथिवी पर उतर आतीं। अब देखिये कि ऐसी महा भागवानी सारे जातिगणों को प्राप्त होने के लिये केवल एक बात अवश्य है अर्थात कि सारे मनुष्य श्री यिसू ख्रिष्ट के सच्चे शिष्य हो जावें तो निःसन्देह आप मान लेंगे कि सारे जातिगणों का सत्य मुक्तिदाता श्री यिसू ख्रिष्ट है और यह इच्छा भी करेंगे कि सारे जातिगण उस के सच्चे शिष्य हो जावें॥

वेदविद्वान का वचन॥ क्या आप ऐसे जानते हैं कि यह विश्वास सम्पूर्ण भारतखण्ड में कभी स्थापित और प्रबल हो जायगा क्योंकि हिन्दू तो अपने व्यवहारों और धार्मिक रीतों पर अत्यन्त स्थिर रहते हैं और विशेष वर्ण के कारण अन्य देशियों के विद्यारूपी और धर्मसम्बन्धी विचारों पर तनिक ध्यान भी नहीं करते हैं॥

सत्यार्थी का बचन॥ हां पण्डितजी मुझ को निश्चय आसरा है कि केवल सम्पूर्ण भारतखण्ड में तो नहीं बरन सम्पूर्ण जगत में यह दैव्य विश्वास स्थापित और प्रबल हो जायगा क्योंकि ख्रिष्टीय शास्त्र के आदि से लेके अन्त लों इसी परिणाम का समाचार भविष्यद्वाणी की रीति लिखा है। फिर जब वर्त्तमान काल लों जितनी भविष्यद्वाणियां सम्पूर्ण होनी चाहिये थीं सो सम्पूर्ण हो चुकी हैं तो क्या सन्देह हो सक्ता है कि शेष भी इसी प्रकार से सम्पूर्ण हो जायेंगी बरन इन दिनों में इसी भविष्यद्वाणी के कुछ बिलम्ब के पीछे सम्पूर्ण होने के बहुतेरे लक्षण दृष्टि आते हैं। परन्तु यह बात कि हिन्दू

अपनी धार्मिक रीतों पर अति स्थिर रहते हैं सो निःसन्देह भूतकाल
के विषय में एक प्रकार से ठीक है सम्पूर्ण रूप से तो नहीं क्योंकि भूत-
काल में उन की धार्मिक रीतों के बड़े २ परिवर्त्त हो चुके हैं जैसे
भारतीयशास्त्रनिरूपण में चर्चा हुई। परन्तु वर्त्तमान काल में उन की
एक नवीन दशा हो गई है और यह प्रकरण उन के वश में नहीं रहा
है क्योंकि इन दिनों उन के शास्त्र और धर्म और रीतों का एक अति
कठिन अजय शत्रु उन के बीच आ गया है अर्थात परीक्षायुक्ति सांसा-
रिक विद्या और हिन्दू शास्त्रों का यह शत्रु इस कारण ऐसा कठिन है कि
एक हाथ से वह नाना प्रकार के ऐसे सांसारिक लाभ फैलाता है कि
सारे मनुष्य यह लाभ प्राप्त करने के निमित्त उस के पास बेग से दौड़े
आते हैं और उन को रोक रखना किसी की सामर्थ्य नहीं है जैसे इन
दिनों भारतखण्ड में होने लगा है। फिर दूसरे हाथ से यह परीक्षा-
युक्ति विद्या हिन्दू शास्त्रों को और उन के धर्म और रीतों को सर्वथा
खण्डन करती है क्योंकि जिस ने सच्ची विद्या सीखी है सो यह भी ज्ञान
पाया कि मेरा पुरातन विश्वास केवल वृथा और निष्प्रमाण था इस
दशा में शास्त्रों पर मन का विश्वास लाना अनहोना है। भला तो
हिन्दू कदाचित कुछ बेर लों अविश्वास से अपनी व्यावहारिक रीतों पर
चलते रहेंगे परन्तु विश्वास के बिना यह दशा नहीं रह सक्ती है इस के
पीछे क्या दशा होगी परमेश्वर ही जा[illegible]ा है। उस ने तो सच्ची विद्या
के संग सच्चे धर्म का समाचार भी हिन्दुओं के पास पहुंचाया है और
यदि वे उस को ग्रहण कर यिशू ख्रिष्ट के सच्चे शिष्य हो जावें तो वे उन
सारी आशीषों को जिन का वर्णन मैं ने अभी किया अपने भाग में
पावेंगे। परन्तु क्या वे ऐसा करें कि न करें मेरी समझ में यह बात
निश्चय है कि सच्ची विद्या के फैल जाने से हिन्दू धर्म थोड़े बिलम्ब के
पीछे अवश्य नष्ट हो जायगा और उस की रक्षा करनी किसी की सामर्थ्य

नहीं है। फिर जो हिन्दू उस के सच्ची ईश्वरीय सद्धर्म ग्रहण न करें तो निःसन्देह भारतखण्ड में एक अति महाविनाश और बिगाड़ फैल जायगा क्योंकि धर्म के बिना मनुष्य वन्यपशु के समान बन जाता है। इस कारण से सारे सत्यार्थी हिन्दुओं को अवश्य चाहिये कि परिणामदर्शी होके सत्य धर्म का निर्णय करें और जब निर्णय कर चुकें तो जितना ही लोकापवाद और सांसारिक क्लेश हो फिर भी सत्य धर्म ग्रहण कर उस पर चलें क्योंकि केवल इसी प्रकार से उन का और उन के समदेशियों का लौकिक और पारलौकिक कल्याण हो सक्ता है॥

वेदविद्वान का वचन॥ श्री यिसू खिष्ट के शिष्य हो जाने के लिये क्या किसी धार्मिक रीति को मानने की आज्ञा है कि नहीं॥

सत्यार्थी का वचन॥ हां पण्डितजी इस धार्मिक रीति की आज्ञा है जिस का थोड़ा सा वर्णन मैं ने ऊपर किया अर्थात खिष्टीय जलसंस्कार जिस को बपतिस्मा कहते हैं उस में शिष्य पिता पुत्र और पवित्र आत्मा के नाम से जलसंस्कार पाता है। परन्तु इस को उचित रूप से लेने के लिये अवश्य है कि शिष्य अपने पापों से सच्चा पछतावा कर श्री यिसू खिष्ट पर मन का विश्वास लावे। इस रीति का अभिप्राय यह है कि जो कोई यिसू खिष्ट पर विश्वास लाता है उस को उचित नहीं है कि अपना विश्वास अपने अन्तःकरण ही में छिपाय रक्खे वरन सब लोगों के सन्मुख उस को अंगीकार करना चाहिये जिसतें वे भी उस के समान शिष्य हो जावें। परन्तु अब तो आप ने मेरा बहुत सा वर्णन बड़े धीरज और दया के संग सुन लिया है सो इस लिये मैं आप का बड़ा धन्य मानता हूं और आप से यह बिनती करता हूं कि मेरे वर्णन के मूल तात्पर्य पर भली भान्ति ध्यान कीजिये क्योंकि कुछ सन्देह नहीं हो सक्ता है कि खिष्टीय शास्त्र का वृत्तान्त सत्य और प्रमाणिक है। फिर यदि सत्य है तो दैव्य और ईश्वरीय भी है जितना आप श्री यिसू खिष्ट को

आश्चर्य्य वृत्तान्त और स्वाभाविक और व्यावहारिक गुणों पर और खिष्टीय शास्त्र की मूल शिक्षा पर और खिष्टीय विश्वास के धार्मिक फलों पर ध्यान करेंगे इतना निश्चय विश्वास आप के मन में उत्पन्न होगा कि ईश्वरीय धर्म और मनुष्य जाति की मुक्ति का मार्ग यही है। फिर मैं बड़ी अभिलाषा के साथ आप से यह भी बिनती करता हूं कि अपने मन के इस विश्वास से असावधान मत रहिये और उस को तुच्छ मत जानिये क्योंकि उस के द्वारा से पवित्र आत्मा का दयापूर्वक शब्द आप को स्वर्गीय महिमा और परमसुख के लिये यिशू खिष्ट की ओर बुलाता है। आप पवित्र आत्मा के अनुग्रह से उस का शब्द सुनके ग्रहण कीजिये और उस की आज्ञा मानिये तो आप परमगति को प्राप्त होवेंगे परन्तु इस्से निश्चिन्त और असावधान रहना यह तो हे मेरे दयावान मित्र आप के लिये ऐसी दशा और उस का ऐसा अन्त होगा कि उस का वर्णन तो क्या मैं उस का सोच भी नहीं कर सक्ता हूं। आप कोई समय किसी और वर्णन सुन्ने वा और प्रश्न करने चाहें तो कृपा करके मुझ को अपने पास बुलाइये मैं बड़े आनन्द से आऊंगा इतने में मैं आप से विदा होता हूं प्रणाम॥

ग्रन्थकर्त्ता का बचन॥ इस पर वेदविद्वान और सत्यार्थी के सत्सङ्गों का अन्त हुआ और हम तीनों मनुष्य अपने २ स्थानों को प्रस्थित हुए क्या वेदविद्वान पीछे से खिष्टीय शिष्य हो गया कि नहीं मैं स्पष्ट रूप से नहीं कह सक्ता हूं इतना तो मैं जानता हूं कि जबलों वह जीता रहा तबलों वह सत्यार्थी का एक आत्मीय प्रिय मित्र था और बहुधा उस्से सत्सङ्ग भी करता था। परन्तु वह बहुत दिन लों जीता नहीं रहा क्योंकि एक कठिन रोग से रोगी हो दो एक दिन बड़ा दुःख सहके वह परलोक को चला गया। उस समय सत्यार्थी एक दूसरे नगर को गया और उस का उपकार नहीं कर सका परन्तु मैं ने सुना है कि [illegible]

विद्वान अपने दुःख में अपने मित्र की संगत बहुत चाहता था और बार २ श्री यिसू ख्रिष्ट का नाम भी लिया करता था ऐसा देख पड़ा कि उस्से पहिले यिसू का शिष्य प्रकाश रूप से न होने के कारण उस का मन अति पीड़ित था और वह अपनी मुक्ति का निश्चय स्पष्ट आसरा नहीं रख सक्ता था। उस के विषय में यह आसरा रखना कदाचित हम को अनुचित न हो कि यिसू ख्रिष्ट ने उस के मन में सत्य विश्वास देख उस पर दया कर उस का यह अपराध क्षमा किया हो। परन्तु कौन इस बात को जान सक्ता और जो कोई अपनी मृत्यु के काल में मुक्ति का स्पष्ट और निश्चय आसरा अपने मन में रखने चाहे सो वेदविद्वान के इस अपराध से सावधान रहे। प्रणाम॥

इति मतपरीक्षा का द्वितीय खण्ड समाप्त हुआ॥

यदि

ू ख्रिष्ट को

